प्रकाशक :—
लालचन्द कोठारी
सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

मुद्रक :—
सुराना प्रिण्टिङ्ग वर्क्स,
४०२, अपर चितपुर रोड,
कलकत्ता-७

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषत: राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानो एवं भाषाशास्त्रियो का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमे प्रारभ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर मे विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमे से निम्न प्रमुख हैं—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध मे विभिन्न स्रोतो से सस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दो का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशो के ढंग पर, लबे समय से प्रारभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश मे शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ, और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाए दी गई हैं। यह एक अत्यत विशाल योजना है, जिसकी सतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य मे इसका प्रकाशन प्रारंभ करना सभव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश-

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भडार के साथ मुहावरो से भी समृद्ध है। अनुमानत पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग मे लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरो का, हिन्दी मे अर्थ और राजस्थानी मे उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबंध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल सग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह सस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिए भी एक गौरव की बात होगी।

३ आधुनिकराजस्थानीकाशन रचनओं काप्र

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है—

१. कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता

२ आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उग्न्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।

३ वरस गाठ, मौलिक कहानी सग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' मे भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओ का एक अलग स्तम्भ है, जिसमे भी राजस्थानी कवितायें, कहानिया और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन सस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानो ने मुक्त कठ से प्रशसा की है। वहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एव अन्य कठिनाइयो के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नही हो सका है। इसका भाग ५ अङ्क ३–४ 'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' वहुत ही महत्वपूर्ण एव उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अङ्क एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा हैं। इसका अङ्क १–२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड का सचित्र और वृहत् विशेपाक है। अपने ढग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्वन्ध मे इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन मे भारत एवं विदेशो से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमे प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशो मे भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्त्ताओ के लिये 'राजस्थान भारती' अनिवार्यतः सग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमे राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखो के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्रीनरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियो को सुरक्षित रखने एव सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एव शुद्ध रूप मे मुद्रित करवा कर उचित मूल्य मे वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। सस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रंयो का अनुसधान और प्रकाशन सस्था के सदस्यो की ओर से निरतर होता रहा है जिसका सक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई सस्करण प्रकाश मे लाये गये है और उनमे से लघुतम सस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अ श 'राजस्थान भारती' मे प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध सस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती मे प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखा) की ७५ रचनाओ की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अ क मे प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन सस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड क्षेत्र के ५०० लोकगीतो का सग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एव जैसलमेर क्षेत्र के सैकडो लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरिया और लगभग ७०० लोक कथाऐं सग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतो के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाडे और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' मे प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखो का विशाल सग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप मे प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवत उद्योत, मुहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्र थो का सम्पादन एव प्रकाशन हो चुका है।

१२ जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचंद भडारी की ४० रचनाओ का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के सबध मे भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखो और 'भट्टि वश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रथो का अनुसधान किया गया और ज्ञानसार ग्रथावली के नाम से एक ग्रथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का सग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त सस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज, और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियो के निर्वाण-दिवस और जयन्तिया मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियो का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमे अनेको महत्वपूर्ण निबध, लेख, कविताएँ और कहानिया आदि पढी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियो तथा भाषणमालाओ आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।

१६. बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानो को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानो के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षो से महाकवि पृथ्वीराज राठौड आसन की स्थापना की गई है। दोनो वर्षो के आसन-अधिवेशनो के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हूंडलोद, थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-काल मे, सस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह संभव नही हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पडते इसके कार्यकर्त्ताओ ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओ के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि सस्था के पास अपना निजी भवन नही है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं, परन्तु साधनो के अभाव मे भी सस्था के कार्यकर्ताओ ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश मे आने पर सस्था के गौरव को निश्चय ही बढा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश मे आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एव अनर्घ रत्नो को प्रकाशित करके विद्वज्जनो और साहित्यिको के समक्ष प्रस्तुत करना एव उन्हे सुगमता से प्राप्त कराना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्त्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तको के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सभव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक सशोध एव सास्कृतिक कार्यक्रम मत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओ के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद मे राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष मे प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तको का प्रकाशन किया जा रहा है ।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,,
८. पवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचन्द नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचन्द नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहा—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थान व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५ मह्लुली— श्री अगरचन्द नाहटा
म:विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रंथावली श्री अगरचन्द नाहटा
२७. राजस्थानी हस्तलिखित ग्रथो का विवरण ,, ,,
२८. दम्पति विनोद ,, ,,
२९. हीयाली-राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य ,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय श्री भंवरलाल नाहटा
३१ दुरसा आढा ग्रंथावली श्री वदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रथावली (संपा० वदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (सपा० वदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीघर व्यास) आदि ग्रथो का सपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नही हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एव गुरुता को लक्ष्य मे रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमे अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रथो का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय मोहनलालजी सुखाडिया, जो सौभाग्य से शिक्षा मन्त्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने मे पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने मे समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोडे समय मे इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थो का सपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य मे जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादको व लेखको के अत्यत आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर सग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन सग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियटल इन्स्टीट्यूट वडोदा, भाडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ वृहद् ज्ञान-भडार बीकानेर, मोतीचद खजान्ची ग्रंथालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभडार वडोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशकर देराश्री, प० हरदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक सस्थाओ और व्यक्तियो से हस्तलिखित प्रतिया प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थो का सपादन सभव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थो का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय मे ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियो का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छत: स्खलनक्वपि भवत्येव प्रमाहत:, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधव:।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनो का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावो द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुन. मा भारती के चरण कमलो में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुन. उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मंत्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर,
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
स० २०१७
दिसम्बर ३,१९६०.

सम्पादकीय

महोपाध्याय कविवर समयसुन्दर सतरहवीं शती के महान् विद्वान और सुकवि थे। प्राकृत, संस्कृत, राजस्थानी, गुजरातो और हिन्दी मे निर्मित आपका साहित्य वहुत विशाल है। इधर कुछ वर्षों में उसके अनुसन्धान व प्रकाशन का प्रयत्न भी अच्छे रूप मे हुआ है। मौलिक ग्रन्थों के साथ साथ इन्होने बहुत से महत्व-पूर्ण एवं विविध विपयक ग्रन्थो पर टीकाएं भी रची है। राजस्थानी भाषा मे रचित इनकी रास चौपाई, स्तवन, सज्झायादि अनेकों पद्यबद्ध रचनाएँ तो है ही पर साथ ही षडावश्यक वालावबोध जैसी गद्य रचनाएँ भी प्राप्त हैं। आपकी पद्य रचनाओं मे सीताराम चौपाई सवसे बड़ी रचना है इसका परिमाण ३७०० श्लोक परिमित है। जैन परम्परा की रामकथा को इस काव्य में गुम्फित किया है। कई वर्षों से इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ के प्रकाशन का प्रयत्न चल रहा था और अनूप संस्कृत पुस्तकालय की सादूल ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित करने के लिए लगभग १५ वर्ष पूर्व इसकी प्रेसकापी भी वहीं की एक प्रति से करवा ली गई थी पर उक्त ग्रन्थमाला का प्रकाशन स्थगित हो जाने से वह प्रेसकापी योंही पड़ी रही, जिसे अब सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है।

प्रस्तुत जैन रामायण (काव्य) का अनेक दृष्टियों से महत्व है। इसका मूलाधार प्राकृत भाषा का सीता चरित्र है जो अभी तक प्रकाशित नहीं हो पाया है। जैन राम कथा का सवसे

पहला ग्रन्थ विमलसूरि का पउमचरियं हिन्दी अनुवाद के साथ प्राकृत ग्रन्थमाला से प्रकाशित हो चुका है। इस ग्रन्थ का भी उल्लेख प्रस्तुत सीताराम चौ० मे भी किया गया है पर सीता-चरित्र—जिसके आधार से इस चौपाई की रचना हुई—का प्रकाशन होना भी अत्यावश्यक है। दोनों ग्रन्थ प्राकृत भाषा मे और प्राचीन है पर कथा एव नामों मे कहीं-कहीं अन्तर भी है।

प्रस्तुत सीताराम चौ० की कथा को सर्व साधारण समझ सके इसलिए उसका संक्षिप्त सार भी ग्रन्थ के प्रारम्भ मे दे दिया गया है। प्रो० फूलसिंह और डा० कन्हैयालाल सहल के प्रस्तुत ग्रन्थ सम्बन्धी प्रकाशित लेखों को इस ग्रन्थ मे देने के साथ साथ राजस्थानी भाषा की रामचरित सम्बन्धी रचनाएँ और कविवर समयसुन्दर का विस्तृत परिचय भी भूमिका मे दिया गया है। अन्त मे चौपाई मे प्रयुक्त देशी-सूची भी दे दी गई है। शब्दकोष देने का विचार था पर ग्रन्थ बड़ा हो जाने से वह विचार स्थगित रखना पड़ा है। यों कथासार दे देने से ग्रन्थ को समझने मे कोई कठिनाई नहीं रहेगी।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी की जिस प्रति से पहले नकल करवायी थी उसमे लेखन प्रशस्ति नहीं थी। फिर हमारे संग्रह की सं० १७३१ की लिखित प्रति से प्रेसकापी का मिलान किया गया। अन्त मे अनूप संस्कृत लाइब्रेरी मे ही कवि के स्वयं लिखित प्रस्तुत चौपाई की एक और प्रति प्राप्त हुई, सरसरी तौर से उससे भी मिलान कर लिया गया है। एवं स्व० पूरणचन्दजी नाहर के संग्रह की प्रति का भी इसके संपादन में उपयोग किया गया है।

इस तरह अपनी चिरकालीन इच्छा को फलवती होते देखकर हमें बड़ी प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

राजस्थानी शब्दकोष के निर्माण एवं प्रकाशन का प्रयत्न कई स्थानों मे काफी वर्षों से हो रहा है पर उसमे राजस्थानी जैन रचनाओं के शब्दो का उपयोग जहाँ तक नहीं होगा, वहाँ तक वह कार्य अधूरा ही रहेगा इसलिए ऐसे ग्रन्थों का प्रकाशन बहुत ही आवश्यक है।

जैनेतर राजस्थानी राम काव्यो मे चारण कवि माधोदास का राम रासो विशेष महत्व का है। उसे भी इन्स्टीट्यूट से प्रकाशित करने की योजना थी और डॉ० गोवर्द्धन शर्मा को उसके सम्पादन का काम भी सौंप दिया गया था पर वह समय पर पूरा नहीं हो सका इसलिए उसे प्रकाशित नहीं किया जा सका है। अगली योजना मे इन्स्टीट्यूट को सरकार से प्रकाशन सहायता मिली तो उसे भी पाठकों की सेवा मे प्रस्तुत किया जायगा।

प्रस्तुत ग्रंथ सम्पादन मे जिन संग्रहालयों की प्रतियों का व जिन विद्वानो के लेखों का उपयोग किया गया है उनके प्रति आभार प्रदर्शित करना हमारा कर्तव्य समझते हैं।

अगरचन्द नाहटा
भँवरलाल नाहटा

अनुक्रमणिका

राजस्थानी का एक रामचरित काव्य

समयसुंदर रचित सीताराम चौपाई

(प्रो० फूलसिह "हिमांशु")

कविवर समयसुंदर का यह राजस्थानी रामकाव्य सं० १६७७ से ८३ के बीच रचा गया है इसका कथासार इस प्रकार है :—

राजा श्रेणिक के पूछने पर गौतम मुनि उन्हें कथा कहते हैं— वेगवती एवं मधुपिंगल के जीव रानी वैदेही के गर्भ से क्रमशः सीता और भामंडल के नाम से उत्पन्न हुये। अयोध्या के राजा दसरथ की रानी अपराजिता से पद्म (राम) सुमित्रा से लक्ष्मण तथा कैकेयी से भरत और शत्रुघ्न उत्पन्न हुए। राम एवं सीता का परिणय। राम को राज्य दे दशरथ द्वारा जिन दीक्षा ग्रहण के निश्चय पर अपने स्वयम्वर में राजा दशरथ का कौशल से रथ हाँकने पर कैकेयी द्वारा प्राप्त वर को भरत के राज्यतिलक के रूप में माँगना। राम लक्ष्मण का सीता सहित वनवास गमन। दशरथ द्वारा दीक्षा ग्रहण। कैकेयी द्वारा ग्लानि अनुभव। भरत को भेज राम को लौटाने का प्रयत्न। कैकेयी का भी राम के पास प्रायश्चित करने हेतु पहुँचना। किन्तु राम द्वारा समझा कर वहीं भरत का राजतिलक।

वनवास —काल में कई कथा-प्रसंग। लक्ष्मण द्वारा कई विवाह। नन्दावर्त्त के राजा अतिवीर्य और भरत के बीच होने वाले युद्ध में राम-लक्ष्मण द्वारा नट वेश बना, अतिवीर्य को वन्दी बनाना दण्ड-

कारण्य में जटायु-मिलाप। किसी नदी तट पर स्थायी निवास। लक्ष्मण द्वारा शम्बुक वध। रावण की वहिन चन्द्रनखा (शम्बुक की माता) द्वारा पुत्र शोक भूल कर राम-लक्ष्मण से प्रणय निवेदन। खरदूषण (चन्द्रनखा का पति) लक्ष्मण के बीच युद्ध। लक्ष्मण द्वारा विपत्ति का निर्धारित संकेत 'सिंहनाद, रावण द्वारा छल से कर दिये जाने पर राम की अनुपस्थित में सीता-हरण। जटायु युद्ध। नकली सुग्रीव 'सहसगति' का राम द्वारा वध। राम सुग्रीव मैत्री। हनुमान द्वारा सीता के पास लंका पहुँच राम का सन्देश लेना व लंका उजाड़ना। लक्ष्मण द्वारा कोटिशिला उठाना, नारायण के अवतार की पुष्टि। राम रावण युद्ध मे लक्ष्मण की मूर्च्छा का विशल्या द्वारा मोचन। इसी बीच रावण द्वारा वहुरूपणी विद्या सिद्ध करना। रावण के चक्र से ही लक्ष्मण द्वारा रावण वध। मन्दोदरी, चन्द्रनखा आदि का जिन दीक्षा ग्रहण करना। विभीषण का राज्याभिषेक। अयोध्या-आगमन भरत द्वारा दीक्षा-ग्रहण।

सीता के सम्बन्ध मे लोकापवाद को सुन कर राम द्वारा गर्भवती सीता को वनवास। वज्रजंघ द्वारा वहिन मानकर सीता का स्वागत। लव कुश का जन्म। दोनों का विवाह, दोनों का अयोध्या पर आक्रमण। पिता पुत्रों का मिलन। सीता द्वारा अग्निपरीक्षा में सफल होने पर जिन दीक्षा-ग्रहण। इन्द्र की प्रशंसा पर दो देवों द्वारा राम लक्ष्मण के भ्रातृ प्रेम की परीक्षा मे लक्ष्मण की मृत्यु। आगे चल कर राम द्वारा दीक्षाग्रहण तथा केवल्य प्राप्त कर मोक्ष गमन। ग्रन्थान्त में ग्रन्थ महिमा एवं कवि परिचय 'सीताराम चउपई' की राम कथा संक्षेप मे यही है। राम कथा से जुड़ी हुई और घटनायें भी ग्रन्थ मे

वहुत है सम्पूर्ण रचना नौ खण्डों में विभक्त है। जिनका नामकरण कवि ने प्रत्येक खण्ड के अन्त में किया है।

महाकाव्य सर्ग वद्ध किया जाता है। यह रचना अनेक खंडों में लिखी गई है और वहुत वड़ी है। जीवन का सर्वांगीण चित्रण हमें इसमें मिलता है। नायक स्वयं राम है जिनके वीरत्व में धीरत्व में सन्देह का कोई स्थान नहीं। वृत ऐतिहासिक है ही जिसमें पीछे कवि का महद्दुद्देश्य राम गुणगान स्पष्ट है। छन्द की विविधता, रसों का पूर्ण परिपाक, यह सब इस रचना को प्रवन्ध काव्य की कोटी में ला खड़ा करते हैं। कवि ने स्वय इस ओर सर्गान्त में संकेत कर दिया है—इति श्री सीता राम प्रवन्धे।" इस प्रकार प्रस्तुत ग्रन्थ एक चरितात्मक प्रवन्ध काव्य सिद्ध होता है जिसमें अनेक का सम्बन्ध सूत्र नायक (राम) की कथा से जोड़ दिया गया है। चौपाई छन्द की अधिकता के साथ-साथ अन्य छन्द भी प्रयुक्त किये गये हैं अतः चौपाई की प्रधानता होने पर भी एवं 'प्रबन्ध' के पर्याय के रूप में भी 'चउपई' नाम रखा गया है।

ग्रन्थ का प्रारम्भ—ग्रन्थ का प्रारम्भ कवि ने परम्परानुसार मंगलाचरण से किया है।

स्वस्तिश्री सुख सम्पदा, दायक अरिहंत देव

× × ×

निज गुरुचरण कमल नमु, त्रिण्ह तत्व दातार

× × ×

समरू सरसति सामिनी, एक करूँ अरदास।

भाषा-विचार—प्रस्तुत ग्रन्थ की भाषा शुद्ध मध्य युगीन राज-स्थानी है। कवि की भ्रमणशील प्रवृत्ति के कारण बीच-बीच में गुज-राती शब्दों का बहुल प्रयोग एवं सिंधी, उर्दू, फारसी आदि के शब्द भी स्वभावतः आ गये हैं चलती बोलचाल की भाषा होने के कारण ग्रन्थ अधिक सरस एवं मधुर हो गया है। शब्दों में लय का उन्मेष है, कर्ण कटुता नहीं। उकारान्त एवं इकारान्त शब्दों का बहुल प्रयोग है यथा—लीधउ, पामउ, काजरउ, साथइ, चालइ, सोहइ, माथइ आदि। विभक्तियाँ भी लुप्त ही रही है, यथा—लगि, घरि, घरे आदि।

फारसी आदि के विदेशी शब्द भी आ गये है यथा—फौज, वलिम, दिलगीर। सम्भवतः कवि के सिन्ध प्रवास का यह प्रभाव है।

वर्णन के अनुकूल शब्दावली का निर्माण कवि की अपनी विशेषता है। अनुकरण मूलक शब्द द्वारा भयानकता और भी बढ गई है-

'पड़तइ भुवन धरा पिण काँपी, सेपनाग सलसलिया
लंका लोक सवल खलभलिया, उदधि नीर ऊछलिया।

शैली—कवि कवि की शैली सरल है। कथा की दीर्घता के कारण सरल, सीधी सादी पद्धति में कवि कथा को कहता चला गया है। हाँ, जहाँ उसे वर्णन का थोड़ा भी अवकाश मिला है, वहाँ बहुत लाघव से कुछेक शब्दों में वर्णन द्वारा चित्र खड़ा किया गया है जो अपने आप में पूर्ण है, आकर्षक है।

कहावत एवं मुहावरो के प्रयोग से शैली और भी आकर्षक बन गई है। सीता के प्रति लोकापवाद के चक्रवात के मूल मे कवि ने

सहज तर्क पद्धति का आश्रय लिया है जिसकी सत्यता में स्वयं राम भी सन्देह न कर सके थे।

भूखो भोजन खीर, विण जिम्या
छोडइ नही, इम जाणइ सही रे
तरस्यो चातक नीर, सुपडित
सुभाषित रसियो किम तजइ रे
दरिद्र लाधो निधान, किम छोडइ
जाणइ इम वलि नहिं सपजइ रे
तिण तु निश्चय जाणि, भोगविनइ
मुकी परी सीता रावणइ रे

और तव किसीके द्वारा सीता के सौन्दर्य के कारण राम द्वारा उसको रख लेने की बात कही जाती है तो दूसरा तर्क और भी प्रवल हो सम्मुख आता हैं।

'पेटइ को घालइ नही अति वाल्ही छुरी रे लो।'

और सीता को वनवास दे दिया गया।

'आपदा पड्या न को आपणो, रे लाल
कुण गिणइ सगपण घणो, रे लाल

कहावत एवं मुहावरों की इस तर्क-पद्धति द्वारा कवि स्वाभाविकता का स्पष्ट स्वरूप खड़ा करने में सफल हुआ है जो इनकी शैली का सहज गुण वन गया है।

वर्णन—वर्णनों का वाहुल्य नहीं है। जहाँ कहीं वर्णन किया है, वहाँ विलकुल नपे तुले शब्दों में ही कवि एक चित्र खड़ा कर गया है। एक, दो वर्णन देखिये जो कितने स्वाभाविक वन पड़े हैं—

सूने नगर का वर्णन ।

'गाइ भैंसि छुटी भमइ, धान चून भर्या ठाम
गोहनी गोरस सूं भरी, फल फूल भर्या ठाम
मारिग भागा गाडलां, छूट्या पड़या वलद
ठामि ठामि दीसइ घणा, पणि नहिं मनुष सवद्द

पुत्र जन्मोत्सव वर्णन

'घर वारि वन्नरमाल वाँधी, कुकुना हाथा धरइ
मुक्त गूढ गरभा गोरडी ए, पुत्र जायउ इम कहइ
सहु मिली सूहव गीत गायइं, हीयउ हरखइ गहगहइ ।'

प्रकृति-वर्णन—प्रकृति वर्णन में कवि ने कहीं रस नहीं लिया है। दण्डकारण्य वन का वर्णन केवल इन्हीं पंक्तियो में समाप्त कर दिया है।

'गिरी वहु रयणे भर्यो, नदी ते निरमल नीर
वनखड फल फूले भर्या, इहाँ वहु सुख सरीर ।'

भाव व्यंजना—कवि की पैनी दृष्टि सभी रसों पर गई है। वस्तुतः घटनाओ का इतना विस्तृत धरातल मिल जाने पर ही कवि की प्रतिभा खुल कर ग्रन्थ में आद्यान्त विखर सकी है रसों का परिपाक देखिये कितना स्वभाविक प्रतीत होता है।

शृङ्गार—शृङ्गार के दोनों पक्षों संयोग एवं विप्रलम्भ के बहुत ही आकर्षक एवं मार्मिक चित्र सहज रूप से अंकित हो गये हैं। परम्परागत सीता का नख सिख वर्णन तो शृङ्गार का एक संयत रूप लिए हुए है ही, पर गर्भवती सीता का यह चित्र तो अपने आप मे पूर्ण सजीव है, स्वाभाविक है—

'वज्रजघ राजा घरे, रहती सीता नारि
गर्भ लिंग परगट थयो, पाडुर गाल प्रकारि
थणमुख श्यामपणो थयो, गुरु नितंब गति मद
नयन सनेहाला थया, मुखि अमृत रसविंद ।,

लंका में राम के विरह में राक्षसो से घिरी सीता की अवस्था में कितनी दयनीयता है—

'जेहवी कमलनी हिम बली, तेहवी तनु बिछाय
आँखे आँसू नाखती, धरती दृष्टी लगाय
केस पास छूटइ थकइं, डावइं गाल दे हाथ
नीसासा मुख नांखती, दीठी दुख भर साथ ।'

वियोग की दसों दशाओं का चित्रण हमे ग्रन्थ में मिलता है निर्वासित सीता के गुणों का स्मरण कर राम विलाप करने लग जाते हैं—

'प्रिय भाषिणी, प्रीतम अनुरागिनी
सघउ घणु सुविनीत
नाटक गीत विनोद सह मुझ
तुझ विण नावइ चीत
सयने रम्भा विलास गृह काम-काज
दासी माता अविहड़ नेह
मंत्रिवी बुद्धि निधान धरित्री क्षमा निधान
सकल कला गुण नेह

ऐसी निर्दोषिता होते हुए भी बनवास दे देने के कृत्य पर राम को आत्म ग्लानि हो उठती है—

धिग-धिग मूढ़ सिरोमणी हुँ थयो दुख तणी महा खाणि
दुरजण सोकि तपो दुरवचने हुइ हासी घर हाणि।

वात्सल्य—विप्रलंभ का एक मार्मिक प्रसंग देखिये। रानी वैदेही का, पुत्र भामण्डल के हरण पर यह विलाप मातृ हृदय की घनीभूत वेदना को हमारे अन्तरतम मे उतारता चला गया है।—

वीररस—राम रावण युद्ध का एक सजीव चित्र।

'सरणाइ वाजइ सिंधूडइ', मदन मेरि पणि वाजइ'
ढोल दमामा एकल घाई, नादइ अम्बर गाजइ
सिंहनाद करइं रणसूरा, हाक वुंब हुँकारा
काने सवद पड्यो सुणियइ नहीं, कीधा रज अंधारा
युद्ध माहोमाहि सबलो लागे, तीर सड़ासड़ि लागी
जोर करीनइं दे मारता, सुभटे तरुयारि भागी

और भीषण युद्ध के बाद रक्तकी नदी वह गई।

'वहा रुधिर प्रवाह। नू मार्‍या हो।
मार्‍या माणस तिरजन्च वहुपरी हो॥'

भयानक—राम द्वारा धनुर्भंग होने पर।

धरणी धूजी पर्वत कांप्या, शेषनाग सलसलिया
गल गरजारव कीधउ दिग्गज, जलनिधि जल ऊछलिया
अपछर वीहती जइ आलिंग्या, आप आपण भरतार
राखि राखि प्रीतम इम कहती, अम्हनइ तुं आधार

करुण—लक्ष्मण की मृत्यु पर रानियों का विलाप, शम्बुक-वध पर

चन्द्रनखा विलाप, रावण की मृत्यु पर मन्दोदरी आदि रानियो का विलाप बहुत ही करुण बन गया। लक्ष्मण की रानियों का यह रुला देनेवाला विलाप घनीभूत वेदना का एक अतिक्रमण है।

पोकार करतां हीयो फाटइं, हार त्रोड़इ आपणा
आभरण देह थकी उतारइ, झरइं आँसू अति घणा

और तब इस तरह की अश्रुधारा में कवि निर्वेद की एक धारा और मिला देता है।

शान्त रस—लक्ष्मण पर चक्र व्यर्थ जाने पर रावण आत्मग्लानि के साथ संसार की निस्सारता का समर्थन करने लगता है।

'धिग मुझ विद्या तेज प्रतापा
रावण इण परि करइ पछतापा
हा हा ए ससार असारा,
बहुविध दुखु तणा भण्डारा
हा हा राज रमणी पणि चचल,
जौवन उलर्यो जाय नदी जल
सोलइ रोग समाकुल देहा,
कारमा कुटुम्ब सम्बन्ध सनेहा

अलंकार योजना—अलंकारों की ओर कवि का आग्रह नहीं हुआ करता, कविवर समयसुन्दरका भी नहीं है। भाषा और शब्दा-वली ही ऐसी है कि जब कवि भाव विभोर हो उठता है तो अनुप्रास तथा अलंकार स्वयं खिंचे चले जाते हैं। अस्तु, यह अलंकरण बिलकुल स्वाभाविक हुआ है देखिये—

अनुप्रास—

(क) "सात खेत्र मिलि सामठा, तउ सगला सुख होय
तिण कारणि कहुँ सातमो, खड सुणो सहु कोय।"

(ख) "हिव वीजउ खंड बोलस्यूँ, विहुँ वाधइं वहु प्रेम"

(ग) "सीतानी परि सुख लहउ, लाभउ लील विलास।"

उपमा—

(क) जेहवी कमलनी हिमवली, तेहवी तनु विछाय

परम्परागत उपमानों के साथ-साथ नये उपमानों का प्रयोग कवि की सूझ है—

(ख) झालि पगे पछाडिस्युँ, वस्त्र धोवी धोयइ जेम

(ग) मत चालणी सरिखा होज्यो रे

उत्प्रेक्षा—युद्धभूमी में मरता हुआ रावण ऐसा लगा।

जाणे प्रबल पवन करि भागो
रावण ताल ज्युं दीखिवा लागो
जाणे केतु ग्रह उपरती
किंवा त्रुटि पड्यो ए धरती

अतिशयोक्ति (क) हनुमान द्वारा लंका विध्वंस—

'पड़तइ भुवन धरा पिण कापी
शेपनाग सलसलिया
लंका लोक सवल खलभलिया
उदधि नीर ऊछलिया

दृष्टान्त तथा उदाहरण—

(क) नजरि नजरि बिहुँनी मिली, जिमि साकर सुं दूध
मन मन सुं विहुनउ मिल्यउ, दूध पाणी जिम सूध

सन्देह (क) के देवी के किन्नरी, के विद्याधर काइ

इसी तरह संपूर्ण ग्रन्थ में अलंकारो का समावेश प्रयत्न नहीं, वल्कि स्पष्टतः स्वाभाविक है।

छन्द योजना—हमारे आलोच्य ग्रन्थ में अनुष्टुप छन्दों की गणनानुसार कुल ३७०० श्लोक है जिसकी ओर कवि ने स्वयं संकेत किया है—

त्रिण्ह हजारनइ सातसइ, माजनइ ग्रन्थनो मानो रे

सम्पूर्ण ग्रन्थ राजस्थानी लोक गीतों की विभिन्न ढाल राग-रागनियो की तर्ज पर अधिकाशतः चौपाई छन्द में लिखा गया है ग्रन्थ में लगभग ५० देशियाँ हैं जिनको प्रत्येक नये पद के प्रारम्भ में कवि ने स्पष्ट कर दिया है एक उदाहण देखिये—

प्रथम खण्ड की तीसरी ढ़ाल के प्रारम्भ में कवि लिखता है।

ढ़ाल त्रीजी सोरठ देस सोहामणउ, साहेलड़ी ए देवा तणउ निवास गय सुकुमालनी, चउढालियानी अथवा सोभागी सुन्दर तुफ बिन घड़ीय न जाय, ए देशी गीत एनी ढाल।

ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण दूहा छन्दमे है और उसके वाद एक ढ़ाल है जिसके वाद पुनः दोहा छन्द प्रयुक्त है। इस तरह ग्रन्थ मे आद्यन्त एक दूहा छन्द के वाद एक ढ़ाल और फिर दूहा छन्द फिर ढ़ाल यह क्रम चलता रहता है प्रत्येक नये खण्ड का प्रारम्भ दूहा छन्द से तथा अन्त सप्तम ढ़ाल के साथ होता है। इस प्रकार नौ खण्डों

के इस ग्रन्थ में कुल ६३ ढ़ाले हैं ग्रन्थ का अन्त क्रमानुसार ६३वीं ढाल के साथ होता है।

कवि ने अनेक दैवी शक्तियों का सहारा लेकर अतिप्राकृत तत्व का भी समावेश किया है। अनेक विद्याओं आदि के प्रयोग से कवि ने मन्त्रमुग्ध की भाँति स्तंभित करना स्वेच्छानुसार वेश बना लेना जैसे विद्याधरों के मायावी कौतुकों का वर्णन किया है इस अतिप्राकृत तत्व ने घटनाओं मे कौतुहल की यथेष्ट वृद्धि की है।

वस्तुतः कवि की प्रतिभा ने जानी पहचानी जैन राम कथा को भी एक नये आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी महान गीतकार समयसुन्दर ने अनेक विषयों पर लिखा है जिसमें लगभग दश हजार रास साहित्य ग्रन्थों में से हमारा यह आलोच्य ग्रन्थ अपने विराट् रूप मार्मिक प्रसंग एवं सहज सरसता के कारण अपना महान अस्तित्व रखता है सरस सरल भाषा के साँचे में राम कथा को ढ़ाल गाकर सुनाने का कवि का यह प्रयास अनेक दृष्टि-कोणों से स्तुत्य है। [मरु भारती वर्ष ७ अंक १ से]

भूमिका

राजस्थानी भाषा में रामचरित सम्बन्धी रचनाएँ

पुरुषोत्तम राम और कृष्ण भारतीय धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना के प्रतीक हैं। दो तीन हजार वर्षों से इनके आदर्श चरित्रों ने भारतीय जनता के जीवनस्तर को प्रगतिमान बनाने मे महत्व का काम किया है। इनके सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के साहित्य का निर्माण हुआ। जिनमें से रामायण और महाभारत भारतीय साहित्य में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इन ग्रंथों में वर्णित कथाओ एवं प्रसंगों पर और भी छोटे-बड़े सैकड़ों ग्रंथ रचे गये, प्रत्येक भारतीय भाषा में राम और कृष्ण चरित्र पाए जाते हैं। आगे चलकर तो ये महापुरुष, अवतार के रूप में प्रसिद्ध हुए और इनकी भक्ति ने करोडों मानवों को आप्लावित किया। भक्तों के हृदयोद्गार के रूप मे जो भक्तिकाव्य व गीत प्रगटित हुए उनकी संख्या भी बहुत विशाल है। पुरुषोत्तम श्री कृष्ण से मर्यादापुरुषोत्तम राम का चरित्र मानव के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने मे अधिक सहायक हुआ है। श्री कृष्ण की लीलाओं से कुछ खराबियाँ भी आईं, पर राम चरित के आदर्शों ने वैसी कोई विकृति नहीं की*। इसीलिए हमारी दृष्टि में राम कथा को आदरणीय

---

* प० शिवपूजनसिंह, सिद्धान्तशास्त्री, विद्यावाचस्पति, कानपुर वेदवाणी वर्ष १३ अक ४ में प्रकाशित कृष्णावतार की कल्पना' नामक लेख में लिखते हैं—"राम व कृष्ण की पूजा सर्वत्र भारतवर्ष में प्रचलित है। रामचन्द्र जी को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है क्योंकि वे सर्वत्र मर्यादाओं का पालन करते थे। अपने जीवन में उन्होंने कभी बुरा कर्म नही किया। कृष्णजी के

व ऊँचा स्थान मिलना चाहिये। राम राज्य एक आदर्श राज्य माना माना जाता है उसका बखान हर व्यक्ति करता है। महात्मा गांधी ने भी अपने स्वराज्य का आदर्श, रामराज्य ही रखा था। उन्होंने राम नाम की महिमा को भी अद्‌भुत माना है। गांधीजी और विनोवा जैसे संत सब रोगों के निवारण का इसे अमोघ उपाय मानते हैं। साधारणतया जनरुचि भोग-विलास की ओर अधिक आकर्षित नजर आती है और उसमें कृष्ण की लीलाओं से वहुत स्फूर्ति और प्रेरणा मिलने से विगत कुछ शताव्दियों से कृष्ण-भक्ति का प्रचार अधिक वढ़ा है। पर इधर ३०० वर्षों मे तुलसीदास की रामायण ने जनता को वहुत वड़ी नैतिक प्रेरणा दी है। राम-भक्ति के प्रचार में इस राम चरित का वहुत वड़ा हाथ है।

राम कथा का प्रचार भी वहुत ही व्यापक एवं विस्तृत रहा है। इस कथा के अनेक रूप विविध धर्म, सम्प्रदायों एवं देश-विदेशों में प्राप्त हैं। भारत के सभी भाषाओं के प्राथमिक काव्य प्रायः राम-चरित्र को लेकर वनाए गए हैं। वाल्मीकि का रामायण संस्कृत का आदि काव्य माना जाता है। इसी प्रकार विमलसूरि का 'पउम चरियं' भी प्राकृत भाषा का आदि काव्य माना जा सकता है। जैन-ग्रंथों

नाम पर आज कितना अनाचार फैला हुआ है। इसे सभी जानते हैं। जिसको धनोपार्जन करना होता है और अपनी काम-पिपासा शात करनी होती है वह अपने को कृष्णावतार घोषित कर देता है। कृष्णजी को योगीराज कहा जाता है। वे वेदमन्त्रों के प्रचारक, राजनीतिज्ञ, कूटनीतिज्ञ और ज्ञानी थे। पर, श्रीमद् भागवत एकादश स्कध में उनका जीवन-चरित्र कुछ विकृत रूप में दिया गया है।"

में राम का अपर नाम "पउम" या पद्म पाया जाता है और यह काव्य उनके सम्बन्धी होने से ही उसका नाम 'पउम चरियं' है। इसी प्रकार अपभ्रंश का उपलब्ध पहला काव्य भी महाकवि स्वयंभू का 'पउम-चरिउ' है। कन्नड़ आदि अन्य भारतीय भाषाओं में भी रामकथा की प्रधानता मिलती है। तामिल, तेलुगु, मलयालम, सिंहली, कश्मीरी, बंगाली, हिन्दी, उड़िया, मराठी, राजस्थानी, गुजराती, आसामी, के अतिरिक्त विदेश—तिव्वत, खोतान, हिन्देशिया, हिन्द-चीन, स्याम, ब्रह्मदेश आदि देशों की भाषाओं में रामकथा पाई जाती है। धर्म सम्प्रदाओं को लें तो हिन्दू धर्म में तो इसकी प्रधानता है ही पर जैन एवं बौद्ध ग्रन्थों में भी रामकथा पाई जाती है। जैनों में तो रामचरित्र मानस सम्बन्धी पचासों ग्रंथ है। हिन्दू धर्म सम्प्रदायों मे तो शैव एवं शाक्त आदि सम्प्रदायों का प्रभाव रामकथा पर पड़ा है। राम कथा की इतनी व्यापकता का कारण उसकी आदर्श प्रेरणा-त्मकता है। देश विदेश में स्थान स्थान पर प्रचारित हो जाने से इस कथा के अनेक रूप प्रचलित हो गए और प्राचीन कथा के साथ वहुत सी नई वातें जुड़ती गईं। बौद्ध-दशरथ जातक आदि में वर्णित राम कथा, जैन परम्परा की राम कथा आदि से हिन्दू धर्म में प्रच-लित राम कथा का तुलनात्मक अध्ययन करने से वहुत से नए तथ्य प्रकाश मे आते हैं। इन सब वातों की छान-वीन सन् १९५० में भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग से प्रकाशित रेवरेन्ड फादर कामिल वुल्के लिखित रामकथा (उत्पत्ति और विकाश) में भली भाँति की जा चुकी है। सुयोग्य लेखक ने प्रस्तुत शोध प्रवंध की तैयारी में वड़ा भारी श्रम किया है। अन्य शोध प्रवन्धों से इसकी तुलना करने पर, दूसरे

निवंध इसके सामने फीके मालूम पड़ते हैं। एक विदेशी व्यक्ति द्वारा भारतीय रामचरित पर इतना विशद प्रकाश डालना वास्तव में वहुत ही प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय कार्य है। इस ग्रन्थ का अभी परिवर्द्धित सस्करण भी प्रकाशित हो चुका है। राम भक्ति-सम्प्रदायों व उनके साहित्य के सम्बन्ध में दो तीन महत्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं।

वालमीकि रामायण भारत के सांस्कृतिक इतिहास के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जोधपुर के डा० शांतिस्वरूप व्यास ने 'वाल्मीकि' रामायण में भारतीय संस्कृति शीर्षक थीसिस लिखकर सराहनीय कार्य किया है। इस सम्वन्ध में उनके दो महत्वपूर्ण ग्रंथ सस्ता-साहित्य मंडल, नई दिल्ली से प्रकाशित हो चुके है। मैंने कामिल वुल्के के उक्त ग्रन्थ को भी पढ़ा तो देखा कि उसमें गुजराती के एक-दो साधारण रामचरित्र सम्बन्धी ग्रंथों का उल्लेख आया है पर राजस्थानी भाषा के रामचरित सम्बन्धी ग्रंथ उनकी जानकारी में नहीं आए। अतः मैंने इस विषय को अपने शोध का विषय बनाया और हर्ष की वात है कि मुझे अच्छी सामग्री प्राप्त हुई। मैं अपने शोध के परिणाम को विद्वानों के सम्मुख उपस्थित कर रहा हूं। यह लेख 'राजस्थानी भाषा में राम चरित' की सामग्री का परिचय देने वाला ही होगा। उन ग्रन्थों का स्वतन्त्र अध्ययन करके विशद विवेचन करना तो एक शोध प्रवन्ध का ही विषय है। डा० कन्हैयालाल सहल ने प्रो० फूलसिंह चौधरी को इस विषय में मार्ग दर्शन लेने के लिए मेरे पास भेजा था और कुछ कार्य उन्होंने किया भी था पर वे अपना शोध प्रवंध पूरा नहीं कर पाये।

राजस्थानी भाषा की सर्वाधिक सेवा चारणों और जैन यतियों ने की है। इसके पश्चात् ब्राह्मण आदि वैदिक विद्वानों का स्थान आता है। हिन्दी भाषा में भी राजस्थान में रामचरित्र सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ रचे गये है। राजस्थानी भाषा के रामचरित्र ग्रन्थों का आधार वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण और जैन रामायण है। तुलसीदास की रामायण से भी उन्हें प्रेरणा अवश्य मिली होगी, पर उन रचनाओ में उसका उल्लेख नहीं पाया जाता है। राजस्थान में सन्त कवियो आदि द्वारा जो हिन्दी में रामचरित्र लिखे गए है उन पर तुलसी रामायण का प्रभाव अधिक होना सम्भव है।

राजस्थान में गत कई शताब्दियों से रामभक्ति, कृष्ण भक्ति, शैव उपासना और शक्ति साधना का प्रचार कभी कहीं अधिक, कहीं न्यून रूप में चलता रहा है। इसमें राज्याश्रय का भी प्रधान हाथ रहा है। जब जहां के राजाओं ने जिस उपासना को अपनाया व बल दिया तो वहां की प्रजा में भी उसने जोर पकड़ लिया, क्योंकि यथा राजा तथा प्रजा उक्ति के अनुसार खास तौर से राज्याश्रित हजारों व्यक्ति तो राजाओं की प्रसन्नता पर ही आश्रित थे। अतः राजस्थान में राजाओं मे रामभक्त अधिक नहीं हुए पर कई सन्त सम्प्रदायों के ही कारण रामभक्ति का प्रचार हो सका है।

रामभक्ति का प्रचार भक्तों एवं संतों के द्वारा ही अधिक हुआ और सन्तों का प्रचार कार्य साधारण जनता मे ही अधिक रहा। इसलिए राजाओं में रामभक्त विशेष उल्लेखनीय जानने में नहीं आए। शैव और शाक्त ये राजस्थान के प्राचीन और मान्य सम्प्रदाय है। क्षत्रिय लोक शक्ति के उपासक तो होते ही है। योग माया करणीजी की

प्रसिद्धि के बाद शक्ति उपासना का स्वरूप ही कुछ बदल गया। प्राचीन शक्ति रूपिणी देवी सुडा, चामुँड़ा आदि के प्राचीन मन्दिर जोधपुर राज्य में प्राप्त हैं। विशेषतः सुंड़ा नामक पर्वत और ओसिया सोजत आदि के मन्दिर उल्लेख योग्य हैं। ओसियां की चामुंड़ा, जैन श्रावकों में सच्चिका देवी के रूप में मान्य हुई। कृष्ण भक्ति का भी राजस्थान मे अच्छा प्रचार रहा है, राजघरानो व विलासप्रिय जनता की रुचि तो उस ओर होना स्वाभाविक ही थी।

राजस्थान के अनेक क्षत्रिय राजवंश अपने को रामचन्द्रजी के वंशज मानते हैं। सुप्रसिद्ध राठौर सीसोदिया आदि सूर्यवंशी रामचन्द्रजी से अपनी वशावली जोड़ते हैं। राजस्थान का प्रसिद्ध प्रतिहार वंश अपने को रामचन्द्रजी के अनुज लक्ष्मण का वंशज मानता है। इस रूप मे तो राजस्थान में मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचंद्र का महत्व बहुत अधिक होना ही चाहिये। किराडू आदि स्थानों में रामावतार की मूर्तियाँ १३वीं १४वीं शताब्दी की मिली है। और ११वीं, १२ शताब्दी के देवालयों मे भी रामायण सम्बन्धी घटनाएँ उत्कीर्णित मिलती है और उन से राजस्थान में राम कथा के प्रचार व लोक प्रियता का पता चल जाता है।

राजस्थान के लोक गीतों में जो राम कथा सम्बन्धी अनेक गीत मिलते हैं, उनसे भी रामकथा की लोकप्रियता का परिचय मिलने के साथ-साथ कुछ नए तथ्य भी प्रकाश में आते है। उदाहरणार्थ—सीता के वनवास में उसकी ननद कारणभूत हुई इस प्रसंग के गीत जैसे अन्य प्रान्तों में मिलते है वैसे ही राजस्थान मे भी प्राप्त है।

राजस्थानी भाषा में रामचरित सम्बन्धी रचनाओं का प्रारम्भ १६वीं शताब्दी से होने लगता है और २०वीं तक उसकी परम्परा निरन्तर चलती रही है। उपलब्ध राजस्थानी भाषा के रामचरित्र गद्य और पद्य दोनों प्रकार के है। इसी प्रकार जैन और जैनेतर भेद से भी इन्हें दो विभागों में बांटा जा सकता है। इनमें जैन रचनाओं की प्राचीनता व प्रधानता उल्लेखनीय है।

रामचरित्र सम्बन्धी राजस्थानी जैन रचनाओंमें से कुछ तो सीता के चरित्र को प्रधानता देती है कुछ रामचरित्र को पूर्णरूप में विस्तार से उपस्थित करती है तो कुछ प्रसंग विशेप को संक्षिप्त रूप मे।

१—दि० ब्रह्म जिनदास रचित रामचरित्र काव्य ही राजस्थानी का सबसे पहिला राम काव्य है। इस रामायण की रचना सं० १५०८ में हुई, इसकी हस्तलिखित प्रति डुंगरपुर के जैन मन्दिर के भण्डार मे है।

२—इसके वाद जैन गुर्जर कविओ भाग १ के पृष्ठ १६६ में उपकेश गच्छ के उपाध्याय विनयसमुद्र रचित पद्मचरित का उल्लेख पाया जाता है। यह रामचरित्र काव्य जो सं० १६०४ के फाल्गुनमें बीकानेर में रचा गया है। दोनों अभिन्न ही है। पद्मचरित के आधार से वनाया गया। विनयसमुद्र के पद्मचरित की प्रति गौड़ीजी भंडार उदयपुर में है।

३—पिंगल शिरोमणि—सुप्रसिद्ध कवि कुशललाभने जैसलमेर के महाराजकुमार हरराजके नाम से यह मारवाड़ी भाषा का सर्व प्रथम छंद ग्रथ वनाया है उदाहरण रूप में राम कथा वर्णित है। राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर से प्रकाशित हो चुका है।

४—सीता चउपई—यह ३२७ पद्यों की छोटी रचना है। इसमें सीता के चरित्र की प्रधानता है, खरतर गच्छ के जिनप्रभसूरि शाखा के आचार्य जिनभद्रसूरि के समय में सागरतिलक के शिष्य समय-ध्वज ने इसकी रचना संवत् १६११ मे की। श्रीमाल मरडुला और गूजरवंशीय गढ़मल के पुत्र भीषण और दरगहमल्ल के लिए इसकी रचना हुई। इसकी संवत् १७०२ मे लिखित १६ पत्र की प्रति हंसविजय लाइब्रेरी, वड़ौदा में है।

५—सीता प्रबन्ध—यह ३४६ पद्यों में है। संवत् १६२८ रणथंभोर में शाह चोखा के कहने से यह रचा गया। 'जैन गूर्जर कविओ' भाग ३ पृष्ठ ७३३ में इसका विवरण मिलता है। प्रति नाहरजी के संग्रह (कलकत्ते) मे है।

६—सीता चरित्र—यह सात सर्गों का काव्य पूर्णिमा गच्छीय हेमरत्नसूरि रचित है। महावीर जैन विद्यालय, तथा अनंतनाथ भंडार बम्बई एवं वड़ौदा में इसकी प्रतियाँ हैं। पद्मचरित्र के आधार से इसकी रचना हुई। रचनाकाल का उल्लेख नहीं किया पर हेमरत्न सूरि के अन्य ग्रंथ सं० १६३६—४५ में मारवाड़ मे रचित मिलते है अतः यह भी इसके आस पास की ही रचना है।

७—राम सीता रास—तपागच्छीय कुशलवर्द्धन के शिष्य नगर्षि ने इसकी रचना १६४६ में की। हालाभाई भंडार, पाटण मे इसकी प्रति है और जैन गुर्जर कविओ भाग १ पृष्ठ २६० मे इसकी केवल एक ही पंक्ति उद्धृत होने से ग्रन्थ की पद्य संख्यादि परिमाण का पता नहीं चलता।

८—जैन रामायण—राजस्थानी भाषा के विशिष्ठ कवि जिनराज सूरिजी ने आचार्य पद प्राप्ति से पूर्व (राजसमुद्र नाम था, सं० १६७४ में आचार्य पद) इस रामचरित कथा की संक्षेप में रचना की। इसकी एक मात्र समकालीन लिखित २८ पत्रों की प्रति कोटा के खरतर गच्छीय ज्ञानभंडार में है, पर उसमें प्रशस्ति का अंतिम पद्य नहीं है।

६—लव कुश रास—पींपल गच्छ के राजसागर रचित, इस रास में राम के पुत्र लव कुश का चरित वर्णित है। पद्य संख्या ५७५ (ग्रंथा-ग्रन्थ ६००) है। संवत् १६७२ के जेठ सुदि ३ बुधवार को थिरपुर में इसको रचना हुई। उपर्युक्त पाटण भंडार में इसकी १२ पत्रों की प्रति है।

१०—सीता विरह लेख—इसमें ६१ पद्यो में सीता के विरह का वर्णन पत्र प्रेषण के रूप में किया गया है। संवत् १६७१ की द्वितीय आसाढ पूर्णिमा को कवि अमरचन्द ने इसकी रचना की। जन गूर्जर कविओ भाग १ पृष्ठ ५०८ में इसका विवरण मिलता है।

११—सीताराम चौपई—महाकवि समयसुन्दर की यह विशिष्ट कृति है। रचनाकाल व स्थान का निर्देश नहीं है पर इसके प्रारम्भ में कवि ने अपनी पूर्व रचनाओ का उल्लेख करते हुए नल दमयंती रास का उल्लेख किया है जो संवत् १६७३ मेडते में रायमल के पुत्र अमीपाल, खेतसी, नेतसी, तेजसी और राजसी के आग्रह से रचा गया। अतः सीताराम चउपइ संवत १६७३ के वाद (इन्हीं राजसी आदि के आग्रह से रचित होने से) रची गई। इसके छठे खण्ड की तीसरी ढाल मे कवि ने अपने जन्म स्थान साचोर में बनाने का उल्लेख किया है। कविवर के रचित साचौर का महावीर स्तवन संवत् १६७७ के

माघ में रचा गया। सम्भव है कि इसीके आस पास सीताराम चउपई की उक्त ढाल भी वहाँ रची गई हो। इस सीताराम चउपई की संवत् १६८३ की लिखित तो प्रति ही मिलती है, अतः इसका रचनाकाल संवत् १६७३ से ८३ के वीच का निश्चित है।

प्रस्तुत चउपई नव खण्ड का महाकाव्य है। नवों रसों का पोषण इसमें किए जाने का उल्लेख कवि ने स्वय किया है। प्रसिद्ध लोक गीतों की देशियों (चाल) में इस ग्रंथ की ढालें वनाई गईं, उनका निर्देश करते हुए कवि ने कौनसा लोक गीत कहाँ कहाँ प्रसिद्ध है, उल्लेख किया है। जैसे—

(१) नोखा रा गीत—मारूवाडि ढूंढाडि, माहे प्रसिद्ध छै।

(२) सूमरा रा गीत—जोधपुर, मेडता, नागौर, नगरे प्रसिद्ध छै।

(३) तिल्ली रा गीत—मेडतादिक देशे प्रसिद्ध छै।

(४) इसी प्रकार "जेसलमेर के जादवा" आदि गीतो की चाल में भी ढालें वनाई गई।

प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकों के समक्ष उपस्थित है अतः विशेष परिचय ग्रंथ को पढ़कर स्वयं प्राप्त करें।

१२—राम यशो रसायन—विजयगच्छ के मुनि केसराज ने संवत् १६८३ के आश्विन त्रयोदशी को अन्तरपुर मे इसकी रचना की। ग्रंथ चार खण्डों में विभक्त है। ढालें ६२ हैं। इसका स्थानकवासी और तेरहपंथी सम्प्रदाय में वहुत प्रचार रहा है। उन्होंने अपनी मान्यता के अनुसार इसके पाठ में रद्दो-वदल भी किया है। स्थानकवासी समाज की ओर से इसके दो तीन संस्करण छप चुके हैं। पर मूल पाठ आनंद काव्य महोदधि के द्वितीय भाग में ठीक से छपा है। इसका

परिमाण समयसुन्दर के सीताराम चौपाई के करीव का है। इसकी २ हस्तलिखित प्रतियाँ हमारे संग्रह में हैं।

१३—रामचन्द्र चरित्र—लौंका गच्छीय त्रिविक्रम कवि ने संवत् १६९९ सावण सुदि ५ को हिसार पिरोजा द्रंग में इसकी रचना की। 'त्रसष्टि शलाका पुरुष चरित्र' के आधार से नव खण्डों एवं १३५ ढालों मे यह रचा गया है। इसकी १३० पत्रों की प्रति श्री मोतीचन्द जी के संग्रह में है। जिसके प्रारम्भ के २५ पत्र न मिलने से तीस ढालें प्राप्त नहीं है। इस शताब्दी के प्राप्त ग्रन्थों में यह सवसे वड़ा है।

१८वीं शताब्दी

१४—रामायण—खरतरगच्छीय चारित्रधर्म और विद्याकुशल ने संवत् १७२१ के विजयदशमी को सवालक्ष देस के लवणसर में इसकी रचना की। प्राप्त जैन राजस्थानी रचनाओं मे इसकी यह निराली विशेषता है कि कवि ने जैन होने पर भी इसकी रचना जैन ग्रन्थों के अनुसार न करके वालमीकि रामायण आदि के अनुसार की है :—

> वाल्मीक वाशिष्टरिसि कथा कही सुभ जेह।
> तिण अनुसारे राम जस, कहिये घणो सनेह॥

सुप्रसिद्ध वालमीकि—रामायण के अनुसार इसमें वालकाण्ड उत्तरकाण्ड आदि सात काण्ड है। रचना ढालवद्ध है। ग्रन्थ का परिमाण चार हजार श्लोक से भी अधिक का है। सीरोही से प्राप्त इसकी एक प्रति हमारे संग्रह में है।

१५—सीता आलोयणा—लौंका गच्छीय कुशल कवि ने ९३ पद्यों में सीता के बनवास समय में किए गए आत्म विचारणा का इसमें

गुम्फन किया है। कवि की अन्य रचनाएं संवत् १७४६—८६ की प्राप्त होने से इसका रचनाकाल १८वीं शताब्दी निश्चित है।

१६—सीताहरण चौढ़ालिया—तपागच्छीय दौलतकीर्ति ने ४६ पद्यों व ४ ढाल में सीता हरण के प्रसंग का वर्णन किया है। रचना बीकानेर मे संवत् १७८४ में बनाई गई है। इसकी दो पत्रों की प्रति हमारे सग्रह मे है।

१७—रामचन्द्र आख्यान—इसमे धर्मविजय ने ५५ छप्पय कवित्तो में रामकथा संक्षेप मे वर्णन की है। इसकी पांच पत्रों की प्रति (१६वीं शताब्दी के प्रारम्भ की लिखित) मोतीचन्दजी खजांची के संग्रह में है, अतः रचना १८वीं शताब्दी की होना सम्भव है।

ब्र० जिनदास के रामचरित को छोड़ कर उपर्युक्त सभी रचनाएं श्वेताम्बर विद्वानों की है, दिगम्बर रचनाओं मे संवत् १७१३ में रचित।

१८—सीता चरित्र हिन्दी में है जो कवि रायचन्द के रचित है। उसकी १४४ पत्रों की प्रति आमेर भण्डार मे है। गोविन्द पुस्तकालय, बीकानेर में भी इसकी एक प्रति प्राप्त है।

१६—सीताहरण—दि० जयसागर ने सं० १७३२ मे गंधार नगर में इसकी रचना की भाषा गुजराती मिश्रित राजस्थानी है। उसकी ११४ पत्रों की प्रति उपर्युक्त आमेर भण्डार में है।

१६वीं शताब्दी

२०—ढ़ाल मंजरी—राम रास-तपागच्छीय सुज्ञानसागर कवि ने संवत १८२२ मिगसर सुदी १२ रविवार को इसकी उदयपुर में रचना की। भाषा मे हिन्दी का प्रभाव भी है। चरित्र काफी विस्तार से

वर्णित है। ग्रन्थ ६ खण्डों में विभक्त है। इसकी प्रति लींबडी के ज्ञान-भण्डार में १८१ पत्रों की हैं। सम्भवतः राजस्थानी जैन रामचरित ग्रन्थों में यह सबसे बड़ा है। ग्रन्थकार बड़े वरागी एवं संयमी थे। इनकी चौवीसी आदि रचनाए सभी प्राप्त है।

२१—सीता चउपई—तपागच्छीय चेतनविजय ने संवत् १८५१ के वैसाख सुदि १३ को बंगाल के अजीमगंज में इसकी रचना की। इनके अन्य रचनाओं की भाषा हिन्दी प्रधान है। प्रस्तुत चउपई की १८ पत्रों की प्रति बीकानेर के उ० जयचन्दजी के भंडार व कलकत्ते के श्री पूर्णचन्द नाहर के संग्रह में है। परिमाण मध्यम है।

२२—रामचरित—ऋषि चौथमल ने इस विस्तृत ग्रन्थ की रचना की। श्री मोतीचन्दजी के संग्रह मे इसकी दो प्रतियां पत्र ६५ व ८४ की है। जिनमें से एक में अंत के कुछ पत्र नहीं है और दूसरी में अंत का पत्र होने पर भी चिपक जाने से पाठ नष्ट हो गया है इसका रचनाकाल सं० १८६२ जोधपुर है। इनकी अन्य रचना ऋषिदत्ता चौपाई संवत् १८६४ देवगढ़ (मेवाड़) में रचित हैं। प्रारम्भिक कुछ पद्यों को पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि समयसुन्दर के सीताराम चौपाई के कुछ पद्य तो इसमे ज्यों के त्यों अपना लिये है।

२३—राम रासो—लक्ष्मण सीता वनवास चौपाई—ऋषि शिवलाल ने संवत् १८८२ के माघ वदि १ को बीकानेर की नाहटों की बगीची में इसकी रचना की, इसमें कथा संक्षिप्त है। १२ पत्रो की प्रति यति मुकनजी के संग्रह में है।

२० वीं शताब्दी

२४—राम सीता ढालीया—तपागच्छीय ऋषभविजय ने संवत्

१६०३ मिगसर वदि २ बुध को सात ढालों में संक्षिप्त चरित्र वर्णन किया है। भाषा गुजराती प्रधान है।

२५—वीसवीं के उत्तरार्द्ध में अमोलक ऋषि ने सीता चरित्र बनाया है वह मैंने देखा नहीं है उसकी भाषा हिन्दी प्रधान होगी।

वीसवीं शदी में (२६) शुक्ल जैन रामायण—शुक्लचन्दजी (२७) सरल जैन रामायण—कस्तूरचन्दजी (२८) आदर्श जैन रामायण—चौथमलजी ने निर्माण की है।

फुटकर सती सीता गीत आदि तो कई मिलते है। गद्य में कई बालावबोध ग्रंथों में 'सीता चरित्र' संक्षेप में मिलता है उनका यहां उल्लेख नहीं किया जा रहा है। केवल एक मौलिक सीता चरित्र की की अपूर्ण प्राचीन प्रति हमारे संग्रह में है, उसीका कुछ विवरण आगे दिया जा रहा है।

गद्य

२६—सीता चरित भाषा—इसकी १८ पत्रों की अपूर्ण प्रति हमारे संग्रह से है, जो १६-१७वीं शताब्दी की लिखित है अतः इसकी रचना १६वीं शताब्दी की होनी सम्भव है। इसी तरह का एक अन्य संक्षिप्त सीता चरित्र (गद्य) मुनि जिनविजयजी संग्रह (भारतीय विद्या भवन, बम्बई) मे है।

इस प्रकार तथा ज्ञात जैन रचनाओं का परिचय देकर अब जैनेतर गद्य और पद्य रचनाओं (रामचरित्र सम्बन्धी ग्रन्थों) का परिचय दिया जा रहा है।

१७वीं शताब्दी

१ रामरासो—माधवदास दधवाडिया रचित यह काव्य खूब

प्रसिद्ध रहा है। प्रारम्भिक मंगलाचरण में कवि ने मुनि कर्माणंद को नमस्कार किया है पता नहीं वे कौन थे ? अन्तिम पद्यों में 'राज हुकम जगतेस रे' शब्दों द्वारा जगतसिंह राजा का उल्लेख किया है वे भी कहाँ के राजा थे ? निश्चित ज्ञात नहीं हुआ। इसकी पद्य संख्या प्रशस्ति के अनुसार ११३८ है। हमारे संग्रह में भी इसकी कई प्रतियाँ हैं।

डा० मोतीलाल मेनारिया ने माधोदास का कविताकाल १६६४ निश्चय किया है। राम रासो की पद्य संख्या १६०१ और उदयपुर की प्रति का लेखन समय १६६७ दिया है। उनके उद्धृत पद वास्तव में मूल ग्रन्थ के समाप्त होने के बाद लिखा गया है। उदयपुर प्रति में राज्याभिषेक का वर्णन अधिक है।

१८वीं शताब्दी

२—रुघरासो सं० १७२५ के मिगसर मे मारवाड़ के वालरवे में इसकी रचना रूघपति (रुघनाथ) ने की। इसकी प्रति कोटा भंडार में है।

३ राघव सीता रास—इस २२५ पद्योंवाली रचना की प्रति संवत् १७३५ की लिखी मिली है। इसकी भाषा व शैली वीसलदेव रासो की तरह है। राम रासो डिंगल शैली का ग्रन्थ है, तो यह वोलचाल की भाषा में लोकगीत की शैली का। इसकी प्रति बीकानेर के बड़े ज्ञानभंडार में है।

४ राम सीता रास—३४ पद्यों की इस लघु रास की दो पत्रों की संवत् १७३३ लिखित प्रति हमारे संग्रह मे है।

सूरज प्रकाश (कवियां करणीदान रचित) इस काव्य में राठोड़ो के के पूर्वज के रूप मे राम का चरित दिया है।

१६वीं शताब्दी

रघुनाथरूपक—सेवग कवि मंछ ने सवत् १८६३ में इसे रचा है। राजस्थानी गीतों का यह प्रसिद्ध छन्द शास्त्र है। उदाहरण मे कवि ने रामचरित्र को लिया है। इसीलिए इसका नाम रघुनाथ रूपक रखा है। नागरी प्रचारिणी सभा से यह छप भी चुका है।

६ रघुवर जस प्रकाश—यह भी राजस्थानी छन्द शास्त्र है। रचयिता किसनेजी आढ़ा है। संवत् १७८१ में इसकी रचना हुई। कविता प्रौढ़ और भाषा शैली सरस है। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोघपुर से यह प्रकाशित हो चुका है।

२०वीं शताब्दी

(७) गीत रामायण—जोधपुर के स्व० कविवर अमृतलाल माथुर ने सम्वत् १६५५ मे वहीं के प्रचलित मारवाड़ी लोकगीतों की चाल मे वनाई। इसमें प्रसिद्ध रामायण की भाँति सात काण्ड हैं और क्रमशः ५१, ३८, १३, ४, १६, ३ और ११ कुल १३६ गीत हैं। वाल-काण्ड, अवध-काण्ड, अरण्य-काण्ड, किष्किधा-काण्ड, सुन्दर-काण्ड, लंकाकांड और उत्तरकाड मे राम के राज्य तक की कथा आई है। सीता वनवास का प्रसंग नहीं दिया गया। लोक गीतों की चाल में इसके गीत होने से स्त्रियों मे इसका प्रचार वहुत अधिक हुआ। रचना वहुत सुन्दर है। पॉकेट साईज के २१२ पृष्ठों में छप चुकी है।

गद्य रामायण

(८) रामचरित्र बालावबोध—अध्यात्म रामायण के ६ अध्यायों का यह राजस्थानी अनुवाद है। सम्वत् १७४७ की लिखित प्रति प्राप्त होने से रचना इससे पूर्व की निश्चित है पर अनुवादक का नाम नहीं पाया जाता। भाषा सरल है। इसकी एक शुद्ध प्रति बीकानेर के वृहद् ज्ञान भण्डार में ५८ पत्रो की है। जो १८वीं शताब्दी की लिखी प्रतीत होती हैं। अनूप संस्कृत लायब्रेरी के गुटके नं० २४० के पत्रांक १८० से २७० मे यह बालावबोध लिखित मिलता है। वह प्रति सम्वत् १७४७ में लिखी गई है।

(९) रामचरित्र—अनूप संस्कृत लायब्रेरी में एक अन्य गद्य रामचरित्र भी है जिसकी प्रति के प्रारम्भिक पाँच पत्र नहीं है और पत्राक १२५ में कथा पूर्ण होती है। पर अन्त का उपसंहार बाकी रह जाता है।

(१०) रामचरित्र—श्री मोतीचन्दजी खजांची के संग्रह में सम्वत् १८३२ जोधपुर में लिखित प्रति में यह गद्य रामचरित्र मिलता है। जिसमें ब्रह्माड पुराण के उल्लेख है। इसमें रामकथा बहुत विस्तार से चार हजार श्लोक परिमित है।

(११) रामचरित्र गद्य की एक सचित्र प्रति खजाचीजी के संग्रह में है।

(१२) गद्य रामायण की एक प्रति जोधपुर के कविया बद्रीदानजी के संग्रह में प्राप्त हुई है।

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के संग्रह में राजस्थानी गद्य रामायण की सचित्र प्रति है।

(१३) मानव मित्र रामचरित्र—इसके लेखक स्व० महाराज साहब चतुरसिहजी है। भाषा मेवाडी है। इसकी द्वितीय आवृति मनोहर-लाल शर्मा संस्कृत ग्रन्थागार चाँद पोल, उदयपुर से २०३ पृष्ठों में प्रकाशित हुई है। पृष्ठ १६१ तक (विजय तक) का वृतान्त चतुर-सिंहजी ने वालमीकि रामायण, योग वशिष्ठ, तुलसी रामायण और महावीर चतुर के आधार से उपन्यास की भाँति लिखा है। उत्तर का चरित्र श्री गिरधरलाल शास्त्री ने लिखकर ग्रन्थ को पूर्णता दी है।

(१४) वाल रामायण—सुप्रसिद्ध ब्रजलालजी वियानी ने विद्यार्थी अवस्था में इसे लिखा, यह छप भी चुका है।

इस प्रकार जैन और जैनेतर राजस्थानी रामचरित्र ग्रन्थो का परिचय यहाँ दिया गया है। इससे स्पष्ट है कि जैन विद्वानों की रचनाएँ ज्यादा है और १६वीं शताब्दी से गद्य और पद्य मे मिलने लगती है। जैनेतर रचनाओं का प्रारम्भ १७वीं के उत्तरार्द्ध से होता है, जो २०वीं तक निरन्तर चलता रहता है।

राजस्थान में हिन्दी भाषा का प्रचार भी १७वीं शताब्दी से प्रारम्भ हो गया और १८वीं से सैकड़ों ग्रन्थ रचे गये अतः हिन्दीभाषा के रामचरित्र ग्रन्थों की संख्या भी अच्छी होनी चाहिये। भक्त एवं सन्त कवियों ने भी कई रामचरित्र हिन्दी मे लिखें हैं इनमें से सन्त कवि जगन्नाथ रचित रामकथाका परिचय मैं प्रकाशित कर चुका हूँ। यों नरहरिदास के अवतार चरित्र मे श्री रामचरित्र मिलता हैं।

रामचरित्र सम्बन्धी राजस्थानी साहित्य की जानकारी कराने के पश्चात् इस प्रकाश्यमान सीताराम चौपई के निर्माता महाकवि समयसुन्दर का परिचय यहाँ दिया जा रहा है।

कविवर समयसुंदर

राजस्थान की पवित्र भूमि अपनी युद्धवीरता के लिये विश्व-विख्यात है। पग-पग पर हजारों स्मारक आज भी अपनी मातृभूमि पर प्राण निछावर करनेवाले वीरों और वीरागनाओं की अमर कीर्ति की याद दिला रहे हैं। इसी प्रकार अपनी दानवीरता के लिये भी राजस्थान प्रसिद्ध है। आज भी भारत की अधिकांश पारमार्थिक संस्थाएँ यहीं के दानवीरों की सहायता से जन-कल्याण कर रही हैं। यहाँ के चारण सुकवियों की ख्याति भी कम नहीं है। उनके वीर-काव्यों ने यहाँ के पुरुषों में जिस प्रचंड वीरता का संचार किया उसे सुनकर आज भी कायर हृदयो में वीरोचित,उत्साह उमड़ पड़ता है। परन्तु सच्चा मानव वनने के लिये वीरता के साथ-साथ विश्वप्रेम, भक्ति, सदाचार. परोपकार आदि सद्गुणों का विकास भी परमावश्यक है। इस आवश्यकता की पूर्ति संतों ने की, जिनमें जैन विद्वान् संतो का स्थान सर्वोत्कृष्ट है। जेन विद्वानों ने अहिंसा का प्रचार तो किया ही, राजस्थान की व्यापारिक उन्नति के मूल कारण प्रामाणिकता पर भी उन्होने वहुत जोर दिया। इन मुनियों के उपदेशों ने जनता में वैराग्य, धर्म, नीति आदि आध्यात्मिक संस्कारों का विकास किया। कवि समयसुदरोपाध्याय भी इन्हीं जैन मुनियो में एक प्रधान कवि हैं।

समयसुंदर की कविता वड़ी ही सरल एवं ओजपूर्ण है। इनके

पाडित्य और इनकी प्रतिभा का विकास व्याकरण, अलंकार, छंद, ज्योतिष, जैन साहित्य, अनेकार्थ आदि अनेक विषयों में दिखाई पड़ता है और प्राकृत, संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती, हिंदी, सिंधी तथा पारसी तक में इनकी लेखनी समान रूप से चलती है। इन्होने अनेक ग्रंथ रचकर भारतीय वाङ्मय की वृद्धि की। साहित्य के ये अप्रतिम सेवक थे।

जन्मभूमि—कवि की मातृभूमि होने का गौरव मारवाड़ प्रान्त के साँचौर स्थान को प्राप्त है। यह साँचौर भगवान् महावीर के तीर्थ-रूप मे जैन साहित्य मे प्रसिद्ध है।[1] कवि ने स्वयं अपनी जन्मभूमि का उल्लेख सपनी विशिष्ट भाषा-कृति 'सीताराम-चौपाई' में इन शब्दों में किया है—

सुझ जन्म श्री साचोर माहि, तिहा च्यार मास रह्या उच्छाहि।
तिहा ढाल ए कीधी एकेज, कहै समयसुदर धरी हेज।

कवि-रचित 'साचौर-मंडन-महावीर-स्तवन' का रचनाकाल सं० १६७७ है। यह ढाल भी सम्भवतः उसी समय रची गई होगी। इनके शिष्य वादी हर्षनंदन और देवीदास ने भी गुरुगीतों में कवि की जन्म-भूमि का वर्णन इस प्रकार किया है—

साच साचोरे सदगुरु जनमिया रे। (हर्षनदन)
जन्मभूमि साचोरे जेहनी रे। (देवीदास)

वंश—जैनों में तीन प्रसिद्ध जातियाँ हैं—श्रीमाल, ओसवाल, पोरवाड़। पुराने कवियो में इनकी विशेषताओं का वर्णन करते हुए

१—द्रष्टव्य—जैन-साहित्य-सशोधक, खड ३ अंक ३

पोरवाड़ जाति के बुद्धि-वैभव की विशेषता 'प्रज्ञाप्रकर्ष प्राग्वाटे' वाक्य द्वारा बतलाई है। विमल-प्रबंध में पोरवाड़ जाति के सात गुणों में चौथा गुण "चतुः प्रज्ञाप्रकर्षवान्" लिखा है जो प्राचीन इतिहास के अवलोकन से सार्थक ही सिद्ध होता है। गुजरात के महामन्त्री वस्तुपाल, तेजपाल ने अरिसिंह आदि कितने ही कवियों को आश्रय दिया, उत्साहित किया और स्वयं वस्तुपाल ने भी 'वसंतविलास'[२] नामक सुन्दर काव्य की रचना कर अपने अन्य सुकृत्यों पर कलश चढ़ा दिया। इससे पूर्व महाकवि-चक्रवर्ती श्रीपाल ने भी शतार्थी[३], सहस्रलिंग सरोवर, दुर्लभ सरोवर, रुद्रमाला की प्रशस्ति महाराज सिद्धराज के समय में और वड़नगर-प्रशस्ति तथा कई स्तवनादि महाराज कुमारपाल के समय में सं० १२०८ में बनाए। इनका पौत्र विजयपाल भी अच्छा कवि था। इसका रचा द्रौपदी-स्वयंवर नाटक जैन-आत्मानंद सभा, भावनगर से प्रकाशित है। सतरहवीं शती मे इसी वंश में श्रावक महाकवि ऋषभदास[४] हुए, जो कवि के समकालीन थे। प्राग्वाट (पोरवाड़) जाति की प्रज्ञाप्रकर्षता के ये उदाहरण हैं। इसी पोरवाड़[५]

२—बड़ोदा ओरियंटल सीरीज से प्रकाशित। सबंधित कवियों के विषय में द्रष्टव्य-डा० भोगीलाल साडेसरा कृत 'वस्तुपाल का विद्यामडल' (जैन-सस्कृति-सशोधक-मंडल, बनारस)।

३—'जैन-सत्य-प्रकाश', वर्ष ११ अक १०

४—'आनद-काव्य-महोदधि', मौक्तिक ८

५—'अनेकात', वर्ष ४ अंक ६ एव 'ओसवाल', वर्ष १२ अंक ८-१० मे प्रकाशित लेखक के लेख।

वंश में महाकवि समयसुंदर का जन्म हुआ था जिसका उल्लेख उनके शिष्यवादी हर्षनंदन ने इस प्रकार किया है—

प्रज्ञाप्रकर्ष प्राग्वाटे इति सत्यं व्यधायि यः (मध्याह्न व्याख्यान पद्धति)
प्राग्वाट-वंश-रत्ना धर्मश्री मञ्जिकासूनुः। (ऋषिमंडल वृत्ति)
प्राग्वाट शुद्धवंशा षड्भाषा गीतिकाव्यकर्त्तारः। (उत्तराध्ययन वृत्ति)
परगड़ वंश पोरवाड़। (श्री समयसुंदरोपाध्यायाना गीतम्)

देवीदास ने भी अपने गीत में 'वंश पोरवाड़ विख्यातो जी' लिखा है।

माता-पिता और दीक्षा—कवि के पिता का नाम रूपसी और माता का लीलादे या धर्मश्री था, जिनका उल्लेख वादी हर्षनंदन ने "रूपसी जी रा नंद" और देवीदास ने "मात लीलादे रूपसी जन-मिया" शब्दों द्वारा किया है। कवि के जन्म अथवा दीक्षा का समय अद्यावधि अज्ञात है। परन्तु इनकी प्रथम कृति 'भावशतक' के रचना-काल के आधार पर श्री मोहनलाल दलीचंद देसाई ने उस समय इनकी आयु २०—२१ वर्ष अनुमानित कर जन्म-काल वि० १६२० होने की संभावना की है जो समीचीन जान पड़ती है। वादी हर्षनंदन के "नव यौवन भर संयम संग्रह्यौ जी, सइं हथे श्री जिनचंद" इस उल्लेख के अनुसार दीक्षा के समय इनकी अवस्था कम से कम १५ वर्ष होनी चाहिए। इस अनुमान से दीक्षा-काल वि० १६३५ के लगभग बैठता है। इनकी दीक्षा श्रीजिनचंद्रसूरि[६] के करकमलों से होना सिद्ध है। सूरिजी

६—द्रष्ट० हमारा 'युगप्रधान जिनचंद्रसूरि' ग्रंथ। इन्होंने सम्राट् अकबर को जैन धर्म का बोध दिया था और सम्राट् जहाँगीर तथा अन्य राजाओं पर भी इनका अच्छा प्रभाव था।

ने इन्हें अपने प्रथम शिष्य रीहड़-गोत्रीय श्री सकलचंद्र गणि[७] के शिष्य रूप में दीक्षित किया था।

विद्याध्ययन—इनके गुरु श्री सकलचंद्र जी इनकी दीक्षा के कुछ ही वर्षों बाद स्वर्गवासी हुए, अतः इनका विद्याध्ययन सूरिजी के प्रधान शिष्य महिमराज और समयराज के तत्त्वावधान में हुआ। इसका उल्लेख कवि ने स्वयं इस प्रकार किया है—

श्री महिमराज वाचक वाचकवर समयराज गुण्याना
मद्विद्यैकगुरूणा प्रसादतो सूत्रशतकमिदम् ॥ (भावशतक, १।१)
श्री जिनसिंह मुनीश्वर वाचकवर समयराज गणिराजाम्
मद्विद्यैकगुरूणामनुग्रहो मेऽत्र विज्ञेयः ॥ (अष्टलक्षी, २८)

संघपति सोमजी के संघ के साथ शत्रुंजय-यात्रा—सं० १६४४ में श्री जिनचन्द्रसूरि खंभात में चातुर्मास्य कर अहमदाबाद आए। उनके उपदेश से शत्रुंजय का माहात्म्य श्रवण कर पोरवाड़-ज्ञातीय सोमजी[८] और उनके भाई शिवा ने शत्रुंजय का संघ निकाला, जिसमें मालव, गुजरात, सिंधु, सिरोही आदि नाना स्थानों के यात्री-संघ आकर सम्मिलित हुए थे। इस सघ में कवि समयसुंदर भी अपने दादा-गुरु और विद्यागुरु आदि के साथ शत्रुंजय गए और चैत्र वदी ४ बुधवार को महातीर्थ शत्रुंजय गिरिराज की यात्रा की। इसका उल्लेख कवि ने अपने 'शत्रुंजय भासद्वय' मे इस प्रकार किया है—

७—खरतरगच्छ पट्टावली के अनुसार इनकी दीक्षा वि० १६१२ में बीकानेर में हुई थी।

८—द्रष्ट० 'युगप्रधान जिनचद्रसूरि', पृ० २४०

संवत सोल चिमाल मइं रे, चैत्र मास वलि चउथ बुधवार रे।
जिनचंद्रसूरि यात्रा करी रे, चतुर्विध श्रीसंघ परिवार रे॥ ८॥

अकबर के आमन्त्रण पर लाहोर-यात्रा—वि० १६४७ में सम्राट् अकबर ने जैन धर्म का विशेष बोध प्राप्त करने के उद्देश्य से. मन्त्री कर्मचंद्र द्वारा जिनचन्द्रसूरि का कड़ी धूप में आना कष्टकर जान, उनके मुख्य शिष्य वाचक महिमराज को बुलाने के निमित्त दो शाही पुरुषों को विज्ञप्तिपत्र देकर सूरिजी के पास भेजा। उन्होंने विज्ञप्तिपत्र पाते ही महिमराज को छ. अन्य साधुओं के साथ लाहोर भेजा। इनमें हमारे कवि समयसुंदर भी एक थे, जिन्होंने 'श्री जिन-सिंहसूरि अष्टक' में इस यात्रा का वर्णन किया है—

एजु प्रणम्या श्री शांतिनाथ गुरु शिर धर्यो हाथ,
समयसुंदर नाथ चाले नीकी वरियाँ।
अनुक्रमि चलि आए सीरोही में सुख पाए
सुलताण मनि भाए देखत अँखरियाँ।
जालोर मेदिनातट पइसारउ कियउ प्रकट
डीडवाणइ जीते भट जयसिरि वरियाँ।
रिणी तइं सरसपुर आवत फिरोजपुर
लंघत नदी कसूर मानुं जइसी दरियाँ॥२॥
एजु आवत सुशोभ लीनी लाहोर वधाई दीनी
मंत्री कुं मालिम कीनी कहइ एसाउ पथियाँ।
मानसिंह गुरु आए पातसाह कुं सुणाए
वाजित्र ध्रिधुं वजाए दान दीयइ दुथियाँ।

समयसुंदर भायउ पइसारउ नीकउ वणायउ
श्री सघ साम्हउं आयउ सज्जकरि हथियाँ।
गावत मधुर सर रूपइ मानु अपछर
सुदर सूहव करइ गुरु आगइ सथियाँ ॥३॥

इसके पश्चात् अकबर और जहाँगीर की श्रद्धा वा० महिमराज के प्रति उत्तरोत्तर बढ़ती गई और जब अकबर ने सं० १६४६ में काश्मीर-विजय के लिये स्वयं जाना निश्चित किया तो उसने श्री जिनचंद्रसूरि से वा० महिमराज को धर्मोपदेश के लिये अपने साथ भेजने की विज्ञप्ति की। तदनुसार श्रावण सुदी १३ को संध्या समय काश्मीर-विजय के उद्देश्य से प्रयाण कर सब लोग राजा श्रीरामदास की वाटिका में ठहरे। उस समय अनेक सामंतों, मंडलीकों तथा विद्वानों की सभा मे कवि समयसुन्दर ने अपने अद्वितीय ग्रंथ 'अष्टलक्षी' को पढ़कर सुनाया। इसे सुन सम्राट् बहुत चमत्कृत हुआ और भूरि-भूरि प्रशंसा करके 'इसका सर्वत्र प्रचार हो' कहते हुए उसने अपने हाथ से उस ग्रंथरत्न को ग्रहण कर उसे कवि के हाथों में समर्पित किया।

इस अभूतपूर्व ग्रंथ में "राजानो ददते सौख्यं" इस आठ अक्षर वाले वाक्य के १०२२४०७ अर्थ किए गए है। कहा जाता है कि किसी समय एक जैनेतर विद्वान् ने जैन धर्म के "एगस्स सुत्तस्स अनंतो अत्थो" वाक्य पर उपहास किया था, उसी के प्रत्युत्तर में कवि ने यह ग्रंथ रच डाला।[९]

९—यह ग्रथ देवचद लालभाई पुस्तकोद्धार फंड, सूरत से प्रकाशित हुआ है। इसमें कवि ने स्वय उपर्युक्त वृत्तात लिखा है।

'वाचक'-पद—कश्मीर विजय कर लाहौर वापस आने पर सम्राट् ने श्रीजिनचंद्रसूरि से वा० महिमराज को 'आचार्य' पद देने का अनुरोध किया। सं० १६४९ फाल्गुन कृष्ण १० से अष्टाह्निका महोत्सव आरम्भ हुआ और इसमें फाल्गुन शुक्ल २ को वा० महिमराज को 'आचार्य' पद देकर उनका नाम 'जिनसिंहसूरि' प्रसिद्ध किया गया। इसी महोत्सव मे श्री जिनचन्द्रसूरि ने जयसोम तथा रत्ननिधान को 'उपाध्याय' एवं समयसुन्दर तथा गुणविनय[१०] को 'वाचक' पद से अलंकृत किया। इसका उल्लेख 'कर्मचन्द्र-वंश-प्रबंध'[११] और 'चौपाई'[१२] में इस प्रकार पाया जाता है—

तेपु च गणि जयसोमा रत्ननिधानाश्च पाठका विहिता।
गुणविनय समयसुंदर गणि कृतौ वाचनाचार्यो॥ ६२॥

वाचक पद गुणविनय नइ, समयसुंदर नइ दीधउ रे।
युगप्रधान जी नइ करइ, जाणि रसायण सीधउ रे॥

ग्रन्थ-रचना और विहार—सं० १६५१ से गड़ाला (नाल)-मंडन श्री जिनकुशलसूरि के दर्शन कर उनका भक्तिगर्भित अष्टक द्रुतविलंबित छन्द में बनाया और इसी वर्ष 'स्तम्भन पार्श्वनाथ-स्तव' की

१०—द्रष्ट० नेमिदूत काव्यवृत्ति की प्रस्तावना।

११—इसका मूल ओझाजी ने हिन्दी अनुवाद सहित आर्टपेपर पर छपवाया था, पर वह प्रकाशित न हो सका। मुनि जिनविजय ने इसे वृत्ति के साथ छपवाया है।

१२—जैन राससंग्रह भाग ३ तथा ऐतिहासिक जैन गुर्जर काव्य-संचय में प्रकाशित।

रचना की जिसमें चौवीस तीर्थङ्करों और चौवीस गुरुओं के नाम समाविष्ट हैं। सं० १६५२ का चौमासा खंभात में किया और विजयदशमी के दिन 'श्रीजिनचन्द्रसूरि गीत' बनाया, जिसकी कार्तिक शुक्ल ४ की स्वयं कवि द्वारा लिखित प्रति उपलब्ध है। सं० १६५३ में आषाढ़ शुक्ल १० को इलादुर्ग में रचित एवं कवि की स्वलिखित 'मंगलवाद' की तीन पन्ने की प्रति जैसलमेर के खरतरगच्छ पंचायती भंडार मे विद्यमान है। सं० १६५६ मे वे जेसलमेर आए और वहाँ अक्षय-तृतीया के दिन सतरह रागों मे 'पार्श्वजिनस्तवन' की रचना की। सं० १६५७ में श्री जिनसिंहसूरि के साथ चैत्र कृष्ण ४ को आबू और अचलगढ़ गए। वहाँ से शत्रुंजय और फिर अहमदाबाद आए। सं० १६५८ का चातुर्मास्य यहीं किया और विजयदशमी के दिन यहीं 'चौवीसी' की रचना की। इसी वर्ष मनजी साह ने यहाँ अष्टापद तीर्थ की रचना कराई, जिसका उल्लेख कवि ने 'अष्टापद-स्तवन" में किया हैं। यहाँ से पाटण आए। यहाँ सं० १६५६, चैत्र पूर्णिमा को इनके हाथ की लिखी नरसिंहभट्ट-कृत 'श्रवण-भूषण ग्रंथ की प्रति हमने यति चुन्नीलाल के संग्रह मे ३०-३५ वर्ष पूर्व देखी थी। अब यह प्रति श्री मोतीचन्द खजानची के संग्रह में है।

सं० १६५६ का चातुर्मास्य खंभात मे हुआ और वहाँ विजयदशमी के दिन 'शांव प्रद्युम्न चौपाई' की जो इनकी 'रास चौपाई' आदि बड़ी भाषाकृतियों में सर्वप्रथम रचना है। इन्होंने इस चौपाई मे इसे प्रथम अभ्यास रूप रचना बतलायी है—

> सगति नही मुझ तेहवी, बुद्धि नहीं सुप्रकास।
> वचन विलास नही तिस्यउ, ए पणि प्रथम अभ्यास॥

संवत् १६६१ में चैत्र कृष्ण ५ को भगवान् पार्श्वनाथ का स्तवन वनाया। १६६२ मे सागानेर आए और 'दान-शील-तप-भावना-संवाद'[१३] की रचना की। इस ग्रन्थ में धर्म के इन चार प्रकारों से होनेवाले लाभों और दृष्टांतों का संवाद रूप मे वणन करते हुए अन्त में भगवान् महावीर के मुख से चारों का समझौता कराया गया है। यह रचना सुन्दर और कवित्वपूर्ण है।

सं० १६६२ मे घघाणी तीर्थ मे वहुत सी प्राचीन प्रतिमाएँ प्रकट हुई जिनका माघ मास मे दर्शन कर इन्होंने एक ऐतिहासिक स्तवन[१४] वनाया। इसका सार नीचे दिया जाता है—

'सं० १६६२ ज्येष्ठ शुक्ल ११ को दूधेला तालाव के पास खोखर के पीछे भूमि की खुदाई करते समय भूमिगृह निकला। जिसमें जैन

१३—जैन-स्तवन आदि के कई सग्रहात्मक ग्रंथों में यह प्रकाशित हो चुका है। ऐसी सवाद सज्ञक अन्य रचनाओं के विषय में लेखक का 'जैन-सत्य-प्रकाश', वर्ष १२ अंक १ में प्रकाशित लेख द्रष्टव्य है।

१४—यह स्तवन घघाणी तीर्थ-समिति की ओर से मुनि ज्ञानसुदरजी के प्राचीन जैन इतिहास में प्रकाशित हुआ था। घंघाणी जोधपुर रियासत में प्राचीन स्थान है। किसी समय यह वड़ा समृद्धिशाली नगर रहा होगा, जिसके भग्नावशेष आज आज भी यहाँ विद्यमान हैं। समयसुदरजी द्वारा उल्लिखित प्रतिमाएँ अव प्राप्य नहीं हैं, किन्तु दशवीं शती की एक विशाल धातु-मूर्ति अव भी उल्लेखनीय है। कुछ वर्ष पूर्व इस स्थान की खुदाई में पद्रहवीं शती की एक जैन प्रतिमा निकली थी, जो जैन उपाश्रय में रखी हुई है। अन्वेषण करने पर यहाँ प्राचीन शिलालेख आदि प्राप्त होने की समावना है।

और शिव की ६५ प्रतिमाएँ प्राप्त हुईं। इनमे मूलनायक पद्मप्रभु, पार्श्वनाथ, चौबीसटा, चौमुखजी, २३ अन्य पार्श्वनाथजी की प्रतिमाएँ जिनमें दो कायोत्सर्ग मुद्रा की थीं, एवं १६ अन्य तीर्थंकरों की—कुल ४६ जन तीर्थंकर प्रतिमाएँ थीं। इनके अतिरिक्त इंद्र, ब्रह्मा, ईश्वर, चक्रेश्वरी, अंबिका, कालिका, अर्धनारीश्वर, विनायक, योगिनी, शासन-देवता और प्रतिमाओ बनवानेवाले चंद्रगुप्त, संप्रति, बिन्दुसार, अशोकचन्द्र तथा कुणाल, इन पांच नृपतियों की प्रतिमाएँ एवं कंसाल जोड़ी, धूपदान, घण्ट, शंख, भृंगार, उस समय के मोटे त्रिसटिए आदि प्राचीन वस्तुएँ निकलीं। इनमें पद्मप्रभु की सपरिकर सुन्दर मूर्ति महाराज संप्रति की बनवाई हुई और आर्य सुहस्तिसूरि द्वारा प्रतिष्ठित थी। दूसरी, अर्जुन पार्श्वनाथ की, प्रतिमा श्वेत सोने (प्लाटिनम) की थी, जिसे वीर सं० १७० में सम्राट् चंद्रगुप्त ने बनवाकर चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु से प्रतिष्ठित कराया था।'

सं० १६६३ का चातुर्मास्य बीकानेर में हुआ। यहाँ कार्तिक शुक्ल १० को 'रूपकमाला' नामक भाषा-काव्य पर संस्कृत मे चूर्णि बनाई, जिसका संशोधन श्रीजिनचन्द्रसूरि के शिष्य श्री रत्ननिधान ने किया। इनके द्वारा चाटसू में चैत्र पूर्णिमा १६६४ की लिखी इस चूर्णि की प्रति पूना के भण्डारकर रिसर्च इंस्टीट्यूट में हैं। सं० १६६४ में ये आगरा आए और 'च्यार प्रत्येकबुद्ध चौपाई[१५] की रचना की। इनका रचा आगरा के श्री विमलनाथ का स्तवन भी उपलब्ध है।

१५—यह पहले भीमसी माणक की ओर से प्रकाशित हुई थी, फिर 'आनंद काव्य-महोदधि' के सातवें मौक्तिक में श्री देसाई के लेख के साथ प्रकाशित हुई है।

सं० १६६५, चैत्र शुक्ल १० को अमरसर[१६] में इन्होंने 'चातुर्मासिक व्याख्यान पद्धति', नामक ग्रन्थ बनाया। वहाँ के श्री शीतलनाथ स्वामी का स्तवन भी उपलब्ध है। १६६६ में ये वीरमपुर आए और वहाँ 'श्री कालिकाचार्य कथा' की रचना की।

सं० १६६७ में इन्होने सिंध प्रान्त में विहार किया और मार्गशीर्ष शुक्ल १० गुरुवार को मरोट मे जैसलमेरी संघ के लिये 'पौषध विधि स्तवन' बनाया। इसी वर्ष ये उच्चनगर आए और अपने शिष्य महिमसमुद्र के आग्रह से 'श्रावकाराधना' बनाई। १६६८ में मुलतान आए और वहाँ प्रातःकाल के व्याख्यान में 'पृथ्वीचन्द्र चरित्र' बाँचा। इस ग्रन्थ की उक्त प्रति बीकानेर के राज्य-पुस्तकालय में है। यहीं 'सती मृगावती रास' भी रचा। इस समय सिंधी भाषा पर इनका अच्छा अधिकार हो गया था। मृगावती रास की एक ढाल और दो स्तवन इन्होंने सिंधी भाषा में बनाए। चैत्र कृष्ण १० को मुलतान में इनकी लिखाई हुई 'निरयावली सूत्र' की प्रति हमने यति चुन्नीलाल के संग्रह मे देखी थी। माघ शुक्ल ६ को यहीं जेसलमेरी और सिंधी श्रावकों के लिये 'कर्मछत्तीसी' बनाई। सं० १६६९ में ये सिद्धपुर (सीतपुर) आए और मखनूम मुहम्मद शेख काजी को उपदेश देकर सिंध प्रान्त मे गोजाति की रक्षा करवाई और पंचनदी के जलचर जीवों की हिंसा बंद कराई। अन्य जीवों के लिये भी इन्होंने अमारि-पटह बजवाकर पुण्यार्जन के साथ-साथ विमल कीर्ति प्राप्त की।

१६—यह स्थान शेखावाटी मे है। द्रष्ट० 'जैन-सत्य-प्रकाश', वर्ष ८, अंक १, इस विषय पर हमारा लेख।

शीतपुर माहें जिण समझावियउ, मखनूम महमद सेखो जी।
जीवदया पड़ह फेरावियो, राखी चिहुँ खड रेखो जी ॥ ३ ॥

(देवीदास, समयसुंदर गीत)

सिंधु विहारे लाभ लियो घणो रे, रजी मखनूम सेख।
पाचे नदिया जीवदया भरी रे, वलि घेनु विशेष ॥ ५ ॥

(वादी हर्षनदन, समयसुंदर गीत)

सिंध प्रांत मे ये लगभग दो-ढाई वर्ष विचरे थे। इनकी विशिष्ट कृति 'समाचारी शतक'[१७] का प्रारम्भ सिद्धपुर में होकर कुछ भाग मुलतान में रचा गया। सिंध[१८] मे ही विहार के समय एक बार ये नौका में बैठकर उच्चनगर जा रहे थे। अँधेरी रात मे अकस्मात् भयानक तूफान और वर्षा के कारण नदी के वेग से नौका खतरे मे पड गई। उस समय इनकी भक्ति से आकर्षित हो दादागुरु श्री जिनकुशलसूरि ने तत्काल देरावर से आकर उस संकट में इनकी सहायता की। उस घटना का वर्णन इन्होने 'आयो आयो री समरंता दादो जी आयो' इत्यादि पद से स्वयं किया है। श्री जिनकुशलसूरि में इनकी अटूट श्रद्धा थी[१९] और उनका स्मरण इन्होंने 'रास चौपाई' आदि कृतियों मे बड़ी भक्ति के साथ किया है।

सिंध प्रांत से ये मारवाड आए। उसी समय बिलाड़ा में श्री जिनचन्द्रसूरि का स्वर्गवास हो गया। दूर होने के कारण ये अपने

१७—'श्री जिनदत्तसूरि पुस्तकोद्धार फड', सूरत से प्रकाशित।

१८—द्रष्ट० 'वर्णी अभिनंदन ग्रथ' में 'सिंध प्रात तथा खरतरगच्छ' शीर्षक लेख।

१९—द्रष्ट० हमारी 'दादा श्री जिनकुशलसूरि' पुस्तक।

गुरुदेव के अंतिम दर्शन न कर सके, जिसका इन्हें बड़ा खेद रहा। आलिजा गीत मे इन्होंने अपने गुरु-विरहको व्यक्त किया है। यथा—

> आसू मास वलि आवियौ पूज जी, आयौ दीवाली पर्व।
> काती चौमासौ आवियउ पूज जी, आया अवसर सर्व॥
> तुम आवौ हो सीरियादे का नदन, तुम विन घड़िय न जाय।
> × × ×
> आलिजो मिलवा अति घणउ, आयउ सिंध थी एथ।
> नगर ग्राम सहु निरखिया, कहो किम न दीसइ पूज्य केथ॥
> × × ×
> मूयउ कहइ ते मूढ़ नर, जीवइ जिनचद्रसूरि।
> जग जंपइ जस तेहनउ हो, पुहवी कीरति पडूरि॥
> चतुर्विध संघ चितारस्यइ, जां जीवस्यइ तां सीम।
> वीसार्या किम वीसरइ हो, निर्मल जप तप नीम॥

सं० १६७१ का चातुर्मास्य इन्होंने वीकानेर में किया और यहीं 'अनुयोग द्वार' एवं 'प्रश्नव्याकरण' की प्रतियाँ अपने प्रशिष्य जयकीर्ति को पठनार्थ अर्पित की, जिनके पुष्पिका-लेखों मे इसका उल्लेख है। लवेरा (जोधपुर) मे श्री जिनसिंहसूरि ने इन्हें 'उपाध्याय' पद से अलंकृत किया था, जिसका उल्लेख राजसोम गणि ने अपने गुरुगीत में किया है—"श्री जिनसिंहसूरिंद सहर लवेरइ हो पाठक पद कीयउ'। इसमें संवत् का उल्लेख नहीं है, परन्तु 'अनुयोगद्वार' (१६७१) की पुष्पिका में 'वाचक' और 'ऋषिमंडल वृत्ति' (१६७२) की पुष्पिका में 'उपाध्याय' पद उल्लिखित होने से इसी बीच इनका

'उपाध्याय' पद पाना निश्चित है। पद्ममंदिर कृत 'ऋषिमंडल वृत्ति' इन्हें १६७२ में बीकानेर-निवासिनी श्राविका रेखा ने समर्पित की थी। इसकी प्रति जयपुर के पंचायती भंडार में है।

बीकानेर से ये मेड़ता आए। यहाँ सं० १६७२ में 'समाचारी शतक' तथा 'विशेष शतक'[२०] ग्रंथो की रचना समाप्त हुई। 'प्रियमेलक चउपई'[२१] तथा सम्भवतः 'पुण्यसार चौपई' की रचना भी यहीं इसी वर्ष हुई। सं० १६७२ का चातुर्मास्य इन्होंने मेडता मे ही किया और कार्तिक शुक्ल ५ को यहाँ के ज्ञानभण्डार को 'जम्बू-स्वामी चरित्र' प्रदान किया, जिसकी प्रति आजकल बीकानेर के श्री क्षमाकल्याण ज्ञानभंडार मे। यहाँ सं० १६७३ मे वा० हर्षनन्दन के साहाय्य से 'गाथालक्षण' ग्रन्थ लिखा, जिसकी प्रतिलिपि हंसविजयजी फ्री लायब्रेरी, बड़ोदा मे है। इसी वर्ष यहाँ वसन्त ऋतु में 'नल-दमयन्ती चउपई' भी बनाई। सं० १६७४ मे यहीं 'विचार-शतक' भी बनाया। इस प्रकार मेड़ता के चार चौमासों में ये निरन्तर साहित्य-निर्माण करते रहे।

सं० १६७५ में इन्होंने जालोर में दादा श्रीजिनकुशलसूरि की चरण-पादुकाओं की प्रतिष्ठा करवाई, जिसका उल्लेख पादुकाओं के अभिलेख में है। १६७६ में राणकपुर तीर्थ की यात्रा की और १६७७ मे पुनः मेड़ता आए। इस वर्ष चातुर्मास्य अपनी जन्मभूमि साँचोर मे किया। यहीं 'सीताराम चौपाई' की ढाल बनाई और 'निरयावली

२०—इस ग्रंथ में १०० सैद्धांतिक प्रश्नो के उत्तर हैं। यह प्रकाशित है।

२१—इसकी कई सचित्र प्रतियाँ भी मिलती हैं।

सूत्र' का बीजक लिखा जो वाहड़मेर के यति श्री नेमिचन्द्र के पास है। १६७८ में आबू तीर्थ की यात्रा की। १६७६ में पाटण गए, किन्तु वहाँ मुगलों का उपद्रव होने से पालनपुर आए और वहीं चातुर्मास्य किया। इनका सहजविमल के पठनार्थ सं० १६७६, भाद्रपद कृष्ण ११ का लिखा 'पट्टावली पत्र' हमारे संग्रह (बीकानेर) में है।

१६८१ का चातुर्मास्य जैसलमेर में हुआ और यहाँ इन्होंने 'वल्कल-चीरी चउपई' रची और 'मौनेकादशी स्तवन'[२२] आदि जिन-स्तवन[२३] बनाए। इसी वर्ष कार्तिक शुक्ल १५ को लौद्रवा की यात्रा की और संघपति थाहरूशाह[२४] द्वारा निकाले गए शत्रुंजय संघ में सम्मिलित हुए। सं० १६८२ में नागोर आए और 'शत्रुंजय रास'[२५] बनाया तथा तिवरी में 'वस्तुपाल-तेजपाल रास'[२६] रचा। १६८३ में जैसलमेर में 'षडावश्यक बालावबोध' बनाया। इसी वर्ष में इनके रचे हुए दो अष्टक 'बीकानेर आदिनाथ स्तवन' और 'श्रावक व्रत कुलक' उपलब्ध हैं।

१६८४ का चातुर्मास्य लूणकरणसर में किया और 'दुरियर वृत्ति'[२७] की रचना की। यहाँ के संघ में पाँच वर्षों से मनोमालिन्य था।

२२—अभयरत्नसार, समयसुन्दरकृति कुसुमांजलि आदि में प्रकाशित।

२३—जैन-लेख-संग्रह, भाग ३

२४—इनका पुस्तक-भंडार अब भी जैसलमेर में विद्यमान है। इनके सम्बन्ध में एक गीत और दो प्रशस्तियाँ प्राप्त हैं।

२५—अभयरत्नसार, समयसुन्दर कृ० कु० में आदि में प्रकाशित।

२६—''जैनयुग' (मासिक, जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस, बम्बई)।

इन्होंने 'मन्तोपछत्तीसी' की रचना कर संघ के समक्ष उपदेश दिया, जिससे संघ में ऐक्य और प्रेम स्थापित हो गया। यहीं इन्होंने 'कल्पसूत्र पर 'कल्पलता'[२८] नामक टीका प्रारम्भ की तथा १६८५ में जयकीर्ति गणि की सहायता से 'दीक्षा-प्रतिष्ठा-शुद्धि' नामक ज्योतिष ग्रन्थ रचा। इसी वर्ष यहीं 'विशेष संग्रह', 'विसंवाद शतक' और 'बारह व्रत रास' ग्रन्थ बनाए। 'यति-आराधना' तथा 'कल्पलता' की रचना इसी वर्ष रिणी में समाप्त की।

सं० १६८६ में 'गाथासहस्त्री' नामक संग्रह-ग्रन्थ तैयार किया। १६८७ में पाटण आए और 'जयतिहुअण वृत्ति' तथा 'भक्तामर स्तोत्र' पर 'सुबोधिका' वृत्ति बनाई। यहाँ से ये अहमदाबाद आए।

१६८७ में गुजरात में भयंकर दुष्काल पड़ा था, जिसका सजीव एवं हृदय-द्रावक वर्णन कवि ने 'विशेषशतक' की प्रशस्ति (श्लोक ७) तथा 'चंपकश्रेष्ठि चौपाई' में संक्षेप से एवं 'सत्यासिया दुष्काल वर्णन छत्तीसी'[२९] में विस्तार के साथ किया है। १६८८ का चातुर्मास्य इन्होंने अहमदाबाद में किया और वहाँ 'नवतत्व-वृत्ति बनाई। १६८९ का चातुर्मास्य भी यहीं किया और 'स्थूलिभद्र सज्झाय' की रचना की। १६९० में खंभात गए और वहाँ 'सवैया छत्तीसी', 'स्तंभन पार्श्व स्तवन' तथा 'खरतरगच्छ पट्टावली' की रचना की। १६९१ का चातुर्मास्य खम्भात के खारवापाड़ा स्थान में किया और वहाँ 'थावच्चा चउपई', 'सैंतालीस दोष सज्झाय' तथा दशवैकालिक सूत्रवृत्ति' की रचना की।

२७-२८—'जिनदत्तसूरि पुस्तकोद्धार फंड, सूरत से प्रकाशित।

२९—'भारतीय विद्या,' वर्ष १ अंक २

१६६२ में भी ये खंभात ही में रहे और वैशाख मास मे अपने शिष्य मेघविजय-सहजविमल के लिये 'रघुवंश' काव्य पर 'अर्थलापनिका वृत्ति' बनाई। १६६३ में अहमदावाद में सहजविमल लिखित 'सन्देह दोलावली' के पाठ पर सस्कृत पर्याय लिखे। इसी वर्ष यहाँ 'विहरमान बीसी' के पदों की रचना की।

१६६४ का चातुर्मास्य जालोर में हुआ। वहाँ इनका आषाढ़ सुदी १० का लिखा 'श्री जिनचन्द्रसूरि गीत' हमारे संग्रह मे है। इसी वर्ष वहाँ इन्होंने 'वृत्तरत्नाकर' छन्द-ग्रन्थ पर वृत्ति तथा 'क्षुल्लककुमार चउपई' की रचना की। १६६५ में 'चंपक श्रेष्टि चउपइ' बनाई और 'सप्तस्मरण' पर 'सुखबोधिका' वृत्ति लिखी, जिसका संशोधन इनके शिष्य वा० हर्षनन्दन ने किया। इसके बाद आँकेठ ग्राम (पालनपुर से पाँच कोस) आए, जहाँ 'गौतमपृच्छा चौपाई, की रचना की। यहाँ से 'प्रल्हादनपुर' आकर 'कल्याणमन्दिर वृत्ति' लिखी।

शेष जीवन—वृद्धावस्था एवं तज्जन्य अशक्ति के कारण विहार करते रहना संभव न था, अतः १६६६ में ये अहमदावाद गए और वहीं शेष जीवन व्यतीत किया, पर साहित्य-रचना पूर्ववत् करते रहे। सं० १६६६ में उन्होंने 'दंडकवृत्ति', और व्यवहार-शुद्धि पर 'धनदत्त चौपई' की रचना की। पैंतालीस आगमों में जिन-जिन साधुओं के नाम पाए जाते हैं उनकी वंदना के रूप मे १६६७ में साधु-वंदना' बनाई और इसी समय ऐरवत क्षेत्र के चौबीस तीर्थंकरों के स्तवन रचे। इसी संवत् मे फा० शु० ११ को वहीं संखवाल नाथा भार्या धन्नादे ने परिमाण व्रत ग्रहण किये।

इस टिप्पनक की प्रति कविवर के स्वयं लिखित प्राप्त है जिसकी प्रशस्ति :—सं० १६६७ वर्षे फागुण सुदि ११ गुरुवारे श्री अहमदावाद नगरे श्री खरतरगच्छे भट्टारक श्रीजिनसागरसूरि विजयराज्ये संखवाल गोत्रे सं० नाथा भार्या सुश्राविका पुण्यप्रभाविका श्रा० धन्नादे सा० करमसी माता महोपाध्याय श्री समयसुन्दर पार्श्वे इच्छापरिमाण कीधा छै। श्रीरस्तु। कल्याणमस्तु ॥

कविवर बड़े गुणानुरागी थे। अपने से अवस्था, ज्ञान, पद आदि में छोटे तथा भिन्न-गच्छीय पुंजाऋषि की उत्कट तपश्चर्या की प्रशंसा में उन्होंने १६९८ मे 'पुजा ऋषि रास' बनाया। इसी वर्ष 'आलोयणा छत्तीसी' भी वनाई। इनके रचे 'केशी-प्रदेशी-प्रबन्ध' की सं० १६९९ चैत्र शुक्ल २ की हर्षकुशल की सहायता से लिखी प्रति हमारे संग्रह में है। आषाढ़ कृष्ण १, सं० १७०० की इनकी लिखी 'तीर्थभास छत्तीसी' की प्रति वम्बई-स्थित रायल एशियाटिक सोसायटी के पुस्तकालय मे है। १७०० के माघ मे लिखी इनकी अन्तिम रचना 'द्रोपदी' चौपाई' उपलब्ध है। इसमें अपनी पूर्व रचनाओं का निर्देश करते हुए इन्होंने वृद्धावस्था मे इसकी रचना का हेतु सूत्र, सती और साधु के प्रति अपना अनन्य भक्तिराग वतलाया है—

पहिलुं साधु सती तणा, कीधा घणा प्रवन्ध।
हिव वलि सूत्र थकी कहुं, द्रौपदी नउ सम्वन्ध ॥

× × ×

वृद्धपणइं मइ चउपइ, करिवा मांडी एह।
सूत्र सती नइ साधु स्युं, मुझ मनि अधिक सनेह ॥

अन्त में लिखा है—

द्रोपदी नी ए चउपइ मै, वृद्धपणइ गणि कीधी रे।
शिष्य तणइ आग्रह करी, मइं लाभ ऊपरि मति दीधी रे॥
एक सती वलि साधवी, ए वात वेऊ घणु मोटी रे।
द्रूपदी नाम लेता थका, तिण कर्म नी तूटइ कोटी रे॥

इस चौपाई के लेखन और संशोधन में इनकी वृद्धावस्था के कारण हर्षनन्दन और हर्षकुशल से सहायता मिली थी, इसका इन्होंने स्पष्ट शब्दों में उल्लेख किया है—

वाचक हर्षनन्दन वलि, हर्षकुशलइ सानिध कीधी रे।
लिखन शोधन साहाय्य थकी, तिण तुरत पूरी करि दीधी रे॥

अपने शिष्य-प्रशिष्यों के प्रोत्साहन के लिये तथा कृतज्ञता-ज्ञापन की अपनी सहज वृत्ति के कारण उनसे थोडा भी सहयोग किसी कार्य मे प्राप्त करने पर इन्होंने उसका निस्संकोच उल्लेख कई अवसरों पर किया है। पर ये बड़े स्पष्टवक्ता भी थे। दुष्काल के समय जिन शिष्यों ने इनकी सेवा की थी उनकी इन्होंने प्रशंसा की है, परन्तु उसके पश्चात् शिष्यों के तथाविध सेवा-शुश्रूषा न करने का इन्हें मार्मिक दुःख था। इस विषय मे अपने स्पष्ट उद्गार इन्होंने 'दुःखित-गुरु-वचनम्' के श्लोकों में प्रकट किए हैं।

मृत्यु—'द्रोपदी चौपाई' के वाद की इनकी कोई रचना उपलब्ध नहीं है। इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन साहित्य-साधना एवं धर्म-प्रचार में विताया। सं० १७०२ में चैत्र शुक्ल १३ (भगवान् महावीर के जन्म-दिन) के दिन ये अहमदावाद में अनशन-आराधनापूर्वक स्वर्गवासी हुए, जिसका उल्लेख राजसोम कृत गीत में है—

अणसण करि अणगार, संवत सतरै सय बीड़ोत्तरे ।

अहमदावाद मझार, परलोक पहुँता हो चैत सुदि तेरसै ॥

अहमदाबाद में इनके स्वर्गवास के स्थान तथा पादुकाओं का अभी तक पता नहीं चला, पर बीकानेर के निकटवर्ती नाल एवं जैसलमेर में दो पादुकाओ के दर्शन हमने किए हैं ।

शिष्य-परम्परा—एक प्राचीन पत्र के अनुसार इनके शिष्यों की संख्या बयालीस थी, जिनमें वादी हर्षनन्दन प्रधान थे । न्यायशास्त्र के 'चिंतामणि' ग्रंथ तक के अध्येता के रूप में इनका उल्लेख कवि ने स्वयं किया है । इनके रचे तीन विशाल टीका-ग्रंथ (ऋषिमंडल वृत्ति, उत्तराध्ययन वृत्ति, स्थानांग गाथागत वृत्ति) तथा कई अन्य ग्रन्थ हैं । हर्षनन्दन के शिष्य जयकीर्ति द्वारा विरचित सुप्रसिद्ध राजस्थानी भक्तिकाव्य 'कृष्ण रुक्मिणी वेलि वालावबोध' उपलब्ध है । जयकीर्ति के शिष्य राजसोम की भी 'पारसी-भाषा-स्तवन' तथा गुरुगीतादि रचनाएँ मिलती है । हर्षनन्दन के दयाविजय नामक शिष्य थे, जिनके लिये 'ऋषिमण्डल वृत्ति' की रचना हुई और जिन्होंने 'उत्तराध्ययन वृत्ति' का प्रथमादर्श लिखा ।

समयसुंदरजी के मेघविजय नामक एक विद्वान् शिष्य थे, जिनके शिष्य हर्षकुशल की 'वीसी' आदि कृतियां मिलती है । इनके शिष्य हर्षनिधान के शिष्य ज्ञानतिलक के शिष्य विनयचन्द्र अठारहवीं शती के प्रमुख कवि थे, जिनकी 'उत्तमकुमार चौपई', 'चौबीसी' आदि सभी रचनाएँ विनयचन्द्र कृति कुसुमांजलि मे प्रकाशित हैं ।

कवि के अपर शिष्य मेघकीर्ति की परम्परा में आसकरण के

शिष्य आलमचन्द की भी कृतियाँ मिलती हैं। आसकरण की परम्परा में कस्तूरचन्द गणि की रची 'ज्ञातासूत्र वृत्ति' उपलब्ध है।

कवि के अन्य शिष्यों में सहजविमल, महिमासमुद्र, सुमतिकीर्ति, माईदास आदि का उल्लेख प्रशस्तियों में पाया जाता है। आलमचन्द की परम्परा मे यति चुन्नीलाल कुछ वर्ष पूर्व बीकानेर में विद्यमान थे। हैदराबाद राज्य के सेवली स्थान में रामपाल नामक यति समयसुंदरजी की परम्परा में अब भी विद्यमान हैं। इनका शिष्य-परिवार खूब विस्तृत होकर फूला-फला। उसमे सैकड़ों साधु यति हो गए, जिनमें कई अच्छे गुणी व्यक्ति थे। भारत के सभी प्राचीन जैन ज्ञान-भण्डारों मे इनकी कृतियाँ पाई जाती हैं और जहाँ भी इनकी शिष्य-संतति रही हो वहाँ अनुसंधान करने पर भी नवीन कृतियाँ उपलब्ध होने की संभावना है।

साहित्य—उपर्युक्त चर्चा के अन्तर्गत कवि की रचनाकाल-उल्लिखित प्रमुख रचनाओ का यथास्थान निर्देश-किया गया है। इन्होंने साठ वर्ष निरन्तर साहित्य-साधना करते हुए भारतीय वाङ्मय को समृद्ध बनाया। स्तवन गीत आदि इनकी लघु कृतियाँ सैकड़ो की संख्या में है जो जहाँ कहीं भी खोज की जाय, मिलती ही रहती है। इसी से लोकोक्ति है कि 'समयसुंदर रा गीतड़ा, कुंभे राणे रा भीतड़ा, (अथवा भीतों का चीतड़ा) अर्थात् कविवर की रचनाएँ अपरिमित है। इनकी समस्त ज्ञात रचनाओ की सूची यहाँ एकत्र दी जाती है, पुस्तक के आगे, जहाँ ज्ञात है, उसकी रचना का विक्रमीय संवत् और रचना-स्थान तथा वर्त्तमान प्राप्ति स्थान दे दिया गया है—

संस्कृत

मौलिक

१—भावशतक, सं० १६४१ , प्रेस-कापी नाहटा-संग्रह, बीकानेर में वर्तमान।

२—अष्टलक्षी, १६४६, लाहोर; दे० ला० पु० फंड, सूरत से प्रकाशित।

३—चातुर्मासिक व्याख्यान, १६६५, अमरसर , प्रकाशित।

४—कालिकाचार्य कथा, १६६६, वीरमपुर ; श्री जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार, सूरत से प्रकाशित।

५—श्रावकाराधना, १६६७, उच्चनगर, कोटा से प्रकाशित।

६—समाचारी शतक, १६६६—७२, सिद्धपुर-मेड़ता, जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार से प्रकाशित।

७—विशेष शतक, १६७२, मेडता, जिनदत्तसूरि प्रा० पु० फंड से प्रकाशित।

८—विचार शतक १६७४, मेडता; बड़ा ज्ञानभण्डार, बीकानेर में।

९—यति आराधना, १६८५; हमारे संग्रह में।

१०—विशेष संग्रह, १६८५; हमारे संग्रह में।

११—दीक्षा प्रतिष्ठा शुद्धि, १६८५ लूणकरणसर; प्रेस-कापी हमारे संग्रह में।

१२—विसंवाद शतक, १६८५, हमारे संग्रह में।

१३—खरतरगच्छ पट्टावली, १६९०, खंभात, प्रेस-कापी हमारे संग्रह में।

१४—कथाकोश, (अपूर्ण दे० ला० पु० फंड सूरत प्रेस-कापी) पूर्ण प्रति जिनऋद्धिसूरि संग्रह, स्वयं लिखित अपूर्ण प्रति विनयसागरजी सं०।

१५—सारस्वत रहस्य; प्रेस-कापी हमारे संग्रह में।

१६—प्रश्नोत्तर २८७, अप्राप्य (सूची का अन्तिम पत्र ही प्राप्त)।

१७—प्रश्नोत्तर-सार-संग्रह, हंसविजय लाइब्रेरी, बडोदा।

१८—ऋषभ भक्तामर, प्र० समयसुंदर कृति कुसुमांजली।

१९—वीर २७ भव,   ,,   ,,

२०—मंगलवाद,   ,,   ,,

२१—श्री जिनसिंहसूरि पदोत्सव (रघुवंश, तृतीय सर्ग, पादपूर्ति); प्रेस-कापी हमारे संग्रह में।

२२—द्रौपदी-संहरण।

२३—अल्पाबहुत्वगर्भितस्तव स्वोपज्ञ वृत्ति, आत्मानंद सभा, भावनगर से प्रकाशित।

२४—२४ जिन-गुरु नामगर्भित स्तोत्र स्वोपज्ञ वृत्ति, प्र० स० कु० कु०।

२५—स्तोत्र संग्रह।

संग्रह ग्रंथ

१—गाथासहस्री, सं० १६८६; जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार, सुरत से प्रकाशित।

टीकाएँ

१—रूपकमाला वृत्ति, सं० १६६३, बीकानेर, प्रेस कापी हमारे संग्रह।

२—दुरियर स्तोत्र वृत्ति, १६८४, लूणकरणसर, जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार से प्र०

३—कल्पसूत्र वृत्ति, (कल्पलता), १६८४—८५, रिणी,   ,,   ,,

४—जयतिहुअण वृत्ति, १६८७, पाटण;   ,,   ,,

५—भक्तामर सुबोधिनी वृत्ति, १६८७, हमारे संग्रह में।

६—नवतत्व शब्दार्थ वृत्ति, १६८८ अहमदाबाद; हमारे संग्रह में।

७—दशवैकालिक वृत्ति, १६९१, खंभात।

८—रघुवंश वृत्ति, १६९२, खंभात; बड़ा ज्ञानभंडार।

९—संदेह दोलावली पर्याय, १६९३।

१०—वृत्तरत्नाकर वृत्ति, १६९४, जालोर; हमारे संग्रह।

११—सतस्मरण वृत्ति, १६६५, जिनदत्तसूरि पु० फड से प्रकाशित।

१२—कल्याणमदिर वृत्ति, १६९५, प्रल्हादनपुर, ,, ,,

१३—दडक वृत्ति, १६६६, अहमदावाद, हमारे सग्रह मे।

१४—वाग्भट्टालंकार वृत्ति (अपूर्ण वीकानेर ज्ञानभडार) पूर्ण प्रति एसियाटिक सो० वम्वई, स० १६६२ अहमदावाद, हरिराम के लिये रचित।

१५—विमलस्तुति वृत्ति, प्रेसकापी हमारे संग्रह में।

१६—चत्तारि परमंगाणि व्याख्या; हमारे संग्रह में।

१७—मेघदूत प्रथम श्लोक (तीन अर्थ), हमारे सग्रह में।

१८—माघ-काव्य वृत्ति; तृतीय सर्ग की प्रति सुराणा पुस्तकालय, चूरू में।

१९—लिंगानुशासन चूर्णि। अनिट् कारिका।

२०—ऋषिमंडल टिप्पण स० १६६२, आश्विन सग्रामपुर में लिखित।

२१—वैरथय वृत्ति, विवेचन स० १६८४ अक्षयतृतीया विक्रमपुरे पत्र २ स्वयं लि०।

२२—मेघदूत वृत्ति।

२३—कुमारसम्भव वृत्ति।

वालाववोध

१—षडावश्यक वालाववोध, १६८३, जैसलमेर, वालोतरा भडार, आचार्य-शाखा भडार, तथा हमारे सग्रह में।

२—दीवालीकल्प वालाववोध सं० १६८२ सूरत पत्र १६।

भाषा कृतियाँ (रास, चौपाई आदि)

१—चौबीसी, १६५८ अहमदावाद; पूजा-सग्रह, स० कृ० कु० मे प्रकाशित।

२—शाम्ब प्रद्युम्न चौपई, १६५९, खभात; हमारे संग्रह।

३—दानादि चौढालिया, १६६२, सागानेर, स० कृ० कु० में प्रकाशित।

४—चार प्रत्येकबुद्ध रास, १६६४—६५ आगरा, आनन्द-काव्य महोदधि में प्रकाशित।

५—मृगावती रास, १६६८, मुलतान; हमारे संग्रह में।

६—सिंहलसुत प्रियमेलक रास, १६७२, हमारे संग्रह। प्र० समयसुंदर रास पञ्चक।

७—पुण्यसार रास, १६७२; हमारे संग्रह मे। ,,

८—नल-दमयन्ती चौपाई, १६७३, मेड़ता; हमारे संग्रह में।

९—सीताराम चौपाई, १६७७, साँचोर आदि, प्रस्तुत ग्रन्थ में प्र०।

१०—वल्कलचीरी रास, १६८१, जैसलमेर समयसुदर रासपञ्चक में प्र०।

११—शत्रुंजय रास, १६८२, नागोर प्रकाशित। समय० कृ० कु०

१२—वस्तुपाल-तेजपाल रास, १६८२, तिमरीपुर; जैन-युग में प्रकाशित। ,,

१३—थावच्चा चौपाई, १६९१, खभात, हमारा सग्रह।

१४—विहरमान वीसी स्तवन, १६९३, अहमदाबाद; प्र० समय० कृ० कु०

१५—क्षुल्लककुमार रास, १३९४ जालोर; ,, ,,

१६—चपकश्रेष्ठि चौपाइ, १६९५, जालोर, प्र० समय० रास पंचक।

१७—गौतमपृच्छा चौपाई, १६९५, आँकेठ, हमारे सग्रह में।

१८—व्यवहारशुद्धि धनदत्त चौपाई, प्र० समय० रास पचक।

१९—साधुवदना, १६९७, अहमदावाद हमारे सग्रह में।

२०—ऐरवत क्षेत्र चौवीसी, १६९७, अहमदावाद। प्र० स० कृ० कु०

२१—पुँजा (रत्न) ऋषि रास, १६९८, ,, ,,

२२—केशी प्रदेशी प्रबन्ध, १६९८, अहमदावाद, ,,

२३—द्रौपदी चौपाई, १७००, अहमदावाद, हमारे सग्रह में।

छत्तीसी साहित्य

१—क्षमा छत्तीसी, नागोर, प्रकाशित। २—कर्म छत्तीसी, १६६८, मुलतान। ३—पुण्य छत्तीसी, १६६६, सिद्धपुर। ४—सन्तोष छत्तीसी, १६८४ लूणकरणसर। ५—दुष्काल वर्णन छत्तीसी, १६८८। ६—सवैया छत्तीसी, १६६०, खंभात। ७—आलोयणा छत्तीसी, १६६८ अहमदाबाद। सभी स० कृ० कु० में प्रकाशित।

इनके अतिरिक्त तीर्थभास छत्तीसी, साधुगीत छत्तीसी आदि कई संग्रह हैं। हमने ५०० के लगभग स्तवन, गीत, पदादि संगृहीत किए हैं। जो समयसुन्दर कृति कुसुमांजली में प्रकाशित है।

कुछ विद्वानों ने कविवर की कई अन्य रचनाओं का उल्लेख किया है, पर उनमें अधिकाश संदिग्ध प्रतीत होती है। यहां उनका निर्देश किया जाता है—

१—देसाई जी—(१) पुण्याढ्य रास, (२) संवादसुन्दर, (३) गुण-रत्नाकर छन्द, (४) गाथालक्षण, (५) रेवती सम्काय, (६) बीकानेर आदिनाथ वीनति आदि।

२—लालचन्द भ० गाधी—(१) शील छत्तीसी, (२) बारह व्रत रास, (३) श्रीपाल रास, (४) प्रश्नोत्तर चौपाई, (५) हंसराज-बच्छराज रास, (६) जम्बूरास, (७) नेमि-राजिमती रास, (८) अंतरिक्ष गौड़ी छन्द।

३—हीरालाल रसिकदास—जीवविचार वृत्ति।

४—पूरणचन्द नाहर - जिनदत्तर्षि कथा।

कवि की स्वलिखित प्रतियाँ

कविवर ने केवल ग्रन्थों की रचना ही नहीं की, स्व-रचित एवं अन्य-रचित अनेक ग्रन्थो की स्वयं प्रतिलिपियां भी कीं, जिनमे कई एक उपलब्ध हैं। कई ग्रंथों की इनके द्वारा संशोधित प्रतियां भी मिली है। इनके स्वलिखित ज्ञात ग्रन्थों की सूची यहां दी जाती हैं—

नाहटा संग्रह में—(१) करकण्डु चौपाई (८ पत्र), १६६४, आगरा; (२) फुटकर गीत (२७ पत्र), १६७६, (३) खण्डित प्रति, १६८८, (४) जिनचन्द्रसूरि रागमाला, १६६४, जालोर; (५) प्रस्तावित सवैया छत्तीसी (४ पत्र), १६६८, पार्श्वचद्र उपाश्रय अहमदपुर; (६) केशी प्रदेशी प्रबन्ध (४ पत्र) १६६६, अहमदाबाद, (७) रात्रिजागरण गीत (८ पत्र); (८) नेमिगीत छत्तीसी (६ पत्र), (९) साधु गीतानि; (१०) अन्त समये जीव-प्रतिबोध गीतम् ; (११) ऐरवत क्षेत्रे २४ तीर्थंकर गीतम् ; (१२) कल्याण-मन्दिर वृत्ति, प्रारम्भ, (१३) श्री जिनचन्द्रसूरि गीत, १६५२ खभात; (१४) पट्टावली पत्र, १६७६, प्रल्हादनपुर।

अन्यत्र प्राप्त—(१) रूपकमाला चूर्णि (भाडारकर इन्स्टीट्यूट, पूना) (२) दीक्षा प्रतिष्ठा शुद्धि, १६८५, लूणकरणसर (आचार्य शाखा भण्डार) बीकानेर। (३) गाथासाहस्री (आ० शा० भं०)। (४) कथासंग्रह (आ० शा० भ०)। (५) प्रश्नोत्तर पत्र (आ० शा० भं०)। (६) महावीर २७ भव, दो पत्र (अबीरजी भंडार)। (७) सारस्वत रहस्य (महिमाभक्ति भण्डार)। (८) सीताराम चौपाई (अनूप संस्कृत पुस्त-कालय, नित्यमणि जीवन जैन पुस्तकालय, कलकत्ता; विजयधर्मसूरि ज्ञानभण्डार, आगरा)। (९) वाग्भटालंकार वृत्ति, मध्य पत्र (महिमाभक्ति भण्डार)।

(१०) गुरु-दुःखित वचनम् म० भ० भं०)। (११) अष्टक, दो पत्र (म० भ० भं०)। (प्रियमेलक चौ०, ५ पत्र (म० भ० भं०)। (१३) तीर्थ-भास छत्तीसी (रा० ए० सो० वम्बई)। (१) साँझी गीत (पालनपुर भण्डार)। (१५) साधुगीत छत्तीसी (फूलचन्दजी झावक)। (१६) कुमारसम्भव वृत्ति, १६७६ (हरिसागरसूरि भण्डार, लोहावट)। (१७) गीत, पत्र १ तथा ८, स० १६६३, पाटण (यति नेमिचन्द जी, वाहडमेर)। (१८) शत्रुँजयरासादि (हाला भण्डार)। (१६) रघुवंश टीका, ६ पत्र (डूंगरसी भण्डार, जेसलमेर)। (२०) अष्टोतरी दशाकरण विधि, तीन पत्र (डू० भ०) (२१) माघ काव्य वृत्ति (सुराणा पुस्तकालय, चूरू)। (२२) श्री जिन सिंह पदोत्सव काव्य, नौ पत्र (यति सुमेरमल जी, भीनासर)। (२३) प्रिय-मेलक चौपाई (आगरा ज्ञानमन्दिर)। (२४) द्रौपदी चौपाई (अनन्तनाथ भण्डार, वम्बई)। (२५) कालिकाचार्य कथा (जयचन्द भण्डार, वीका-नेर)। (२६) पार्श्वनाथ लघु स्तवन, ८ पत्र स० १७००, अहमदावाद। (२७) लिंगानुशासन चूर्णि, ६ पत्र। (२८) सारस्वत रूपाणि, ५ पत्र। (२६) सप्तनिन्हव सम्बन्ध। (३०) कथा-संग्रह (२६– ३० आचार्य शाखा भण्डार)।

संशोधित एवं 'पर्याय' लिखित प्रतियाँ

१—दशवैकालिक पर्याय (हमारे संग्रह)। २—लिंगानुशासन पर्याय, ८ पत्र (महिमाभक्ति भण्डार)। ३—सन्देह-दोलावली पर्याय (जयचन्द जी भण्डार। ४—चतुर्मासिक व्याख्यान पद्धति (हमारे संग्रह। ५—प्रिय-मेलक चौपाई (हमारे संग्रह)।

अन्य-रचित ग्रंथों की प्रतियाँ

१—दोपावहार वृत्ति (हमारे सग्रह)। २—श्रवणभूषण, १६५६ वि० (यति चुन्नीलाल जी के संग्रह में)। ३—भरटक द्वात्रिंशिका, ७ पत्र (डंगरसी भण्डार, जैसलमेर)।

महाकवि समयसुंदर का साहित्य अत्यन्त विशाल है, उनके सम्बन्ध मे हमने गत ३५ वर्षों में पर्याप्त शोध की है, फिर भी नवीन शोध करने पर कुछ न कुछ प्राप्ति होती ही रहती है। यहाँ सीमित स्थान में उनके साहित्य का विस्तृत विवेचन देना सम्भव नहीं है। हमने समयसुन्दर कृति कुसुमांजलि का सम्पादन कर प्रकाशन किया है, जिसमें महोपाध्याय विनयसागरजी द्वारा लिखित 'महोपाध्याय समयसुन्दर' निबन्ध व उनकी अब तक प्राप्त ५६३ लघु कृतियाँ दे दी हैं। सादूल राजस्थान रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर से प्रकाशित समयसुन्दर रास पंचक में उनके ५ रास सार सहित दे दिये है, मृगावती रास के सार रूप "सती मृगावती" पुस्तक लगभग ३५ वर्ष पूर्व प्रकाशित की थी। अब सीताराम चौपई नामक कविवर की विशिष्ट कृति को राससार सहित प्रकाशित करते अत्यन्त हर्ष हो रहा हैं। पाठकों को कविवर की कृतियों का रसास्वादन करने के लिए समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जलि ग्रंथ अवश्य अवलोकन कर अपने नित्य के भक्ति क्रम में सम्मिलित करना चाहिए।

प्रो० फूलसिंह हिमांशु ने सीताराम चौ० का संक्षिप्त परिचय मरु-भारती वर्ष ७ अंक १ में प्रकाशित किया था जिसे यहाँ साभार प्रकाशित किया जा रहा है।

मणिधारी जयन्ती
मा० सु० १४, सं० २०२०

—अगरचन्द नाहटा
—भँवरलाल नाहटा

सीताराम चरित्र सार

पूर्वकथा प्रसंग

एक वार गणधर गौतम राजगृह नगर में समौसरे। महाराजा श्रेणिकादि परिषद् के समक्ष उन्होंने अठारह पाप स्थानकों का परिहार करने का उपदेश देते हुए कहा कि साध्वादि को मिथ्या कलंक देने से सीता की भाँति प्रबल दुःख जाल मे पड़ना होता है। श्रेणिक के पूछने पर गौतम स्वामी ने सीता के पूर्वभव से लगा कर उनका सम्पूर्ण जीवन-वृत्त वतलाया जो यहाँ संक्षिप्त कहा जाता है।

वेगवती और महात्मा सुदर्शन

भरतक्षेत्र में मृणालकुंड नगर में श्रीभूति पुरोहित की पुत्री वेगवती निवास करती थी। एक वार वहाँ सुदर्शन नामक उच्चकोटि के मुनिराज के पधारने पर सारा नगर वन्दनार्थ गया और उनके निर्मल संयम और उपदेशों की सर्वत्र प्रशंसा होने लगी। मिथ्या दृष्टिवश वेगवती को साधु की प्रशंसा असह्य हुई और वह लोगों की दृष्टि मे मुनिराज को गिराने के लिए मिथ्या प्रचार करने लगी कि ये साधु पाखण्डी है। मैंने इन्हें स्त्री के साथ व्रत भंग करते देखा है। वेगवती के प्रचार से साधु की सर्वत्र निन्दा होने लगी। मुनिराज के कानों मे जव यह प्रवाद पहुँचा तो उन्हें मिथ्या कलंक और धर्म की निन्दा का बड़ा खेद हुआ। उन्होंने जव तक यह कलंक न उतरे, अन्न जल का परित्याग कर दिया। शासनदेवी के प्रभाव से वेगवती का मुंह फूल गया और वह अत्यन्त दुःखी होकर अपने किये का फल पाने लगी। उसके मन मे पश्चाताप हुआ और अपना दुष्कृत्य स्वीकार करते हुए

उसने मुनिराज को निर्दोष घोषित कर दिया। लोगों में सर्वत्र हर्ष व्याप्त हो गया। वेगवती ने धर्म श्रवण कर संयम स्वीकार किया और आयुष्यपूर्ण कर प्रथम देवलोक मे उत्पन्न हुई।

वेगवती और मधु-पिंगल

भरतक्षेत्र में मिथिलापुरी नामक समृद्धनगरी थी जहाँ दानी और तेजस्वी जनक राजा राज्य करते थे। उनकी भार्या वैदेही की कुक्षि में वेगवती का जीव-कन्या के रूप में व एक अन्य जीव पुत्र के रूप मे उत्पन्न हुए। पूर्वभव के वैरवश एक देव ने पुत्र को हरण कर लिया। श्रेणिक राजा द्वारा वैर का कारण पूछने पर गौतम स्वामी ने कहा कि - चक्रपुर के राजा चक्रवर्ती और उसकी रानी मयणसुन्दरी की पुत्री अत्यन्त सुन्दरी थी। लेखशाला में अध्ययन करते हुए पुरोहित के पुत्र मधुपिंगल से उसका प्रेम हो गया। मधुपिंगल उसे विदर्भापुरी ले गया और वे दोनों वहाँ आनन्दपूर्वक रहने लगे। कुछ दिनों में मधु पिंगल विद्या विस्मृत होकर धन के विना दुःखी हो गया। राजकुमार अहिकुण्डल ने जब सुन्दरी को देखा तो वह उसे अपने महलों में ले गया। मधुपिंगल ने जब अपनी स्त्री को नहीं देखा तो उसने राजा के पास जाकर पुकार की कि मेरी स्त्री को कोई अपहरण कर ले गया। आप उसकी शोधकर मुझे प्राप्त कराने की कृपा करें। राजकुमार के किसी पुरुष ने कहा—मैंने उसे पोलासपुर में साध्वी के पास देखा है। मधुपिंगल उसे खोजने के लिए पोलाशपुर गया और न मिलने पर फिर राजा के पास आकर पुकार की और झगड़ा करने लगा तो राजा ने उसे पिटवा कर नगर के वाहर निकाल दिया। मधुपिंगल

विरक्त होकर साधु हो गया और तपश्चर्या के प्रभाव से मरकर स्वर्ग-वासी हुआ। राजकुमार अहिकुण्डल ने धर्म सुना और साधु संगति से सदाचारी जीवन बिता कर वैदेही की कुक्षि में पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ जिसे पूर्वभव का वैर स्मरणकर मधुपिंगल के जीव देव ने जन्मते ही अपहरण कर लिया। देव का विचार था कि इसे शिला पर पछाड़ कर मार दिया जाय पर मन मे दयाभाव आ जाने से वह ऐसा न कर सका और उसे कुण्डल हार पहना कर वैताढ्य पर्वत पर छोड़ दिया। चन्द्रगति नामक विद्याधर ने जब उसे देखा तो उसने तत्काल ग्रहण कर रथनेउरपुर ले जाकर अपनी भार्या अंशुमती को देकर लोगों मे प्रसिद्धि कर दी कि मेरी स्त्री गूढगर्भा थी और उसके पुत्र उत्पन्न हुआ है। विद्याधर लोगों ने पुत्र जन्मोत्सव किया और उस बालक का नाम भामंडल रखा। वह कुमार वैताढ्य पर्वत पर चन्द्रगति के यहाँ बड़ा होने लगा।

सीता का नाम संस्करण तथा पूर्वानुराग

इधर जब रानी वैदेही ने पुत्र को न देखा तो वह मूर्छित होकर नाना विलाप करने लगी। राजा जनक ने उसे समझा-बुझा कर शात किया और पुत्री का जन्मोत्सव मनाकर उसका नाम सीता रखा। राजकुमारी सीता पाँच धायो द्वारा प्रतिपालित होकर क्रमशः यौवन अवस्था में प्रविष्ठ हुई। सीता लावण्यवती और अद्वितीय गुणवती थी। राजा जनक ने उसके लिए वर की शोध करने के हेतु मंत्री को भेजा। मंत्री ने राजा से कहा कि अयोध्या नरेश दशरथ के चार पुत्र है जिनमें कौशल्यानंदन रामचंद्र अपने लघुभ्राता सुमित्रा-

नंदन लक्ष्मण और कैकयी के पुत्र भरत शत्रुघ्न युक्त परिवृत है। इनमें रामचंद्र के साथ सीता का संबंध सर्वथा योग्य है। राजा जनक ने राजपुरुषो को अयोध्या भेजकर सीता का सम्बंध कर लिया। सीता ने जब यह सम्बंध सुना तो वह भी अत्यन्त प्रमुदित हुई।

नारद मुनि का आगमन अपमान तथा वैरशोधन की चेष्टा

एक दिन नारद मुनि सीता को देखने के लिए आये। सीता ने उनका भयानक रूप देखा तो वह दौड़कर महल में चली गई। नारद मुनि जब पीछे-पीछे गए तो दासियों ने अपमानित कर द्वारपाल द्वारा बाहर निकलवा दिया। नारद मुनि क्रुद्ध होकर सीधे वैताढ्य पर्वत पर रथनेउर नरेश के यहाँ गए और सीता का चित्र बनाकर भामंडल के आगे रखा। भामंडल ने सीता पर मुग्ध होकर उसका परिचय प्राप्त किया और उसकी प्राप्ति के लिए उदास रहने लगा। चन्द्रगति ने भामण्डल को समझा-बूझाकर आश्वस्त किया और सीता की माग करने मे कदाचित् जनक अस्वीकार हो जाय, तो अपना अपमान हो जाने की आशंका से चपलगति विद्याधर को छल-बलपूर्वक राजा जनक को ही बुला लाने के लिए मिथिला भेजा।

विद्याधरों का षड़यन्त्र और विवाह की शर्त

चपलगति घोड़े का रूप धर मिथिला गया। राजा जनक ने लक्षण-युक्त सुन्दर अश्व देखकर अपने यहाँ रख लिया। एक महीने बाद राजा स्वयं उस पर आरूढ़ होकर वन मे गया तो अश्व ने राजा जनक को आकाश मार्ग से चन्द्रगति विद्याधर के समक्ष लाकर उपस्थित कर दिया। चन्द्रगति ने भामण्डल के लिए सीता की माँग की तो जनक

ने कहा—दशरथ राजा के पुत्र रामचन्द्र को सीता दी जा चुकी है, अतः अब यह अन्यथा कैसे हो सकता है? विद्याधरों ने कहा—खेचर के सामने भूचर की क्या विसात है? राम यदि देवाधिष्ठित धनुष चढा सकेगा तो सीता उसे मिलेगी अन्यथा विद्याधर ले जायेंगे! विद्याधर लोग सदल बल मिथिला के उद्यान में आ पहुँचे। राजा जनक भी खिन्न हृदय से अपने महलों में आये और रानी के समक्ष कहा कि राम यदि बीस दिन के अन्दर धनुष चढा सका तो ठीक अन्यथा सीता को विद्याधर ले जावेंगे। सीता ने कहा—आप कोई चिन्ता न करें, वर राम ही होगें। विद्याधर लोग अपनी इज्जत खो कर जायेंगे।

धनुष-भंग आयोजन तथा सीता विवाह

मिथिला नगरी के बाहर 'धनुष-मण्डप' बनवाया गया। राजा दशरथ अपने चारों पुत्रों के साथ आ पहुचे। मेघप्रभ, हरिवाहन, चित्ररथ आदि कितने ही राजा आये थे। धाय माता ने सीता को सबका परिचय दिया। मन्त्री द्वारा धनुष चढ़ाने का आह्वान श्रवण कर राजा लोग बगलें झांकने लगे। अतुलबली राम सिंह की तरह उठे और तत्काल धनुष चढ़ा दिया। टंकार शब्द से पृथ्वी और पर्वत कांपने लगे, शेषनाग विचलित हो गये। अप्सराएं कांपती हुई अपने भर्त्ताओं से आलिंगित हो गईं। आलान स्तंभ उखड़ गये, मदोन्मत्त हाथी छुटकर भग गए। थोड़ी देर में सारे उपद्रव शान्त हो गए आकाश में देव दुंदुभि बजी, पुष्पवृष्टि हुई सीता प्रफुल्लित होकर रामचन्द्रके निकट आ पहुँची। दूसरा धनुष लक्ष्मणने चढाया, विद्या-

धर लोगों ने प्रसन्न होकर अठारह कन्याओं का सम्बन्ध किया। राम सीता का पणिग्रहण हुआ, सब लोग अपने-अपने स्थान लौटे। राजा दशरथ अपने पुत्रादि परिवार सह जनक द्वारा विपुल समृद्धि पाकर अयोध्या लौटे।

महाराजा दशरथ की विरक्ति

महाराजा दशरथ शुद्ध श्रावक धर्म पालन करते हुए काल निर्गमन करते थे। एक वार जिनालय में उन्होंने अठाई महोत्सव प्रारम्भ किया तो समस्त राणियों को उत्सव दर्शनार्थ बुलाया गया। सब को बुलाने के लिए अलग-अलग व्यक्ति भेजे गये थे। सभी रानियाँ आकर उपस्थित हो गई। पट्टरानी के पास बुलावा नहीं जाने से वह कुपित होकर आत्मघात करने लगी। दासी का कोलाहल सुनकर राजा स्वयं पहुंचा और रानी से कहा ये क्या अनर्थ कर रही हो? इतने मे ही रानी को बुलाने के लिए भेजा हुआ वृद्ध पुरुष आ पहुंचा। उसके देर से पहुँचने का कारण वृद्धावस्था की अशक्ति ज्ञात कर राजा के मन मे समय रहते आत्महित कर लेने की तमन्ना जगी। इसी अवसर पर उद्यान मे सर्वभूतहित नामक चार ज्ञानधरी मुनिराज समौसरे। राजा सपरिवार मुनिराज को वन्दनार्थ गये। उनकी धर्मदेशना श्रवण कर राजा का हृदय वैराग्य से ओतप्रोत हो गया और वे घर आकर चारित्र ग्रहण करने के लिये उपयुक्त अवसर देखने लगे।

भामंडल की आत्म-कथा

जब भामण्डल ने सुना कि सीता का राम के साथ विवाह हो गया तो वह अपने को अधन्य मानने लगा और जिस किसी प्रकार

से सीता को प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय कर सैन्य सहित रवाने हुआ। मार्ग में विदर्भा नगरी में जब पहुंचा तो उसे वहाँ के दृश्यों को देखकर ईहा पोह करते हुए जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया। उसे अपनी ही सहोदरा सीता के प्रति लुब्ध होने का बड़ा पश्चाताप हुआ और वैराग्य पूर्वक ससैन्य वापस रथनेउरपुर पहुंचा। पिता चन्द्रगति ने उसे एकान्त में लौट कर आने का कारण पूछा। भामण्डल ने कहा—हे तात! मैं पूर्व जन्म मे राजकुमार अहिमंडळ था और मैंने निर्लज्जतावश ब्राह्मणी का अपहरण किया था। मैं मर कर जनक राजा का पुत्र हुआ, सीता मेरी सहोदरा है। पूर्व जन्म के वैर विशेष से देव ने मेरा अपहरण किया और प्रारब्धवश आपने मुझे अपना पुत्र किया। हाय! मुझ अज्ञानी ने अपनी भगिनी की वांछा की, यही मेरा वृतान्त है। विद्याधर चन्द्रगति इस वृतान्त को श्रवण कर विरक्त चित्त से भामण्डल को राज्याभिषिक्त कर सब के साथ अयोध्या के उद्यान में आया। मुनिराज को वंदनकर चन्द्रगति ने उनके पास दीक्षा ले ली। भामण्डल ने याचकों को प्रचुर दान दिया जिससे वे जनक-वैदेही के नन्दन भामण्डल का यशोगान करने लगे। महलों मे सोयी हुई सीता ने जब भाटों द्वारा जनक के पुत्र की विरुदावली सुनी तो उसने सोचा—यह कौन जनक का पुत्र? मेरे भाई को तो जन्म होते ही कोई अपहरण कर ले गया था। इस प्रकार विचार करते हुए राम के साथ प्रातःकाल उद्यान मे गयी। महाराजा दशरथ भी आये और उन्होने चन्द्रगति मुनि को देखकर ज्ञानी गुरु से सारा वृतान्त ज्ञात किया। सब लोग जनक-पुत्र भामण्डल का परिचय पाकर प्रसन्न हुए। भामण्डल के हर्ष का तो कहना ही क्या। रामने स्वागतपूर्वक भामण्डल

को नगर में प्रवेश कराया। भामण्डल ने पवनगति विद्याधर को मिथिला भेजा और माता-पिता को वधाईपूर्वक विमान मे आरूढ़ कर अयोध्या बुला लिया। माता-पिता के चरणों में नमस्कार कर सारा वृत्तान्त सुनाया, सव लोग परस्पर मिलकर आनन्दित हुए। दशरथ के आग्रह से पाँच दिन अयोध्या में रह कर जनक राजा भामण्डल सहित मिथिला आये, उत्सव-महोत्सव पूर्वक कुछ दिन माता पिता के पास रह कर भामण्डल पिता की आज्ञा से रथनेउरपुर चला गया।

राज्याभिषेक की कामना और कैकयी की वर याचना

एक दिन राजा दशरथ पिछली रात्रि में जग कर वैराग्य पूर्वक चिन्तन करने लगा कि विद्याधर चन्द्रगति धन्य है जो संयम स्वीकार कर आत्म साधन मे लग गये। मैं मन्दभाग्य अभी भी गृहस्थी में फँसा पडा हूँ, क्षण-क्षण मे आयु घट रही है और न मालुम कव क्षय हो जायगी। अतः अव रामचन्द्र को राज्य सम्भला कर मुझे भी संयम ग्रहण करना श्रेयस्कर है। उसने प्रातः काल सवके समक्ष अपने विचार प्रकट किये। और सवकी अनुमति से राम के राज्याभिषेक का मुहुर्त्त देखने लगे। इतने ही में कैकयी राजा के पास गयी और यह सोच कर कि राम लक्ष्मण के रहते मेरे पुत्र को राज नहीं मिलेगा—राजा से अपना अमानत रखा हुआ वर माँगा। उसने कहा—राम को वनवास और भरत को राज्य देने की कृपा करें। राजा दशरथ यह सुन कर वड़ी भारी चिन्ता में पड गये। रामचन्द्र ने आकर पिता को चिन्ता का कारण पूछा तो उन्होंने कैकयी के वर की वात वतलाते हुए इस प्रकार पूर्व वृतान्त सुनाया—

कैकेयी वर कथा प्रसंग

एक बार नारद मुनि ने हमारे पास आकर कहा कि लंकापति ने नैमित्तिक से पूछा कि मैं सर्वाधिक समृद्धिशाली हूं, देव दानव मेरी सेवा करते है तो ऐसा भी कोई है जिससे मुझे खतरा हो ? नैमित्तिक ने कहा—दशरथ के पुत्रों द्वारा जनक सुता के प्रसंग से तुम्हें वड़ा भय है। रावण ने तुरन्त विभीषण को बुला कर आज्ञा दी कि दशरथ और जनक को मार कर मेरा उद्वेग दूर करो ! अतः अब आप सावधान रहें ! स्वधर्मी के सम्बन्ध से मुझे व जनक को साव-धान कर नारद मुनि चले गये। मैंने मन्त्री की सलाह से देशान्तर गमन किया और मेरे स्थान पर लेप्यमय मूर्त्ति बैठा दी गयी। जनक ने भी आत्म रक्षार्थ ऐसा ही किया। विभीषण ने आकर दोनों की प्रतिकृतियाँ भग कर दी, हम दोनों का भार उतर गया।

मैं देशाटन करता हुआ कौतुकमंगल नगर में पहुँचा। वहाँ शुभमति राजा की भार्या पृथिवी की पुत्री कैकयी का स्वयंवर मण्डप वना हुआ था, बहुत से राजाओं की उपस्थिति में मैं भी एक जगह छिप कर बैठ गया। कैकयी ने सबको छोड़ कर मेरे गले में वरमाला डाली जिससे दूसरे सब राजा क्रुद्ध होकर चतुरंगिनी सेना सहित युद्ध करने लगे। शुभमति को भागते देख कर मैं रथारूढ़ हुआ, कैकयी सारथी वनी और रणक्षेत्र में वाणो की वर्षा से समस्त राजाओं को परास्त कर कैकयी से विवाह किया। उस समय मैंने कैकयी को आग्रहपूर्वक वर दिया था जिसे उसने धरोहर रखा। आज वह वर माँग रही है कि भरत को राज्य दो। पर तुम्हारी उपस्थिति में यह

कैसे हो सकता है ? इसी बात की मुझे चिन्ता है। राम ने कहा—आप प्रसन्नतापूर्वक भरत को राज्य देकर अपने वचनों की रक्षा करें, मुझे कोई आपत्ति नहीं। दशरथ ने भरत को बुला कर राज्य लेने के लिये समझाया। उसने कहा—मुझे राज्य से कोई प्रयोजन नहीं, मेरा दीक्षित होने का भाव है, आप राम को राज्य दीजिये। राम ने कहा मैं जानता हूँ कि तुम्हें राज्य का लोभ नहीं है पर माता के मनोरथ और पितृवचनों की रक्षा के लिये तुम्हें ऐसा करना होगा! भरत ने कहा—बड़े भ्राता के रहते मेरा राज्य लेना असम्भव है। राम ने कहा—मैं वनवास ले रहा हूँ, तुम्हें आज्ञा माननी होगी!

सीता वनवास

जब लक्ष्मण ने यह सुना तो वह दशरथ के पास जाकर इसका घोर विरोध करने लगा पर राम ने उसे समझा कर शान्त कर दिया। रामचन्द्र और लक्ष्मण वनवास के लिये प्रस्थान करने लगे, सीता भी पीछे चलने लगी। राम के बहुत समझाने पर भी सीता किसी भी प्रकार रुकने को राजी नहीं हुई और छाया की भाँति साथ हो गई। तीनों मिल कर दशरथ के पास गए और नमस्कार पूर्वक अपने अपराधों की क्षमा याचना करते हुए विदा माँगी। दशरथ ने कहा—सुपुत्रो! तुम्हारा क्या अपराध हो सकता है? मैं तो दीक्षा लूँगा। तुम्हें जैसे उचित लगे करना, पर अटवी का मार्ग बड़ा विषम है सावधान रहना। इसके बाद दोनों माताओं से मिल कर उन्हें आश्वस्त कर देव पूजा गुरु वदनान्तर सबसे क्षमतक्षामणा पूर्वक निर्दोष वन की ओर गमन किया। उन्हें पहुँचाने के लिये राजा, सामन्त, मन्त्री

व सारे प्रजाजन अश्रुपूर्ण नेत्रों से साथ चले। राम का विरह असह्य था, राज परिवार, रानियाँ और महाजन लोग सभी व्याकुल होकर रुदन कर रहे थे। सबके मुख पर राम को निकालने वाली कैकयी के प्रति रोष और घृणा के भाव थे। राम के वियोग से दुःखी अयोध्या-वासियों का दुःख देखने में असमर्थ होकर भगवान अंशुमाली भी अस्ताचल की ओर चले। राम सीता और लक्ष्मण ने जिनालय में आकर रात्रिवास किया। माता पिता मिलने आये जिन्हें रवाना करके कुछ विश्राम किया और पिछली रात में उठ कर जिनवन्दन करके धनुष बाण धारण कर पश्चिम की ओर रवाना हो गये। विरहातुर सामन्त लोग पैर खोजते हुए आ पहुँचे और रामचन्द्रजी की सेवा करते हुए कितने ही ग्राम नगर उल्लंघन किये। जब गंभीरा तट आया तो बस्ती का अन्त जान कर सामन्तादि को वापस लौटा दिया और सीता और लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र नदी पार होकर दक्षिण की ओर चले।

सामन्तादि भारी मन से वापस लौट कर जिनालय में ठहरे। तत्र विराजित मुनिराज से कितनों ने ही संयम व व्रतादि ग्रहण किये। महाराज दशरथ ने भूतसरण गुरु के पास दीक्षा ले ली और कठिन तप करने में लग गये।

भरत राम सम्मिलन तथा भरत का आज्ञा-पालन

पुत्रों के वनवास और पति के दीक्षित होने से खिन्न चित्त सुमित्रा व अपराजिता बड़ा दुःख करने लगी। उन्हें क्लान्त देख कर कैकयी ने भरत से कहा—बेटा। राम लक्ष्मण को बुला कर लाओ,

उनके विना तुम्हें राज शोभा नहीं देता। कैकयी को साथ लेकर भरत राम की शोध में निकला। गंभीरा पार होकर विषम वन में रामचन्द्र जी के पास जा पहुँचा और घोड़े से उतर कर चरणों में गिर पड़ा राम ने उन्हें आलिंगन और लक्ष्मण ने सन्मानित किया। भरत ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से प्रार्थना की कि—आप मेरे पितृतुल्य हैं, अयोध्या चल कर राज्य कीजिये मैं आप पर छत्र व शत्रुघ्न चामर धारण करेगा। लक्ष्मण मन्त्री होंगे! इतने में ही कैकयी रथ से उतर कर आ पहुंची और पुत्रों को हृदय से लगा कर कहने लगी—मेरा अपराध क्षमा कर अयोध्या का राज सम्भालो! पर रामचन्द्र ने कहा—हम क्षत्रिय हैं, वचन नहीं पलटते। भरत को राज्य करने की आज्ञा देकर रामने सबको वापस लौटा दिया।

अवन्ति कथा प्रसंग

राम लक्ष्मण और सीता कुछ दिन भयानक अटवी में रह कर क्रमशः चलते हुए अवन्ती देश आये। एक शून्य नगर को देख कर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ, जहाँ धन, धान्य, दुग्ध, गाय, भैंस आदि सब विद्यमान थे पर मनुष्य का नाम निशान नहीं था। राम, सीता शीतल छाया में बैठे और लक्ष्मण जानकारी प्राप्त करने के लिये दूर से आते हुए उदास पथिक को बुला कर राम के पास लाया। राम के पूछने पर उसने कहा—

यह देश दशपुर का एक नगर है, इसका सूना होने का कारण यह है कि यहाँ वज्रजंघ नामक न्यायी राजा राज करता था जिसे शिकार की बुरी लत लगी हुई थी। एक दिन राजा ने एक गर्भवती

हरिणी को मारा जिसके तड़पते हुए गर्भ को देख कर राजा का हृदय चीत्कार कर उठा। वह विरक्त चित्त से आगे बढ़ा तो शिला पर एक मुनिराज मिले जिनसे प्रतिबोध पाकर उसने सम्यक्त्व मूल श्रावक धर्म स्वीकार किया। तत्पश्चात वह धर्माराधन करता हुआ राज्य पालन करने लगा। उसने मुद्रिका में मुनिसुव्रत स्वामी की मूर्ति बनवा कर अन्य को नमस्कार न करने का व्रत पालन किया। अवन्तीपति सीहोदर को जिसकी अधीनता में वह था, नमस्कार करते समय जिनवन्दन का ही अध्यवसाय रखता था। किसी चुगलखोर शत्रु ने सीहोदर के कान भर दिये जिससे वह कुपित होकर दशपुर पर चढ़ाई करके वज्रजंघ को मारने के लिये ससैन्य अवन्ती से निकल पड़ा। इसी बीच एक व्यक्ति शीघ्रतापूर्वक वज्रजंघ से आकर मिला और उसे सीहोदर के आक्रमण से अवगत कराते हुए अपना परिचय इस प्रकार दिया कि मैं कुण्डलपुर का अधिवासी विजय नामक व्यापारी हूँ। मेरे माता-पिता शुद्ध श्रावक हैं, मैंने उज्जयिनी में आकर प्रचुर द्रव्य कमाया पर अनंगलता नामक वेश्या से आसक्त होकर सब कुछ खो बैठा। एक दिन मैं वेश्या के कथन से रानी के कुण्डल चुराने के लिये राजमहल में प्रविष्ट हुआ और छिप कर खड़ा हो गया—मैं इस फिराक में था कि राजा सो जाय तो रानी के कुण्डल हस्तगत करूं। पर विचारमग्न राजा को नींद न आने से रानी ने पूछा तो राजा ने कहा मैं दशपुर के राजा वज्रजंघ को मारूंगा जो मुझे प्रणाम नहीं करता! मेरे मन मे स्वधर्मी बन्धु को चेतावनी देकर उपकृत करने का विचार आया और मैं वहाँ से आपके पास आकर गुप्त खबर दे रहा हूं, आप अपनी रक्षा का यथोचित उपाय करें। राजा ने

उसका आभार स्वीकार किया। वज्रजंघ ने अन्न पानी का संचय करके नगर के द्वार बन्द कर लिये। सीहोदर की सेना ने आकर नगर को घेर लिया। सीहोदर ने दूत भेज कर वज्रजंघ को कहलाया कि तुम मुझे नमस्कार करो और राज भोगो। पर वज्रजंघ ने कहा—मैं अपना नियम भंग नहीं कर सकता। इसीलिये दोनों राजा एक बाहर और एक भीतर अकड़े बैठे है, यही कारण है कि यह देश अभी-अभी सूना हो गया है। ऐसा कह कर वह व्यक्ति जाने लगा तो राम ने उसे कटि का कंदोरा इनाम देकर बिदा किया।

राम की वज्रजंघ की सहायता

राम लक्ष्मण स्वधर्मी बन्धु वज्रजंघ की सहायता करने के उद्देश्य से दशपुर के बाहर चन्द्रप्रभ जिनालय में आये और जिन वंदनान्तर लक्ष्मण नगर मे जाकर राजा से मिला। राजा ने उसे भोजन करने को कहा तो लक्ष्मण के यह कहने पर कि मेरे भ्राता नगर के बाहर है, राजाने तैयार मिष्टान्न भोजन भेज दिया। भोजनान्तर लक्ष्मण सीहोदर के पास गया और उससे कहा कि मैं भरत का भेजा हुआ दूत हूं, तुमने अन्यायपूर्वक वज्रजंघ पर घेरा डाल रखा है, अब भरत की आज्ञा से विरोध त्याग दो, अन्यथा काल कृतान्त के हस्तगत हुआ समझो। सीहोदर ने क्रुद्ध होकर सुभटों को संकेत किया। लक्ष्मण के साथ युद्ध छिड़ गया, अकेले वीर ने सीहोदर की सेना को परास्त कर सीहोदर को बांधकर रामके सामने उपस्थित किया, रामने वज्रजंघ को आधा राज्य दिला कर उसका मेल करा दिया और उपकारी विज्जु को रानी के कुण्डल दिलाये। सीहोदर ने ३०० कन्याएें एवं वज्रजंघ ने

८ कन्याएं लक्ष्मण को दी जिन्हें देशाटनकी अवधि पर्यन्त वहीं रखने का आदेश दिया।

राजा वालिखिल कथा प्रसंग

राम-सीता और लक्ष्मण वहां से विदा होकर कूपचण्ड उद्यान में पहुंचे जहां सीता को भूख प्यास लग गई। लक्ष्मण सरोवर की पाल पर गया, जहां राजकुमार पहले से आया हुआ था। राजकुमार के पुरुष लक्ष्मण को बुला ले गए और सम्मानपूर्वक राजकुमार ने परिचय पूछा तो लक्ष्मण ने कहा मेरे भ्राता बाहर बैठे है, उनके पास जाने पर सारी बातें करूंगा। राजकुमार ने रामको बुलाकर आदर पूर्वक भोज-नादि से भक्ति की फिर राजकुमार ने कहा—इस नगरी मे वालिखिल और उसकी पटरानी पृथ्वी राज्य करते थे। एक बार राजा को युद्ध में म्लेच्छाधिप वन्दी बनाकर ले गये तब राजा सीहोदर ने कहा कि गर्भवती रानी के यदि पुत्र होगा तो उसे राज्य दिया जायगा। रानी के मैं पुत्री हुई पर राज्य की रक्षा के लिए मुझे पुत्र घोषित कर कल्याण माली नाम रखा गया। मेरी माता और मन्त्री के सिवा इस भेद को कोई नहीं जानता। मुझे पुरुष वेश पहना कर राजगद्दी पर बैठा दिया। मैंने यह गुप्त बात आपके समक्ष इसलिए प्रकट की है कि अब मैं तरुणी हो गई, आप कृपया मुझे अंगीकार करें। लक्ष्मण ने कहा—कुछ दिन तुम पुरुष वेश में राज्य संचालन करो, तुम्हारे पिता को हम विन्ध्याटवी जाकर म्लेछाधिप से छुड़ालाते हैं। इसके बाद राम सीता और लक्ष्मण विन्ध्याटवी की ओर रवाना हुए। सीता ने कौए के शकुन से भावी विजय की सूचना दी। विन्ध्याटवी पहुँच कर लक्ष्मण

ने वाणों की वर्षा द्वारा म्लेच्छाधिप इन्द्रभूति को परास्त कर दिया, राम के आदेश से उसने वालिखिल को वन्धनमुक्त कर दिया।

ब्राह्मण कपिल कथा प्रसंग

वालिखिल्ल को अपने नगर पहुँचा कर एक अटवी में जाने पर सीता को प्यास लग गई। राम लक्ष्मण उसे अरुण गाँव में कपिल ब्राह्मण के घर ले गये जहाँ ब्राह्मणी ने शीतल जलादि से सत्कृत कर ठहराया। इतने ही में ब्राह्मण ने आकर स्त्री को गाली देते हुए उलाहना दिया कि इन म्लेच्छोंको ठहराकर मेरा घर अपवित्र कर दिया। लक्ष्मण उसकी गालियों से क्रुद्ध होकर टांग पकड़ कर घुमाने लगा तो राम ने उसे छुड़ा दिया और तीनों ने जंगल का मार्ग लिया।

सुदूर अटवी में पहुँचने पर घनघोर घटा, गाज, वीज के साथ मूसलधार वर्षा होने लगी। ठंढ के मारे जव शरीर कांपने लगा तो राम, सीता, लक्ष्मण ने एक घनी छाया वाले वट-वृक्ष का आश्रय लिया। इस वृक्ष मे एक यक्ष रहता था जो राम-लक्ष्मण के तेज को न सह सका और वड़े यक्ष के पास जाकर शिकायत करने लगा। वड़े यक्ष ने अवधिज्ञान से पहिचान कर पलंग-शय्या आदि सुख सुविधाएं सोने के लिए प्रस्तुत कर दी। प्रातःकाल जव उठे तो यक्ष द्वारा निर्मित समृद्धिशाली नगर सीता, राम, लक्ष्मण ने साश्चर्य देखा। इसमें राजभवन, मन्दिर और कोट्याधीशों के मकान सुशोभित थे। यक्ष निर्मित रामपुरी मे इन्होंने वर्षाकाल व्यतीत किया।

एक दिन जंगल मे घूमते हुये कपिल ब्राह्मण ने इस नव्य नगरी को देखा तो एक महिला से उसने इस नगरी का परिचय पूछा।

यक्षिणी ने कहा यह राम की नगरी है राम लक्ष्मण यहाँ आनन्दपूर्वक रहते हैं और दीन हीन को प्रचुर दान देते हैं, स्वधर्मी भाई की तो विशेष प्रकार से भक्ति की जाती है। ब्राह्मण ने कहा—मैं राम का दर्शन कैसे करूं, यक्षिणी ने कहा—रात में इस नगरी में कोई प्रवेश नहीं करता, तुम पूर्वी दरवाजे के बाहर वाले जिनालय में जाकर भक्ति करो व मिथ्यात्व त्याग कर साधुओं से धर्म श्रवण करो जिससे तुम्हारा कल्याण होगा। ब्राह्मण यक्षिणी की शिक्षानुसार धर्माराधन करता हुआ पक्का श्रावक हो गया। सरल स्वभावी भली ब्राह्मणी भी प्रतिबोध पाकर श्राविका हो गई। एक दिन कपिल अपनी स्त्री के साथ राजभुवन की ओर आया और लक्ष्मण को देखकर वापस पलायन करने लगा तो लक्ष्मण के बुलाने से आकर नमस्कार पूर्वक कहने लगा—मे वहीं पापी हूँ जिसने आपको कर्कशता पूर्वक घर से बाहर निकाल दिया था। आप मेरा अपराध क्षमा करें। राम ने मिष्ट वचनों से कहा—तुम्हारा कोई दोष नहीं, उस अज्ञानता का ही दोष है, अब तो तुमने जिनधर्म स्वीकारकर लिया अतः हमारे स्वधर्मी बन्धु हो गए। तदन्तर उसे भोजन कराके प्रचुर द्रव्य देकर बिदा किया। कालान्तर में कपिल ने संयम मार्ग स्वीकार कर लिया।

वर्षाकाल बीतने पर जब राम अटवी की ओर जाने लगे तो यक्ष ने राम को स्वयंप्रभ हार, लक्ष्मण को कुण्डल व सीता को चड़ामणि हार भेंट किया एवं एक वीणा प्रदान कर अविनयादि के लिए क्षमा याचना की। राम के विदा होते ही नगरी इन्द्रजाल की भाँति लुप्त हो गई।

वनमाला और लक्ष्मण कथा प्रसंग

अटवी पार करके विजयापुरी के वाहर पहुँचकर वट वृक्ष के पास राम ने रात्रिवास किया। लक्ष्मण ने वट वृक्ष के नीचे किसी विरहिणी स्त्री का विलाप सुनकर कान लगाया तो सुना कि—हे वन देवी। मैं वडी भाग्यहीन हूं जो इस भव में लक्ष्मण को वर रूप में न पा सकी, अव पर भव में मुझे वे अवश्य प्राप्त हों। ऐसा कह कर वह गले में फांसी लगाने लगी तो लक्ष्मण ने शीघ्रतापूर्वक अपना आगमन सूचित कर फांसी को काट डाला। लक्ष्मण उसे राम के पास लाये, और सीता के पूछने पर कहा कि यह तुम्हारी देवरानी है। सीता के परिचय पूछने पर उसने कहा—इसी नगरी के राजा महीधर की पटरानी इन्द्राणी की मैं वनमाला नामक पुत्री हूं। वाल्यकाल मे राजसभा मे वैठे हुए लक्ष्मण की विरुदावली श्रवण कर मैंने लक्ष्मण को ही पति रूप में स्वीकार करने की प्रतिज्ञा कर ली। पिताजी अन्यत्र सम्वन्ध कर रहे थे पर मैंने किसी की वाञ्छा नहीं की। जव पिताजी ने दशरथजी की दीक्षा, और राम लक्ष्मण का वनवास सुना तो उन्होंने खिन्न होकर मेरा सम्बन्ध इन्द्रपुरी के राजकुमार से कर दिया। मैं अपनी प्रतिज्ञा पर अटल थी, अतः नजर बचा कर निकल भागी और वट वृक्ष के नीचे ज्योंही फांसी लगाई, मेरे पुण्योदय से लक्ष्मण ने आकर मुझे बचा लिया।

वनमाला सीता के साथ उपर्युक्त वार्तालाप कर रही थी इतने ही मे राजा के सुभट आ पहुँचे और वनमाला को देखकर राजा को सारा वृत्तान्त सूचित कर दिया। महीधर राजा ने प्रसन्नतापूर्वक आकर

साक्षात्कार किया और इन सबको अपने महलों में लाकर ठहराया। वनमाला को लक्ष्मण की प्राप्ति होने से सर्वत्र आनन्द छा गया।

अतिवीर्य का आक्रमण आयोजन और पराजय

इसी अवसर पर नन्दावर्त नगर से अतिवीर्य राजा का भेजा हुआ दूत महीधर के पास आया और सूचना दी कि हमारे भरत के साथ विरोध हुआ है अतः युद्ध के लिये सैन्य सहित शीघ्र आओ! लक्ष्मण द्वारा पूछने पर दूत ने कहा राम लक्ष्मण की अनुपस्थिति का अवसर देख कर हमारे स्वामी ने भरत से अधीनता स्वीकार करने के लिये कहलाया। भरत ने कुपित होकर दूत को अपमानित करके निकाल दिया। अतिवीर्य इसीलिये सैन्य एकत्र कर भरत से युद्ध करेगा और महीधर महाराज को बुला रहा है। महीधर ने—हम आ रहे हैं, कह कर दूत को विदा किया।

राम ने महीधर से कहा भरत हमारा भाई है, अतः हमें सहाय्य करने का यह समय है, आप अपने पुत्र को हमारे साथ दें ताकि अतिवीर्य को हाथ दिखाया जाय। महीधर ने अपने पुत्र को राम लक्ष्मण के साथ भेज दिया और नंद्यावर्त्त नगर के बाहर पहुँच कर सन्ध्या समय डेरा डाला। प्रातःकाल जिनालय मे वन्दन पूजनोपरान्त अधिष्ठाता देव द्वारा कार्य सिद्धि की सूचना के साथ-साथ सक्रिय सहयोग का वचन मिला।

देवी ने सुभटो का नर्त्तकी रूप बना दिया। राम ने राजाज्ञा से नर्त्तकी द्वारा नृत्य प्रारम्भ करवाया। नर्त्तकी ने अपने रूप कला से सबको मुग्ध कर दिया। अवसर देख कर नर्तकी ने राजा से कहा—

मूर्ख ! अहंकार त्याग कर भरत की आज्ञा स्वीकार करो। राजा ने कुपित होकर खड्ग निकाली तो नर्तकी ने राजा की चोटी पकड़ ली। लक्ष्मण अतिवीर्य को राम के पास ले गया, सीता ने उसे छुड़ाया। अतिवीर्य ने विरक्त होकर राम की आज्ञा से पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ले ली। पुत्र विजयरथ भरत का आज्ञाकारी हो गया।

जितपद्मा के लिए लक्ष्मण का शक्ति-सन्तुलन

राम लक्ष्मण कुछ दिन विजयपुर जाकर रहे फिर वनमाला को वहीं छोड़ कर खेमंजलि नगर गये। रामाज्ञा से लक्ष्मण नगर में गया तो उसने सुना कि शत्रुदमन राजा ने यह प्रतिज्ञा कर रखी है—जो मेरा शक्ति प्रहार सहन करेगा, उसे अपनी पुत्री दूंगा। लक्ष्मण ने राजसभा मे जाकर भरत के दूत के रूप मे अपना परिचय देते हुए राजा को पंचशक्ति प्रहार करने को कहा। जितपद्मा ने लक्ष्मण पर मुग्ध होकर शक्ति प्रहार के प्रपंच मे न पड़ने की प्रार्थना की। लक्ष्मण ने उसे निश्चिन्त रहने का संकेत कर दिया। राजा ने क्रमशः पंच शक्ति छोड़ी जिसे लक्ष्मण ने दोनों हाथ, दोनों काख और दाँतों द्वारा ग्रहण कर ली। देवो ने पुष्पवृष्टि की। लक्ष्मण ने जब कहा—राजा ! अब तुम भी मेरा एक प्रहार सहो ! तो राजा कांपने लगा, जितपद्मा की प्रार्थना से लक्ष्मण ने उसे छोड़ दिया। राजा के पुत्री ग्रहण करने की प्रार्थना पर लक्ष्मण ने कहा—मेरे ज्येष्ठ भ्राता जानें। राजा रामचन्द्र को प्रार्थना कर नगर में लाया और लक्ष्मण के साथ जितपद्मा का व्याह कर दिया। कुछ दिन वहां रह कर राम लक्ष्मण ने फिर वन की राह ली।

मुनिराज उपसर्ग तथा वंशस्थल नगर कथा प्रसंग

जब ये लोग वंशस्थल नगर पहुंचे तो राजा प्रजा सबको भयभीत हो भागते देखा और पूछने पर पर्वत पर महाभय ज्ञात कर महा-साहसी राम, लक्ष्मण और सीता के साथ पहाड़ पर गये। उन्होंने देखा एक मुनिराज ध्यान में निश्चल खड़े है, जिन्हें सांप, अजगर आदि ने चतुर्दिग् घेर रखा है। राम धनुषाग्र द्वारा उन्हें हटा कर मुनिराज के आगे गीत, वाद्य, नृत्यादि द्वारा भक्ति करने लगे। पूर्वभव के वैर को स्मरण करके भूत पिशाचों ने नाना उपसर्गों द्वारा भयानक दृश्य उपस्थित कर दिया। राम लक्ष्मण ने उन्हें भगा कर निरुपद्रव वातावरण कर दिया। मुनिराज को उसी रात्रि में शुक्ल-ध्यान ध्याते हुए केवलज्ञान प्रकट हो गया। देवों ने केवली भगवान की महिमा की, राम के पूछने पर मुनिराज ने उपद्रव का कारण इस प्रकार बतलाया।

अमृतसर के राजा विजयपर्वत के उपभोगा नामक रानी थी। जिससे वसुभूति नामक विप्र लुब्ध रहता था। राजा ने एक वार दूत के साथ वसुभूति को विदेश भेजा। वसुभूति ने मार्ग में दूत को मार दिया और वापस आकर राजा से कहा—दूत ने कहा कि मैं अकेला जाऊँगा, अतः मैं लौट आया हूं। ब्राह्मण रानी के साथ लिप्त था ही, उसने एक दिन रानी के आगे प्रस्ताव रखा कि तुम्हारे उदित, मुदित दोनों पुत्र अपने सुख मे अन्तरायभूत है अतः इन्हें मार्ग लगा दो। ब्राह्मणी ने राजकुमारों को भेद की वात बतला दी जिससे राजकुमारों ने ब्राह्मण को तलवार के घाट उतार दिया। संसार के स्वरूप से विरक्त राजकुमारों ने मतिवर्द्धन मुनि के पास दीक्षा ले ली। ब्राह्मण मर कर

म्लेच्छपल्ली में उत्पन्न हुआ। उदित, मुदित मुनिराज समेतशिखर यात्रार्थ जाते हुए म्लेच्छपल्ली के मार्ग से निकले तो वह म्लेच्छ इन्हें खड्ग द्वारा मारने को प्रस्तुत हुआ। मुनि-भ्राताओं ने सागारी अनशन ले लिया। पल्लीपति ने करुणापूर्वक म्लेच्छ द्वारा मारने से मुनिराजों को बचा लिया। समेतशिखर पहुंच कर मुनिराजों ने अनशन आराधना पूर्वक देह त्यागा और प्रथम देवलोक में देव हुए। म्लेच्छ ने संसार भ्रमण करते हुए मनुष्य भव पाया और तापसी दीक्षा लेकर अज्ञान तप किये जिससे दुष्ट परिणामी ज्योतिषी देव हुआ। उदित, मुदित के जीव अरिष्टपुर नरेश प्रियबन्धु की रानी पद्माभाके कुक्षि से उत्पन्न हुए। ब्राह्मण का जीव भी राजा की दूसरी रानी कनकाभा के उदर से अनुद्धर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। प्रियबन्धु राजाने बड़े पुत्र को राज देकर दीक्षा ले ली और यथासमय स्वर्गवासी हुए। अनुद्धर दोनों भ्राताओं के प्रति मात्सर्य धारण कर देश को लूटने लगा। राजा द्वारा निर्वासित होकर उसने तापसी दीक्षा लेली। रत्नरथ और विचित्ररथ भी दीक्षा लेकर प्रथम देवलोक मे गये और वहांसे च्यव कर सिद्धारथ-पुर के राज क्षेमंकर के यहाँ विमला रानी की कुक्षिसे देशभूषण, कुलभूषण नामक पुत्र हुये। जिन्हें राजा ने विद्योपार्जनार्थ गुरुकुल में भेज दिया पीछे से रानी के कमलूसवा नामक पुत्री हुयी। राजकुमार जब कला-भ्यास करके लौटे तो कमलूसवा को देख कर इस अनुमान से कि हमारे लिये पिताजी किसी राजकुमारी को यहाँ लाये हैं, उसके प्रति आसक्त हो गये। थोडी देर में जब विरुदावली सुन कर उन्हें अपनी ही बहिन होने का ज्ञात हुआ तो दोनों ने विरक्त चित्त से सुव्रतसूरि के पास चारित्र ग्रहण कर लिया। राजा क्षेमंकर पुत्र वियोग से दुःखी

होकर उदासीन रहने लगा। अन्त में मर कर गरुड़ाधिप देव हुआ। अणुद्धर एक वार अज्ञान तप करता हुआ कौमुदीनगर आया। वहाँ का राजा वसुधारा तापस का भक्त था किन्तु उसकी रानी शुद्ध जिन-धर्म परायणा थी। एक दिन राजा को तापस की प्रशंसा करते देख रानी ने कहा—ये अज्ञान तपस्वी है, सच्चे साधु तो निर्ग्रंथ होते हैं। राजा ने कहा—तुम असहिष्णुता से ऐसा कहती हो। रानी ने कहा—परीक्षा की जाय। रानी ने अपनी तरुण पुत्री को रात्रि के समय तापस के पास भेजा। उसने नमस्कार पूर्वक तापस से निवेदन किया कि मुझे माता ने निरपराध घर से निकाल दिया है, अब आपके शरणागत हूँ, कृपया मुझे दीक्षा दें। अणुद्धर उसके लावण्य को देख कर मुग्ध होकर काम प्रार्थना करने लगा। कन्या ने कहा—यह अकार्य मत करो! मैं अभी तक कुमारी कन्या हूं। यदि तुम्हें मेरी चाह है तो तापस-धर्म त्याग कर मेरी मां से मुझे मांग लो। इसमें कोई दोष की वात नहीं है। तापस कन्या के साथ हो गया, वह उसे किसी गणिका के यहाँ ले गई। तापस गणिका के चरणों में गिर कर वार-वार पुत्री की माग करने लगा, राजा ने गुप्त रूप से सारी घटना स्वयं देख ली और उसे वांध कर निर्भ्रंछना पूर्वक देश से निकाल दिया। राजा ने प्रतिवोध पाकर श्रावक-धर्म स्वीकार कर लिया। लोगों में निन्दा पाता हुआ तापस कुमरण से मर कर भव भ्रमण करने लगा। एक वार उसने फिर मानव भव पाकर तापसधर्म स्वीकार किया और काल करके अनलप्रभ नामक देव हुआ। उसने पूर्व भव का वैर याद कर हमारे को उपसर्ग किया है। यह वृतान्त सुन कर सीता, राम, लक्ष्मण ने केवली भगवान की भक्तिपूर्वक पूजा स्तुति की।

गरुड़ाधिप देव ने प्रगट होकर वर माँगने को कहा। राम ने कहा—कभी आपत्तिकाल में हमें सहाय्य करना। वंशस्थलपुर नरेश सूरप्रभ ने आकर राम, सीता, लक्ष्मण की वहुत सी आदर भक्ति की। राम की आज्ञा से पर्वत पर जिनालय वनवा कर रत्नमय प्रतिमा विराजमान की गई, इस पर्वत का नाम रामगिरि प्रसिद्ध हुआ।

राम का दण्डकारण्य प्रस्थान

रामगिरि से चल कर राम, सीता, और लक्ष्मण दण्डकारण्य पहुँचे और कन्नरवा के तट पर बांस की कुटिया वना कर सुखपूर्वक रहने लगे। इस वन में जंगली गाय का दूध एवं अड़क धान्य, आम्र, कटहल, दाडिम, केला व जंभोरी प्रचुरता से उपलब्ध थी। एक वार दो आकाशगामी तपस्वी मुनिराज पधारे। सीता, राम, लक्ष्मण ने अत्यन्त भक्तिपूवक आहार दान किया। देवों ने दुन्दुभिनाद पूर्वक वसुधारा वृष्टि की। एक दुर्गन्धित पक्षी ने आकर मुनिराजों को वन्दन किया जिससे उसकी देह सुगन्धित और निरोग हो गई। राम के पूछने पर त्रिगुप्ति साधु ने उसके पूर्व जन्म का वृतान्त इस प्रकार सुनाया :—

जटायुध कथा प्रसंग

कुण्डलपुर का राजा दण्डकी वड़ा उद्दण्ड था। उसकी रानी मक्खरि विवेकी श्राविका थी। एकबार राजा ने वन में कायोत्सर्ग स्थित मुनि-राज के गले में मृतक सांप डाल दिया। मुनिराज ने अभिग्रह कर लिया कि जहाँ तक गलेमें साँप विद्यमान है, कायोत्सर्ग नहीं पारूँगा। दूसरे दिन जब राजा ने मुनिराज को उसी अवस्था मे देखा तो उसे अपने कृत्य पर वड़ा पश्चाताप हुआ और वह साधु-भक्त हो गया।

रुद्र नामक एक तापस इस नगरी में रहता था, राजा को साधुओं का भक्त हुआ ज्ञात कर मात्सर्यपूर्वक साधुओं को मरवाने के अभिप्राय से उसने साधु का वेष किया और अन्तःपुर में जाकर रानी की विडम्बना की। राजा ने कुपित होकर केवल उसे ही नहीं, सभी साधुओं को घानी में पीला कर मार डाला। एक शक्तिशाली मुनि ने आकर तेजोलेश्या छोडी जिससे सारा नगर जल कर श्मशान हो गया और दण्डकारण्य कहलाने लगा। राजा दण्डकी भव भ्रमण करता हुआ इसी वन में दुर्गन्धित गृद्ध पक्षी हुआ। हमें देखकर इसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया और वन्दन, प्रदिक्षणान्तर धर्म प्रभाव से सुगन्धित शरीर हो गया। गृद्ध पक्षी मास और रात्रिभोजनादि त्याग कर धर्माराधन करने लगा। मुनिराज अन्यत्र चले गये, पक्षी सीता के पास रहने लगा। उसके शरीरपर सुन्दर जटा थी इससे उसका नाम जटायुध हो गया। साधु-दान के प्रभाव से राम के पास मणिरत्नादि की समृद्धि हो गई एवं देवों ने राम को चार घोड़ों सहित रथ दिया। राम, सीता, लक्ष्मण सुखपूर्वक रहने लगे।

दण्डकारण्य में घूमते हुए राम, सीता और लक्ष्मण एक नदी तटवर्ती वनखंड में गए। समृद्ध रत्नखान वाले पर्वत, फल फूलों से लदे वृक्ष और निर्मल नदी जल को देखकर राम ने वहीं निवास करना प्रारम्भ कर दिया।

लङ्काधिप रावण कथा प्रसंग

उस समय लंकागढ़ में रावण राज्य करता था। लंका के चतुर्दिक समुद्र था। रावण का नाम दशमुख भी कहलाता था, जिसकी उत्पत्ति इस प्रकार है—

वंताढ्य पर्वत पर रथनेउर नगर में मेघवाहन विद्याधर राज्य करता था, जिसके इन्द्र से शत्रुता थी। अजितनाथ स्वामी की भक्ति से प्रसन्न होकर राक्षसेन्द्र ने मेघवाहन से कहा कि राक्षसद्वीप में त्रिकूटगिरि पर लंकानगरी है, वहाँ जाकर निरुपद्रव राज्य करो! पातालपुरी, जो दंडगिरि के नीचे है, वह भी मैं तुम्हें देता हूं। मेघवाहन विद्याधर वहाँ राज्य करने लगा। राक्षसद्वीपके कारण वे विद्याधर राक्षस कहलाने लगे। उसी के वंश मे रत्नाश्रव का पुत्र रावण हुआ। वचपन में पिता ने उसे दिव्यहार पहनाया, जिसमें नौ मुंह प्रतिबिम्बित होने से वह दशमुख कहलाने लगा। एकवार अष्टापद पर्वत पर भरत चक्रवर्ती द्वारा वनवाये चैत्यों को उल्लंघन करते दशमुख का विमान रुक गया। उसने ध्यानस्थ वालि मुनि को इसका कारण समझ कर अष्टापद को ऊँचा उठा लिया। चैत्य रक्षा के लिए वालि ऋषि ने पहाड़ को दवा दिया जिससे दशमुख ने रव (रुदन) किया, तो वह रावण नाम से प्रसिद्ध हो गया। रावण ने अपनी वहिन चन्द्रनखा खरदूपण को व्याह कर उसे पाताल लंका का राज्य दे दिया।

दिव्य खड्ग का पतन और लक्ष्मण का परिताप

चन्द्रनखा के संव और संवुक्क नामक दो पुत्र थे, संवुक्क विद्यासाधन के निमित्त दण्डकारण्य में कंचुरवा के तटस्थित वंशजाल में उलटे लटक कर विद्या साधन करता था। उसे वारह वर्ष चार मास वीत गए, विद्या सिद्ध होने मे तीन दिन अवशिष्ट थे। भवितव्यता वश लक्ष्मण ने वंशजाल में लटकते हुए दिव्य खड्गको देखा तो उसने ग्रहण कर वंशजाल पर वार किया जिससे संवुक्क का कुण्डल युक्त मस्तक

छिन्न होकर आ गिरा। लक्ष्मण को इस घटना से अपार दुख हुआ। उसने सोचा—मेरे पौरुष को धिक्कार है। मैंने एक निरपराध विद्याधर को मार कर भयंकर पाप उपार्जन कर लिया। उसने राम के समक्ष सारी बात कही तो राम ने कहा—इस प्रकार जिन प्रतिषिद्ध अनर्थ-दण्ड कभी नहीं करना चाहिए, भविष्य मे ख्याल रखना। जब चन्द्रनखा पुत्र को संभालने आई और उसे मरा हुआ देखा तो पुत्र शोक से अभिभूत होकर नाना विलाप करने लगी। अन्त में रोने पीटने से कुछ हृदय हलका होने से संबुक्क को मारने वाले की खोज में दण्डकारण्य मे घूमने लगी।

रूपगर्विता चन्द्रनखा का पतन

चन्द्रनखा ने घूमते हुए जब दशरथनन्दन को देखा तो सौन्दर्यासक्त होकर पुत्र शोक को भूल कर कन्या का रूप धारण करके राम के पास पहुँची। वह नाना हाव-भाव, विभ्रम से राम को मुग्ध करने की चेष्टा करने लगी। राम ने उसे वन में अकेली घूमने का कारण पूछा तो उसने कहा—मैं वंशस्थल की वणिकपुत्री हूं, मेरे माता-पिता मर गए, अब मैं आपकी शरणागत हूं, मुझे ग्रहण करें! निर्विकार राम ने जब मौन धारण कर लिया और उसकी मोहिनी न चली तो उसने क्षुब्ध होकर स्वयं अपने शरीर को नख-दांतों से क्षत विक्षत कर लिया और वह रोती कलपती अपने पति के पास पहुँची।

खरदूषण सैन्य पतन और सीता-हरण

चन्द्रनखा ने खरदूषण से कहा—किसी भूचर ने चन्द्रहास खड्ग लेकर संबुक्क को मार डाला और मेरी यह दुर्दशा कर दी, मैं किसी

प्रकार आपके पुण्यों से शील-रक्षा करके यहाँ लौटी हूँ ! खरदूषण चौदह हजार सुभटों के साथ चल कर दण्डकारण्य पहुँचा, एवं रावण को भी दूत भेजकर सहायतार्थ आने को सूचित कर दिया। राम ने जब धनुष संभाला तो लक्ष्मण ने कहा—मेरे रहते आप मत जाइये, आप सीता की रक्षा करें। यदि आवश्यकता पड़नेपर सिंहनाद करूं तो आप मेरी सहायता करें। शूरवीर लक्ष्मण ने अकेले खरदूषण की सेना को परास्त कर दिया। चन्द्रनखा की पुकार से रावण पुष्पविमान में बैठकर आया और राम के पास सीता को देख कर उसके रूप से मुग्ध हो गया। उसने अवलोकनी विद्या के बल से लक्ष्मण का संकेत जान लिया और लक्ष्मण के स्वर में सिंहनाद किया। राम ने जटायुध से कहा—मैं लक्ष्मण की तरफ जाता हूँ, तुम सीता की रक्षा करना। राम के जाने पर रावण सीता को हरण कर तुरन्त पुष्पविमान मे बैठाकर ले उड़ा। जटायुध पक्षी ने इसका घोर विरोध किया और रावण को घायल कर डाला पर रावण के सामने उसकी शक्ति कितनी ? रावण ने जटायुध को धनुष से पीट कर भूमिसात् कर दिया। उसकी हड्डी पसली सब टूट गई। रावण के साथ जाते हुए सीता नाना विलाप करती हुई रो रही थी। रावण ने सोचा अभी यह दुखी है, पीछे मेरी रिद्धि देख कर स्वयं अनुकूल हो जायगी। मैंने मुनिराज के पास व्रत लिया था कि बलात्कार से किसी भी स्त्री को नहीं भोगूगा ! अतः मेरा व्रत अविचल रखूगा।

सीता-शोध प्रसंग

राम जब संग्राम में लक्ष्मण के पास पहुंचे तो लक्ष्मण ने कहा—सीता को छोड़ कर आप यहाँ क्यों आये ? राम ने सिंहनाद की बात

कही तो लक्ष्मण ने कहा—धोखा हुआ है, आप शीघ्र लौट कर सीता की रक्षा करें। राम ने जब लौट कर सीता को न देखा तो वह मूर्च्छित होकर गिर पड़े। थोडी देरी में सचेत होने पर मरणासन्न जटायुध ने उन्हें सीताहरण की बात कही। राम ने उसे करुणावश नवकार मंत्र सुनाया जिससे वह मर कर देव हो गया। राम ने सीता को दण्डकारण्य में सर्वत्र खोजा पर कोई अनुसन्धान न मिला।

इसी समय चन्द्रोदय-अनुराधानन्दन बिरहिया नामक विद्याधर रणक्षेत्र में लक्ष्मण के पास आया। वह भी खरदूषण का शत्रु था, अतः लक्ष्मण का सेवक होकर युद्ध करने लगा। खरदूपण ने लक्ष्मण को फट-कारा तो लक्ष्मण ने उसे युद्ध के लिए ललकारा। वह लक्ष्मण पर खड्ग प्रहार करने लगा तो लक्ष्मण ने चन्द्रहास खड्ग से उसका शिरोच्छेद कर डाला। खरदूषण के मरने से उसकी सेना तितिर बितिर हो गई। विजेता लक्ष्मण बिरहिया के साथ राम के पास पहुँचा। उसने सीता को न देख कर सारा वृतान्त ज्ञात किया और सीता के अनुसन्धान निमित्त विरहिया को भेजा। विरहिया को आगे जाते एक रत्नजटी नामक विद्याधर मिला जिसने रावण को सीता को हर ले जाते देखा था। उसके घोर विरोध करने पर रावण ने उसकी विद्याएँ नष्ट कर दी थी जिससे वह मूर्च्छित होकर कंबुशैल पर्वत पर गिर गया। समुद्री हवा से सचेत होकर रत्नजटी ने बिरहिया को सीताहरण की खबर बताई। विरहिया ने राम को पाताललंका पर अधिकार करने की राय दी, जहाँ से सीता को प्राप्त करने का उपाय सुगम हो सकता है। फिर विरहिया के साथ रथारूढ़ होकर राम पातालपुरी गए और चन्द्रनखा के पुत्र सुन्द को जीत कर पातालपुरी पर अधिकार कर लिया।

कामाशक्त रावण की व्याकुलता

रावण ने सीता को हरण करके ले जाते हुए उसे प्रसन्न करने के लिए नाना प्रकार के वचन प्रयोग किये पर सीता ने उसे करारी फटकार वता कर निराश-सा कर दिया। फिर भी वह उसे लंका ले गया और देवरमण उद्यान में छोड दिया। जब रावण राजसभा में जाकर वैठा तो मंदोदरी आदि को साथ लेकर रोती हुई चन्द्रनखा आई और कहने लगी कि—मुझे पति खरदूपण और पुत्र संवुक का दुःख उपस्थित हो गया, तुम्हारे जैसे भाई के विद्यमान रहते ऐसा हो जाय, तो फिर क्या कहा जाय ? रावण ने कहा सहोदरे ! भावी प्रवल है, आयुष्य कोई घटा वढ़ा नहीं सकता पर मैं थोड़े दिनों में तुम्हारे शत्रु को यम का मेहमान बना कर छोड़ूँगा। इस प्रकार वहिन को आश्वस्त कर जब रावण मंदोदरी के पास गया तो उसने उससे गहन उदासी का कारण पूछा। रावण ने कहा—मैं सीता को अपहरण करके लाया हूं, पर वह मुझे स्वीकार नहीं करती। उसके बिना मैं हृदय फट कर मर जाऊगा ! मन्दोदरी ने कहा—सीता या तो निरी मूर्ख है जो तुम्हारे जैसा पति स्वीकार नहीं करती अथवा वह सती शिरोमणि है। पर तुम उससे जवरदस्ती भी तो कर सकते हो ? रावण ने कहा—मैं अनन्तवीर्य मुनि के पास नियम ले चुका हूं, अतः मैं नियम भंग कदापि नहीं करूंगा ! मैं आशापूर्वक लाया हूं, यदि तुम कुछ उपाय कर सको तो करो।

सीता का आत्मवल तथा मन्दोदरी वाद-प्रसंग

मन्दोदरी ने सीता के पास जाकर न करने योग्य दूती कार्य किया। सीता ने कहा—कोई भी सती स्त्री इस प्रकार की शिक्षा दे

सकती है ? तुम्हारे योग्य यह कार्य है ? मन्दोदरी ने कहा—तुम्हारा कथन यथार्थ है पर पति की प्राण-रक्षा के लिए अयुक्त कार्य भी करना पड़ता है ! रावण ने भी स्वयं आकर सीता को वहुत समझाया। नाना प्रलोभन, भय दिखाये पर सीता ने उसे निर्भर्त्सना कर निकाल दिया। रावण ने सिंह, वैताल, राक्षसादि रूप विकुर्वण करके उसे डराने की चेष्टा की पर उसकी सारी चेष्टाएँ निष्फल गई। प्रातःकाल जव विभीषण को ज्ञात हुआ तो उसने सीता को आश्वासन देकर कहा कि—मैं रावण को समझाकर तुम्हें राम के पास भिजवा दूँगा। उसने रावण को इस परनारीहरण के अनर्थ से वचने की प्रार्थना की पर रावण ने एक न सुनी। रावण सीता को पुष्प-विमान में वैठाकर पुष्पगिरि स्थित सुन्दर उद्यान ले गया और नृत्य, गीत, वाजित्रादि के आयोजन द्वारा उसे प्रसन्न करने की चेष्टा की। सीता ने स्नान भोजनादि त्यागकर एकान्त धारण कर लिया। उसने अभिग्रह किया कि जव तक राम लक्ष्मण के कुशल समाचार न मिले, अन्न का सर्वथा त्याग है। नर्त्तकी ने जव रावण से यह समाचार कहा तो रावण सीता के विरह मे विक्षिप्त चेष्टाएँ करने लगा।

राम-सुग्रीव मिलन प्रसंग

जव किष्किन्धा नरेश सुग्रीव ने खरदूषण को मारनेवाले राम, लक्ष्मण की वीरता का यशोगान सुना तो वह अपना दुःख दूर करने के लिए पातालपुरी आया। राम द्वारा कुशल समाचार पूछने पर जम्बूनन्द मन्त्री ने कहा—ये किष्किन्धापति आदित्यरथ के पुत्र महाराजा सुग्रीव है। इनके ज्येष्ठ भ्राता वालि वड़े वीर और मनस्वी थे, जिन्होंने

रावण की भी आधीनता स्वीकार नहीं की। उनके वैराग्य से दीक्षित हो जाने पर सुग्रीव राजा हुए। एक वार कोई विद्याधर सुग्रीव का रूप करके तारा के पास आया। तारा ने उसकी चेष्टाओं से कपट जानकर मन्त्री को सूचित किया। कपट-सुग्रीव राज्यासन पर जा बैठा। असली सुग्रीव के आने पर दोनों में भिड़ंत हो गई। मन्त्री ने असली राजा को न पहिचानकर दोनों को मना किया। रानी के शील रक्षार्थ वालि के पुत्र चन्द्ररस्मि को प्रधान स्थापित किया। असली सुग्रीव हनुमान के पास सहायतार्थ गया पर उसे भी दोनों को एकसे देखकर सन्देह हो गया अतः अब आपके शरणागत है। राम ने कहा—तुम निश्चिन्त रहो, तुम्हारा काम हम कर देंगे, यह साधारण वात है। पर हम अभी दुखी हो रहे हैं क्योंकि सीता को कोई दुष्ट छल करके अपहृत कर ले गया है, यदि तुम्हारे से कुछ बन सके तो अनुसन्धान लगाओ। सुग्रीव ने कहा—मैं एक सप्ताह में सीता का पता न लगा सका तो अग्निप्रवेश कर जाऊँगा।

सुग्रीव नामधेयी विद्याधर का अन्त

राम प्रसन्न होकर सुग्रीव के साथ किष्किन्धा आए। नकली सुग्रीव ने युद्ध में उतरकर असली सुग्रीव को गदा के प्रहार से मूर्च्छित कर दिया। फिर सचेत होकर सुग्रीव ने राम से कहा—मैं आपके पास ही था, आपने मेरी सहायता नहीं की? राम ने कहा—मैं भी तुम दोनों में असली नकली का निर्णय न कर सका, अब मैं अकेला ही तुम्हारे शत्रु को मारूँगा। राम के तेज प्रताप से उसकी विद्या नष्ट हो गई और उसे अपने प्रकृत रूप में लोगों ने पहचान लिया कि—यह साहसगति विद्याधर है। सुग्रीव के साथ उसका युद्ध होने लगा। वानर

दल भग्न होते देख राम ने उसे पकड़कर यमपुरी पहुँचा दिया। सुग्रीव ने हर्षित होकर राम लक्ष्मण को उद्यान में ठहराया और अश्वरत्न आदि भेंट कर स्वयं तारा रानी के पास जाने के पश्चात् रामसे की हुई अपनी प्रतिज्ञा विस्मृत हो गया। सुग्रीव की चन्द्रप्रभादि तेरह कन्याएँ पति वरने की इच्छा से राम के आगे आकर नाटक करने लगी। राम तो सीता के विरह में दुखी थे अतः उन्हें आँख उठाकर भी नहीं देखा। राम ने लक्ष्मण से कहा—कार्य सिद्ध होने पर सुग्रीव प्रतिज्ञाभ्रष्ट और निश्चिन्त होकर बैठ गया। लक्ष्मण ने सुग्रीव के पास जाकर उसे करारी फटकार बताई। सुग्रीव क्षमायाचना-पूर्वक राम के पास आया और उन्हें आश्वस्त करके सीता की शोध के लिए चल पड़ा। भामण्डल को भी सीताहरण का सम्वाद भेज दिया गया।

सुग्रीव द्वारा सीता-शोध

सुग्रीव अपने सेवकों के साथ नगर, पहाड़, कन्दराओं मे खोज करता हुआ कम्बुशैल पर्वत पर पहुंचा तो उसने रत्नजटी को कराहते हुए देखा। उसने सुग्रीव से कहा—जब मैंने रावण को सीता को हरण कर ले जाते देखा तो उसका पीछा करके ललकारा। रावण ने मेरी विद्याएँ छेदन कर मुझे अशक्त कर दिया। अब तो राम के पास जाकर खबर देने में भी असमर्थ हूँ। सुग्रीव उसे उठाकर राम के पास ले गया। उसने सीता की खबर सुनाकर रामचन्द्र को प्रसन्न कर दिया। राम ने उसे अंग के सारे आभूषण देकर पूछा कि लंकानगरी कहाँ है? यह हमें बतलाओ।

लंका की शक्ति और रावण-मृत्यु रहस्य

विद्याधर रत्नजटी ने कहा—लवण समुद्र के बीच, राक्षसों के द्वीप में त्रिकूट पर्वत पर लंकानगरी बसी हुयी है। वहाँ राजा रावण-दशानन अपने विभीषण, कुम्भकरण भ्राता व इन्द्रजीत, मेघनाद पुत्रों सहित राज करता है। वह बडा भारी शक्तिशाली है, उसने नौ ग्रहों को अपना सेवक बना रखा है और विधि उसके यहां कोद्रव दलती है! उस त्रैलोक्य कंटक रावण के समकक्ष कोई नहीं! राम-लक्ष्मण ने कहा—पर स्त्री हरण करने वाले की क्या प्रशंसा करते हो, हम उसे हनन कर व लंका को लूटकर सीता को लीला मात्र में ले आवेंगे। उसे ऐसी सीख देंगे कि भविष्य मे कोई परस्त्री हरण करने का साहस नहीं करेगा! जंबुवंत ने कहा—ये आपसे प्रीति धारण करने वाली विद्याधर कन्या प्रस्तुत है, इसे स्वीकार करो और सीता को लाने की बात छोड़ो! अन्यथा महान कष्ट में पडोगे। लक्ष्मण ने कहा—उद्यम से सब कुछ सिद्ध होता है! हम सीता को निश्चय प्राप्त कर लेंगे। सुग्रीव के मन्त्री जंबुवन्त ने कहा—एक बार रावण ने अनन्तवीर्य मुनि को पूछा था कि मुझे कौन मारेगा तो उन्होंने कहा था कि जो कोटिशिला को उठावेगा उसी से तुम्हें मरने का भय है! यह सुन कर राम, लक्ष्मण और सुग्रीव सिन्धु-देश गये।

कोटिशिला प्रसंग तथा लक्ष्मण द्वारा शक्ति प्रदर्शन

कोटिशिला एक योजन उत्सेधांगुल ऊँची और इतनी ही पृथुल है, यहाँ भारत की अधिष्ठातृ देवी का निवास है। शान्तिनाथ स्वामी के चक्रायुध गणधर और उसके ३२ पाट, कुन्थुनाथ तीर्थंकर के २८,

अरनाथ स्वामी के २४, मल्लिनाथ के २० पाट, मुनिसुव्रत स्वामी और नमिनाथ स्वामी के तीर्थ के भी करोड़ों मुनिराज यहां से निर्वाण पद प्राप्त हुए अतः इसका कोटिशिला नाम प्रसिद्ध हुआ। प्रथम वासुदेव इसे बायी भुजा से ऊँची उठाते है, दूसरे मस्तक तक, तीसरे कण्ठ तक, इस तरह छाती, हृदय, कटि, जांघ, जानु पर्यन्त आठवा व नवम वासुदेव चार अंगुल ऊँची उठाते है। लक्ष्मण ने सबके समक्ष बांयी भुजा से ऊँची उठा दी, देवों ने पुष्पवृष्टि की! कोटिशिला तीर्थ की वन्दना कर सम्मेतशिखर तीर्थ गये, वहां से विमान मे बैठ कर सब लोग किष्किन्धा आ पहुंचे।

आक्रमण मन्त्रणा

राम ने कहा—अब निश्चिन्त न बैठ कर लंका पर शीघ्र चढ़ाई कर देना ही ठीक है। सुग्रीव ने कहा—रावण विद्या बल से परिपूर्ण है अतः पहले युद्ध न छेड़ कर यदि उसके भाई विभीषण जो कि न्याय-वान और परम श्रावक है—दूत भेज कर प्रार्थना की जाय, ऐसी मेरी राय है। रामचन्द्र ने कहा—ऐसा दूत कौन है जो यह कार्य कर सके? सबका ध्यान पवन के पुत्र हनुमन्त की ओर गया और श्री-भूति दूत को भेज कर हनुमन्त को बुलाया। उसने जब सारी बातें कही तो हनुमन्त की स्त्री अनंगकुसुमा जो खरदूषण की पुत्री थी, पिता और भाई की मृत्यु का दुःख करने लगी जिसे सबने धीरज बँधाया। दूसरी स्त्री कमला सुग्रीव की पुत्री थी जिसकी माता तारा और सुग्रीव को सुखी करने के कारण उसने दूत का बहुत आदर किया।

हनुमान का दौत्य और शक्ति प्रदर्शन तथा सीता-सन्तुष्टि

हनुमन्त भी राम के गुणों से रंजित होकर तुरंत विमान द्वारा किष्किन्धा गया। राम लक्ष्मण से आदर पाकर हनुमन्त राम की

मुद्रिका और सन्देश लेकर लंका की ओर ससैन्य आकाशमार्ग से चला। राक्षसों ने ऊँचा गढ प्राकार व कूटयन्त्र में असालिया व उग्रविष दाढा वाला महासर्प रख छोड़ा था। हनुमान ने वज्र कवच पहिन कर कूट यंत्र को चकचूर कर डाला और मुख में प्रविष्ट होकर उदर विदीर्ण कर निकला। उसने असालिया विद्या के आरक्षक वज्रमुख के भिड़ने पर उसका मस्तक उड़ा दिया। पिता का वदला लेने, लंकासुन्दरी आकर हनुमान से लड़ने लगी। हनुमान उसके हाथ से धनुष छीनने लगा तो वे परस्पर एक दूसरे के प्रति मुग्ध हो गये। युद्ध प्रणय रूप में परिणत हो गया। हनुमान एक रात वहा रह कर प्रातःकाल लंका जाकर विभीषण से मिला और उसे सीता को लौटाने के लिये रावण को समझाने का भार सौंपा। इसके अनन्तर हनुमान सीता के पास गया, वह अत्यन्त दुर्बल, चिन्तित और करुण अवस्था में बैठी हुयी थी। हनुमान ने श्री राम की मुद्रिका उसके अंक में गिरा कर प्रणाम किया और अपना परिचय देते हुये राम-लक्ष्मण के सारे समाचार सुनाये, मन्दोदरी ने कहा—ये हनुमान बड़े वीर है, इन्होंने रावण के सामने वरुण को हराया, जिससे उसने अपनी वहिन चन्द्रनखा की पुत्री अनंगकुसुमा को इन्हें परणाया है, पर इन्होंने भूचर की सेवा स्वीकार की, यह शोभनीय नहीं! हनुमान ने कहा—हमने उपकारी के प्रत्युपकार रूप जो दूतपना किया यह हमारे लिये भूषण है पर तुम सीता के बीच दूतीपना करने आई तो यह महादूषण है। मन्दोदरी रावण की बड़ाई करती हुई राम की बुराई करने लगी। सीता के साथ बोलचाल हो जाने से वह मुष्टि प्रहार करने लगी तो हनुमान ने उसे खूब फटकारा। सीता ने ससैन्य हनुमान को भोजन करवा के स्वयं अभिग्रह पूर्ण होने

से पारणा किया। हनुमान ने उसे स्कन्ध पर बैठा कर ले जाने का कहा पर सीता ने पर पुरुष स्पर्श अस्वीकार करते हुये अपना चूडामणि चिन्ह स्वरूप दिया और शीघ्र राम को आने की प्रार्थना पूर्वक हनुमान को विदा कर दिया ताकि मन्दोदरी की शिकायत से रावण हनुमान के प्रति कुछ उपद्रव न करे।

मेघनाद द्वारा नागपाश प्रक्षेप और हनुमान बन्धन

हनुमान सीता को नमस्कार करके रवाने हुआ तो रावण के भेजे हुये राक्षसों ने उसे घेर लिया। उसने वृक्षो को उखाड़ कर प्रहार करते हुये राक्षसों को भगा दिया और वानर रूप से लोगों को त्रास पहुंचाता हुआ रावण के निकट आया। रावण ने लंका को नष्ट करते देख सुभटो को तैयार होने की आज्ञा दी। इन्द्रजित और मेघनाद सेना सहित हनुमान से युद्ध करने लगे। हनुमान ने अपनी सेना को भगते देखा तो स्वयं युद्ध करने लगा। जब राक्षस लोग भगने लगे तो इन्द्रजित ने तीरों की बौछार लगा दी, हनुमान ने उन्हें अर्द्धचन्द्र वाण से छिन्न कर दिये। इन्द्रजित् द्वारा प्रक्षिप्त शक्ति को जब हनुमान ने लघु-लाघवी कला से निष्फल कर दिया तो उसने नागपाश से हनुमान को बाँध कर रावण के समक्ष प्रस्तुत किया और कहा कि इसने सुग्रीव की प्रेरणा से दूत रूप में लंका में सीता के पास आने से पूर्व वज्रमुख राजा को मार कर लंकासुंदरी ले ली एवं पद्मवन को नष्ट कर लंका में उपद्रव मचाकर लोगों को त्रस्त किया है, अब इसे क्या दंड दिया जाय?

हनुमान रावण विवाद और लंका में उपद्रव

रावण ने उसके अपराध सुन कर कहा—तुम पवनंजय-अंजना

के पुत्र न होकर अधमशिरोमणि वानर हो, जो भूचर के दूत बने। हनुमान ने उसे कहा—अधम और पापी तुम हो, उत्तम पुरुष परनारी सहोदर होते हैं। तुम्हारे में रत्नाश्रव के पुत्र होने के लक्षण नहीं, पर कुलागार हो। रावण ने उसे साकलों से बाँध कर सारे नगर में घुमाने का आदेश दिया। हनुमान ने क्षण मात्र में बन्धन मुक्त होकर सहस्त्र स्तम्भों वाले भुवन को धाराशायी कर दिया और आकाश मार्ग से उड़ कर किष्किन्धा नगर जा पहुँचा। सीता की पुष्पांजलि और स्नेहपूर्ण आशीर्वाद हनुमान का संवल था। सुग्रीव उसे बड़े आदर के साथ राम के पास ले गया। हनुमान ने चूड़ामणि सौंपते हुए सीता के संदेश और मार्ग के सारे वृतान्त सुनाये।

लंका पर आक्रमण आयोजन

राम को यह बात अधिक खटकती थी कि उसकी प्रिया शत्रु के यहाँ है। लक्ष्मण ने सुग्रीवादि सुभटों को बुला कर शीघ्र लंका पर चढ़ाई करने के लिए प्रेरित किया। वे लोग भामण्डल की प्रतीक्षा में थे। समुद्र पार कैसे किया जाय यह भी समस्या थी। किसी ने रावण के कोप की शंका की तो चन्द्ररस्मि ने कहा—हमारे पास पर्याप्त सेना है, भय का कोई कारण नहीं। राम की सेना में घनरति, सिंहनाद, धृतवरह, प्रल्हाद, सुक्र, भीमकूट, असनिवेग, नल, नील, अंगद, वज्र-वदन, मन्दरमाल, चन्द्रज्योति, सिंहरथ, वज्रदत्त, लागूल, दिनकर सोमदत्त, भृजुकीर्त्ति, उल्कापात, सुग्रीव, हनुमान, प्रभामण्डल, पवन-गति, इन्द्रकेतु, प्रहसनकीर्ति आदि सुभट थे। राम के सिंहनाद को सुनकर सेना में उत्साह की लहर आ गई। मार्गशीर्ष कृष्ण ५ को

विजय योग में शुभ शकुनों से सूचित होकर राम ने सैन्य सहित लंका की ओर प्रयाण किया। रामचन्द्र तारागण से वेष्टित चन्द्र की भांति सुशोभित थे। सुग्रीव, हनुमान, नल, नील, अंगद की सेना का चिन्ह वानर था। विरोहिय के हार, सिंहरथ के सिंह, मेघकान्ति के हाथी, ध्वज एव गज, रथ, घोड़ा, आदि के चिन्ह थे। उन चिन्हयुक्त विमानों में वैठकर वे समुद्र तट पर पहुंचे। एक राजा ने युद्ध में आधीनता स्वीकार कर लक्ष्मण को चार कन्याएँ समर्पित कर दी। हंसद्वीप जाने पर राजा हंसरथ ने राम की वड़ी सेवा की। इधर भामंडल को वुलाने के लिए दूत भेजा गया।

हंसद्वीप प्रसंग और लङ्का प्रयाण

रामचन्द्र की सेना जव हंसद्वीप पहुँची तो लंका में भगदड़ मच गई। रावण ने भी रणभेरी वजा कर सेना एकत्र की। विभीषण ने रावण को युद्ध मे न उतरनेकी समयोचित शिक्षा दी किन्तु उसे किसी प्रकार भी सीता को लौटाना स्वीकार नहीं था। विभीषण की शिक्षाओं ने रावण की कोपाग्नि में घृत का काम किया। जब दोनों में परस्पर युद्ध छिड गया, तो कुम्भकरण ने वीच में पड़कर दोनों को अलग किया। विभीषण अपनी तीस अक्षौहिणी सेना लेकर हंसद्वीप गया। वानर सेना मे खलवली मचने से राम अपने धनुप और लक्ष्मण रविहास खड्ग को धारण कर सावधान हो गए। विभीषण ने राम के पास दूत भेज कर कहलाया कि सीता के विषय में हित शिक्षा देते हुए मेरा रावण से विरोध हो जाने से मैं आपका दासत्व स्वीकार करने आया हूं। राम ने मन्त्री लोगों की सलाह लेकर विभीपण को सम्मानपूर्वक अपने पास वुला लिया जिससे हनुमान आदि

सभी वीरों में प्रसन्नता छा गई। इतने मे ही भामंडल भी सदलबल आ पहुँचा, राम ने उसका बड़ा सत्कार किया। कुछ दिन हंसद्वीप में रहकर राम लक्ष्मण ने ससैन्य लंका की ओर प्रयाण किया। बीस योजन की परिधि वाले रणक्षेत्र में सेना के पड़ाव डाले गये।

लंका युद्ध प्रसंग

कुम्भकर्णादि सभी सामन्त अपनी-अपनी सेना के साथ रावण के पास गए। रावण के पास ४ हजार अक्षौहिणी सेना तथा एक हजार अक्षौहिणी वानरों की सेना थी। अक्षौहिणी सेना में २१८७० हाथी, रथ, १०९३५० पैदल, ६५६१० अश्वारोही होते थे। मेघनाद, इन्द्रजित गजारूढ़ थे। ज्योतिप्रभ विमान में राजा कुम्भकरण सुभटों के साथ एवं रावण पुष्पक विमान में बैठकर चला। भूकम्पादि अपशकुन होने पर भी रावण ने भवितव्यता वश उन्हें अमान्य कर दिया। राक्षस और वानर सेना के वीर परस्पर एक दूसरे पर टूट पड़े। राम की सेना में जयमित्र, हरिमित्र, सबल, महाबल, रथवर्द्धन, रथनेता, दृढरथ, सिंहरथ सूर, महासूर, सूरप्रवर, सूरकंत, सूरप्रभ, चन्द्राभ, चन्द्रानन, दमितारि, दुर्दन्त, देववल्लभ, मनवल्लभ, अतिबल, प्रीतिकर, काली, सुभकर, सुप्रसनचन्द्र, कलिंगचंद्र, लोल, विमल, गुणमाली, अप्रतिघात, सुजात, अमितगति, भीम, महाभीम, भानु, कील, महाकील, विकल, तरंगगति विजय, सुसेन, रत्नजटी, मनहरण, विरोहिय, जलवाहन, वायुवेग, सुग्रीव, हनुमन्त, नल, नील, अंगद, अनल आदि सुभट थे। अनेक विद्याधरों के साथ विभीषण भी सन्नद्धबद्ध थे। रामचन्द्र स्वयं सब से आगे थे। रणभेरी व वाजित्रों तथा सेना के कोलाहल व सिंहनाद

से कानों में किसी का शब्द तक सुनाई नहीं पड़ता था, सैन्य पदरज से सर्वत्र अन्धकार-सा व्याप्त था। नाना प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित बानरों ने रावण की सेना के छक्के छुड़ा दिए। राक्षसों को भागते देख हस्थ, विहस्थ आ डटे, जिन्हें राम द्वारा प्रेरित नील और नल ने मार भगाया। सूर्यास्त होते ही युद्ध बन्द हो गया।

विषम युद्ध और शक्ति हेतु लक्ष्मण का देवाराधन

दूसरे दिन युद्ध करते हुए जब वानर सेना के पैर उखड़ने लगे तो पवन पुत्र हनुमान तुरन्त रणक्षेत्र में कूद पड़ा। राजा बज्रोदर ने हनुमान का कवच व सन्नाह भेद डाला तो हनुमान ने उसका खड्ग द्वारा शिरोच्छेद कर दिया। रावण के पुत्र जंबुमालि को जब हनुमान मारने लगा तो कुम्भकरण त्रिशूल लेकर दौड़ा। उसे आते देख चन्द्ररश्मि, चन्द्राभ, रत्नजटी और भामण्डल आगे आये जिन्हें दर्शनावरणी विद्या से कुम्भकरण ने निद्रा घूर्मित कर दिया। सुग्रीव ने पडिबोहिणी विद्या से उन्हें जागृत कर दिया जिससे उन्होंने युद्धरत होकर कुम्भकर्ण को विकल कर दिया। इन्द्रजित् जब आगे आया तो सुग्रीव भामण्डल उससे आ भिड़े। उसके द्वारा प्रक्षिप्त कंकपत्र को सुग्रीव ने छेद डाला। मेघवाहन भामडल से युद्ध करने लगा। उसने भामण्डल को, इन्द्रजित् ने सुग्रीव को तथा कुंभकरण ने हनुमान को नागपाश से बांध लिया। विभीषण ने राम लक्ष्मण से कहा—रावण के पुत्रों ने हमारे प्रधान वीरों को बांध लिया, राक्षसों का पलड़ा भारी हो रहा है। राम ने अंगद को संकेत किया तो वह कुंभकरण से युद्ध करने लगा। इतने ही में हनुमान ने अपना नागपाश तोड़ डाला। लक्ष्मण और

विरोही विद्याधर रणक्षेत्रमें उतर पड़े और पाशवद्ध वीरों को आश्वस्त किया। विभीपण इन्द्रजित् से जव आ भिड़ा तो वह अपने पितृतुल्य चाचा से युद्ध न कर भामंडल और सुग्रीव को वांधकर ले गया। लक्ष्मण ने चिन्तित होकर राम से कहा—इन वीरों के विना विद्यावली रावण को कैसे जीतेंगे? राम की आज्ञा से लक्ष्मण ने देव को स्मरण किया। देव ने प्रकट होकर राम को सिंह विद्या व हल, मूसल एव लक्ष्मण को गरुड़ विद्या व वज्रवदन गदा के साथ-साथ शस्त्रास्त्र व कवच पूरित दो रथ दिये। उन रथों पर हनुमान के साथ आरूढ़ होकर जव राम लक्ष्मण संग्राम में उतरे तो गरुड़ध्वज देखकर नागपाश पलायन कर गए जिससे सुग्रीव भामडलादि मुक्त हो गए। उन्होंने राम के चरणों में नमस्कार कर पूछा कि यह शक्ति कहाँ से प्रादुर्भूत हुई? राम ने कहा—पर्वत शृंग पर उपसर्ग सहते हुए देशभूपण मुनिराज को केवल-ज्ञान हुआ उस समय गरुड़ाधिप ने हमे वर दिया था, वही वर आज माँगने पर हमें यह सव प्राप्ति हुई है। सव लोग राम के पुण्य की प्रशंसा करने लगे।

युद्धरत रावण, लक्ष्मण की मूर्छा और राम रोष

सुग्रीव ने युद्धरत होकर राक्षसों को जीत लिया तो रावण रोष-पूर्वक रथारूढ होकर संग्राम में उतरा और उसने वानर सेना को पीछे ढकेल दिया। जव विभीपण सन्नद्धवद्ध होकर रावण के सामने आया तो उसने कहा—भाई को मारना अयुक्त है, अतः मेरी दृष्टि से हट जाओ! तुमने शत्रु की सेवा स्वीकार कर रत्नाश्रव के वंश को त्याग दिया। विभीपण ने कहा—शत्रु के भय से पूठ देना कायर का काम

है और मैंने न्याय का पक्ष लिया है, तुम अन्यायी हो जो परस्त्री को हरण कर लाये। अब भी मेरा कथन मानकर सीता लौटा दो! रावण विभीषण पर क्रुद्ध होकर उसके साथ युद्ध करने लगा। इन्द्रजित् से लक्ष्मण, कुम्भकरण से राम और दूसरे योद्धाओं से अन्यान्य सुभट भिड़ गये। थोड़ी ही देर में इन्द्रजित्, मेघवाहन और कुम्भकरण को नागपाश से बाँधकर वानर कटक में ला रखा। रावण ने विभीषण पर जब त्रिशूल फेंकी तो लक्ष्मण के बाण ने उसे निष्फल कर दिया और स्वयं गजारूढ़ होकर रावण से युद्ध करने लगा। रावण ने अग्नि-ज्वालायुक्त शक्ति का प्रहार किया, जिसकी असह्य वेदना से लक्ष्मण मूर्च्छित होकर धराशायी हो गया।

राम ने भाई को भूमिसात् देखते ही रावण के साथ घनघोर संग्राम छेड़ दिया। राम ने उसके छत्र, धनुष और रथ को छिन्न-भिन्न करके कठोर प्रहार किये जिससे लंकापति भयभीत होकर काँपने लगा। नये-नये वाहनों पर युद्ध करने पर भी राम ने उसे ६ बार रथ-रहित कर दिया और अन्त में धिक्कार खाता हुआ भग कर लंकानगरी में प्रविष्ठ हो गया। उसके हृदय मे लक्ष्मण को मारने का अपार हर्ष था।

लक्ष्मण हित राम का शोक

राम जब लक्ष्मण के पास आये तो उसे मृतकवत् देखकर भ्रातृ विरह के असह्य दुःख से मूर्च्छित हो गये। जब उन्हें शीतल जल से संचेत किया तो नाना प्रकार से करुण-क्रन्दन और विलाप करते हुए उसके गुणों को स्मरण कर अन्त में हताश हो गये और सबको अपने

अपने घर जाने का कहते हुए कल्पान्त दुःख करने लगे। जाववन्त विद्याधर ने कहा—आप महासत्वशील हैं, सूर्य कभी उदय और अस्तकाल में अपना तेज नहीं छोड़ता, इस वज्रघात को पृथ्वी की भाँति सहन करें। लक्ष्मण अभी मरा नहीं है, यह तो शक्ति प्रहार की मूर्च्छा है, जिसे उपचार द्वारा रातोरात ठीक किया जा सकता है। यदि प्रातःकाल तक ठीक न हुआ तो यह शरीर सूर्य किरण लगते ही प्रातःकाल के वाद निष्प्राण हो जायेगा। राम ने धैर्यधारण किया, उनके आदेश से विद्याधरों ने विद्या-वल से सात प्राकार बनाकर सात सेनाओं से सुरक्षित किया। नल, नील, अतिबल, कुमुद, प्रचण्डसेन, सुग्रीव और भामंडल सातो द्वारों पर शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित होकर लक्ष्मण की रक्षा के लिए तैनात हो गए और उधर कुम्भकरण, इन्द्रजित और मेघनाद वानर सेना मे कैद थे, जिनके लिए रावण को दुःख करते व लक्ष्मण के शक्ति द्वारा मूर्च्छित होने की बातें सीता के कानों में पड़ी तो वह देवर के लिए करुण स्वर से आक्रन्दन करने लगी। उसे विलाप करते देख विद्याधरों ने धैर्य बँधाया और मंगल-कामना व आशीर्वाद देने के लिए प्रेरित किया।

रामचन्द्रजी की सेना मे एक विद्याधरने आकर लक्ष्मण को सचेत करने का उपाय वतलाने के लिए मिलने की इच्छा प्रकट की। भामण्डल ने उसे राम से मिलाया उसने कहा—

लक्ष्मणोपचार आयोजन तथा विशल्या का कथा प्रसंग

मैं सुरगीत नगर के राजा शशिमंडल-शशिप्रभा का पुत्र चन्द्रमण्डल हूं। एक वार गगन मंडल में भ्रमण करते हुए पूर्ववैरवश

सहसविजय ने मेरे पर शक्ति प्रहार किया जिससे मैं मूर्छित होकर अयोध्या के उद्यान में जा गिरा। भरत ने मुझे किसी विशिष्ट जल के प्रभाव से सचेत कर उपकृत किया, उस जल की माहात्म्य कथा आपको बतलाता हूँ।

भरत के मामा द्रोणमुख की नगरी में महामारी का उपद्रव था, कोई भी उपाय से रोग शान्त नहीं होता था। द्रोण राजा भी रुग्ण था, जब वह स्वस्थ हो गया तो भरत ने उसे पूछा कि आपके यहाँकी बीमारी कैसे गई? तो उसने कहा—मेरी पुत्री विशल्या अत्यन्त पुण्यवान है, उसके गर्भ में आते ही माता का रोग ठीक हो गया, स्नान करते धायके उसके स्नानजल के छींटे लग गए तो स्नानजलप्रभाव से वहभी निरोग हो गई। जब इस बात की नगर में ख्याति हुई तो उसका स्नानजल सभी नागरिकों ने ले जाकर स्वास्थ्य लाभ किया। भरत ने मन:पर्यवज्ञानी मुनिराज के पधारने पर इस आश्चर्यजनक चमत्कार का कारण पूछा। मुनिराज ने कहा—विजय पुण्डरीकणी क्षेत्र के चक्रनगर मे तिहुणाणंद नामक चक्रवर्ती राजा था, जिसके अनंगसुन्दरी नामक अत्यन्त सुन्दर पुत्री थी। एक बार जब वह उद्यान मेक्रीड़ा कर रही थी, तो प्रतिष्ठनगरी के राजा पुणवसु विद्याधर ने उसे अपहरण कर लिया। चक्रवर्ती के सुभटों ने प्रबल युद्ध किया जिससे वह जर्जर हो गया। उसका विमान भग्न हो जाने से वह अनंगसुन्दरी डंडाकार अटवी मे जा गिरी। उस भयानक जंगल मे अकेली रहते हुए उसने अष्टम और दशम तप प्रारम्भ कर दिया। वह पारणे के दिन फलाहार कर फिर तप प्रारम्भ कर देती। इस प्रकार तीन सौ वर्ष पर्यन्त उसने कठिन तप किया। अन्त में जब उसने संलेखण पूर्वक चौविहार अनशन ले लिया। मेरु पर्वत के

जिन मन्दिरों को वन्दनकर लौटते हुए किसी विद्याधर ने उससे कहा कि मैं तुम्हें पिता के यहाँ पहुंचा दूँ ? अनंगसुन्दरी के अस्वीकार करने पर उसने चक्रवर्ती को जाकर कहा। चक्रवर्ती जब तक पहुंचा उसे अजगर निकल चुका था। चक्रवर्ती को पुत्री के दुख से वैराग्य हो गया, उसने बाईस हजार पुत्रों के साथ संयम मार्ग ग्रहण कर लिया। अनंगसुन्दरी यदि चाहती तो आत्मशक्ति से अजगर को रोक सकती थी पर उसने शान्ति से उपसर्ग सहा और अनशन आराधना से मर कर देवी हुई। पुणवसु विद्याधर भी विरक्त परिणामों से दीक्षित हो कर तप के प्रभाव से देव हुआ। वही देवी च्यवकर द्रोणमुख की पुत्री विशल्या और देव च्यवकर लक्ष्मण के रूप मे उत्पन्न हुआ है। पूर्व तपश्चर्या के प्रभाव से उसके स्नानोदक से सभी प्रकार के रोग दूर हो जाते हैं। भरत द्वारा महामारी रोग पैदा होने का कारण पूछने पर मुनिराज ने कहा—गजपुर के विंफड वणिक का भैंसा अतिभार से रुग्ण होकर गिर पड़ा। पर किसी ने उसकी सार सम्भार नहीं की। वह अकाम निर्जरा से मर कर वायुकुमार देव हुआ। वह जातिस्मरण से पूर्वभव का वृतान्त ज्ञात कर कुपित हुआ और महामारी रोग फैला दिया। किन्तु कन्या के न्हवण से जैसे सब के रोग गए वैसे ही विद्याधर ने कहा कि लक्ष्मण भी जीवित हो जायगा। रामचन्द्र ने जम्बुनदादि मन्त्रियों की सलाह से भामंडल को तुरन्त अयोध्या भेजा।

भामंडल से जब भरत ने लक्ष्मण के शक्ति लगने की बात सुनी तो वह रावण पर कुपित होकर तलवार निकाल कर मारने दौड़ा। भामंडल ने कहा—रावण यहाँ कहाँ ? वह तो समुद्र पार है। तब

भरत ने स्वस्थ होकर विशल्या के स्नानजल के लिये आने का कारण ज्ञात किया और जल ले जाने में जोखम है अतः विशल्या को ही भिजवाना तय किया। भरत को मुनिराज के ये वचन याद आ गये कि विशल्या लक्ष्मण की स्त्रीरत्न होगी। उसने द्रोणमुख से विशल्या को भेजने का कहलाया। पर जव वह विशल्या को भेजने के लिये राजी नहीं हुआ तो कैकेयी ने जाकर भाई को समझाया और विशल्या को सहेलियों के साथ विमान में वैठा कर लंका की रणभूमि में भेजा। रामचन्द्र ने सहेलियों से परिवृत्त विशल्या का स्वागत किया। उसने लक्ष्मण का अंग-स्पर्श किया तो 'शक्ति' हृदय से निकल कर अग्नि ज्वाला फेंकती हुई वाहर जाने लगी। हनुमान ने जव शक्ति को पकड़ा तो उसने स्त्री रूप में प्रकट होकर कहा—मैं अमोघ विजया शक्ति हूँ! एक वार अष्टापद पर प्रभु के सन्मुख मन्दोदरी के नृत्य करते हुए वीणा का तात टूट जाने से रावण ने अपनी भुजा की नस निकाल कर सांध दी जिससे नागराज ने उसे यह अजेय शक्ति दी थी। आज तक इस शक्ति को किसीने नहीं जीता पर विशल्या के तप प्रभाव से मैं पराजित हुई। शक्ति के क्षमा याचना करने पर हनुमान ने उसे मुक्त कर दिया। लक्ष्मण जव सचेत हुआ तो उसने रामसे शक्ति प्रहार और विशल्या द्वारा जीवनदान का सारा वृतान्त ज्ञात किया। मंदिर आदि सुभट लोग उत्सव मनाने लगे तो लक्ष्मण ने कहा—वैरी रावण के जीवित रहते यह उत्सव कैसा? राम ने कहा—तुम्हारे केसरी सिंह के गूजते रावण मृतक जैसा ही है। विशल्या ने सब सुभटों को भी स्वस्थ कर दिया, मन्दिर आदि सुभटों ने विशल्या का लक्ष्मण के साथ पाणिग्रहण करवा दिया।

रावण की मन्त्रणा और शक्ति संचय का प्रयत्न

रावण ने जब लक्ष्मण के जीवित होने का सुना तो मृगांक मन्त्री को बुला कर मंत्रणा की। मन्त्री ने राम लक्ष्मण के प्रताप और बढ़ती हुई शक्ति को देखते हुए सीता को लौटा कर सन्धि कर लेने की राय दी। रावण ने सीता को लौटाने के अतिरिक्त राम से मेल करने की आशिक राय मान कर राम से कहलाया कि—सीता तो यहाँ रहेगी, आपको लंका के दो भाग दे दूंगा, मेरे पुत्र व भ्राता को मुक्तकर सन्धि कर लो! राम ने कहा—मुझे सीता के सिवाय राज्यादि से कोई प्रयोजन नहीं, तुम्हारे पुत्रादि को छोड़ने को प्रस्तुत हूँ! दूत ने कहा—रावण की शक्ति के समक्ष राज्य और सीता दोनों गँवाओगे! दूत के वचनों से क्रुद्ध भामण्डल ने खड्ग उठाई तो लक्ष्मण ने दूत को अवध्य कह कर छुड़ा दिया। दूत अपमानित होकर रावण के पास गया और जाकर कहा कि राम जीते जी सीता को नहीं छोड़ेगा। रावण ने बहुरूपिणी विद्या सिद्ध करके दुर्जेय राम को जीतने का निर्णय किया। रावण-मन्दोदरी ने शान्तिनाथ जिनालय मे बड़े ठाठ से अष्टान्हिका महोत्सव प्रारम्भ किया। नगर मे सर्वत्र अमारि और शील व्रत पालन करने की आज्ञा देकर आयंबिल तप पूर्वक रावण जिनालय के कुट्टिम तल पर बैठ कर निश्चल ध्यान पूर्वक जाप करने लगा। वानर सेनाको जब रावण के विद्या सिद्ध करने की बात मालूम हुई तो इसके लिये उनमें चिन्ता व्याप्त हो गई। विभीषण ने राम से कहा—रावण को अभी कब्जे में करने का अच्छा अवसर है। नीति-निपुण राम ने कहा—युद्ध के बिना और फिर शान्तिनाथ जिनालय में स्थित होने से उसे मारना योग्य नहीं! हां विद्या सिद्ध न हो, इसके लिये अन्य उपाय कर्त्तव्य है।

रावण तप भंग प्रयत्न

विभीषण ने वानर सेना को लंका में जाकर उपद्रव करने का आदेश दिया। उद्वेग पाकर लंका के नागरिक कोलाहल करने लगे। देवों ने राम को इसके लिये उपालंभ दिया कि आप जैसे न्यायप्रिय व्यक्ति को ऐसा करना उचित नहीं। लक्ष्मण ने कहा—बहुरूपिणी विद्या सिद्ध न हो, इसी उद्देश्य से यह उपद्रव किया जा रहा है। हे देव! आप अन्यायी का पक्ष न लेकर मध्यस्थ वृत्ति रखें। देव-प्रजा को कष्ट न देने का निर्देश करके चले गए।

राम ने अंगद आदि वीरों को रावण को क्षुब्ध करने के उद्देश्य से लंका में भेजा। अंगद ने शान्तिनाथ जिनालय में जाकर रावण को फटकारते हुए कहा कि—सीता का अपहरण करके यहाँ दम्भ कर रहे हो! मैं तुम्हारे देखते तुम्हारे अन्तःपुर की दुर्दशा करके ले जाऊँगा! अंगद ने मन्दोदरी के वस्त्राभरण छीन लिए और चोटी पकड़ कर खींचना प्रारम्भ किया। मन्दोदरी नाना विलाप करती हुई रावण से पुकार-पुकार कर छुड़ाने की प्रार्थना करने लगी। पर रावण अपने ध्यान में निश्चल बैठा था। उसके साहस और ध्यान से बहुरूपिणी विद्या सिद्ध होकर उसकी आज्ञाकारिणी हो गई।

रावण का सीता पर असफल सिद्ध-शक्ति प्रयोग

रावण विद्यासिद्ध होकर परीक्षा करने के लिये पद्मोद्यान में गया और नाना रूप धारण करने लगा। सीता रावण का कटक देखकर यही चिन्ता करने लगी कि इस दुष्ट राक्षस से कैसे छुटकारा होगा? रावण ने सीता से कहा—मैं तुम्हें प्रेम में अभिभूत होकर यहाँ लाया था पर व्रत

भंग के भय से तुम्हें भोग न सका पर अब भी नहीं मानोगी तो मैं बल प्रयोग करूँगा। सीता ने कहा—यदि मेरे पर तुम्हारा स्नेह है तो परमार्थ की बात कहती हूं कि जब तक राम, लक्ष्मण और भामण्डल जीवित हैं तभी तक मैं जीवित रहूँगी ! सीता यह कहते हुए मरणासन्न हो गिर पड़ी। रावण के मन में बड़ा पश्चाताप हुआ। वह कहने लगा—मुझे धिक्कार है, मैंने राम सीता का वियोग कराके बहुत ही बुरा किया। भाई विभीषण से भी विरोध हुआ। मैंने वास्तव में ही कुमतिवश रत्नाश्रव के कुल को कलंकित किया है। अब यदि सीता को लौटाता हूं तो लोग कहेंगे कि लंकापति ने राम लक्ष्मण के भय से सीता को लौटा दिया ! अब मुझे युद्ध तो करना ही होगा पर राम लक्ष्मण को छोड़कर दूसरों का ही संहार करूँगा।

युद्ध-कृत संकल्प रावण की वीरता

रावण युद्ध के लिए कृत संकल्प होकर लंका से निकला। मार्ग में उसे नाना अपशकुन हुए। मन्त्री, सेनापति और महाजन लोगों के वारण करने पर भी बहुरूपिणी विद्या के बल से वह अपने आगे हजार हाथी और दस हजार अपने जैसे विद्याधरों की रचना करके रणक्षेत्र में उतरा। केशरीरथ पर राम और गरुड़ पर लक्ष्मण आरूढ हो गये। भामण्डल, हनुमान आदि सभी सुभट सन्नद्ध होकर उत्तम शकुनों से सूचित हो राक्षस सेना से जा भिड़े। राक्षस और वानर सेना मे भयंकर युद्ध छिड़ा। रक्त की नदियां बहने लगी। हनुमान द्वारा राक्षसों को क्षत-विक्षत होते देख मन्दोदरी का पिता आगे आया, हनुमान ने उसे तीरों से बींध कर रथ का चकनाचूर कर डाला। रावण ने विद्या-

बल से उसे नया रथ दे दिया उसने जब भामण्डल, हनुमान और सुग्रीव को रथ रहित कर दिया तो विभीषण आगे आया। रावण के ससुर ने जब उसे भी तीरों से विद्ध कर दिया तो रामने विभीषण की सहायता के लिए बाण वर्षा करके रावण के ससुर को भगा दिया। रावण क्रुद्ध होकर आगे आया तो लक्ष्मण ने उसे जा ललकारा। रावण के की हुई बाण-वर्षा को लक्ष्मण ने कंकपत्र द्वारा निष्फल कर दिया। रावण जब नि शस्त्र हो गया तो उसने बहुरूपिणी विद्या को स्मरण किया। रावण के मेह शस्त्र को लक्ष्मण ने पवन से, अन्धकार को सूर्य तेज से, सांप को गरुड़ से हटा दिया तब बहुरूपिणी विद्याबल से रावण ने उसे छलना प्रारम्भ कर दिया। कहीं, रावण मृतक पडा दीखता तो कभी हजारों भुजाओं से युद्ध करता हुआ, इस प्रकार, नाना प्रकार के अगणित रूप करनेवाले रावण द्वारा प्रक्षिप्त शस्त्रों को भी जब लक्ष्मण ने निष्फल कर दिया तो उसने अपने अन्तिम उपाय चक्ररत्न को स्मरण किया। चक्ररत्न सहस्त्र आरोंवाला मणिरत्नमय ज्योतिपूर्ण और अमोघ था। रावण ने लक्ष्मण के सामने चक्र फैंका, लक्ष्मण के पास सभी सुभट उपस्थित थे, उनके द्वारा दूसरे सभी हथियारो को छिन्न-भिन्न कर देने पर भी चक्ररत्न अबाध गति से लक्ष्मण के पास आकर उसके हाथों पर स्थित हो गया। सारी सेना में लक्ष्मण के वासुदेव प्रकट होने से आनन्द की लहर छा गई। अनन्तवीर्य मुनि के वचन सत्य हुए।

अहंकारी रावण का पतन

रावण जो प्रतिवासुदेव था, लक्ष्मण के वासुदेव रूप मे प्रकट होने से अपनी करणी पर मन-ही-मन पश्चाताप प्रकट करने लगा। विभीषण

ने अवसर देखकर फिर रावण को समझाया, पर उसने अहंकार के वशीभूत होकर कहा—चक्ररत्न का भय दिखाते हो? लक्ष्मण ने उसकी धृष्टता चरम सीमा पर पहुँची देखकर उस पर चक्ररत्न छोड़ा जिसके प्रहार से रावण मरकर धराशायी हो गया। रावण के मरते ही उसकी सारी सेना राम की सेना मे मिल गई। राम विजयी हुए।

विभीषण-शोक तथा रावण की अन्त्येष्टि

रावण को मरा देखकर विभीषण भ्रातृ-शोक से अभिभूत होकर विलाप करता हुआ आत्म-घात करने लगा जिसे राम ने समझा-बुझाकर शान्त किया। मन्दोदरी आदि रानियों को भी करुण-क्रन्दन करते देख रामचन्द्र ने आकर समझाया और रावण के दाह संस्कार की तैयारी की। इन्द्रजित् व कुम्भकरण आदि को मुक्त कर दिया गया। राम, लक्ष्मण ने रावण की अन्त्येष्टि मे शामिल होकर उसे पद्मसरोवर पर जलांजलि दी।

रावण परिवार का चारित्र-ग्रहण

दूसरे दिन लंकापुरी के उद्यान मे अप्रमेयबल नामक मुनि छप्पन हजार मुनियों के साथ पधारे, जिन्हें वहां अर्द्धरात्रि के समय केवल-ज्ञान उत्पन्न हो गया। राम, लक्ष्मण, इन्द्रजित्, कुम्भकरण, मेघनाद आदि सभी लोग केवली भगवान को वन्दनार्थ आए। केवली भगवान की वैराग्यवासित देशना श्रवण कर कुम्भकरण, मेघनाद, इन्द्रजित् ने उनके पास चारित्र-ग्रहण कर लिया। मन्दोदरी पति पुत्रादि के वियोग से दुःख विह्वल थी, उसे संयमश्री प्रवर्तिनी ने प्रतिबोध देकर अठावन हजार चन्द्रनखादि स्त्रियों के साथ दीक्षित किया।

राम का लंका प्रवेश

सुग्रीव हनुमान और भामण्डलादि के साथ राम लक्ष्मण लंका-नगरी में प्रविष्ट हुए। उनके स्वागत में सारा नगर अभूतपूर्व ढङ्ग से सजाया गया। राम पुष्पगिरि पर्वत के पास पद्मोद्यान मे जाकर सीता से मिले। राम के दर्शन से सीता का विरह दुःख दूर हुआ, देवों ने पुष्पवृष्टि की। सर्वत्र सीता सती के शील की प्रशंसा होने लगी। लक्ष्मण ने सीता का चरण स्पर्श किया, भाई भामण्डल, सुग्रीव, हनुमान आदि सबसे मिलने के पश्चात् गजारूढ़ होकर सीता, राम, लक्ष्मण रावण के भवन मे आये। सर्वप्रथम शान्तिनाथ जिनालय मे पूजन स्तवन करके शोक सन्तप्त रत्नाश्रव, सुमालि विभीषण, मालवन्त आदि को आश्वस्त किया। राम ने विभीषण को लंका का राज्य दिया। विभीषण ने सबको अपने यहाँ बुलाकर खूब भक्ति की। सबने मिल कर राम का राज्याभिषेक करने की इच्छा व्यक्त की तो राम ने कहा—मुझे राज्य से प्रयोजन नहीं, भरत राज्य करता ही है। सीता के साथ राम और विशल्या के साथ लक्ष्मण लंका में सानन्द रहे। लक्ष्मण की अन्य सभी परिणीताओं को भी बुला लिया गया। राम लक्ष्मण के साथ सहस्रों विद्याधर पुत्रियों का पाणिग्रहण हुआ।

नारद मुनि द्वारा अयोध्या का वर्णन

एक दिन नारद मुनि आकाश मार्ग से घूमते हुए लंका आये। राम ने उन्हें अयोध्या से आये ज्ञातकर भरत के कुशल समाचार पूछे। नारद ने कहा—और तो सब कुशल है पर सीताहरण और लक्ष्मण के संग्राम में मूर्च्छित होने के बाद विशल्या को अयोध्या से ले जाने

के पश्चात् आपका कोई सम्वाद न मिलने से भरत और माताओं को अपार चिन्ता हो रही है। अयोध्या के समाचारों से राम लक्ष्मण ने नारद मुनि का आभार मानते हुए उन्हें सत्कार-पूर्वक विदा किया। तदनन्तर राम ने विभीषण से अयोध्या जाने के लिए पूछा तो विभीषण ने सोलह दिन और ठहरने की प्रार्थना की। भरत के पास दूत भेजकर कुशल समाचार कहलाया। भरत दूत को माता के पास ले गया, माता ने कुशल समाचार सुनकर दूत को वस्त्राभरणो से सत्कृत किया। अयोध्या नगर मे राम लक्ष्मणादि के स्वागत की जोरदार तैयारियाँ होने लगी।

अयोध्याका स्वागत आयोजन और राम का प्रवेश

विभीषण के आग्रह से १६ दिन और लंका में रह कर राम, लक्ष्मण, सीता और विशल्यादि सारा परिवार पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या आया। मार्ग में रामचन्द्रजी ने हाथ के इशारे से अपने प्रवास स्थानों को घटनाचक्र सहित बतलाये। अयोध्या पहुंचने पर चतुरंगिणी सेना के साथ भरत स्वागत करने के लिए सामने आये। नाना प्रकार के वाजित्र ध्वनि व मानव-मेदिनी के जय-जयकार युक्त वातावरण में अयोध्या मे राम, लक्ष्मण सपरिवार प्रविष्ट हुए।

अयोध्या की वीथिकाएँ सुगन्धित जल से छींटी गईं। गृह द्वार केशर से लींपे गये, पंचवर्ण के पुष्प वरषाये गये। मुक्ताओ से चौक पूरा कर तोरण वाधे गए। ध्वजा-पाताकाएँ और रत्नमालाएँ लटकाई गई। जिनालयों मे सतरह प्रकारी पूजा व महोत्सव प्रारम्भ हुए। विभीषण की आज्ञा से विद्याधरों ने मणिरत्नादि की वृष्टि की। स्थान

स्थान पर नाटक होने लगे। सधवा स्त्रियां पूर्ण कुम्भ धारण कर वधा रही थीं। सब लोग राम लक्ष्मण, सीता, विशल्या, हनुमान, भामंडल आदि के गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। सर्वप्रथम राम जब सपरिवार माताओं के महल मे गए तो सुमित्रा, अपराजिता और कैकयी ने पुत्रो व पुत्र-वधुओ का स्वागत किया, राम, लक्ष्मण सपरिवार माताओं के चरणो में गिर पड़े। सर्वत्र हर्ष और उत्साह की लहरें उमडने लगी। भरत शत्रुघ्न ने भ्राताओं के चरणों मे नमस्कार किया। राम लक्ष्मणादि की रानियां भिन्न-भिन्न महलो मे आनन्द-पूर्वक रहने लगी।

भरत चारित्र-ग्रहण

एक दिन भरत ने प्रबल वेराग्यवश राम के पास आकर दीक्षा लेने की आज्ञा मागते हुए कहा—यह राजपाट संभालिये, मैं असार संसार को त्याग कर मुनि-दीक्षा लूँगा। मेरी पहले से ही मुनि बनने की इच्छा थी, पर माता के आग्रह से राज्य भार स्वीकार करना पड़ा अब कृपा कर मुझे अपने चिर मनोरथ पूर्ण करने का अवसर दें। राम ने भरत को बहुत समझाया पर उसकी आत्मा संयम रग मे रंजित थी। कुलभूषण केवली के अयोध्या पधारने पर भरत ने हजार राजाओं के साथ चारित्र ग्रहण कर लिया। निर्ग्रन्थ राजर्षि भरत तप संयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

राम-राज्याभिषेक

सुग्रीव आदि विद्याधरों ने राम को राज्य ग्रहण करने की प्रार्थना की तो राम ने कहा—लक्ष्मण वासुदेव है, उसका राज्याभिषेक करो,

उसके राजा होनेसे मैं स्वतः ही राजा हो गया क्योंकि वह मेरा विनीत व आज्ञाकारी है। तदनन्तर विद्याधरों ने राम लक्ष्मण का अभिषेक किया। राम बलदेव व लक्ष्मण वासुदेव हुए। सीता और विशल्या पटरानियां हुईं। राम ने विभीषण को लंका का राज्य, सुग्रीव को किष्किन्ध्या, हनुमान को श्रीपुर, चन्द्रोदर के पुत्र को पाताल लंका, रत्नजटी को गीतनगर, भामण्डल को दक्षिण वैताढ्य का राज्य देकर सन्तुष्ट किया। अर्द्ध भरत को साधकर राम लक्ष्मण सुखपूर्वक अयोध्या का राज्य करने लगे।

सीता कलंक उपक्रम व सीता की सौतों का विद्वेष

एक दिन सीता ने स्वप्न मे सिंह को आसमान से उतर के अपने मुख में प्रविष्ट होते देखा एवं अपने को विमान से गिरकर पृथ्वी पर पड़ते देखा। उसने तुरंत राम से अपने स्वप्न की बात कही। राम ने उसके पुत्र युग्म होने का फलादेश बतलाते हुए विमान से गिरने का फल कुछ अशुभ प्रतीत होता है, बतलाया। सीता ने सोचा, न मालूम मैंने पूर्व जन्म में कैसे पाप किये थे जिनका अभी तक अन्त नहीं आया। तदनन्तर बसन्त ऋतु आने से सब लोग फाग खेलने के लिए प्रस्तुत हुए। राम, सीता और लक्ष्मण, विशल्या को फाग खेलते देख प्रभावती आदि सीता की सपत्निया सौतिया डाह से जलने लगी। उन्होंने परस्पर विमर्श करके सीता को राम के मन से उतार देने का षड़यंत्र रचा और सरल स्वभावी सीता को बुलाकर पूछा कि—रावण का कैसा रूप था? तुमने पद्मवाड़ी मे बैठे अवश्य ही उसे देखा होगा? सीता ने कहा—मैं तो नीचा मुख किये अश्रुपात करती रहती थी, मैंने उसके सामने

नजर उठा के भी नहीं देखा! सौतने पूछा—कोई तो रावण का अंगो-पांग दृष्टिगोचर हुआ ही होगा? सीता ने कहा—नीची दृष्टि किये होने से उसके पाँव तो अनायास ही दीख गये थे। सौत ने कहा—हमें चरण ही आलेखन कर दिखाओ, हमारे मन में उसे देखने का बड़ा औत्सुक्य है। इस प्रकार सीता को भ्रमा कर उससे चित्रालेखन करवा के राम को दिखाते हुए कहा कि आप जिसके प्रेम मे लुब्ध हैं वह सीता तो अहर्निश रावण के ध्यान में, चरण-सेवा मे निमग्न रहती है। हमने कई वार उसे ऐसा करते हुए देखा पर सोचा कौन किसीकी बुराई करे, आज अवसर पाकर आप से कहा है। स्त्री-चरित्र बड़ा विकट है, यदि विश्वास न हो तो ये चरणों के चित्र का प्रत्यक्ष प्रमाण देख लें। राम के मन मे सीता के शील की पूरी प्रतीति थी, अतः उन्होंने सीता पर लेश मात्र भी सन्देह न लाकर अन्य रानियो के कथन को केवल सौतिया डाह ही समझा।

एक दिन गर्भ के प्रभाव से सीता को दोहद उत्पन्न हुआ कि मैं जिनेश्वर की पूजा करूं, शास्त्र श्रवण करूं, मुनिराजों को दान दूँ। इस दोहद के पूर्ण न होने से उसे दुर्बल और उदास देख कर राम ने कारण ज्ञात किया और बड़े समारोह के साथ उसका दोहद पूर्ण किया। एकदा सीता की दाहिनी आँख फरकने लगी। उसने राम के समक्ष भावी चिन्ता व्यक्त कर राम के कथनानुसार दान पूजा आदि का उपचार किया।

सीता कलंक कथा प्रसंग एवं राम विकल्प तथा सीता का अरण्य निष्काशन

भावी प्रबल है। राम के अन्तःपुर मे और बाहर भी सीता के

सम्बन्ध में आशंकाएँ फैल गई कि परस्त्रीलपट रावण के यहाँ इतने दिन रह कर अवश्य ही वह शील बचा नहीं सकी होगी, पर राम ने केवल प्रेम व अभिमानवश ही उसे पुनः स्वीकार किया है। इस प्रकार नगर की नाना अफवाहें सेवक द्वारा राम ने सुनी और दुःखी होकर स्वयं रात्रिचर्या के लिये नगर मे निकल पड़े। राम किसी कारू के गृह द्वार पर कान लगा कर सुनने लगे। उस गृहस्वामी की पत्नी विलम्ब से घर मे लौटी थी और वह उसे गाली देते हुए कहने लगा कि मुझे राम जैसा मत समझ लेना, मैं तुम्हें घर मे नहीं प्रविष्ट होने दूँगा। राम ने अपने प्रति मेहणा सुन कर वड़ा खेद किया और जले पर नमक छिड़कने जैसा अनुभव किया। राम ने सोचा, लोग कैसे तुच्छ वुद्धि और अवगुणग्राही होते है ? दुष्ट व दुर्जनों का काम ही पराया घर भांगने का है। उल्लू को सूर्य नहीं सुहाता। सर्वत्र सीता का अपयश हो रहा है, भले ही झूठ ही हो पर लोगों मे निन्दा तो हो ही रही है, अतः अव भी मैं सीता को छोड़ दूँ तो अच्छा ही है। इस प्रकार विकल्प जाल में राम को चिन्तातुर देखकर लक्ष्मण ने चिन्ता का कारण पूछा। राम ने नगर में फैले हुए सीता के अपयश की वात कही तो लक्ष्मण ने कुंपित होकर कहा—जो सीता का अपवाद करेगा उसका मैं विनाश कर दूँगा। राम ने कहा—लोक वोक है, किस-किस का मुह पकड़ोगे ? लक्ष्मण ने कहा—लोग झख मारें, सीता सच्ची शीलवती है, परमात्मा साक्षी हैं। राम ने कहा—तुम्हारा कहना ठीक हैं पर अव सीता का त्याग किये विना अपयश दूर नहीं होगा। लक्ष्मण ने वहुत मना किया पर राम ने उसकी एक न सुनी और सारथी कृतान्तमुख को वुला कर आज्ञा दी कि तुम तीर्थयात्रा की दोहद पूर्त्ति के वहाने सीता

को ले जाकर डंडाकार अटवी में छोड़ आओ। उसने सीता को रथ मे वैठा कर सत्वर अटवी का मार्ग लिया। रास्ते में नाना अपशकुनो के होते हुए भी ग्राम, नगर, पर्वतों को उल्लंघन कर सारथी ने सीता को डंडाकार अटवी में लाकर पहुँचा दिया। वहाँ नाना प्रकार के फल फूलों के वृक्ष और घना जंगल था और सिंघ व्याघ्रादि हिंस्र पशु प्रचुरता से निवास करते थे। सीता ने सारथी से पूछा—राम आदि सब परिवार कहां रह गया व मुझे अकेली को यहाँ कैसे लाये? सारथी ने कहा—चिन्ता न करें माताजी सब लोग पीछे आ रहे है। नदी पार होने के अनन्तर सारथी ने आँखो में आँसू लाकर सीता को रथ से उतार कर राम के कुपित होकर त्यागने का सन्देश सुना दिया। सीता वज्राहत की भाँति सुनते ही मूर्च्छित हो गई। थोड़ी देर में सचेत होकर कहा—मुझे अयोध्या ले जाकर सत्य प्रमाणित होने का अवसर दो। सारथी ने दुखित होकर अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए सीता को रोते कलपते छोड़कर अयोध्या की ओर रथ को घुमा लिया।

शोक संतप्त सीता की वज्रजंघ से भेट और सकुशल आवास प्राप्ति

सीता अकेली व असहाय अवस्था मे भयानक अटवी मे वंठी हुई नाना विलाप करने लगी। कभी वह पति, देवर, पीहर, ससुराल-वालो को उपालंभ देती और कभी अपने पूर्वकृत पापो को दोष देती हुई पश्चाताप करने लगती। अन्त मे वह वैराग्य परिणामों से नवकार मंत्र स्मरण करती हुई एक स्थान पर वैठ गई।

इधर पुण्डरीकपुर का राजा वज्रजंघ हाथियों को पकडने के लिये इस जंगल में आया हुआ था। उसने सीता को रोते हुए देखा। अद्भुत सौन्दर्यवाली महिला को इस अटवी में देख कर उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही। उसने अपने मन में विचार किया कि यह अवश्य ही किसी राजा की रानी है, और गर्भवती भी है, न मालूम किस कष्ट में पड़ी हुई है ? राजा ने अपने सेवकों को सीता के निकट भेजा। उसने भयभीत होकर आभरण फेकते हुए कहा कि—मुझे स्पर्श न करना। सेवकों ने कहा—वहिन तुम कौन हो ? हमें आभूषणों से कोई प्रयोजन नहीं, हमारे स्वामी राजा वज्रजंघ ने तुम्हारी खबर करने भेजा है। इतने में ही वज्रजंघ स्वयं मन्त्री मतिसागर के साथ वहा आ पहुँचा। उसने सीता से परिचय पूछा तो उसने मौन धारण कर लिया। मंत्री ने कहा—विपत्ति किसमे नहीं आती, तुम नि.संकोच अपना दुख कहो। ये मेरे स्वामी राजा वज्रजघ आर्हत् धर्मोपासक सदाचारी और दृढ़ सम्यक् दृष्टि हैं, स्वधर्मी के प्रति अत्यन्त स्नेह रखते है। तुम निर्भय होकर अपने भाई से वोलो। मंत्री की वातों से आश्वस्त होकर सीता ने वज्रजघ से अपनी सारी कथा कह सुनाई। वज्रजंघ ने सीता को धैर्य वंधाते हुए कहा—तुम मेरी धर्मवहिन हो, मेरे नगर में चलकर आराम से अपने शील की रक्षा करते हुए धर्माराधन करो। इस समय स्वधर्मी वन्धु के शरण मे जाना ही श्रेयस्कर समझकर राजा के साथ सीता पुण्डरीकपुर चली गई। राजा ने वड़े सम्मान से दास दासियों के सहित उसे अलग महल दे दिया, जिसमे वह सुखपूर्वक काल निर्गमन करने लगी। सभी लोग सीता के शील की प्रशंसा और राम के अविचारपूर्ण दुर्व्यवहार की निन्दा करने लगे।

धीर एवं संयमी राम की गम्भीर विकलता

कृतान्तमुख सारथी ने सीता को वन मे छोड़ने और सीता द्वारा कहे हुए वाक्यों को राम के सन्मुख निवेदन किया। उसने कहा—सीता को नदी पार होने के पश्चात् जब मैंने अटवी में छोड़ा तो उसने रुदन और विलाप के द्वारा वन के मृगों तक को रुला दिया। उसने कहलाया है कि मैंने जान या अनजान में कोई अपराध किया हो तो क्षमा करना व मुझे जैसे बिना परीक्षा किए हुए अटवी में छोड़ दिया वैसे आर्हत धर्म रूपी रत्न को मत छोड़ देना। सीता का सन्देश सुन कर राम मूर्च्छित होकर गिर पड़े और थोडी देर में सचेत होने पर सीता के गुणों को स्मरण कर नाना विलाप करने लगे। उनको नाना विलाप करते देख लक्ष्मण ने धैर्य बँधाया। राम ने कहा—उस भयंकर अटवी मे उसे हिंस्र पशुओं ने मार डाला होगा, किसी तरह उनसे बच भी गई तो वह मेरे विरह में जीवित नहीं बची होगी।—अतः उसके निमित्त पुण्य कार्य व देव-गुरु-वन्दन करके शोक त्यागो। राम सीता के गुणों को स्मरण करते हुए राजकाज मे लग गये।

लव-कुश जन्म और उनकी वीरता का कथा प्रसंग

वज्रजंघ राजा के यहाँ रहते हुए सीता ने गर्भकाल पूर्ण होने पर पुत्र युगल को जन्म दिया। राजा ने भानजों के जन्म का उत्सव किया और प्रचुर बधाईयां बाँटी। दसूठन के दिन समस्त कुटुम्ब परिवार को भोजन कराके अनंगलवण और मदनांकुश यह कुमारों का नामकरण संस्कार किया। सिद्धारथ नामक क्षुल्लक जो ज्योतिष-निमित्तमें प्रवीण थे, तीर्थ यात्रा के निमित्त घूमते हुए सीता के यहाँ आये। सीता ने

के पास गया और परस्पर मिलकर सव प्रसन्न हुए। फिर सीता को साथ लेकर लवकुश को समझाने के उद्देश्य से उसके पास आये। लव कुश ने सम्मानपूर्वक भामण्डलादि को अपने पक्ष में कर लिया।

लव कुश का राम से युद्ध

केसरीरथ पर रामचन्द्र व गरुड़रथ पर लक्ष्मण आरूढ़ होकर रणभेरी वजाते हुए ससैन्य निकले। उनके साथ वन्हिसिख, वालिखिल्ल, वरदत्त, सीहोदर, कुलिस, श्रवण, हरिदत्त, सुरभद्र, विद्रुम आदि पांच हजार सुभट थे। लव कुश की सेना में अग, कुलिंग, जालंधर सिहल, नेपाल, पारस, मगध, पानीपत और वव्वर देश के राजा थे। दोनों दल परस्पर भिड गये। खून की नदिया वहने लगी, गगनगामी विद्याधरों में भामंडल लव कुश का सहायक हो गया और उसने विद्युत्प्रभ, सुग्रीव, पवनवेग आदि को लव कुश की उत्पत्ति वतलाकर सव को उदासीन कर दिया। लव कुश राम लक्ष्मण से युद्ध करने लगे। तीरों की वर्षा से अश्वों को मारकर व रथों को चकनाचूर करके उन्होंने राम लक्ष्मण को विस्मित कर दिया। वज्रजंघ और भामंडल लव कुश की सहायता कर रहे थे। वलदेव, वासुदेव के देवाधिष्ठित अस्त्र उस समय काष्ट सदृश हो गए। लक्ष्मण जैसा वीर जिसने कोटिशिला उठाई व रावण को मारा था वह भी कुश के सामने निराश होकर अन्तिम उपाय चक्र-रत्न को छोडने के लिए प्रस्तुत हो गया। चक्र के छोड़ने पर वह तीन प्रदिक्षणा देकर वापस लक्ष्मण के पास लौट आया। लोगों ने कहा—साधु के वचन असत्य हो रहे है, मालूम होता है कि भरतक्षेत्र मे नये वलदेव,

वासुदेव प्रगट हो रहे है। सिद्धार्थ ने कहा—चिन्ता की कोई वात नहीं अपने गोत्र में कभी चक्ररत्न प्रभाव नहीं दिखाता। लक्ष्मण के पूछने पर नारद और सिद्धार्थ ने कहा कि ये दोनों महानुभाव राम के पुत्र हैं। राम ऐसा सुनकर तुरन्त अस्त्र त्याग कर पुत्रों से मिलने के लिए आगे वढ़े। इतने में ही लव कुश ने रथ से उतर कर पिता को नमस्कार किया। राम ने प्रसन्नता पूवक पुत्रो को आलिगन पूर्वक सीता के कुशल समाचार पूछे। लक्ष्मण के निकट आने पर कुमारो ने उन्हें प्रणाम किया। सर्वत्र मंगलमय वाजित्र वजने लगे, वधाइयां वंटने लगी। सीता भी पिता पुत्रों का मिलाप सुन कर विमान द्वारा वापस चली गई। सव ने वज्रजंघ का वड़ा भारी आभार माना। सारे परिवार के साथ परिवृत्त लव कुश वडे समारोह के साथ अयोध्या मे प्रविष्ट हुए। सर्वत्र सीता और लव कुश की प्रशंसा होने लगी।

अयोध्या निवास के लिये सीता संकल्प

एक दिन राम के समक्ष सुग्रीव, विभीषण ने निवेदन किया कि पति और पुत्रों की वियोगिनी सीता जो पुंडरीकनगरी में वैठी है, महान दु ख होता होगा। राम ने कहा—मैं जानता हूँ और मेरा भी हृदय कम दुःखी नहीं है पर क्या करूँ मैंने लोकापवाद के कारण ही प्राणवल्लभा सीता को छोड़ा तो अव किसी प्रकार उसका कलंक उतरे, ऐसा उपाय करो! राम की आज्ञा से भामंडल, सुग्रीव और विभीषण सीता के पास गये और उसे अयोध्या चलने के लिए कहा। सीता ने गद्‌गद् वाणी में कहा—मुझ निरपराधिनी को छोड़ा, इस अपार दुःख से आज तक मेरा कलेजा जला रहा है। अव मुझे प्रियतम के साथ महलों मे

उन्हें आहार पानी से प्रतिलाभा। क्षुल्लक ने पुत्रों का परिचय प्राप्त कर भावी सुख की भविष्यवाणी की। दोनों कुमार बड़े होकर बहत्तर कलाओं मे प्रवीण, शूरवीर और साहसी हुए। राजा वज्रजंघ ने अनंगलवण को शशिचूलादि अपनी बत्तीस कन्याएँ दी एवं साथ ही मदनांकुश का पाणिग्रहण करने के लिये पृथिवीपुर के पृथु राजा के पास उसकी पुत्री कनकमाला की मांग की। राजा पृथु ने कुपित होकर अज्ञात कुलशील को अपनी पुत्री देना अस्वीकार करते हुए दूत को अपमानित करके निकाल दिया। वज्रजंघ ने पृथु के देश मे लूट-पाट व उत्पात मचा कर उसे युद्ध के लिये बाध्य किया। वज्रजंघ के पुत्र युद्ध के निमित्त तैयार हुए तो लवण और अंकुश भी सीता को समझा-बुझा कर युद्ध के लिये साथ हो गये। ढाई दिन पर्यन्त कूच करते हुए पृथु से जा भिड़े। दोनो ओर की सेनाओं में तुमुल युद्ध हुआ। लव और अंकुश दोनो शेर की तरह टूट पड़े और अल्पकाल में शत्रु सेना को परास्त कर दिया—पृथु राजा ने कुमारों के प्रौढ़ पराक्रम से ही उनके कुलवंश की उच्चता का परिचय पाकर क्षमा याचना की।

नारद द्वारा लव-कुश का वास्तविक परिचय तथा लव-कुश की अयोध्या जिज्ञासा

इसी अवसर पर नारद मुनि आये और उनके द्वारा सीताराम के नन्दन दोनो कुमारों का परिचय प्राप्त कर सब लोग प्रसन्न हुए। लव, अंकुश दोनों ने नारद से पूछा कि अयोध्या यहाँ से कितनी दूर है? नारद ने कहा—एक सौ योजन की दूरी पर अयोध्या है जहाँ तुम्हारे पिता राम और चाचा लक्ष्मण का राज्य है। अपनी मा को

निरपराध छोड़ने की बात से कुपित होकर उन्हों ने वज्रजंघ से अयोध्या पर चढ़ाई करने के लिये सहाय्य माँगा। वज्रजंघ ने वैर लेने के लिये आश्वासन दिया। पृथु राजा ने अपनी पुत्री कनकमाला कुश को परणा दी। कुछ दिन वहाँ रह कर लव, कुश ससैन्य विजय के निमित्त निकल पड़े। वज्रजंघ की सहायता से गगा सिन्धु पार होकर काश्मीर कावुल, कैलाश पर्यन्त देशों को वशवर्ती कर लिया। फिर माता के पास विजेता लव कुश ने आकर चरण वंदना की। सीता भी पुत्रों की समृद्धि देखकर प्रसन्न हुई। नारद मुनि ने आकर राम लक्ष्मण का राज्य पाने का आशीर्वाद दिया। लव कुश के मन में अयोध्या पर चढ़ाई करने की उत्कट तमन्ना होने से तुरंत रणभेरी बजा कर सेना को सुसज्जित कर लिया। सीता ने आँखों में आँसू लाकर पिता व चाचा से युद्ध करने में अनर्थ की आशंका वतलाई तो पुत्रों ने पिता व चाचा को युद्ध में न मार, सैन्य संहार द्वारा मान भंग करने का निर्णयकहकर सीता को आश्वस्त किया।

लव कुश का अयोध्या प्रयाण

लव कुश की सेना के आगे दस हजार पुरुष पेड़ पौधे हटाकर जमीन समतल करने वाले चल रहे थे। योजनान्तर में पड़ाव डालते हुए क्रमशः सेना अयोध्या के निकट पहुंची। राम ने कुपित होकर सिंह और गरुड़ वाहन तय्यार करवाये। नारद मुनि ने भामंडल के पास जाकर सीता वनवास, वज्रजंघ के संरक्षण मे लव कुश के बड़े होकर प्रतापी होने का सारा वृतान्त सुनाते हुए उनके द्वारा अयोध्या पर चढ़ाई होने की सूचना दी। भामंडल माता, पिता के साथ सीता

नहीं रहना है, अयोध्या से मेरा आना केवल धीज करके अपनी सत्यता प्रमाणित करने के लिए ही हो सकता है अन्यथा मेरे लिये धर्म ध्यान के अतिरिक्त दूसरा कोई प्रयोजन अवशिष्ट नहीं है। सुग्रीव द्वारा यह शर्त स्वीकार करने पर सीता उनके साथ आकर अयोध्या के उद्यान में ठहरी।

सीता-शील की अग्नि परीक्षा

दूसरे दिन प्रातःकाल अन्तःपुर की रानियों ने आकर सीता का स्वागत किया। राम ने आकर अपने अपराधों की क्षमायाचना की। सीता ने चरणों में गिर कर कहा प्रियतम! आपको मैं क्या कहूं। आप पर दुख कातर, दाक्षिण्यवान् और कलानिधि है, संसार में आप अद्वितीय महापुरुप हैं, पर मुझ निरपराधिनी को विना परीक्षा किये आपने रण में छोड दिया। अग्नि, पानी आदि पाच प्रकार की परीक्षाएँ करा सकते थे, पर ऐसा न किया और मुझे अपने भाग्य भरोसे अटवी में ढकेल दिया। वहाँ मुझे हिंस्र पशु मार डालते तो मैं आर्त्त रौद्र ध्यान से मरकर दुर्गति मे जाती। किन्तु आपका इसमे कोई दोष नहीं, मेरे प्रारब्ध का ही दोष है। मेरा आयुष्य प्रबल था। पुंडरीकपुर नरेश ने भ्राता के रूप में आकर मेरी रक्षा की और आश्रय दिया। अव सुग्रीव मुझे यहा लाया है तो मैं कठिन अग्निपरीक्षा द्वारा अपने उभयकुल को उज्वल करूँगी। राम ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से कहा—मैं जानता हूं कि तुम गंगा की भाँति पवित्र हो पर अपयश न सहन कर सकने के कारण ही मैंने तुम्हारा त्याग किया। अब तुम निःसंकोच जलती अग्नि में प्रविष्ट होकर अपने को निष्कलंक प्रमाणित करो।

सीता ने राम के वचनानुसार अग्निपरीक्षा द्वारा धीज करना स्वीकार किया।

राम ने एक सौ हाथ दीर्घ वापी खुदवा कर उसे अगर चन्दन के काष्ट से भरवा दी और उसके चारों ओर से अग्नि प्रज्वलित कर दी गयी। सीता धीज करने के लिए प्रस्तुत हुई। सारे नगर के लोग मिलकर हाहाकार करते हुये राम के इस अन्याय की निन्दा करने लगे। निमित्त-प्रभावक सिद्धार्थ मुनि ने आकर कहा—शील गुणादि से सती सीता एकान्त पवित्र है। चाहे मेरु पर्वत पाताल में चला जाय, समुद्र सूख जाय तो भी सीता मे कोई लांछन नहीं! यदि मैं मिथ्या कहता हूं तो मुझ प्रतिदिन पंचमेरु की चैत्य-वन्दना करके पारणा करनेवाले का पुण्य निष्फल हो। मैं निमित्त के बल पर कहता हूं कि सीता के शील के प्रभाव से तुरन्त अग्नि जल रूप मे परिणत हो जायगी। सकलभूषण साधु के केवलज्ञान उत्पन्न होने पर इन्द्र वन्दनार्थ आया और उसने सीता की अग्निपरीक्षा की बात सुनकर हरिणेगमेषी देव को आज्ञा दी कि निर्मल शीलालंकारधारिणी सती सीता को अग्नि परीक्षा में सहाय करना। इन्द्र की आज्ञा से हरिणेगमेषी देव सीता की सेवा में आकर उपस्थित हो गया।

राम के सेवकों ने वापी में अग्नि पूर्णतया प्रज्वलित होने की खबर दी। राम अग्नि ज्वाला को देखकर बड़े चिन्तित हुए और नाना विकल्प करने लगे। अग्नि की प्रचण्ड ज्वाला का प्रकाश एक-एक कोश तक फैल गया और धग-धगाट शब्द होने लगा, धूम्र घटा आसमान में छा गई। लोगों के हाहाकार के बीच सीता ने स्नानादि

कर अर्हन्त् भगवान की पूजा की। नमस्कार मन्त्र का ध्यान करके तीर्थपति मुनिसुव्रत स्वामी को नमस्कार कर वापी के निकट आई और कहने लगी—हे लोकपालो, मनुष्यों और देव-देवियों! मैंने श्री राम के सिवा अन्य किसी पुरुष की मन, वचन, काया से स्वप्न से भी वांछा की हो, राग दृष्टि से देखा हो तो मुझे अग्नि जला कर भस्म कर देना, अन्यथा जल हो जाना! सीता ने अग्निप्रवेश किया, उसके शील-प्रभाव से हवा बन्द हो गई, अग्नि ज्वाला में से जल का अजस्र प्रवाह फूट पड़ा। पानी की बाढ से लोग डूबते हुए हाहाकार करने लगे। विद्याधर लोग तो आकाश में उड़ गए, भूचरों की पुकार सुनकर सती सीता ने अपने हाथ से जल-प्रवाह को स्तम्भित कर दिया। लोगों में सर्वत्र आनन्द उत्साह छा गया। लोगों ने देखा वापी के मध्य में देव निर्मित स्वर्णमणि पीठिका पर सहस्र दल कमलासन पर सीता विराजमान है! देव दुन्दुभि और पुष्प वृष्टि हो रही है। सीता के निर्मल शील की प्रसिद्धि सर्वत्र फैल गई, उभय कुल उज्ज्वल हुए।

सीता का चारित्र-ग्रहण

राम ने सीता से क्षमायाचना करते हुए उसे सोलह हजार रानियों में प्रधान पट्टरानी स्थापन करने की प्रार्थना की। सीता ने कहा—नाथ! यह संसार असार और स्वार्थमय है अब मुझे सांसारिक भोगों से पूर्ण विरक्ति हो गई है। अब मुझे केवल चारित्र-धर्म का ही शरण है। उसने अपने केशो का तुरन्त लोच कर लिया। सीता के लुंचित केशों को देखकर राम मूर्च्छित हो गए। शीतोपचार से सचेत होने पर विलाप करने लगे। सर्वगुप्ति मुनिराज ने सीता को दीक्षा देकर चरणश्री

प्रवर्त्तिनी को सौंप दिया और वह निर्मल चारित्र का पालन करने लगी। राम को लक्ष्मण ने समझा-बुझा कर शान्त किया। राम सपरिवार सकलभूषण केवली को वन्दनार्थ गजारूढ़ होकर आये, साध्वी सीता भी वहाँ बैठी हुई थी। केवली भगवान ने राग, द्वेष का स्वरूप समझाते हुए धर्मदेशना दी। राजा विभीषण ने केवली भगवान से सीता के प्रसंग से राम लक्ष्मण और रावण के साथ संग्राम आदि होने का परमार्थिक कारण पूछा। केवली भगवान ने पूर्व जन्म की कथा इस प्रकार बतलाई।

सीता का पूर्वभव कथा प्रसंग

क्षेमपुरी नगरी मे व्यापारी नयदत्त निवास करता था जिसकी भार्या सुनन्दा की कुक्षी से धनदत्त और वसुदत्त नामक दो पुत्र थे। उसी नगर मे सागरदत्त नामक एक व्यापारी था जिसकी स्त्री रत्नाभा के गुणवती नामक लावण्यवती पुत्री थी। पिता ने उसकी सगाई वसुदत्त के साथ व माता ने द्रव्य लोभ से श्रीकान्त नामक उसी नगरी के एक व्यापारी से कर दी। ब्राह्मण मित्र से सम्वाद पाकर वसुदत्त ने श्रीकान्त को तलवार के घाट उतार दिया। श्रीकान्त ने मरते-मरते वसुदत्त के पेट में छुरा भोक दिया, दोनों मर के जंगली हाथी हुए और पूर्व जन्म के वैर से परस्पर लड़ मरे। फिर महिप, वृषभ, बानर, द्वीपी मृग आदि भव किये और क्रोधवश जलचर, स्थलचर आदि जीव योनियों में भटकने लगे। भाई के वियोग से दुःखी धनदत्त ने भ्रमण करते हुए साधु के समीप धर्म श्रवण कर श्रावक व्रत ले लिए और आयु पूर्ण होने पर वह स्वर्ग गया। वहाँ से महापुर में पद्मरुचि नामक सेठ के रूपमें उत्पन्न

हुआ। एक दिन सेठ ने गोकुल में मरते हुए बैल को देखकर उसे नव-कार मन्त्र सुनाया। जिसके प्रभाव से वह उसी नगरी के राजा छत्र-छिन्न की रानी श्रीकान्ता का वृषभ नामक पुत्र हुआ। एक दिन राज-कुमार गोकुल मे गया, वहां उसे जातिस्मरण ज्ञान होने से पूर्वभव स्मरण हो आया। उसने अपने को अन्त समय में नमस्कार महामन्त्र सुनानेवाले उपकारी सेठ की खोजके लिए एक मन्दिर बनवाकर उसमें अपना पूर्वभव चित्रित करवा दिया और सेवकों को निर्देश कर दिया कि जो इस चित्र को देखकर परमार्थ बतलावे, उससे मुझे मिलाना! एक दिन पद्मरुचि सेठ उस मन्दिर मे आया और चित्र को गौर से देखते हुए समझ गया कि जिस बैल को मैंने नवकार मन्त्र सुनाया था वही मरकर राजा वृषभ हुआ हैं और जाति-स्मरण से पूर्व भव ज्ञात कर यह चित्र बनवाया मालूम देता है। सेठ की चेष्टाओं को देखकर सेवक ने राजकुमार को खबर दी। राजकुमार ने जिनेश्वर भगवान को नमस्कार कर सेठ के मना करने पर भी उसे वन्दना की और उपकारी के प्रति आभार प्रदर्शित किया। सेठ ने उसे श्रावक व्रत ग्रहण करने की प्रेरणा की। राजा व सेठ दोनो व्रत पालन कर द्वितीय स्वर्ग मे गये। पद्मरुचि वहां से च्यवकर नंद्यावर्त्त गांव के राजा नन्दीश्वर का पुत्र नयणानन्द हुआ, वहां से चतुर्थ देवलोक गया फिर च्यवकर महाविदेह क्षेत्र के क्षेमपुरी में विपुलवाहन का पुत्र श्रीचन्दकुमार हुआ। वह समाधिगुप्तसूरि के पास चारित्र ग्रहण कर पांचवें देवलोक का इन्द्र हुआ। उस समय गुणवती के कारण भवभ्रमण करते हुए वसुदत्त और श्रीकान्त मे से श्रीकान्त मृणालनगर के राजा वज्रजम्बु की रानी हेमवती का पुत्र सयंभू हुआ और वसुदत्त

श्रीशर्म पुरोहित का पुत्र श्रीभूति हुआ। जिसकी भार्या सरस्वती की कुक्षी से गुणवती का जीव वेगवती नामक पुत्री हुई। वह मृगली के भव से मनुष्य भव में आकर फिर हथिणी हुई थी, वहाँ कादे मे फँस जाने से चारण मुनि द्वारा नवकार मन्त्र प्राप्त कर वेगवती का अवतार पाया। उसने साधु मुनिराज की निन्दा गर्हा की, पश्चात् पितृ वचनों से धर्म ध्यान करने लगी। रूपवान वेगवती को राजकुमार सयंभू ने पिता से मांगा। श्रीभूति के माग अस्वीकार करने पर सयंभू ने उसे रात्रि मे मार कर वेगवती से भोग किया। वेगवती ने क्षुब्ध होकर उसे भवान्तर मे मरवा कर बदला लेने का श्राप दिया। वेगवती संयम लेकर तप के प्रभाव से ब्रह्म विमान मे देवी उत्पन्न हुई। सयभूकुमार भी भव भ्रमण करता हुआ क्रमशः मनुष्य भव में आया और विजयसेन मुनि के पास दीक्षित हुआ। एक वार उसने समेतशिखर यात्रार्थ जाते हुए कनकप्रभ विद्याधर की ऋद्धि देखकर तादृशीऋद्धि प्राप्त करने का नियाणा कर लिया। वहाँ से तीसरे देवलोक मे देव हुआ। वहाँ से च्यवकर वह रावण के रूप में समृद्धिशाली प्रतिवासुदेव हुआ। धनदत्त का जीव पांचवे देवलोक से च्यवकर दशरथनन्दन रामचन्द्र हुआ। वेगवती ब्रह्म विमान से च्यवकर सीता हुई। गुणवती का भाई गुणधर सीता का भाई भामण्डल हुआ। वसुदत्त का ब्राह्मण यज्ञवल्क मर कर विभीषण और नवकार मन्त्र से प्रतिबोध पानेवाले बैल का जीव सुग्रीव राजा हुआ। इस प्रकार पूर्वभव के वैर से सीता के निमित्त को लेकर रावण का संहार हुआ। सीता ने वेगवती के भव में मुनि को मिथ्या कलंक दिया था जिसका कर्म विपाक से उसे चिरकाल तक कलंक का दुख भोगना पड़ा।

उसने जैसे साधु का कलंक वापस उतारा, वैसे ही सीता अग्नि परीक्षा द्वारा निष्कलंक घोषित हुई। इस प्रकार सकलभूषण केवली ने शुभ व अशुभ कर्मों के फल बतलाते हुए धर्मोपदेश देकर पापस्थानकों से भव्य जीवो को बचने की प्रेरणा दी।

केवली भगवान की देशना सुन कर लव कुश और कृतान्तमुख ने दीक्षा ले ली। राम, लक्ष्मण, विभीषणादि ने सीता को वन्दन करके अपराधो की क्षमा याचना की शान्त चित्त से राज भोगने लगे। साध्वी सीता ने निर्मल और निरतिचार चारित्र पालन कर अनशन आराधना पूर्वक आयुष्य पूर्ण करके बारहवें देवलोक में इन्द्र रूप में अवतार लिया, जहाँ २२ सागरोपम की आयुस्थिति है। राम-लक्ष्मण चिरकाल तक प्रेम पूर्वक राज्य सम्पदा भोगते हुए काल निर्गमन करने लगे।

राम लक्ष्मण का अनन्य प्रेम, इन्द्र द्वारा परीक्षा

एक दिन इन्द्र ने देवसभा मे मोहनीय-कर्म के सम्बन्ध मे बात चलने पर उसे बड़ा दुर्द्धर्ष बतलाया और महापुरुष भी उसके जबर-दस्त वशीभूत होते है इसके उदाहरण स्वरूप कहा कि राम लक्ष्मण का प्रेम इतना गाढा है कि एक दूसरे के विरह मे अपना प्राण त्याग कर सकते है। इन्द्र के वचनो की परीक्षा करने के लिए कौतुहल पूर्वक दो देव अयोध्या मे आये और राम को देवमाया से मृतक दिखा कर अन्तःपुर मे हाहाकार मचा दिया। लक्ष्मण ने जब राम का मरण जाना तो उसने तत्काल प्राण त्याग दिया। लक्ष्मण को मरा देखकर देवों के मन मे बड़ा भारी पश्चाताप हुआ, पर गये हुए प्राण वापस

नहीं लौट सकते। लक्ष्मण की रानियों का चीत्कार सुनकर राम ने उसे मूर्छित की भाँति समझ कर कहा—मेरे प्राणवल्लभ भ्राता को किसने रुष्ट कर दिया ? राम ने पास में आकर मोहवश उसे उठा कर हृदय से लगाया, चुम्बन किया। पुकारने पर जब लक्ष्मण न बोला तो पागल की भाँति प्रलाप करते हुए वे मूर्छित होकर गिर पड़े। थोड़ी देर में शीतोपचार से सचेत होनेपर उन्होने फिर विलाप करना प्रारम्भ किया। लक्ष्मण की रानियाँ भी चीत्कार करती हुई कल्पान्त विलाप करने लगी।

राम ने लक्ष्मण के मृतक कलेवर को मोहवश किसी प्रकार नहीं छोड़ा। वे उसे अपने पर रुष्ट हो गया समझ रहे थे। सुग्रीव, विभीषण आदि ने लक्ष्मण की अन्त्येष्टि के हेतु राम को समझाने की बहुत चेष्टा की पर राम ने कहा—दुष्ट पापियो। अपने घरवालों को जलाओ, मेरा भाई जीवित है, मेरे से रुष्ट होकर इसने मौन पकड़ ली है। राम-लक्ष्मण के कलेवर को कंधे पर उठाकर महलों से निकल पड़े। वे कभी लक्ष्मण को स्नान कराते, वस्त्र पहनाते, मुँह मे भोजन देने की चेष्टा करते। इस प्रकार मोह मूर्छित राम को लक्ष्मण के कलेवर की परिचर्या मे भटकते छ मास बीत गये। इधर सम्बुक, खरदूषण का वैर लेने के लिए विद्याधरो ने अयोध्या पर चढाई कर दी। राम को जब आक्रमण का वृतान्त ज्ञात हुआ तो वे लक्ष्मण के कलेवर को एकान्त मे रख कर शत्रुओं के सामने युद्ध को प्रस्तुत हो गये। देव जटायुध और कृतान्तमुख का आसन कंपायमान होने से उन्होंने देवमाया से गगनमंडल में अगणित सुभट प्रस्तुत कर राम को अचिन्त्य सहाय किया जिससे विद्याधरों का दल हार कर भाग गया। देवो ने राम

को प्रतिबोध देने के लिए नाना प्रकार से उपक्रम किया। देवों ने सूखे सरोवर से सिंचन, मृतक बैल से हल जोतना, शिला पर कमल उगाने, घानी में वालू पीलने आदि के विपरीत कृत्य दिखाये। राम ने कहा —ये मूर्खतापूर्ण चेष्टाएं क्यों करते हो? देवों ने कहा—महापुरुष! आप पैरों में जलती न देख कर पर्वत जलता देखते हो, स्वयं मृतक को लिए हुए फिरते हो, दूसरों को शिक्षा देते हो। राम ने कहा—मूर्खो, अमंगल मत वोलो, मेरे भाई ने मेरे से रुष्ट होकर कदाग्रह कर रखा है। देव जटायुध राम के तीव्र मोहनीय का उदय जानकर और कोई उपाय करने का सोचने लगा।

देव ने एक मृतक स्त्री के मुख में कवल देते हुये दिखाया। राम ने कहा—मूर्ख! मृतक को क्या खिलाते हो? उसने कहा—यह मेरी स्त्री मेरे से रुष्ट हो गई है, दुश्मन लोग इसे मृतक कहते है अतः उनके वचन असह्य होने से मैं आपके पास आया हूँ। राम ने अपने जैसा ही रोगी उसे समझ कर अपने पास रख लिया। एक दिन दोनों कहीं गये और वापस आते देव-माया से लक्ष्मण को स्त्री से हँसते-बोलते काम-केलि करते दिखाया और राम से कहा—तुम्हारा भाई वड़ा पापी है, मेरी स्त्रीके साथ हास्य विनोद करता है, मेरी स्त्री भी वड़ी चपल है। इन दोनों के फेर में अपन दोनों भूल कर रहे है। आपने इसके पीछे राजपाट छोड़ा और ये लाज शर्म व मर्यादा त्याग वैठे हैं। संसार असार है, कोई किसीका नहीं, वीतराग भगवान का धर्म आराधन करना ही श्रेयस्कर है। मरण के भय से कोई भी स्वजन सम्वन्धी वचा नहीं सकते। तुम्हारे भाई को जेसे तुम लाख उपाय करने पर भी न वचा सके तो तुम्हें कौन वचावेगा? देवता के प्रति-

बोध से राम का मोह दूर हो गया। उसने आभार मानते हुये कहा—मुझे दुर्गति से बचाने वाले तुम कौन हो महानुभाव! देवों ने अपना प्रकृत रूप प्रकट करके कहा—मैं जटायुध देव हूँ जो आपके नवकार मंत्र सुनाने से चतुर्थ देवलोक में उत्पन्न हुआ। और दूसरा यह आपका सेवक कृतान्तमुख देव है। आपको इस प्रकार लक्ष्मण का मृत देह लेकर घूमते देखकर हमलोग प्रतिबोध देने आये हैं।

रामका चारित्र ग्रहण

रामने लक्ष्मण की अन्त्येष्टि करके वैराग्य परिणामों से संसार त्याग करने का निश्चय किया। उन्होंने शत्रुघ्न को बुला कर राज्य सौंपना चाहा। शत्रुघ्न ने कहा—मैं तो स्वयं राज्य से विरक्त और आपके साथ चारित्र लेने को उत्सुक हूं। राम ने अनंगलवणके पुत्र को राज पाट सौंप दिया। सुग्रीव और विभीषण भी अपने पुत्रों को राज्याभिषिक्त कर राम के साथ दीक्षित होने के लिये आ गये। अरहद्दास श्रावक ने मुनिसुव्रत स्वामी के शासनवर्त्ती सुव्रत साधुके पधारने की सूचना दी और उनके पास चारित्र लेने का सुझाव दिया। राम ने उसको इस समाचार के लिये धन्यवाद देकर अयोध्या मे संघपूजा, अष्टान्हिका महोत्सवादि प्रारम्भ कर दिये और निर्दिष्ट मुहूर्त्त मे सोलह हजार राजा और सैंतीस हजार स्त्रियों के साथ सुव्रतमुनि के पास चारित्र ग्रहण कर लिया।

राम का केवलज्ञान, धर्मोपदेश व निर्वाण

महामुनि रामचन्द्र पंच महाव्रत लेकर उत्कृष्ट रूप से पालन करने लगे। वे कूर्म की भाँति गुप्तेन्द्रिय और भारण्ड पक्षीकी भाँति अप्रमत्त

थे। वे शीतकाल मे खुले शरीर शीत परिषह व उष्णकाल में शिलाओ पर आतापना लेकर इन्द्रिय दमन करते थे। निर्ग्रंथ राम तीव्र त्याग वैराग्य की प्रतिमूर्त्ति थे। वे सुव्रतसूरि की आज्ञा लेकर अकेले पर्वत और भयानक अटवी में कायोत्सर्ग ध्यान करते एवं नाना अभिग्रह लेकर परिषह उपसर्ग सहते हुए तप संयम से आत्मा को भावित करते थे। उन्हें एक दिन अटवी मे तप करते हुए अवधि-ज्ञान उत्पन्न हुआ, जिससे उन्होंने लक्ष्मण को नरक की असह्य वेदना सहते हुये देखा और सोचा कर्मों की गति कैसी विचित्र है, महापुरुष भी उनसे नहीं छूटते। कर्म विपाक और संसार स्वरूप को प्रत्यक्ष देख कर राम के त्याग वैराग्य में खूब अभिवृद्धि हुई। शुद्ध भावनायें और धर्म-ध्यान शुक्ल-ध्यान ध्याते हुए मुनि रामचन्द्र कोटिशिला पर योग निरोध कर कायोत्सर्ग ध्यान मे तल्लीन हो गये। सीतेन्द्रने जव अवधि-ज्ञान से रामचन्द्र मुनि को ध्यान श्रेणि मे चढ़ते हुए देखा तो उसके मन मे मोहवश यह विचार आया कि राम को क्षपक श्रेणि से नीचे गिरा दूँ ताकि वे मोक्ष न जाकर देवलोक में मेरे मित्र रूप मे उत्पन्न हों और हमलोग प्रेमपूवक रहे। इन विचारों से प्रेरित होकर सीतेन्द्र राम के निकट आया और पुष्पवृष्टि करके सीता का दिव्य रूप धारण कर बत्तीस प्रकार के नाटक करने प्रारम्भ कर दिये। नाना हावभाव, विभ्रम करके कभी सीता के रूप मे, कभी विद्याधर कन्याओं के पाणि-ग्रहणादि का प्रलोभन देकर राम को क्षुब्ध करने का भरसक प्रयत्न किया पर सराग वचनों को सुन कर भी रामचन्द्र अपने ध्यान में निश्चल रहे और क्षपक श्रेणि आरोहण कर चार घनघाती कर्मों का क्षय कर केवलज्ञान केवलदर्शन प्रगट किया। देवों ने कंचनमय कमल स्थापन

कर केवली भगवान रामचन्द्र की महिमा की। एवं सीतेन्द्र ने वारम्वार अपने अपराधों की क्षमा याचना की।

भगवान रामचन्द्र ने कमलासन पर विराजमान होकर धर्मदेशना दी, जिसे सीतेन्द्रादि सभों ने सुनी और प्रतिबोध पाकर धर्म के प्रति विशेष निष्टावान हुये। केवली रामचन्द्र पृथ्वी में विचरण कर भव्य जीवों का उपकार करने लगे।

एक वार सीतेन्द्र ने अवधिज्ञान का उपयोग देकर लक्ष्मण और रावण को तीसरी नरक मे असह्य वेदना सहन करते देखा। सीतेन्द्र के मन में करुणा भाव आने से उन्हें नरक से निकालने के लिए जाकर कहा कि मैं तुम्हें स्वर्ग ले जाऊँगा। उन्होने कहा—हमे अपने किए हुये कर्मो को भोग लेने दो। सीतेन्द्र ने कहा—मैं आपलोगों का दुःख नहीं देख सकता, और देवशक्ति से मै सब कुछ करने में समर्थ हूं। ऐसा कह कर उसने दोनों को उठाया पर उनका शरीर मक्खन की भाँति गलने लगा। उन्होंने कहा—यहाँ देव दानव का कृत कर्मों के समक्ष जोर नहीं चलता। अन्त मे सीतेन्द्र ने उन्हें वैर विरोध त्याग कर के सम्यक्त्व में दृढ रहने की प्रेरणा करके स्वर्ग की ओर प्रस्थान किया। रावण और लक्ष्मण उपशम भाव से अपना नरकायु पूर्ण करने लगे।

एक दिन सीतेन्द्र ने भगवान रामचन्द्र केवली को प्रदक्षिणा देकर वन्दन नमस्कार पूर्वक पूछा कि लक्ष्मण और रावण नरक से निकल कर कहाँ उत्पन्न होंगे, एवं मेरे से कहा कब मिलन होगा ? तथा हमलोग किस भव मे मोक्षगामी होंगे ? रामचन्द्र ने कहा—लक्ष्मण व रावण

नरक से निकल कर विजयनगर में नंद श्रावक के पुत्र अरहद्दास और श्रीदास होंगे। फिर स्वर्गवासी होकर दान के प्रभाव से वे मर कर युगलिया रूप में पैदा होंगे। वहाँ दीक्षा लेकर तप के प्रभाव से लातक देवलोक में देव होंगे। उस समय तुम अपना आयुष्य पूर्ण कर चक्रवर्त्ती होओगे तथा वे दोनों तुम्हारे पुत्र होंगे। फिर स्वर्ग का भव करके रावण का जीव मनुष्य भव पाकर तीर्थंकर होगा। तथा तुम चक्रवर्त्ती के भव में चारित्र पालन कर वैजयंत विमान मे जाओगे और तैंतिस सागरोपम का आयु पूर्ण कर रावण के जीव तीर्थंकर के गणधर रूप मे उत्पन्न होओगे। लक्ष्मण का जीव चक्रवर्त्ती पुत्र सुकुमाल भोगरथ कितने ही भव कर पुष्करद्वीप के महाविदेहस्थ पद्मपुर में चक्रवर्त्ती और तीर्थंकर पद पाकर मोक्षगामी होगा। सीतेन्द्र केवली भगवान की वाणी सुन कर स्वस्थान लौटे। भगवान रामचन्द्र आयुष्य पूर्ण कर निर्वाण पद पाये, सिद्ध, बुद्ध मुक्त हुए।

सीतेन्द्र अपना बाईस सागरोपम का आयुष्य पूर्ण करते हुए कई तीर्थंकरो के कल्याणकोत्सवों मे भाग लेंगे। वहाँ से च्यवकर उत्तम कुल में जन्म लेकर तीर्थंकर वसुदत्त से दीक्षित होकर उनके गणधर होंगे और आयुष्य पूर्ण कर सिद्धि स्थान प्राप्त करेगें।

अन्त में गणधर गौतम स्वामी ने महाराजा श्रेणिक से कहा कि इस सीता चरित्र का श्रवण कर शील व्रत धारण करना एवं किसीको मिथ्या कलंक न देने का गुण ग्रहण करना चाहिए।

सीताराम चौपाई में प्रयुक्त राजस्थानी कहावतें

डा० कन्हैयालाल सहल

अपने ग्रन्थो मे कहावतो के प्रचुर प्रयोग की दृष्टि से राजस्थान के कवियों में कविवर समयसुन्दर का नाम सबसे पहले लिया जाना चाहिए। इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ "सीताराम चौपाई" की रचना सं० १६७७ के लगभग मे हुई। यह ग्रन्थ सरल-सुबोध भाषा मे लिखा गया है जिसमे लोक प्रचलित ढालों का प्रयोग हुआ है। सम्पूर्ण ग्रन्थ ६ खण्डों मे समाप्त हुआ है और प्रत्येक खण्ड मे सात-सात ढाल हैं। लोकोक्तियों के प्रयोग की दृष्टि से इस ग्रन्थ का विशेष महत्व है। इसमें प्रयुक्त बहुत सी कहावतें यहाँ उद्धृत की जा रही है :—

(१) ऊंघ तणइ बिछाणउ लाधउ, आहीणइ दूझाणउ वे।
मूगनइ चाउल माहि, घी घणइ प्रीसाणउ वे॥

(प्रथम खण्ड, ढाल ६, छन्द ५)

(हि० भा० ऊँघती हुई को बिछौना मिल गया।)

(२) छट्ठी रात लिख्यउ ते न मिटइ। (प्रथम खण्ड, छन्द ११)

(छठी की रात जो लिख दिया गया, वह अमिट है।)

(३) करम तणी गति कहिय न जाय। (दूसरा खण्ड, छन्द २४)

(कर्म की गति कही नहीं जा सकती।)

(४) तिमिरहरण सुरिज थका, कुंण दीवानउ लाग।

(दूसरा खण्ड, ढाल ३, छन्द १२)

(सूर्य के होते दीपक को कौन पूछे?)

(५) रतन चिन्तामणि लाभतां, कुण ग्रहइ कहउ काच।
दूध थकां कुण छासिनइ, पीयइ, सहु कहइ साच॥

(चिंतामणि मिलते, काच कौन ग्रहण करे ? दूध मिलते छाछ कौन पिए ?)

(६) भरतनइ तात किसी ए करणी, आपणी करणी पार उतरणी।
(खण्ड ३, ढाल ४, छन्द ६)

(अपनी करनी से सब पार उतरते हैं।)

(७) वालक वृद्ध नइ रोगियउ, साध वामण नइ गाइ।
अवला एह न मारिवा, मार्‍यां महापाप थाइ॥
(खण्ड ३, ढाल ७, छन्द १३)

(वालक, वृद्ध, रोगी, साधु, ब्राह्मण, गाय और अवला इन्हें नहीं मारना चाहिए क्योंकि इन्हें मारने से महापातक होता है।)

(८) महिधर राय सुखी थयो, मुँग माहि ढल्यो घीय।
विछावणों लह्यो ऊंघतां, धान पछउत्रे सीय॥
(खण्ड ४, ढाल ४, छन्द ४)

(घी विखरा तो मूँगों मे। उंघते को विछौना मिल गया।)

(९) पाचों माइं कहीजियइं, परमेसर परसाद।
(खण्ड ५, ढाल १, छन्द १)

(पंचों में परमेश्वर का प्रसाद कहा जाता है।)

(१०) साधु विचार्यो रे सूत्र कहेउ, समरथ सज्जा देई।
(खण्ड ५, पृष्ठ ८८)

(समर्थ सज़ा देता है।)

(११) लिख्या मिटइं नहिं लेख।
(खण्ड ५, ढाल ३, छन्द १)

(लिखे लेख नहीं मिटते।)

(१२) मूर्छागत थइ मावड़ी, दोहिलो पुत्र वियोगि।

(खण्ड ५, ढाल ३, छन्द ११)

(पुत्र वियोग दु सह है।)

(१३) पाछा नावइं जे मुआ।

(खण्ड ५, ढाल ३, छन्द २०)

(मरे हुए वापिस नहीं आते।)

(१४) मइ मतिहीण न जाण्यो, त्रुटइं अति घणो ताण्यो।

(खण्ड ५, ढाल ७, छन्द ४५)

(अधिक तानने से टूट जाता है।)

(१५) कीड़ी ऊपर केही कटकी।

(कीडी (चींटीं) पर कैसी फौज ?)

(१६) ए तत्व परमारथ कह्यो मइं, त्रुटिस्यइ अति ताणियो।

(खण्ड ६, ढाल १२, छन्द १२)

(अधिक ताना हुआ टूट जाता है।)

(१७)

उखाणउ कहइ लोक, पेटइ को घालइ नहीं अति वाल्ही छुरी रे लो

(खण्ड ८, ढाल १, छन्द १७)

(प्यारी (सोने की) छुरी को भी कोई पेट मे नहीं रखता।)

(१८)

खत ऊपरि जिम खार, दुख माहे दुख लागो रामनइ अति घणी रे लो।

(खण्ड ८, ढाल १, छन्द २२, पृष्ट १६२)

(घाव पर नमक, इसी प्रकार राम को दुःख मे दुःख अधिक लगा।)

(१९) छट्ठी राति लिख्या जे अक्षर कूण मिटावइ सोइ।

(छठी रात को जो अक्षर लिख दिये गये, उनको कौन मिटा सकता है ?)

(२०) आभइं बीजलि उपमा हो। (पृ० १७६)

(बादल की बिजली।)

(२१) थूकि गिलइ नहि कोइ। (खण्ड ६, ढाल ३, छन्द ११)

(थूककर कोई नहीं चाटता।)

ऊपर दी हुई सभी कहावतों के राजस्थानी रूपान्तर आज भी उपलब्ध हैं। इससे कम से कम इतना स्पष्ट है कि कविवर समयसुन्दर के जमाने मे उक्त कहावतें प्रचलित थीं। कवि ने कहावतों के साथ साथ सूक्तियो और मुहावरों का भी प्रयोग किया है। कहीं-कहीं सस्कृत सूक्तियों का अनुवाद भी कर दिया है। उदाहरणार्थ .—

"जीवतो जीव कल्याण देखइ" (पृष्ठ १०४) वाल्मीकि रामायण के "जीवन्भद्राणि पश्यति" का अनुवाद मात्र है। "सीताराम चौपाई' में यह उक्ति राम की हनुमान के प्रति है। राम हनुमान से कहते हैं कि ऐसा प्रयत्न करना जिससे सीता जीवित रहे। वाल्मीकि रामायण में आत्महत्या न करने का निश्चय करते हुए स्वय हनुमान कहते है कि यदि मनुष्य जीता है तो कभी न कभी अवश्य कल्याण के दर्शन करता है इसी प्रकार "बीसार्यो अंगीकार नहि, उतमनइ आचार" "अंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति ' का स्मरण दिलाता है। कहावत के लिए कवि ने 'उखाणउ' का प्रयोग किया है। एक स्थान पर सूत्र शब्द का प्रयोग हुआ है। कहावत भी वस्तुत. एक प्रकार का वाकसूत्र ही है।

महोपाध्याय कविवर समयसुन्दर विरचित

सीताराम चौपाई

॥ दूहा ॥

स्वस्ति श्री सुख सपदा, दायक अरिहत देव ॥
कर जोडी तेह्नइ करू , नमसकार नितमेव ॥१॥

निज गुरु चरणकमल नमु , त्रिण्ह तत्व दातार ।
कीडी थी कुजर कियउ, ए, मुझ नइ उपगार ॥२॥

समरूँ सरसति सामिणी, एक करूँ अरदास ॥
माता दीजै मुज्झ नइ, वारूँ वचन विलास ॥३॥

संबपजून (१) कथा सरस, **प्रत्येकबुद्ध** (२) प्रबन्ध ॥
नलदववन्ति (३) **मृगावती**(४), **चउपई** च्यार सबध ॥४॥

आई तु आवी तिहाँ, समर्‌या दीधउ साद ॥
सीताराम सबध पणि, सरसति करे प्रसाद ॥५॥

कलंक न दीजइ केह्नइ, वली साध नइ विशेषि ॥
पापवचन सहु परिहरउ, दुःख सीता नउ देखि ॥६॥

सील रतन पालउ सहू, जिमि पामउ जसवास ॥
सीता नी परि सुख लहउ, लाभउ लील–विलास ॥७॥

सीताराम सबंध ना, नव खंड कहीसि निबध ।
सावधान थई साभलउ, सील विना सहु धध ॥८॥

१ ढाल पहिली

राग सारंग[1], ढाल-साहेली आंबउ मउरीयउ

जंबूदीप जिहां आपे, उत्तम पुरुष नुं ठामो रे।
भरतखेत्र तिहा अति भलउ, नगर राजगृह नामो रे।

गौतम सामि समोसर्या, गिरुया श्रीगणधारो रे।
साधु संघाति परवर्या, श्रुतकेवली सुविचारो रे ।।२।। गौ०

वादिवा श्रेणिक आवियउ, द्यइ गणधर उपदेशो रे।
वाणी अमृत आविणी, निश्चल सुणइ नरेशो रे ।।३।। गौ० ।।

जोव नइ मारइ जाणिनइ,(१) कूड वोलइ वहु भगो रे (२)
परधन चोरी पापियउ (३), परस्त्री करइ प्रसगो रे (४) ।।४।।गौ०।।

राखइ परिग्रह रग सु (५), करइ वलि क्रोध विशेषो रे (६)।
मान७माया८लोभ९मनि धरइ, रात दिवस रागद्वेषो१० रे ११।। ५।।गौ०।।

वेढि करइ १२ वलि आल द्यइ (१३) करइ निंदा दिन रातो रे (१४)।
रति नइ१५अरति१६वेतउ रहइ, मायामृषा१७मिथ्यातो रे १८।।६।।गौ०।।

ए अढार पाप एहवा, जे करइ पापी जीवो रे।
भवसमुद्र माहे ते भमइ, दुःख देखइ करइ रीवो रे ।।७।। गौ०।।

वली विशेप कोई साध नइ, आपइ कूडउ आलो रे।
सीता नी परि दुःख सहइ, सबल पडइ जजालो रे ।।८।। गौ० ।।

---

१ गउडी

कर जोडी श्रेणिक कहइ, कहउ भगवन ते केमो रे ।
सुणि श्रेणिक गौतम कहइ, ए पूरब भव एमो रे ॥६॥ गौ०॥

भरतखेत्र मइ रिधिभर्यउ, नामइ नगर मृणालो रे ।
श्रीभूति प्रोहित नी सुता, वेगवती सुकमालो रे ॥१०॥ गौ० ॥

तिण अवसरि आव्यउ तिहाँ, साध सुदरसण नामो रे ।
कानन मइ[1] काउसगि रह्यउ, उत्तम गुण अभिरामो रे ॥११॥

छव्रत नी रक्षा करइ, (६) वलि छज्जीव निकायो रे (१२)
इद्री पाच आण्यां वसि, (१७) निरलोभी कहिवायो रे (१८)॥१२॥गौ ॥

क्षमावत (१६) सुभभावना, (२०) कठिनक्रिया गुणपात्रो रे (२१)
संयम योग सूधा धरइ, (२२) त्रिकरण सुद्ध सुगात्रो रे (२५)॥१३॥ गौ०

सीत तावड पीड़ा सहइ, (२६) मरणसीम[2] उपसर्गो रे (२७)
सत्तावीस गुणे करी, ओडइ करम ना वर्गो रे ॥१४॥ गौ०॥

पहली ढाल पूरी थइ, किया साध ना गुण ग्रामो रे ।
समयसुन्दर कहइ ए साध नइ, नित २ करउ प्रणामो रे ॥१५॥ गौ० ॥

[**सर्व गाथा २३**]

ट

साधु तणउ आगम सुणी, हरख्या सहु नर नारि ।
वादण आया साध नइ, हय गय रथ परिवारि ॥१॥

दीधी साधजी देसणा, ए ससार असार ।
धरम करउ रे प्राणीया, जिम पामउ भव पार ॥२॥

---

१ वन माहे २ समउ

लोक प्रससा सहु करइ, धन ए साध महत ।
उतकृष्टी रहणी रहइ, जिन सासन जयवत ॥३॥

दु ख जायइ मुख देखता, नाम थकी निस्तार ।
वछित सीझइ वादतां, ए मोटउ अणगार ॥४॥

[सर्व गाथा २७]

२ ढाल बीजी

ढाल-पुरंदर री विसेषाली*

वेगवती ते बाभणी, महामिथ्यामति मोही रे ।
साध प्रससा सही नही, जिनसासन नी द्रोही रे ॥१॥

साध नइ आल कूडउ दीयउ, पाप करी पिंड भार्यउ रे ।
फिट २ लोक माहे थई, हाहा नर भव हार्यउ रे ॥२॥ सा०॥

वेगवती मन चिंतवइ, ए मूरिख लोक न जाणइं रे ।
बांभण नइ मानइ नही, मु ड नइ मूढ बखाणइ रे ॥३॥ सा०॥

ए पाखंडी कपटीयउ, लोक नइ भामइ घालइ रे ।
सिव सासन खोटइ करइ, ते को नहिं जे पालइ रे ॥४॥ सा०॥

तउ हुँ एह नइ तिम करूँ, जिम को लोक न मानइ रे ।
आल देउ कोई एहवउ, जिमि सहु को अपमानइ रे ॥५॥ सा०॥

वेगवती इम चिंतवी, गइ-लोकां नइ पासइ रे ।
स्त्री सेती व्रत भाजतउ, मइ दीठउ इम भासइ रे ॥६॥ सा०॥

---

* श्री जिनवदन निवासिनी ए देशी

एह नहिं साध म जाणिज्यो, ए पाखडी कपटी रे ।
नगर माहि सगले ठामे ए पाप नी .ात प्रगटी रे ॥७॥ सा०॥

लोक कहइ विरता थकां, करम तणी वात देखउ रे ।
करम विटंबइ, जीव नइ, करम तणउ नहि लेखउ रे ॥८॥ सा०॥

विषयारस लुवधइ थकइ, साध अकारज कीधउ रे ।
साध नइ भु डउ भवाडियउ, कलक कूडउ सिरि दीधउ रे ॥९॥सा०

एह उड्डाह सुणी करी, साधु घणउ विलखाणउ रे ।
अनरथ मुझ थी ऊपनउ, जिन शासन हीलाणउ रे ॥१०॥ सा०॥

एह कलंक जउ ऊतरइ, तउ अन्नपाणी लेउं रे ।
नहि तरि तउं आपणा कीया, वेदनी करम हु वेउ रे ॥११॥ सा०॥

आवी सासन देवता, साध नइ सानिधि कीधी रे ।
वेगवती नइ वेदना, अति घणु सवली दीधी रे ॥१२॥ सा०॥

तुंब थयउ मुख सूजि नइ, पाप ना फल परतक्षो रे ।
करिवा लागी एहवा, वलि पछतावा लक्षो रे ॥१३॥ सा०॥

हाहा ! मइ महा पापिणी, कां दीयउ कूडउ आलो रे ।
साध समीपि जाइ करी, मेल्या बालगोपालो रे ॥१४॥ सा०॥

भो भो ! लोक सको सुणउ, मइ दीधउ आल कूडउ रे ।
परतखि मइ फल पामीया, पणि साधजी ए रूडउ रे ॥१५॥ सा०॥

ए मानभाव मोटउ जती, एह नइ पूजउ अर्चउ रे ।
जिमि ससार सागर तरउ, मन कोउ इण थी विरचउ रे ॥१६॥ सा०॥

लोक सुणी हरषित थया, सोनइ सामि न होई रे।
ए मोटा अणगार मइ, किम दूषण हुइ कोई रे ॥१७॥ सा०॥
साठी चोखा सूपडइ, छडतां ऊजला थायइ रे।
रूपइया खरा आगि मइ, घाल्यां कसमल जायइ रे ॥१८॥ सा०॥
पूजा अरचा साध नी, वलि सहु करिवा लागउ रे।
जिन सासन थयउ ऊजलउ, भरम सहू नउ भागउ रे ॥१९॥ सा०॥
वेगवती ध्रम साभली, सयम लीधउ सारो रे।
पहिलइ देवलोकि ऊपनी, देवी रूप उदारो रे ॥२०॥ सा०॥
बीजी ढाल पूरी थई, पणि परमारथ लेज्यो रे।
समयसु दर कहइ सहु भणी, साध नइ आल म देज्यो रे ॥२१॥ सा०

[सर्वगाथा ४८]

दूहा ६

तिण अवसर इण भरत मइ, मिथिलापुरी प्रसिद्ध।
विबुध विराजित जयसहित, सरगपुरी समरिद्ध ॥१॥
जनक नाम राजा तिहा, जनक समउ हितकार।
रूपइं रतिपति सारिखउ, करण समउ दातार ॥२॥
सीतल चद तणी परि, तेज तपइ जिम सूर।
इद्र सरीखउ रिद्ध करि, पालइ राज पडूर ॥३॥
वैदेही तसु भारिजा, रूपइ रभ समाण।
भगत घणु भरतार नी, राजा नइ जीवप्राण ॥४॥
इंद्राणी जिमि इद्र नइ, हरि नइ लखमी जेम।
चन्द तणइ जिमि रोहणी, राजा राणी तेम ॥५॥

तेहवइ ते देवी चवी, वेगवती नउ जीव ।
वैदेही कुखइ ऊपनी, भोगवि सुक्ख अतीव ।।६।।

अन्य जीव पणि ऊपनउ, ते सेती तिण ठामि ।
राणी जायउ वेलडउ, पुत्र पुत्री अभिराम ।।७।।

एकइ देवइ अपहर्यउ, जातमात्र ततकाल ।
पूरव भव ना वयर थी, ते बालक सुकमाल ।।८।।

श्रेणिक राजाइ पूछियउ, कुण वयर तिण साथि ।
श्री गौतम गणधर कहइ, सांभलि तु नरनाथ ।।९।।

[सर्वगाथा ५७]

३ ढाल त्रीजी

सोरठ देस सोहामणउ, साहेलडी ए देवां तणउ निवास ।।
गय सुकमालि ना चउढालिया नी ।। अथवा ।। सौभागी सुन्दर तुझ बिन
घड़ी य न जाय ए देशी

चक्रपुरइ राजा हुतउ, पूरव भव, चक्कवइ रिद्धि पभूय ।
मयणसुंदरी कुखि ऊपनी, ।।पू०।। अति सून्दरी तसु धूय ।।

त्रूटक

तसु धूय रूपइ देवकुंवरि, नेसालइ भणिवा गई
अति चतुर चउसठि कला सीखी, जोवन भर जुवती थई ।।
प्रोहित्त नउ पणि पुत्र तिहाँ कणि, मधुपिंगल नामइ भणइ
गुणगोष्ठि करता नजरि धरतां, लपटाणा प्रेमइ घणइ ।।१।।

नजरि नजरि विहुं नी मिली, ।।पू०।। जाणि साकर सुं दूध ।
मन मन सुं विहुं नउ मिल्यउ, ।।पू०।। दूधपाणी जिम सूध ।।
जिमि सुद्ध तिमि वलि जीव जीव सुं, मिल्यउ भारंड नी परि ।
कामी थकउ ऊपाडि तेह नइ, ले गयउ विद्रभापुरि ।।
काम भोग ना संयोग सगला, सुक्ख भोगवतउ रहइ ।।
विद्या हुंती ते गई वीसरि, धन विना ते दुख सहइ ।।२।।

तिहां राजा नउ पुत्र हुंतउ ।।पू०।। अहिकुडल इण नामि ।
तिण दीठी ते सुंदरी ।।पू०।। अति सुदरी अभिराम ।।
अभिराम देखी रूप सुंदर, काम विह्वल ते थयउ ।
दूतिका मुकी छल करी नइ, महुल मांहि ले गयउ ।।
सुख भोगवइ तिण साथि कुयर, चोरां विच पड्या मोर ए ।
ए देखइ नही आपणी अस्त्री, मधुपिंगल करइ सोर ए ।।३।।

राजा पासि जाइ कहइ ।पू०।। देव सुणउ अरदास ।
अस्त्री किण मुझ अपहरी ।।पू०।। तुम्हे करउ न्याय तपास ।।
तपास निरति करउ नरेसर, मुझ लभाडउ गोरडी ।
वल दूवलां नइ कह्यउ राजा, ते पखइ न सरइ घडी ।।
तिहां कुमर नउ कोइ पुरुष कपटी, मधुपिंगल नइ इम कहइ ।
मइ साधवी नई पासि दीठी, पोलासपुरि जा जिम मिलइ ।।४।।

ततखिण ते तिहांकणि गयउ ।।पू०।। जोई सगली ठाम ।
राजा पासि आव्यउ फिरी ।।पू०।। कहइ तिहां न लाभी साम ।।
कहइ तिहां न लाभइ मुझ प्रमदा, राजा सुं झगडउ कीयउ ।
राजा कहइ हुं किसु जाणु, रीस करि नइ भडकीयउ ।।

ढीका पाट करी मारइ मुहकम, नगर थी बाहिर कियउ ।
तिहां धरम सांभलइ साधु पासइ, वइरागइ संजम लियउ ॥५॥

तिहा तप कीधा आकरा ॥पू०॥ ऊपनउ सरग मझार ।
अहिकुंडल पणि एकदा ॥पू०॥ साभल्यउ जिन ध्रमसार ॥
सांभल्यउ जिन ध्रम साध पासइ, भद्रक भाव पणु धरी
ऊपनउ वैदेही उयरि ते, पुत्रयुगल पणइ करी ॥
पाछिला भव नउ वयर समरी ते वालक तिण अपहर्यउ ।
मारीसि एह नइ दुक्ख देइसि, चित्तविचार इस्यउ धर्यउ ॥६॥

झालि पगे पछाडिस्यु ॥पू०॥ वस्त्र धोबी धोयइ जेम ।
अथवा खाड उडी खणी ॥पू०॥ गाडि नइ मारिसि एम ॥
मारिसि एम हुँ वयरवालिसि, ए लहिस्यइ आपणउ कीयउ ।
इम चित्त मांहि विचार करतां दया परिणाम आवियउ ।
जिन धरम ना परसाद थी, मइ देवता पदवी लही ।
वाल नी हत्या नहि करू पणि, काइक परि करिवी सही ॥७॥

कुंडल हार पहिरावीयउ ॥ पू०॥ मुंकियउ वैताढ्य वाल ।
चन्द्रगति नाम विद्याधरइ ॥ पू० ॥ दीठउ ते ततकाल ॥
ततकाल वालक नइ उपाड्यउ, रथनेउरपुरि ले गयउ ।
असुमती आपणी भारिजा नइ, कहइ ए तुझ पुत्र थयउ ॥
हुं वाझि माहरइ पुत्र किहा थी वात समझावी कही ।
वोलजे मानुंखा सूयावडि, अन्त पन्त लेवउ नही ॥८॥

माथउ बाधि माहे सुती ॥ पू० ॥ फासू सूयावडि खाय ।
पुत्र नइ पासि सूयाडियउ ॥ पू० ॥ आणंद अगि न माय ॥

आणंद अंगि न माय पुत्र नउ, विद्याधर महुछव करइ ।
घर बारि वन्नरमाल वाधी, कुकू ना हाथा धरइ ॥
मुझ गूढगरभा गोरडीए, पुत्र जायउ इम कहइ ।
सहु मिली सूहव गीत गायइ, हीयउ हरखइ गहगहइ ॥९॥

दसूठण करि दीपतउ ॥ पू० ॥ भामडल दीयउ नाम ।
बीज तणा चद नी परि ॥ पू० ॥ कुमर वधइ तिण ठाम ॥
तिणि ठाम कुमर वधइ भली परि, सुख समाधि सु गुणनिलउ ।
श्रेणीक पूछ्यउ गौतम पूरविलउ भव एतलउ ॥
ए ढाल त्रीजी थई पूरी, वात नउ रस लीजीयइ ।
इम समयसुंदर कहइ किण सु, वयर विरोध न कीजीयइ ॥१०॥

[सर्वगाथा ६७]

दूहा ३

वैदेही राणी हिवइ, पुत्र न देखइ पासि ।
हाहा किणही अपहर्यउ. धरणि ढली नीरास ॥१॥

तत खिण मुरछागत थई, सुत नउ दुख न खमाय ।
सीतल उपचारे करी, थई सचेतन साय ॥२॥

राणी रोयइ रमवडइ*, वीसरि गयउ विवेक ।
हीयडउ फाटइ दु:ख सु, करइ विलाप अनेक ॥३॥

[सर्वगाथा ७०]

---

* रडवडइ

४ ढाल चवथी

ढाल—घरि आव रे मनमोहन घोटा ॥ एहनी ढाल

हाहा ! दैव तइ स्यु कीयु, मुझ आखि दे लीधी काढि ॥
है है ! भूसकतो नाखो भु हिं, मुझ नइ मेरु ऊपरि चाढि ॥है है॥१॥
किण पापी रे म्हारु रतन उदाल्यु, हा हा ! हुँ हिव केथी थांउ॥है०॥
कहउ हुँ हिव किण दिस जाउ, है है ! किण पा० आकणी०॥

हाथि निधान देई करी, मुझ लीधु वूसट मारि है०॥
राज देई त्रिभुवन तणु, मुझ खोस्यु का करतार ॥है०॥२॥कि०॥

गज उपरि थी उत्तारि नइ, मुझ नइ खर चाडी आज॥है०॥
राणी फेडि दासी करी, भर दरियइ भागउ जिहाज ॥है०॥३॥कि०॥

गयउ आभरण करडियउ, गयउ रतन अमूलक हार ॥है०॥
आज भूली पडी रान मइ, आज वूडी समुद्र मझारि॥है०॥४॥कि०॥

देव नइ ऊलभा किसा, मइ कीधा पाप अघोर ॥है०॥
पूरविलइ भवइ पापिणी मइ, सउकि रतन लीया चोरि॥है०॥५॥कि०

के थापणि मोसा कीया, कइ मइ दीधा कूडा आल ॥है०॥
कइ छाना ग्रभ गालिया, कइ भाजी तरु डालि ॥है०॥६॥कि०॥

कइ काचा फल त्रोडीया, कइ खणि काढ्या कद ॥है०॥
कइ मइ सर द्रह सोखीया, कइ मार्या जल जीव वृंद ॥है०॥७॥कि०॥

कइ मंइ माला पाडिया, के किउ खेत्र विनाश ॥
कइ मइ इंडा फोड़िया, कइ मृग पाड्या पाश ॥८॥है०कि०॥

कइ जीवाणी ढोल्या घडा, कइ (मइ) मारी जू लीख ।।है०।।
कइ सखारउ सोखव्यउ, कइ भाजी राकभीख ।।है०।।६।।कि० ।।

कइ तिल घाणी पीलिया, कइ कीया रागणि पास ।।है०।।
खाणि खणावी धात नी, कइ वालाव्या कास ।।है०।।१०।।कि०।।

कइ मइ दावानल दीया, कइ मइ भांज्या गाम ।।है०।।११।।कि०।।
कइ आगि दोधी हाथ सू , कइ भाज्या आराम ।।है०।।११।।कि०।।

कइ रिण भागउ केह नउ, कइ पेटि पाडी झाल ।।है०।।
कइ मइ झाला माछला कइ मइ मार्‍या वाल ।।है०।।१२।।कि०।।

कइ मइ मोड्या करडका, कइ दीधो निश्रास ।।है०।।
कइ कोई विष दे मारीयउ, कइ ढाया आवास ।।है०।।१३।।कि०

कइ वछडा दूध धावता, मा थी विछोह्या साहि ।।है०।।
के मइ बलद मुख वांधिया, वहिता गाहता माहि ।।है।।१४।।कि०

के तापस रिषि दूहव्या, मुझ नइ दीधउ सराप ।।है०।।
के साध नी निंदा करी, ए लागा मुझ पाप ।।है०।।१५।।कि०।।

इम विलाप करती थकी, वलि समझावी भूप ।।है०।।
दुक्ख म करि तु वापडी अथिर संसार सरूप ।।है०।।१६।।कि०।।

कीधा करम न छूटीयइ, सुख दुख सरिज्या होय ।।है०।।
राणी मन हठकी लीयउ, साचउ जिनध्रम सोइ ।।है०।।१७।।कि०।।

चवथी ढाल पूरी थई, ए वातन आभोग ।।है।।०।।
समयसुंदर साचु कहइ, दोहिलउ पुत्र विजोग ।।है०।।१८।।कि।।

[सर्वगाथा ८८]

दूहा ५

हिव राजा महुछव करइ, बेटी तणउ प्रगट्ट ।
दान मान दीजइ घणा, गीत गान गहगट्ट ॥१॥

कीयउ दसूठण अनुक्रमइ, भोजन विधि अभिराम ।
सकल कुटुंब सतोषीयउ, सीता दीधउ नाम ॥२॥

गिरिकदर माहि जिम रही, वाधइ चपावेलि ।
तिम सीता वाधइ सुता, नयण अमीरस रेलि ॥३॥

पंच धाइ पालीजती, सुखइ वधइ सुकमाल ।
महिला नी चवसठि कला, तिण सीखी ततकाल ॥४॥

देह १ लाज २ गुण ३ चातुरी ४, काम ५ वध्यउ रगरेलि ।
भर जोवन आवी भली, चालइ गजगति गेलि ॥५॥

[सर्वगाथा ६३]

५ ढाल पांचवीं

ढाल—नणदल बिदली री

सीता अति सोहइ, सीतातउ रूपइ रूडी ।
जाणे अम्बा डालि सूडी हो ॥सी०॥
वेणी सोहइ लावी, अति स्याम भमरकडि आवी हो ॥सी०॥
मुख ससि चांद्रणउ कीधउ, अधारइ पासउ लीधउ हो ॥१॥सी०॥
राखडी सोहइ माथइ, जाणे सेष चूडामणि साथइ हो ॥सी०॥
ससिदल भाल विराजइ,विचि बिंदली सोभा काजइ हो ॥२॥सी०॥

नयनकमल अणियाला, विचि कीकी भमरा काला हो ।।सी०।।
सूयटा नी चाच सरेखी, नासिका अति ञीखी निरखी हो ।।३।।सी०।।

नकवेसर तिहा लहकइ, गिरुया नी सगति गहकइ हो ।।सी०।।
काने कु डल नी जोडी, जेह नउ मूल लाख नइ कोडी हो ।।४।।सी०।।

अधर प्रवाली राती, दत दाडिम कलिय कहाती हो ।।सी०।।
मुख पु निम नउ चदउ, तसु वचन अमीरस विंदउ हो ।।५।।सी०।।

कंठ कदलवली त्रिवली, दक्षणाव्रत सख ज्यु सवली हो ।।सी०।।
अति कोमल बे बांहां, रत्तोपल सम कर तांहां हो ।।६।। सी०।।

घण थण कलस विसाला, ऊपरि हार कुसम नी माला हो ।।सी०।।
कटि लक केसरि सरिखउ, भावइ कोइ पडित परिखउ हो ।।७।। सी०।।

कटि तट मेखला पहिरी, जोवन भरि जायइ लहरी हो ।।सी०।।
रोम रहित वे जघा हो, जाणे करि केलि ना थभा हो ।।८।।सी०।।

उन्नत पग नख राता, जाणे कनक कूरम बे माता हो ।।सी०।।
सीता तउ रूपइ सोहइ, निरखता सुर नर मोहइ हो ।।९।।सी०।।

कवि कल्लोल नही छई, ए ग्रथे वात कही छई हो ।।सी०।।
जोवन वय मन वालइ, रूपवत हुई सील पालइ हो ।।१०।।सी०।।

ए वात नी अविकाई, कुरूप नी केही वडाई हो ।।सी०।।
सील पालइ ते साचा, सीलवंत तणी फुरइ वाचा हो ।।११।।सी०।।

पांचमी ढाल ए भाखी, इहां (सीता) पदमचरित छइ साखी हो ।।सी
समयसु दर इम वोलइ, सीता नइ कोइ न तोलइ हो ।।१२।।सी०।।

[सर्वगाथा ।१०५।]

दूहा ३

जोवन वय सीता तणउ, देखी जनक नरेस ।
भणइ सुमति मुहता भणी, देखउ देस प्रदेश ॥१॥
कोइ वर सीता सारिखउ, रूप कला गुण जाण ।
हुइ तउ कीजइ नातरउ, पच्छइ भाग प्रमाण ॥२॥
कर जोडी मुहतउ कहइ, वर जोयउ छइ वग्ग ।
सखर सोना नी मुद्रड़ी, ऊपरि जाणे नग्ग ॥३॥

[सर्वगाथा १०८]

६ ढाल छट्ठी

॥ राग गउडी जाति—जकडी नी विसेषाली ॥

नगरी अयोध्या इहा थी ढूकड़ी कहाई वे ॥
रिषभ ना राजकाजि धनदइ नीपाई वे ॥
धनदइ नीपाई नगरी साइ दसरथ नाम छइ भूप नउ ॥
पुत्र पदम नामइ नारि अपराजिता नी कुखि उपनउ ।
अति सूरवीर महा पराक्रमी, दान गुण करि दीपतउ ॥
अति रूपवत महा सोभागी, शत्रु ना दल जीपतउ ॥१॥

जेह नइ लहुहड़ु भाई लखमण कहीजइ वे ।
सुमित्रा राणी नउ बेटउ वलवत सुणीजइ वे ॥
वलवत सुणियइ मात दीठा सुपन आठ मनोहरू ॥
आठमउ ए वासुदेव उत्तम चक्रादिक लक्षण धरू ॥
अत्यत वल्लभ रामचद्र नइ वे वाघव वीजा वलो ।
केकेई ना सुत भरत सत्रूघन बेऊ अति महावली ॥२॥

एहवे काघोघर भाइ ए परिवर्यउ सोहइ,वे ।
बलदेव आठमउ रामचंद मनमोहइ,वे ॥
मनमोहइ वे रामचंद वर, ए योग्य छइ सीता भणी ।
रजियउ राजा मंत्रि वचने, वात कही सोहामणी ।
मुंकिया माणस राय दशरथ, भणी कहई अवधारियइ ।
कीजीयइ सगपण राम नइ, सीता कन्या परिणावियइ ॥३॥

पहिलु पणि प्रीति हुँती तुम्ह सेता अम्हारइ वे ॥
वलीय विशेषइ वाधइ सगपणइ तुम्हारइ वे ॥
सगपणइ वाधइ प्रीति अधिकी, पच्छिम दिन जिम छांहडी ।
घटा शवद जिम जाइ घटती, ओछा माणस प्रीतडी ॥
हरषियउ भूपति भणइ दशरथ, वात जुगती कही तुम्हे ।
माग्या ढल्या एहीज सगपण, करणहार एहुंता अम्हे ॥४॥

उंघतइ विछाणउ लाधउ, आहीणइ वूझाणउ वे ॥
मुग नइ चाउल माहि, घी घणउ प्रीसाणउ वे ॥
घी घणउ प्रीसाणउ दूध मांहि, सखर साकर भेलवी ।
घृतपूर ऊपरि घणउ बूरउ, जीमता मन नी रली ॥
चालता डावी देवी बोली, पइसता जिमणउ हुयउ ॥
ए कीयउ सगपण कहउ जइ नइ, वीवाह नउ मुहरत जुयउ ॥५॥

नातरउ सावतउ करि ते नर आया वे ।
राजा नइ राणी नइ सगला सरूप जणाया वे ।
सगला सरूप जणावीया नइ, सीता पणि हरखी घणु
हार विचि पदक मिल्युं मनोहर, भाग वडु सीता तणु

ए ढाल छट्ठी थई पूरी, समयसुंदर इम कहइ ॥
सवध स्त्री भरतार नउ ए, सको वखत लिख्यउ लहइ ॥६॥

दूहा १० [सर्वगाथा ११४]

तिरण अवसरि नारद मुनी, पहिरण वलकल चीर ।
माथइ मुगुट जटा तरणउ, हाथि कमडलु नीर ॥१॥
सीता नउ रूप देखिवा, आयउ गति अभ्रात ।
देखी रूप बीहामरणउ, सीता थइ भयभ्रात ॥२॥
घर माहे नासी गई, नारद कीधी केडि ।
दासी रोक्यउ बाररणउ, गल ग्रहि नाख्यउ गेडि ॥३॥
भांड विगोयउ माडियउ, दासी सु निरभीक ।
पीट्यउ काठउ पोलिए, दे भाभी भ्रम ढीक ॥४॥
नारद सबलउ कोपियउ, ऊडि गयउ आकासि ।
दुख देवउ सीता भरणी, वीजी किसो विमासि ॥५॥
वेगि गयउ वेताढ्यगिरि, जिहा रथनेउर भूप ॥
भामंडल आगइ धर्‌यउ, लिखि सीता नउ रूप ॥६॥
रूप देखि विह्वल थयउ, जाग्यउ काम विकार ।
नारद नइ पूछ्‌यउ नमी, ए केहनउ अरणुहार ॥७॥
के देवी के किनरी, के विद्याधरि काइ ॥
कहइ नारद ए को नही, ए नारी कहिवाइ ॥८॥
जनकराय मिथला धरणी, वैदेही तसु नारि ॥
सीता पुत्री तेह नी, अपछर नउ अवतार ॥९॥
बहिनि पुरण जारणइ नही, हा हा ! धिग अगन्यान ।
हीयइ न जारणइहित अहित, जिम पीधइ मदपान ॥१०॥

[सर्वगाथा १२४]

७ ढाल सातमी

॥ जाति त्राटक वेलिनी ॥ राग—आसावरी ॥

भामंडल नइ भोजन पाणी, भावइ नहिय लगार ।
रात दिवस रहइ आमणदूमणउ, कहइ हे हे करतार ॥
तज्या वलि रामति खेल तमासा, स्नान मजन अधिकार ।
नाठी नीद नाखइ नीसासा, ऐ ऐ काम विकार ॥१॥

बाप कहइ तुं साभलि वेटा, सकति घणी छइ मुज्झ ।
दाव उपाय करी नइ सीता, परिणावीसि हुं तुज्झ ।
मनगमती वातइ भामंडलि, वलि आण्यउ मन ठाम ।
चद्रगत्ति विद्याधर चीतवइ, किम थास्यइ ए काम ॥२॥

जउ हु तिहा जाइ नइ मागिसि, तउ दीसइ नहि वारू ।
खेचर आगइ भूचर कासुं, महुत दीजइ किण सारू ।
दूरि थकां मागीसि कदाचित, तउ नहिं द्यइ अहकारी ।
मान भगउ हुस्यइ तउ माहरउ, कीजइ काम विचारी ॥३॥

वेगि विद्याधर तेडि चपल गति, मुक्यउ मन हुलास ।
जा मिथला नगरी तुं छलि करि, आणि जनक मुं पास ॥
कीधुं रूप तुरंगम तेणइ, लोक नइ पाड्यउ त्रास ।
रूपवत देखी नइ भूपइ, आण्यउ निज आवास ॥४॥

मास सीम राख्यइ रूडि परि, आणद अगि उच्छाहे ।
इक दिन ते उपरि चडि राजा, पहुतउ वनखड माहे ॥[

घोडउ उडि गयउ आकासइ, जनक नइ मु क्यउ तेथि ।
चंद्रगत्ति विद्याधर अपणउ, सामी वइठउ जेथि ॥५॥

आदर देइ कहइ विद्याधर, मत डर मन मइ आणे ।
छलकरि नइ ज्याणउ छइ इहाँ तु, पणि मुझ वचन प्रमाणे ॥
भामडल बेटा नइ आपउ, आपणी सीता कन्या ।
आग्रह करि मांगा छां एतउ, वात नही का अन्या ॥६॥

दसरथराय तणउ सुत कहियइ, रामचद परिसिद्ध ।
पहली सीता दीधी तेह नइ, हिवए वात निषिद्ध ॥
ते सरिखउ नर आज न कोई, रूपवत बलवत ।
विद्याधर सगला मिलि आया, जनक नइ एम कहत ॥७॥

भो ! भो ! खेचर आगइ भूचर जाणे कीड पतग ।
विद्याधर विद्यावलि अधिका, वात म ताणि एकग ।
अथवा अछता पणि गुण भाखइ, रागी माणस रागइ ।
गुण फेडी नइ अवगुण दाखइ, दोषी लोका आगइ ॥८॥

कहइ विद्याधर[1] केहउ झगडउ, एह प्रतिज्ञा कीजइ ।
देवताधिष्ठित धनुष चढावइ, राम तउ सीता दीजइ ॥
सगला मिलि आया विद्याधर, मिथिलापुर आराम ।
हाथ वाथ हथियारे पूरा विद्यावल अभिराम ॥६॥

जनकराय आयउ अपणे घरि, पणि मन मइ दिलगीर ।
सहु विरतांत कह्यउ राणी नइ, पणि सीता मन धीर ॥

१. चन्द्रगति

वीस दिवस नी अवधि बदी छइ जउ राम धनुष चढावइ ।
तउ सीता परणइ नहितरि तउ विद्याधर ले जावइ ।।१०।।

सीता कहइ म करउ को चिंता वर ते रामज होस्यइ ।।
छट्ठी रात लिख्यउ ते न मिटइ माम विद्याधर खोस्यइ ।।
गाम वाहिर धरती समरावी धनुषमंडप तिहां मंड्यउ ।।
दसरथ तुरत तेडायउ आयउ निज अभिमान न छड्यउ ।।११।।

लखमण राम भरत सत्रूघन सहु साथि परिवार ।
मेघप्रभ हरिवाहन वीजां राजां नउ नहि पार ।।
आगति स्वागति घणु सतोख्या वइठा मडप पासे ।।
खलक लोक मिली नइ आया देखण तेथि तमासे ।।१२।।

तिण अवसरि आवी तिहां सीता कीधा सोल सिंगार ।
सुंदर रूपइ सातमय कन्या तेह तणउ परिवार ।।
धावि मात कहइ सुणि हो पुत्री ए वइठा राजान ।
ए लखमण ए राम भरत ए सत्रूघन बहुमान ।।१३।।

ए मेघप्रभु ए हरिवाहन ए चित्तरथ भूपाल ।
तुझ कारणि ए मिल्या विद्याधर जिण मांड्यउ जंजाल ।।
मत्री वोल्यउ सकत्ति हुयइ ते एह धनुप नइ चाडउ ।
सीता परणउ नहितरि इहा थी भीड सहू को छांडउ ।।१४।।
अभिमानी राजा के ऊठ्या धनुष चढ़ावा लागा ।
वलती आगि नी झाला ऊठी ते देखी नइ भागा ।।
अति घोर भुजंगम अट्टहास पिशाच उपद्रव होई ।
रे रे रहउ हुँसियार आंपानइ कूड मांड्यउ छइ कोई ।।१५।।

आंपणइ काम नही छइ कोई कहइ सहु को विलखाणा ।
घर नी बइयरि सरिसइ वरिस्यइ फोकट चित्त लोभाणा ॥
लाख पायउ जउ जीवतां जास्या वहु जोती हुस्यइ वाट ।
रामचंद्र उठ्यउ अतुलीवल सीह सादुला घाट ॥१६॥

विद्याधर नर सहु देखता रामइ चाढ्य उ चाप ।
टकारव कीधउ ताणी नइ प्रगट्यउ तेज प्रताप ॥
धरणी धूजी पर्वत कांप्या सेषनाग सलसलिया ।
गल गरजा रव कीधउ दिग्गज जलनिधि जल ऊछलिया ॥१७॥

अपछर बीहती जइ आलिग्या आप आंपणा भरतार ।
राखि राखि प्रीतम इम कहती अम्ह नइ तु आधार ॥
आलान थंभ उथेडी नाख्या गज छूट मयमत्त ।
वंधन त्रोडि तुरंगम नाठा खलबल पडीय तुरन्त ॥१८॥

उपसांत थया खिण मइ उपद्रव वरत्या जय जय कार ।
देव दुदभि आकासइ वाजी पुष्पवृष्टि परकार ।
सीता पणि हरषित थइ पहुती राम समीप सलज्ज ॥
वीजउ धनुप चडायउ लखमण विद्याधर अचरिज्ज

विद्याधर रंज्या गुण देखी सवल सगाई कीधी ।
रूपवत अट्ठारह कन्या रामचद नइ[1] दीधी ॥
विद्याधर किन्नर सुर सहु को पहुता निज निज ठाम ।
पाणीग्रहण करायउ राम नइ सीधा वछित काम ॥२०॥

---

१. लक्ष्मणाय दत्ता

रंलीय रंग सु'वीवाह कीधउ दायजउ भाभउ दीधउ ।
संतोखी नइ सहु सप्रेड्या जनक घणउ जस लीधउ ॥
पुत्र सहु परिवार सु दसरथ नगर अयोध्या पहुंतउ ॥
सातमी ढाल कहइ अति मोटी समयसु दर गहगहतउ ॥२१॥

पहिलउ खड थयउ ए पूरउ सात ढाल सुसुवाद।
जुगप्रधान जिणचद प्रथम शिष्य सकलचंद सुप्रसाद ॥
गछ नायक जिनराज सूरीसर भट्टारक वडभाग ।
समयसु'दर कहइ सील पालतां वाधइ जस सोभाग ॥२२॥

[सर्वगाथा १४६]

इति श्री सीतारामप्रबंधे सीतावीवाह
सीतारूपवर्णनो नाम प्रथम खडः ॥१॥

द्वितीय खण्ड

॥ दूहा ॥

हिव बीजउ खड बोलस्यु, विहु वावइ बहुप्रेम ।
सानिधि करिजे सरसती, जोडु वेगउ जेम ॥१॥

सीताराम सभागिया, भोगवइ भोग सयोग ।
लीला ना ए लाडिला, घणु बखाणइ लोग ॥२॥

श्रावक नउ सूधउ धरम, पालइ दसरथराय ।
अट्ठाई महुछव करइ, जिणवर देहरे जाइ ॥३॥

जिण मज्जण करिवा भणी, महुछव देखण काजि ।
तेडावी अतेउरी, सगली सगलइ साजि ॥४॥

माणस मुंक्या जू जुय, तेडण भणी तुरत्त ।
सहु आवी अतेउरी, भगवत करण भगत्ति ॥५॥

राजानर मुक्यउ हुतउ, पणि न गयउ किण हेति ।
पटराणी आवी नही, झूरि मरइ रही तेथि ॥६॥

१ ढाल पहली

कइयइ पूजि पधारिस्यइ, ए गीत नी ढाल

पटराणी इम चिंतवइ, जोयउ २ रे राजा नी वात ।
नवजुवान अंतेउरी, तेडी २ रे मन मांहि सुहात ॥१॥

वीसारी मु नइ वालहइ, हुं मरिस्यु रे करिस्यु आंपघात ।
घूडि जीव्यु हिव माहरु, मइ तउ इवडु रे दुख सह्यु न जात ॥२॥वी०॥

हु गरढी वूढी थयइ न सुहाणी रे राजा नइ तेणि ।
पण न गणयउ मुझ कायदउ सू स लीधउ रे अन्न पाणी लेणि ॥३॥वी

कुजस थयां जीवइ जिकै, वलि जीवइ रे पराभव दीठ ।
वाल्हेसर थीवीछड्यां, जे जीवइ रे ते माणस धीठ ॥३॥

राणी कोपातुर थकी, लेवा मांडी रे जेहवइ गलइ पासि ।
हाहाकार हुयउ तिस्यउ, रोयइ पीटइ रे पासइ रही दासि ॥५॥ वी०

राय कोलाहल साभली, द्रउडो आव्यउ रे राणी नइ संगि ।
हाहा ए तु स्यु करइ, ताणी लीधा रे आंपणइ उछंगि ॥६॥ वी०

तु कोपी किण कारणइ, राय पूछइ रे आग्रह करी जाम ।
परमारथ राणी कहइ, ते आयउ रे नर तेडण ताम ॥७॥ वी०॥

तेउ परि राजा कुप्यउ, कहइ मउडउ रे तु आव्यउ केम ।
जरा करी थयउ जाजरउ, ऊजातउ रे हुं नाव्यउ तेम ॥८॥ वी०।

कुण भगिनी कुण भारिजा, कुण नाता रे कुण वाप नइ वीर ।
वृद्धपणइ वसि को नही, पोतानु रे जे पोष्यु सरीर ॥९॥ वी०।

पाणी झरइं बूढापणइं, आंखि माहि रे वरइ धू-धलि छाय ।
काने सुरति नही तिसी, वोलता रे जीभ लडथडि जाय ॥१०॥ वी०॥

हलुया पग वहइ हांलता, सूगाली रे मुहडइ पडइ लाल ।
दांत पडइ दाढ उखडइ, वलि माथइ रे हुयइं धउला बाल ॥११॥वी०॥

कडि थायइ वलि कूवडी, वलि उची रे उपडइ नहि मीटि ।
सगलइ डीलइ सल पडइ, नित आवइ रे वलि नाके रीटि ॥१२॥ वी०

हाल हुकम हालइ नहीं, कोई मानइ रे नहि वचन-लगार ।
धिग बूढापन दीहडा, कोई न करइ रे मरतां नी सार ॥१३॥ वी०

वृद्ध वचन इम सांभली, राजा नउ रे आव्यउ सवेग ।
साच कह्यउ इण डोकरइ, ए छोडु रे ससार उदेग ॥१४॥ वी०॥

कुटु ब सहू को कारिमउ, आऊखउ रे अति अथिर असार ।
हिव काइ आतम हित करू, हुं लेउं रे सयम नउ भार ॥१५॥

वीजा खड तणी भणी, ए पहिली रे मइ ढाल रसाल ।
समयसुंदर कहइ ध्रम करउ, नहि थायइ रे वूढा ततकाल ॥१६॥वी०

[सर्व गाथा २२]

दूहा ६

इण अवसरि उद्यान मइ, चउनाणी चित ठाम ।
साध महांतस मोसर्या, सर्वभूतहित नाम ॥१॥

साध तणउ आगम सुणा, पाम्यउ परमाणंद ।
हय गय रथ सु परिवर्यउ, वांदण गयउ नरिंद ॥२॥

त्रिण्ह प्रदक्षिण दे करी, वाद्यउ साध महात ।
जनम २ ना दुख गया, रिषि दरसण देखत ॥३॥

इम सोचा करता परभाति । गई उद्यान श्रीराम सघाति ।
दसरथ राजा पण तिहा आयउ, चन्द्रगति रिखि देखी सुख पायउ॥१४॥

साधु वादी नइ पुछयई एम । चन्द्रगति दीक्षा लीधी केम ।
मुनि कहइ भामण्डल नी वात । इह भव पर भव ना अवदात ॥१५॥

सहु लोके जाण्यु निसन्देह । जनक नउ पुत्र भामण्डल एह ।
वहिनी जाणी नइ पाए लागउ, सीता मिली सोइ ए दुख भागउ ॥१६॥

पइसारउं करि नगर मइ आण्यउं । रामइ सगपण साचउ जाण्यउ ।
भामण्डल मुकरिय विचार । मुक्यउ पवन गति खेचर सार ॥१७॥

मिथिला जाइ वधाई दीधी । जनकइ आभ्रण वगसीस कीधी ।
जनक राजा वैदेही वेई । विमान बइसारि तिहां गयउ लेई ॥१८॥

जनकइ भामण्डल नइ निरख्यउ । पुत्र नइ हे जइ हीयमउ हरख्यउ ।
मां वाप चरणे नाम्यउ सीस । वैदेही मनि पूगी जगीस ॥१९॥

हरखइ मा खोलइ वैसाखउ । माथउ चुम्बि बेठउ नाम सार्यउ ।
पूछयउ मा वाप वात विचार । आमूल चूलकह्यउ परकार ॥२०॥

मा वाप पुत्र पुत्री सहु मिलियां । पुण्य प्रमाणि हुंयां रंगरलिया ।
दशरथ आग्रह करि पंच राति । जनक अयं ध्या रह्यउ सिवताति ॥२१॥

भामण्डल लेई नइ साथि । आयउ जनक मिथिला जिहा आथि ।
पुत्र प्रवेस महोछव कीधउ । दान दुनी लोका नइ दीधउ ॥२२॥

भामण्डल रहि केइक दीह । मा वाप सीख लेई नइ अवीह ।
रथनेउर गयउ आपणइ गामि । मन वछित भोगवइ सुख कामि ॥२३॥

बीजा खण्ड तणी ढाल बीजी । सुणतां धरम सू भीजइ मीजी ।
समयसुन्दर कहइ सहु समझाय । करम तणी गति कहिय न जाय ॥२४॥
[सर्व गाथा ५५]

दूहा १५

दसरथ राजा एकदा जाग्यउ पाछिलि राति ।
चित माहे इम चिन्तवइ वड वयराग नी बात ॥१॥

धन्य विद्याधर चन्द्रगति जिण त्रिण ज्यु तज्यउ राज ।
सयम मारग आदर्यउ सारचा आतम काज ॥२॥

मन्दभाग्य हूँ मूंढमति खूतउ माहि कुटुम्ब ।
करी मनोरथ व्रत तणउ अजी करू विलम्ब ॥३॥

धरम विलम्ब न कीजीयइ खिण २ त्रूटई आय ।
आखि तणइ फरूकडइ घडी घरु थल थाय ॥४॥

रामचन्द्र नइ राज दे सहु पूछी परिवार ।
सयम मारग आदरू जिम पामु भव पार ॥५॥

इम चिन्तवतां चित्त मइ प्रगट थयउ परभात ।
सकल कुटब मेली करी कही राति नी बात ॥६॥

कुटब सहु को इम कहइ तुम्ह विरहउ न खमाय ।
तउ पणि ध्रम करतां थका कु ण करइ अन्तराय ॥७॥

राम राज नइ योग्य छइ पग नउ वडउ सकज्ज ।
वलि चित आवइ राजि नइ तेह नइ दीजइ रज्ज ॥८॥

जितरइ दसरथ रामनइ राज द्यइ देखि वखत्त ।
तितरइ केकेई गई राजा पासि तुरत्त ॥९॥

साध कहइ ध्रम सांभलउ, ए संसार असार।
जनम मरण वेदन जरा, दुखु तणउ भंडार ॥४॥

काचउ भाडउ नीर करि, जिण वेगउ गलि जाय
काया रोग समाकुली, खिण मइ खेरू थाय ॥५॥

बीजलि नउ झबकउ जिस्यउ, जिस्यउ नदी मउ वेग।
जोवन वय जाणउ तिस्यउ, ऊलट वहइ उदेग ॥६॥

काम भोग सयोग सुख, फलकि पाक समान।
जीवित जल नउ बिंदुयउ, सपद संध्यावान ॥७॥

मरण पगा मांहि नित वहइ, साचउ जिन ध्रम सार।
सयम मारग आदरउ, जिम पामउ भव पार ॥८॥

साध तणी वाणी सुणी, आयउ अति वैराग।
घरि आवी राजा जोयइ, व्रत लेवा नउ लाग ॥९॥

[सर्वगाथा ३१]

२ ढालबीजी

जातिजत्तिनो। वली;तिमरी पासइ वडलु गाम एहनी ढाल ॥
वलो। प्रत्येक बुद्धना। त्रीजा खंड नी आठमी ढाल।
जंबू द्वीप पूरव सुविदेह ॥ एहनी ढाल

एहवइ भामण्डल सुणी वाणि। रामइ सीता परणि प्राणि ॥
मुझ जीवित नई पडउ धिक्कार, जउ मुझ नही सीता घरि नारि ॥१॥

तउ हूं ले आवि सीकर जोर। कटक करी चाल्यउ अति घोर।
विचमई विदर्भा नगरी आवी। ए दीठी हूंती किण प्रस्तावि ॥२॥

ईहापोह करता ध्यान । ऊपनउ जाती समरण न्यान ।
हा हा हूँ भगिनी मु लुधउ । इम वयराग धरी प्रतिवुधउ ।।३।।
कटक लेई नइ पाछउ वलियउ । घरि आव्यउ सहु सताप टलियउ ।
चन्द्रगति वाप पूछई एकान्त । भामण्डल कहई निज विरतान्त ।।४।।
हू पाछिलई भवि नउ तात । अहिकुण्डल मण्डित सुविख्यात ।
अपहरी वाभण नी मई भज्जा । कामातुर थकइ नाणी लज्जा ।।५।।
हूँ मरी नई थयऊ जनक नउ पुत्र । सीता सहोदर वेडलइ अत्र ।
देवता अपहर्यउ वयर विसेष, तुम्हें सुत कीधउ मिटइ नहि लेख ।।६।।
मइ अगन्यानइ वाछी सीता । हिवपाछिलो वात आवी चीता ।
हा हा हुं थयउ अगन्यान अध । मइ माहरउ कह्यउ एह सम्वन्ध ।।७।।
ए विरतान्त सुणी नई राय । अथिर ससार थी विरतउ थाय ।
भामण्डल नइ दीधउ राज । तिहा थी चाल्यउ ले सहुसाज ।।८।।
आयउ अयोध्या नगरि उद्यान । तिहां दीठा मुनिवर ध्रमध्यान ।
साधु वादी नई एम पयपइ । जनम मरण ना भय थी कंपइ ।।९।।
तारि हो साधजी मुझ नइ तारि । दे दीक्षा भव पार उतारि ।
चन्द्रगति राय नइ दीधी दीक्षा । सीखावी साधजी वेहुं शिक्षा ।।१०।
भामण्डल महिमा करइ सार । याचक नइ द्यइ दान अपार ।
जनक पिता वैदेही मात । सुन्दर रूप जगत विख्यात ।।११।।
चिरजीवे भामण्डल भूप । भाट भाखइ आसीस अनूप ।
राति सूती थकी सयन मझार । सीता विरुद सुण्या सुविचार ।।१२।।
चितवई ए कुण जनक नउ पुत्र । अथवा मुझ वाधव सु पवित्र ।
अपहरि गयउ ते हनइ तउ कोई, इहां किहां थी आवइ वलि सोई।।१३।।

चित माहे इह चिंतवइ मुझ वेटा नइ राज ।
जउ होयइ नउ अति भलउ सीझई वंछित काज ॥ १० ॥

अति वलवन्त महा सकज लखमण नइ वलि राम ।
राज करी सकइ किहा थकी एह थकां नहि ठाम ॥ ११ ॥

इण नइ वाँछइ लोक सहु ए दीपता अथाग ।
तिमिर हरण सूरिज थका कुण दीवा नउ लाग ॥ १२ ॥

रतन चिन्तामणि लाभता कुंण ग्रहइ कहउ काच ।
दूध थकां कुंण छासि नइ पीयइ सहु कहइं साच ॥ १३ ॥

लापसि छाड़ि नइ लिहंगटउ खायइ कुण गमार ।
कूरी कारणि कुण नर तजइ जु गन्ध उजारि ॥ १४ ॥

तउ वर मागीसि माहरउ थापणि लेत न खोडि ।
आपण प्रियु नइ इम कहइ केकेइ राणी कर जोडि ॥ १५ ॥

[सर्वगाथा ७

३ ढाल त्रीजी

रागआसाउरी सोधूडउ मिश्र चरणाली चामंड रणि चडइ ।
चख करी राता चोलोरे विरती दाणव दल विचि ।
घाउ दीधइ घमरोलो । चरणाली चा० एहनी ढाल ॥

केकेइ राणी वर मागइ । आपउ प्रीतम आजो रे ।
देसउठउ द्यइ राम नइ । भरत भणि द्यइ राजो रे ॥ १ ॥ के० ॥

वर नी वात सुणी करी । दसरथ थयउ दिलगीरो रे ।
राज मांगइ राणी सही । वात तणउ ए हीरो रे ॥ २ ॥ के० ॥

किम दिवरायइ भरत नइ। राम थका ए राजो रे।
अणदीधी पणि नहि रहइ। मुज्झ प्रतिज्ञा आजो रे ॥३॥ के०॥

कहउ केहि परि कीजियइ। वे तट किम सचवायारे।
इणगी वाघ इहां खाई। केही दिस जव रायो रे ॥४॥ के०॥

तउ पणि वाचा आपणी। पालइ साहस धीरो रे।
जीवित पणि जातउ खमइ। केहइ गानि सरीरोरे ॥५॥ के० ॥

वर दीधउ राणी भणी। पणि मन मइ दिलगीरो रे।
इण अवसरि आव्यउ तिहा। राम पिता नइ तीरो रे ॥७॥ के०॥

तात ना चरण नमी कहइ। का चिन्तातुर आजो रे।
आगन्या जिण मानी नहि। तेसू कहेउ काजो रे ॥८॥ के०॥

किवा देस को उपद्रव्यउ। के राणी कीयउ किलेसो रे।
के किण सुत न कह्यउ कीयउ। के कोइ वात विसेसोरे ॥८॥ के ० ॥

के जउ कहिवा सरिखू हुयइ। तउ मुझ नइ कहउ तातो रे।
कहइ दसरथ पुत्र तुझ थी कू ण अकहणी वातो रे ॥९॥ के०॥

पुत्र तइं कारण जे कह्यौ। ते माहे नहि कोयो रे।
पणि केकइ वर मागइ। कह्यउ परमारथ सोयो रे ॥१०॥ के॥

राम कहइ राज वीनवउ। वर दीधउ तुम्हे केमो रे।
सुणि तु पुत्र दसरथ कहइ। जिमि धुरि थी थयउ तेमो रे ॥११॥ के०॥

एक दिवस नारद मुनी आव्यउ अम्हारइ पासो रे।
कहइ लकापति पूछियउ। एक निमित्ति उलासो रे ॥१२॥ के०॥

हूँ लकागढ नउ धणी । समुद्र खाइ चिहु पासो रे ।
जगसिरि अक्षर जे लिखइ । ते माहरइ घरि दासो रे ॥१३॥ के॥

देवता पणि डरता रहइ । नवग्रह कीधा जेरो रे ।
हूतउ त्रैलोक्य कटकी । को नहि मुझ अधिकेरो रे ॥१४॥ के०॥

भाई विभीषण सारिखा । पुत्र वली मेघनादो रे ।
वइरी मारि प्रलय किया । तेज तणी परसादो रे ॥१५॥ के०॥

हू रावण राजा वड़उ दसमाथा छइ मुज्झो रे ॥
हू पणि बीहूँ जेह थी तै सूझइ को तुज्झो रे ॥१६॥ के०

वोल्यउ तुरत निमित्तियउ । जाणी मोटउ डर जगो रे ।
दसरथ नां वेटां थकी । जनक सुता परसगो रे ॥१७॥ के०॥

वात सुणी विलखउ थयउ । तेड्यउ विभीखण वेगो रे ।
जा दसरथ नइ जनक नइ । मारि टलइ ज्यु उदेगो रे ॥१८॥ के०॥

हूं तुम पासइ आवीयउ । तिहा सुण्यउ एह प्रकारो रे ।
साह मीना सगपण भणी । तुम्हे रहिज्यो हुसियारो रे ॥१९॥ के०॥

जनक नइ पणि इम हिज कहि । नारद गयउ निज ठामो रे ।
गुप्त मंत्र करि मन्त्रि सु । हू छोड़ी गयउ गामो रे ॥२०॥ के०॥

मुझ मूरति करि लेपनी । वइसारी मुझ ठामो रे ।
जनक नइ पणि इम हिज कीयउ आंप रक्षा हित कामो रे ॥२१॥ के०।

आ विभीषण एकदा । दीधउ खड़ग प्रहारो रे ।
वे मूरति भांजी करी । उतर्यउ अम्ह नउ भारो रे ॥२२॥ के०॥

त्रीजी ढाल पूरी थइ । बुद्धि फली विहुं रायो रे ।
समयसुन्दर कहइ श्रम करउ । जिम टलइ अलि अन्तरायो रे ।२३॥के०॥

[सर्वगाथा ६३]

दूहा ४

हूं तिहांथी फिरतउ थकउ, पृथिवी मांहि अपल्ल ॥
कौतुक मंगल नगर मइ, आयउ एकल मल्ल ॥१॥

सुभमति रायनी भारिजा, पृथिवी कूखि उपन्न ।
केकेइ नामइ तिहां, कन्या एक रतन्न ॥२॥

संवरा मंडप माडियउ, वइठा वहु राजान ।
हूं पणि तिहाछानउ थकउ, वइठउ एकइ थान ॥३॥

रूपवन्त कन्या अधिक, चउसठ कला निधान ।
सोल शृङ्गार सजि करी, आवी भर जूवान ॥४॥

[सर्वगाथा ६७]

ढाल चौथी

देसी—वरसालउ सांभरइ, अथवा—हरिया मन लागो

एतउ कुमरी सहुनइ देखती, वहि आवि माहरइ पासिरे ॥
केकेइ वर लाधउ । तू साभलि वेटा एमरे । के०
एतउ मुझ नइ देखि मोहि रही, मृगली जाणें पडी पासिरे ॥१॥के०॥
एतउ भ्रू भमरी लागी रही, मुझ वदन कमल रस माहिरे । के०
एतउ वरमाला माहरइ गलइ, घाली विहुं हाथे साहि रे ॥२॥के०॥
एतउ राजा तूर वजाडियां, भलउ कुमरी वरयउ भरतार रे ॥के०॥
एतउ रूठा वीजा राजवी, कहइ आणि घणउ अहंकार रे ॥३॥के०॥

एतउ ए पंथी कोइ वापडउ, कुल वंस न जाणइ कोइ रे ।।के०।।
एतउ जउ कुमरो चूकी वरयउ, पणि मांसहुँ नहि अम्हे तांडरे ।।४।।के०
एतउ राजा कहइ किसू कीजिउ, वलि पाछी लीजइ केम रे ।।के०।।
एतउ भूप कहइ कुल पूछीयइ, तु कुण कहि जिम छइ तेमो रे ।।५।।के०।।
एतउ हुं वोल्यउ वंसमाहरु, कहिस हिवाहनउ वल मुझ रे ।।के०।।
एतउ चतुरंग सेना सजिकरी, सुभमति सू माड्यउ जुज्झ रे ।।६।।के०।।
एतउ सुभमति भाजतउ देखिनइ, हुं रथ वइठउ ततकाल रे ।।के०।।
एतउ केकेइ थई सारथी, रथ फेरयउ कटक विचाल रे ।।८।।के०।।
एतउ मइ तीर नांख्या तेहनइ, जाणे वरसण लगउ मेह रे ।।के०।।
एतउ वायइ मारया वादला, सहु भाजिगया नृपतेह रे ।।६।।के०।।
एतउ जय जय सबद वंदी भणइं, गुण प्रगट थया सुविवेक रे ।।
एतउ पुत्री परणावी तिहा, आडम्बर करिय अनेक रे ।।१०।।के०।।
एतउ केकेइ गुण रंजियउ, मइ कह्यउ हुं तुठउ तुझरे ।।के०।।
एतउ मांगि कोइ वर सुन्दरी, तुझ सानिधि जीतउ जुज्झ रे ।।११।।के०
एतउ केकेइ कह्यइ वर लह्यउ, मइ तुझ सरीखउ नाह रे ।।के०।।
एतउ वर वीजइ हुं सूं करूं, तुझ दीठा अंगि उछाह रे[१] ।।१२।।के०।।
एतउ पणि वर कोइ मांगि तुं, रंगीली हासउ मुंकि रे ।।के०।।
एतउ प्राणी छइ नव नाड़िया, ए अवसर थी तूॅ न चूकि रे[२] ।।१३।।के०

१—वर वीजइ हुँ सू करू, लह्यउ मइ तुझ सरीखउ नाह रे ।
प्राण अछइ नव नाड़िया, ए अवसर थी अग उछाहि रे ।।१२।।के०।।

२—मानि वचन प्रिया माहरउ, ए अवसर मोटिम चूकि रे ।

एतउ केकेइ कहइ एहवुं, माहरउ वर थापणि राखि रे ।।के०।।
एतउ जद मांगुं देज्यो तदे, चन्द सूरिजनी छइ साखि रे० ।।१४।।के०।।
एतउ ते वर हेवणा मांगियौ, कहइ भरत नइ आपउ राज रे ।।के०।।
एतउ तू वइठा ते किम लहइं, तिण चिन्तातुर हुं आज रे ।।१५।।के०।।
एतउ राम कहइ राजि दीजियइ, केकेई पूरउ जगीस रे ।।के०।।
एतउ बोल पालउ तुमें आपणउ, मुझनइ नहिं छइ का रीस रे।।१६।।के०।।
एतउ वचन सुपुत्रनां सांभली, हरखित थयउ दसरथ राय रे ।।के०।।
एतउ वात भली तेड़उ इहां, तुम्हे भरतनइ कहउ समझाय रे ।।१७।।के०।।
एतउ भरत कहइ सुणउ माहरइ, नहीं राज संघाति[1] काज रे ।।के०।।
एतउ मुझ दीक्षा नउ भाव छइ, ए बांधव नइ द्यउ राज रे ।।१८।।के०।।
एतउ राम कहइ सुणि भरत तूँ, ताहरइ नहि राजनउ लोभ रे ।।के०।।
एतउ तउ पणि मां मनोरथ फलइ, वाप वोल नइ चाड़उ सोभ रे।।१९।।के०
एतउ भरत भणइ हुं तुम थका, किम राज ल्यूँ जोयउ विमास रे।।के०।।
एतउ राम कहइ बांधव सुणउ, अम्हे तउ लेस्यूँ वन वास रे ।।२०।।के०।।
एतउ चौथी ढाल पूरी थइ, कही केकेयी वर वात रे।।के०।।
एतउ समयसुंदर कहइ सांभलउ, खोटी वइयरि नी जाति रे ।।२१।।के०।।

[सर्व गाथा ११८]

दूहा ४

बात सुनी नइ कोपियउ, लखमण नाम कुमार।
दसरथ पासि जई कहइ, का तुम्हें लोपउ कार ।।१।।

---

१ राम थका ।

राम थकां बीजा तणउ, राजनउ नहीं अधिकार।
सीह सादूलइ गुंजतइ, कुण बीजउ मिरगारि ॥२॥
कलपवृक्ष आंगणि फल्यउ, तरु बीजइ स्यउ काजि।
स्यूँ करइ वेड़ी बापड़ी, जे सरइ काम जिहाजि ॥३॥
राम विना देवा न द्युं, किणनइ राज्य हुं एह।
समझायउ रामइ वली, लखमण बांधव तेह ॥४॥

[सर्वगाथा १२२]

ढाल पांचवीं

ढाल—चेति चेतन करि, अथवा—धन पदमावती (प्रत्येकबुद्धना पहला खंडनी आठवीं ढाल)

लखमण राम बेऊ मिली रे, हिव चाल्या वनवासो।
सीता पाणि पूंठि चली रे, समझावइ राम तासो रे ॥१॥
राम देसउटइ जाय, हियड़इ दुःख न मायो रे।
साथि सीता चली, जाणि सरीरनी छायो रे ॥२॥ रा०
अम्हे बनवासइ नीसरयारे, तात तणइ आदेश।
तू सुकुमाल छइ अति घणुं रे, किम दुःख सहिसि कीलेसोरे ॥३॥ रा०
भूख तृषा सहिवी तिहारे, सहिवा तावड़ सीत।
वन अटवी भमिवउ वली रे, न को तिहां आपणौ मीतो रे ॥४॥ रा०
ते भणी इहां बइठी रहे रे, अम्हे जावां परदेस।
प्रस्तावइ आवी करी रे, आपणइ पासि राखेसोरे ॥५॥ रा०
सीता कहइ प्रीतम सुणउ रे, तुम्हे कहउ ते तौ सांच।
पणि विरहउ न खमी सकुंरे, एकलड़ी पल काचो रे ॥६॥ रा०

घर मनुष्य भस्यउ तस्यउ रे, पणि सूनउ विण कंत ।
प्रीतम सूँ अटवी भली रे, नयणे प्रीयू निरखंतो रे ॥७॥ रा० ॥
जोबन जायइ कुल दिइरे, प्रीयुसूं विभ्रम प्रेम ।
पंचदिहाड़ा स्वाद ना रे, ते आवइ वलि केमोरे ॥८॥ रा०॥
कंत विहुणि कामनि रे, पगि पगि पामइ दोष ।
साचउ पणि मानइ नहि रे, जउ वलि ते पायइ कोसोरे ॥६॥ रा०
वर वालापणइ दीहड़ा रे, जिहा मनि रागनइ रोस ।
जोवन भरियां माणसारे, पगि पगि लागइ छइ दोसोरे ॥१०॥ रा०
मइ प्रीतम निश्चय कियउरे, हुं आविसि तुम साथि ।
नहि तरि छोड़िसि प्राण हुंरे, मुझ जीवित तुम हाथो रे ॥११॥ रा०
पाली न रहइ पदमिनी रे, सीता लीधी साथि ।
सूर वीर महा साहसी रे, नीसस्या सहु तजी आथो रे ॥१२॥ रा०
लछमन राम सीता त्रिण्हेरे, पहुता तातनइ पासि ।
पाय कमल प्रणमी करीरे, करइं त्रिण्ह अरदासो रे ॥१३॥रा०॥
अपराध को कीधउ हुइ रे, ते खमज्यो तुम्हें तात ।
दसरथ गदगद स्वरइ कहइ रे, किसउं अपराध सुजातो रे ॥१४॥रा०॥
जिम सुख तिम करिज्यो तुम्हे रे, हुं लेइसि व्रत भार ।
विषम मारग अटवी तणउ रे, तुम्हें जाज्यो हुसियारो रे ॥१५॥रा०॥
इम सीख माथइ चाडिनइ रे, पहुता माता पासि ।
मात विहुँ रोतीथकी रे, हीयड़इ भीड्या उलासो रे ॥१६॥रा०॥
मात कहइ मनोरथ हुंतारे, अम्हनइ अनेक प्रकार ।
वृद्धपणइ थास्यां सुखी रे, तुम्हें छोड्यां निरधारो रे ॥१७॥रा०॥

अम्हनइ दुख समुद्रमइ रे, घालि चल्या तुम्हें पुत्र ।
किम वियोग सहिस्या अम्हे रे, कुण वनवास कउ सूत्रो रे ॥१८॥
कइयइ वलि मुख देखस्या रे, अम्हें तुम्हारू वच्छ ।
वेगा मिलिज्यो मातनइं रे, अथिर आउखुं छइ तुच्छो रे ॥१६॥रा०॥
राम कहइ तुम्हें मातजी रे, अधृति मकरिस्यउ काइ ।
नगर वसावी तिहा वडउ रे, तुम्हनइ लेस्यां तेडायोरे ॥२०॥रा०॥
विहुं माते क्रिया पुत्रनइ रे, मंगलीक उपचार ।
आसीस दीधी एहवी रे, पुत्र हुज्यो जयकारो रे ॥२१॥रा०॥
सीतापणि सासूतणा रे, चरण नमी ससनेह ।
सासू जंपइ धन्य तु रे, प्रिय साथि चली जेहोरे ॥२२॥रा०॥
देवपूजि गुरु वादिनइ रे, मिलि मिलि सहु सन्तोपि ।
खमी खमावी लोक सुं रे, नीसस्या हुइ निरदोसो रे ॥२३॥रा०॥
पांचमी ढाल पूरी थइ रे, राय राणी अन्दोह ।
समयसुन्दर कहइ दोहिलउ रे, मात पिता नउ विछोहो रे ॥२४॥रा०

[सर्व गाथा १४६]

दूहा ३

संप्रेडण साथि चल्या, सामन्तक भूपाल ।
मंत्रि महामन्त्रि मण्डली, वाल अनइ गोपाल ॥१॥
प्रजालोक साथि चल्या, वलि चल्या वरण अढार ।
पवन छत्रीस पुकारता, करता हाहाकार ॥२॥
अंगतणा वलि ओलगू, दासी दास खवास ॥
किम करिस्यां आपे हिवइ, कुण पूरेस्यइ आस ॥३॥

[सर्व गाथा १४६]

ढाल छठी

देसी--ओलगडीनी । राग-मल्हार ॥

महाजन २ मिलीनइ सहु आव्यउ तिहा रे, विदा न मांगो जाय ।
हियडुं फाटइ दुख भरे बोलता रे, आंसू आंखि भराय ॥१॥
रामजी २ राजेसर वहिला आवज्यो रे, तुम विरहउ न खमाय ।
वीछडियां २ वाल्हेसर मेलउ दोहिलउ रे, तुम दीठां दुख जाय ॥२॥
सगली २ राणी रोयइ हूबके रे, रोयइं सगला लोग ।
नीद्रडी २ नाठी अन्न भावइ नही रे, व्याप्यउ विरह वियोग ॥३॥
केकेइ २ नइ कहइं लोक पातरी रे, रामनइ बाहिर काढि ।
भरत नइ २ दिवरायउ भार राज नउ रे, विरूई स्त्री वेढि राढि ॥४रा०॥
पुरूष २ प्रधाने नगरी सोभती रे, दीसइ आज विछाय ।
चन्द्रमा २ विहुणी जेहवी यामिनी रे, कन्त विण नारि कहाय ॥५॥रा०
जलधर २ विहुणी जेहवी मेदनी रे, विण प्रियु सिज्या जेम ।
पदक २ विहुणी हारलता जिसी रे, आज अयोध्या तेम[1] ॥६॥रा०
ए जिहा २ जास्यइं पुरुष तिहा हुस्यइ रे, अटवी नगर समान ।
असरण २ हुस्या पणि आये हिवइ रे, नगर अयोध्या रान ॥७॥ रा०॥
लोकनां २ वचन इम सुणता थका रे, सीता लखमण राम ।
जिनवर २ प्रासादइ आवीनइ रह्या रे, कीधउ जिन परणाम ॥८॥रा०॥
तिणसमइ २ सूरिज देवता आथम्यउ रे, जाणे एणि विशेपि ।
रामनइ २ वियोगइ लोक आरडइं रे, ते दुख न सकु देखि ॥६॥रा०॥

१—अयोध्या नगरी तेम

खिण एक २ कीधउ राग सन्ध्या तणउ रे, जाणि जणायउ एम ।
अथिर आउषुं अथिर ए सम्पदा रे, राग सन्ध्या नउ जेम ॥१०॥रा०
तिमिर २ करीनइ स्यामवदनथइ रे, दिसवधू दुख प्रमाणि ।
कुमर २ वियोगइ लोक दुखी घणुं रे, ते देखिनइ जाणि ॥११॥रा०॥
रातिनउ २ वासउ रामजी तिहां रह्या रे, जिहं श्री जिनवर गेह ।
मा वाप २ आया पुत्र मुख देखिवा रे, ए ए पुत्र सनेह ॥१२॥रा०॥
मा वाप २ संतोषीं सहु वउलावीया रे, आप सूता खिण एक ।
पाछिली २ रात उठी चालिया रे, वांदी जिन सुविवेक ॥१३॥रा०॥
पछिम दिस २ साम्हा चालिया रे, धनुष वाण ले हाथि ।
किणही २ न जाण्या कुँयर चालता रे, सीता लीधी साथि ॥१४॥रा०॥
प्रहसमइ २ चाल्या पग लेई करी रे, सामंतक भूपाल ॥
विरहउ २ नजायइ खम्यउ रामनउ रे, आइ मिल्या ततकाल ॥१५॥रा०॥
रामजी २ संघातइ मारग हींडता रे, सेवा सारइ धीर ।
नगरइ २ गामे पूजा पांमता रे, गया गंभीरा तीर ॥१६॥रा०॥
रामजी २ नदी नइ तीरि उभा रह्या रे, आव्यउ वसती अंत ।
भरत २ नी सेवा करिज्यो अति भली रे, वउलाव्या सामंत ॥१७॥रा०॥
ए ढाल २ छठ्ठी वीजा खंडनी रे, राम लीयो वनवास ।
समय २ सुन्दर कहइं सहु करइ रे, वलि मिलिवानी आस ॥१८॥रा०॥

[सर्वगाथा १६७]

दूहा ६

रामइं लांघी ते नदी, सीतानंई ग्रहि हाथि ॥
दक्षिण दिस भणि चालिया, वांधव लखमण साथि ॥१॥

सामंतक पाछां वल्या, पणि मन मइं विषवाद ।
रामवियोग दुखी थया, सगलउ गयउ सवाद ।।२।।
तीर्थङ्कर नइं देहरइ, आवी बइठा तेह ।
दीठउ साध सोहामणो, अटकल्यो तारक एह ।।३।।
किणही संयम आदर्यउ, किणही श्रावक धर्म्म ।
के पहुता साकेतपुरि, ते तउ भारी कर्म्म ।। ४ ।।
तिण बिरतात सहु कह्यउ, ते सुणि नइं मा-बाप ।।
करिवा लागा रामनउं, सहु को दुक्ख विलाप ।।५।।
दशरथ दीक्षाआदरी, भूतसरण गुरु पासि ।
तपसंयम करइं आकरा, त्रोडइ कर्म्म ना पास ।।६।।

[सर्वगाथा १७३]

ढाल सातवीं

ढाल---थांकी अवलू आवइ जी,

पुत्र वनवासइ नीसर्याजी, दशरथ लीधी दीख, म्हारा रामजी ।
सुमित्रा अपराजिताजी, दुख करइं बेहुं सरीख ।।१।।

म्हारा रामजी तुम्ह विण सूनउ राज ।
मा सगली अलजउ करइं जी, आवउ आजोध्या आज ।।२।।म्हा०।।

पाख विहूणी पंखिणी जी, कांय सिरजी करतार ।।
पुत्र अनइं पति वीछड्याजी, अम्हनइं कुण आधार ।।म्हा।।३।।

नयणें नाठी नींदडीजी, अन्न न भावइ लगार ।
पाणी पणि नूतरइ गलइजी, हीयडुं फाटणहार ।।म्हा०।।४।।

हिमनी वाली कमलिनीजी, जिमदीसइं विछाय।
पुत्र वियोग झूरी मुंईजी, तुम्ह विण घडीय न जाय ॥५॥म्हां०॥
दुखकरती राणी सुणीजी, केकेई थयो दुःख।
भरतनउ कहइ रोती थकी जी, राम विनां नहि सुख ॥म्हा०॥६॥
तुझनइ राज सोहइ नहीं जी, विण लखमण विण राम ॥
मा पणि मरिस्यइ झूरती जी, पडिस्यइ सवल विराम ॥७॥म्हा०॥
तिणपुत्र जा तुं उतावलउ जी, राम मनावी आणि।
केकेई साथइ करी जी, भरत चाल्यउ हित जाणि ॥८॥ म्हा०॥
चपल तुरंगम चडी वूहउ जी, पगि २ पूछइ राम।
गंभीरा नदी ऊतरी जी, आवी विषमो ठाम ॥९॥म्हा०॥
घोडउं मुकि आघउं गयउ जी, राम देखी गयऊ धाय ॥
आंखें आंसू नाखतो जी, भरत पड्यउ राम पाय ॥१०॥म्हा०॥
रामइ हीडउ भीडियउजी, लखमण दीयो सनमान।
करजोडी नइं वीनवइ जी, तुम्हें मुझ तात समान ॥११॥म्हा०॥
राज करो तुम्हें आविनइं जी, हूँ छत्र धारीसि तुम्ह।
सत्रुघन चामर ढालस्यइं जी, एह मनोरथ अम्ह ॥१२॥म्हां०॥
लखमण मंत्री थाइस्यइं जी, तुम्हें मुंकउ वनवास।
केकेई आवी तिसंउ जी, उतरी रथथी उल्हास ॥१३॥म्हा०॥
हीयडउं भीडी नइ कहइं जी, पाछा आवउ पुत्र।
राज अयोध्यानउ भोगवट जी, वात पडइ जिमि सूत्र ॥१४॥म्हा०॥
नारीनी जाति तोछडी जी, कूड कपटनउ गेह।
अणख अदेखाई करइं जी, अपराध खमजो एह ॥१५॥म्हा०॥

राम भणइ खत्री अम्हेजी, न तजउ अंगीकार ।
भरत करो राज आपणउ जी, अम्हें ग्रह्यउ डंडाकार ॥१६॥म्हा०॥
रामइं भरतनइं तेडिनइं जी, दीधउं हाथ सु राज ।
संतोषी संप्रेडीया जी, सहु करो आपणा काज ॥१७॥म्हा०॥
सातमी ढाल पूरी थई जी, राम रह्या वनवास ।
समयसुन्दर कहइं सहु मिली जी, भरतनइ द्यउ सावास ॥१८॥म्हा०॥
बीजउ खंड पूरउ थयो जी, संनिधि श्री जिनचंद ।
सकलचंद सुपसाउलइ जी, दिन २ अधिक आणंद ॥१६॥म्हा०॥
श्री खरतर गच्छ राजीयोजी, श्रीजिनराजसूरीस[1] ।
समयसुन्दर पाठक कहइ जी, पूरवउ संघ जगीस ।

[सर्वगाथा १६३]

इतिश्री सीताराम प्रवन्धे राम-सीता-वनवास वर्णने नाम द्वितीयः खण्डः सम्पूर्णः ।

तीसरा खण्ड

दूहा १२

त्रिण विन गीत न गाइयइं, त्रिण विन मुक्ति न होई ।
कहुं त्रीजउ खंड ते भणी, जिम लहइं स्वाद सकोइ ॥१॥
रामचन्द आश्रम रह्या, पहिली रात मझार ।
आवी आगलि चालता, अटवी डंडाकार ॥२॥
पंछी कोलाहल करइं, सीह करइं गुंजार ।
केसरि कुम्भ विदारिया, गजमोती अंबार ॥३॥

१—श्री जिनसागरसूरीश ।

चिहुं दिसि दीसइं चीतरा, वलि दावानल दाह।
वानर बोंकारव करइं, वनमइ विढइ वराह ॥४॥
व्यग्रचित्त वन लांघियउ, चालि गया चीत्रउडि।
नाना विध वनराइ जिहां, चित्रांगदनी ठउडि ॥५॥
अद्भुत फल आस्वादतां, करतां विविध विनोद।
सीताराम तिहां रह्या, केइक दिन मनमोद ॥६॥
तिहाथी अनुक्रमि चालिया, आया [1] अवती देस।
तिहां इकदेस सूनउ थकउ, देखी थयो अंदेस ॥७॥
गाइ भैंसि छूटी भमइ, धानचून भस्था ठाम।
गोहनी गोरस सूं भरी, फलफूल भस्था आराम ॥८॥
मारिग भागा गाडला, छूटा पड्या वलद।
ठामि २ दीसइ घणा, पणि नहि मनुष्य सवद ॥९॥
वइठा सीतल छांहडी, सीतासुं श्री राम।
लखण वांधवनइ कहइ, किम सूनउ ए आम [2] ॥१०॥
देखीनइं को माणस इहां, पूछां कुण निमित्त।
लखण जई उंचउ चड्यउ, एकणि रुंखि तुरत्त ॥११॥
दूरिथकी इक आवतउ, दीठउ पुरुष उदास।
तेनरनइं ले आवीयउ, लखमण वांधव पासि ॥१२॥
करि प्रणाम उभउ रह्यऊ, रामइं पूछ्यउ एम।
परमारथ कहुँ पंथिआ, सूनउ देस ए केम ॥१३॥

१—गया
२—गाम

ढाल पहली
राग रामगिरी

[चाल–जिनवर स्युं मेरउ चित्त लीणउ।
अम्हनइ अम्हारइ प्रियु गमइ। काजी महमदना गीतनी–ढाल]

कहइ पंथी वात वेकर जोडी, दसपुर नगर ए खास रे।
रयणायर छोडी जलदूपणि, लखमी कीधउ निवास रे ॥१॥
रूडारामजी। देस सूनउ इण मेलिरे, कहता लागस्यइं वेलि रे।
कहता थास्यइं अवेलि रे ॥रू०॥आ०॥
रिद्धि समृद्ध सरगपुर सरिखउ, विवुध वसइं जिहां लोक रे।
सुख संतान सुगुरुनी सेवा, मनवंछित सहु थोक रे ॥२॥रू०॥
सरणागत वज्र पंजर सरिखउ, वज्जजघ राय तत्र रे।
न्यायनिपुण विनयादिक गुणमणि, सोभित सुजस पवित्र रे ॥३॥रू०॥
पणितेमइं सवलउ एक दूषण, नहिं दया धरम लिगार रे।
रात दिवस आहेडइं हीडइं, करइं वहु जीव संहार रे ॥४॥रू०॥
एक दिवस मारी एक मृगली, गरभवती हुती तेह रे।
गरभ पड्यउ तडफडतउ देखी, राजा धूजी देह रे ॥५॥रू०॥
मनमाहे राजा इम चींतवइं, मइकीधउ महापाप रे।
निरपराध मारी मृगली अभ,[१] देवनइं कवण जबाव रे ॥६॥रू०॥
वांभण १ साध २ नइस्त्री ३ वाल ४ हत्या, ए मोटा पाप जोइ रे।
ताडन तरजन भेदन छेदन, नरगतणा दुख होइ रे ॥७॥रू०॥

१—ए।

हुं पापी हुं दुरगति गामी, हुं निरदय हुं मूढ रे।
इम वयराग धरी राय चल्यऊ, आगइ तुरग आरूढ़ रे ॥८॥रू०॥
एहवइ साध दीठउ सिल ऊपरि, करतउ आतापन एक रे।
करि प्रणाम राजा इम पूछइ, जाग्यउ परम विवेक रे ॥६॥रू०॥
स्युं करइ छइ ऊजाडिमइ वइठउ, कां सहइं तावड सीत रे।
का सहइं भूख त्रिषा तुं सवली, वाततोरी विपरीत रे ॥१०॥रू०॥
साध कहइं तुं साभलि राजा, आतम हित करूं एह रे।
तप संयम करी परलोक साधूँ, छीजती न गणुँ देह रे ॥११॥रू०॥
जीव मारीनइं जे मांस खायइं, मद्य पीयइं वली जेह रे।
नर भव लाधउ निफल गमाडइं, दुरगति जायइ तेहरे ॥१२॥ रू० ॥
मांस भोजन ते अहित कहीजइ, ताव मांहे घी पान रे।
तपसंयम आतम हित कहीयइं, मांदानइ मुग धान रे ॥१३॥ रू० ॥
साध वचनइ राजा प्रतिबूधउ, पभणइंवे करजोडि रे।
साधजी धरम सुणावि तुं सूधउ, पाप करम थी छोड़ि रे ॥१४॥ रू० ॥
त्रीजा खंड तणी ढाल पहिली, पूरी थई ए जाणि रे।
साधु संसार समुद्र थी तारइं, समयसुन्दरनी वाणि रे ॥१५॥ रू० ॥

[सर्वगाथा २८]

दूहा ४

देव तउ श्रीवीतराग ते, गुरु सुसाध भगवंत।
धर्म्म ते केवलि भाखीयउ, समकित एम कहंत ॥१॥
एक तीर्थंकर देवता, बीजा साध प्रवुद्ध।
त्रीजानइ प्रणमइ नहीं, तेहनउ समकित सुद्ध ॥२॥

जीवनइं मारउं जे नहीं, जूठ न बोलइं जेह।
अणदीधउ जे ल्यइ नहीं, न धरइ नारी नेह ॥३॥
आरंभ कर्म्म करइं नहीं, न करइं पाप करम्म।
वलि जे इन्द्री वस करइं, धरमनउ एह मरम्म ॥४॥

[सर्वगाथा ३२]

ढाल बीजी २

राजमती राणी इणिपरि बोलइ, नेमि विणा कुण घुंघट खोलइ एहनी ढाल

धरम सुणी राजा प्रतिबूधउ, निरमल समकित पालइ सूधउ ॥१॥ ध०॥
एहवउ राजा अभिग्रह कीधउ, साधतणइं पासइं सुंस लीधउ ॥२॥ ध०
अरिहंत, साध विना नहिं नामुं, सिर किणनइं सुध समकित पामुं ॥३॥
साधु वादी राजा घरि आयउ, लाधउ निधान जाणे सुख पायउ ॥४॥
देव जुहारइं गुरुनइं वंदइं, जिनधर्म करतउ मनि आणदइ ।५। ध०।
श्रावकना व्रत सूधा पालइ, श्रीजिन सासन नइं अजुयालइं ॥६॥ ध० ॥
एक दिवस मन माहि विचारइं, किम मुझ सूंस ए पडिस्यइ पारइ ७।ध०
ऊजेणी नगरी नउ राजा, सीहोदर तिणसुं मुझ काजा ॥८॥ ध० ॥
सीस नमाडूं तउ सुंस भाजइ, प्रणम्या विन किम पडगनउ खाजइ ९।
मुद्रिकामइं मुनिसुव्रत मूरति, राय करावी सुदर सूरति ॥१०॥ ध०
सीहोदरना प्रणमइं पाया, पणि प्रतिमा ना अध्यवसाया ।११। ध०
इण करतां दिन वउल्या केता, सावतउ समकित सुप्रसननेता ॥१२॥ ध०
दुसमण भेद कह्यो राजानइं, घाली घात पापइ पचिवानइं। १३ ध०
कुटिल चालइं परछिद्र गवेषइ, दो जीभउ उपकार न देखइ ॥१४॥ ध०

सीहोदर राजा मुणी रूठउ, कालकृतात जिमि[१] ते जूठइ ॥१५॥ घ०
दसपुर नगर नउ देश उतारू, वज्रजंघ राजानइं मारूं । १६ घ०
वाजा चउत तणा वजडाया, वागिया सर्वं दिसोदिस धाया ॥१७॥ घ०
गयगुडीया घोडा पाखरिया, नालि गोला सेती रथ भरिया ॥१८॥ घ०
मुझ प्रणमइं नहि ते वोल साल्यउ, राजा कटक करीनइं चाल्यउ ॥१९॥
दसपुर नगर भणीते आवइं, तेहवइ एक पुरुष तिहां जावइं ॥२०॥ घ०
वज्रदत्तनइ पाये लागी, कहइ एक वात सांभलि सोभागी ॥२१॥ घ०
राय भणइं कुणतुं वात केही, पुरुप कहइं कुण तूं सुणि कहुँ जेही ॥२२॥
कुंडलपुर नगरी नउ हुं वासी, घुरथी सकल कला अभ्यासी ॥२३॥ घ०
मात-पिता मुझ सूधा श्रावक, हुं तेहनउ पुत्र पुण्य प्रभावक ॥२४॥ घ०
विजउ नाम जोवन मदमातउ, पणि वीतराग ने वचने रातउ ॥२५॥ घ०
व्यापार हेति उजेनी आयउ, तिहाँ मइ द्रव्य घणउ उपायउ ॥२६॥ घ०
त्रीजा खंडनी ढाल ए वीजी, समयसुंदर कहइ सुणिकरउजी जी ॥२७॥

सर्वगाथा ५६

दूहा ११

इकदिन मुझ दृष्टइं पडी, केलिगरभ सुकुमाल ।
चंदवदनी मृगलोयणी, तिलक विराजत भाल ॥१॥
रूपइ रंभा सारखी, मदमाती असराल ।
अनंगलता वेश्या इसी, हूँ चूकउ ततकाल ॥२॥
कुण-कुण नर चूका नहीं, श्रावक नइं अणगार ।
अंत लेतां ए वात नउ, न पडइं समझि लिगार ॥३॥

१—जिस्यउ

हुं लुब्धउ कामी थकउ, गणिकासुं दिनराति ।
विषयतणां सुख भोगवुं, विगड्यउ तेहनी वात ॥४॥
धन सघलउ खूटी गयुं, निरधन थयउ निटोल ।
अन्य दिवस गणिका कहइं, सांभलि प्रीय मुझ[१] बोल ॥५॥
पटराणी ना कानना, कनक कुडलनी जोडि ।
आणी दै ऊतावली, पूरि प्रियू मुझ कोडि ॥६॥
चोरीइं पइठउं राति हुं, राजानइ आवासि ।
राय राणी सूता जिहां, भोगवि भोग विलास ॥७॥
हूं छानु छिप नइं रह्यो, जाण्युं सोवइं राय ।
तउ राणी ना कानना, कुडल ल्युं धवकाय ॥८॥
राजा चिंतातुर हुतउ, निद्रा नावइं तेणि ।
राणी पूछइं प्रीयु तुम्हें, चिंतातुर सा केण ॥९॥
स्त्रीनइ गुह्य न दीजीयइं, वली विशेषइ राति ।
तिणि राजा बोलइ नहीं, बोलायउ बहुभाति ॥१०॥
राणी हठ लेई रही, गुह्य कह्यो नृप ताम ।
हुं मारिसु वज्रजंघ नइं, न करइ मुझ परणाम ॥११॥

सर्वगाथा ७०

ढाल ३

चाल—१ सुण मेरी सजनी रजनी न जावइ रे,
२ पियुड़ा मानउ बोल हमारउ रे ।

सुण मेरा साहमी वात तउ कितनी रे ।
साहमी माटइं कहुं छुं चितनी रे ॥१ सु०॥

मइं इम जाण्यु धन ते राया रे।
वजूइ समकित सूधा पाया रे ॥२ सु०॥
हुँ पापीजे चोरी पइठउ रे।
आंगमी मरणउ हुँ इहाँ वइठउ रे ॥३ सु०॥
वेश्या लुबधइ द्रव्य गमायउ रे।
आपणउ कीय इह लोकि पायउ रे ॥४ सु०॥
जिन ध्रम जाण्यउ नउ फल लीजइ रे।
साहमीनइ उपगार करीजइ रे ॥५ सु०॥
इम जाणीनइ भेद जणांवा रे।
हुँ आयउं छुँ वात सुणावा रे ॥६ सु०॥
सीहोदर राजा तु आवइ रे।
तिण आगइं कुण जीवत जावइं रे ॥७ सु०॥
जे जाणइ ते तुं हिव करिजे रे।
धीरज समकित उपरि धरिजे रे ॥८ सु०॥
राय कहइ तुं पर उपगारी रे।
धन विज्जा तुं अति सुविचारी रे ॥९ सु०॥
सावासि तुझ नइं भेद जणायउ रे।
साहमी सगपण साच दिखायउ रे ॥१० सु०॥
वात सुणीनइं ततखिण राजा रे।
देस उचाल्यउ कटक आवाजा रे ॥११ सु०॥
आप रह्यउ राय नगरी मांहि रे।
सखरे पहिरे टोप सनाहे रे ॥१२ सु०॥

अनपाणी ना संचा कीधा रे।
नगरी ना दरवाजा दीधा रे ॥१३ सु०॥
सीहोदर अति कोपइ चढ़यउ रे।
नगरी चिहुं दिस वींटी पडयउ रे ॥१४ सु०॥
दूत सुं मुंकइ राय संदेशा रे।
चरण नमीनइ भोगवि देसा रे ॥१५ सु० ॥
राय कहइं हुं राज न मागु रे।
चरण न लागुं सुंस न भागु रे ॥१६ सु० ॥
सीहोदर सुणि अति घणुं कोप्यउ रे।
इणि माहरउ वोल देखउ लोप्यउ रे ॥१७ सु० ॥
हिव हुं एहनइ देस उतारूँ रे।
जीवतउं झाली गरदन मारुं रे ॥१८ सु० ॥
इम वेऊं राय अवस्था वइठा रे।
एक वाहिर एक माहि पइठा रे ॥१९ सु० ॥
देस ए हुंतउ पहिलउ ए घूनउ रे।
इण कारण हीवणा थयउ सूनउ रे ॥२० सु० ॥
ए वृतांत कह्यउ मइ तुझनइं रे।
हिव राजेसर सीख द्यउ मुझ नइ रे ॥२१ सु० ॥
हुं जाउं छु स्त्रीनइं कामइं रे।
इमकही रामनइ मस्तक नामइ रे ॥२२ सु० ॥
कढि कंदोरउ रामइं दीधउ रे।
सीख करीनइं चाल्यउ सीधउ रे ॥२३ सु० ॥

त्रीजी ढालइ खंड त्रीजानी रे।
समयसुंदर कहइ ध्रम दृढ़तानी रे ॥२४ सु० ॥

[सर्वगाथा ६४]

॥ ढाल चउथी चंदायणनी ॥ पणि दूहइ २ चाल ॥

॥ राग केदार गउडी ॥

राम भणइ लखमण भणी, चालउ दसपुर गाम।
साहमी नइं सानिधि करउ, धरम तणुं ए काम ॥

॥ चाल ॥

धरमतणुं एकाम कहीजइं, साहमीवछल वेगि वहीजइं।
दसपुर नगर वाहिर वे भाई, चन्द्रप्रभ देहरइं रह्या जाई ॥१॥
चन्द्रप्रभ प्रणमी करि, लखमण नगर मझारि।
राजभवनि भोजन भणी, पहुतउ परम उदार ॥

॥ चाल ॥

पहुतउ परम उदार कुमार देखी राजा कहइ सूयार।
एहनइ भोजन द्यउ अति सार, एकोइ पुरुष रतन अवतार ॥२॥
कहइं लखमण वाहरि अछइ, मुझ बांधव परिसिद्ध।
अणजीम्यां जीमू नहीं, द्यइ मुझ भोजन सिद्ध।

॥ चाल ॥

द्यइ भोजन राजा अति ताजा, पंचामृत लाडु नइ खाजा ॥
लखमण राम समीप ले आवइ, भोजन जिमिनइं आणंद पावइ ॥४॥
राम कहइं लखमण प्रतइं, भलपण देखि भूपाल ॥
अणओलख्यां पणि आपीयउ, तुझ भोजन ततकाल ॥

॥ चाल ॥

आवउ तुझ भोजन ल्यउ माहिज, तुंहिवकरि साहमीनइं साहिज।
गयउ लखमण सीहोदर पासइं, भरतइ मुंक्यउ दूत इम भासइ ॥४॥
हूं सगली पृथिवी नउ धणी, सहुको मुझ छत्रछाय।
व्रजजंघसुं कां करइं, एवडउ जोर अन्याय ॥

॥ चाल ॥

एवड़उ जोर अन्याय म करि तु, म करि सग्राम पाछउ जा घरि तुं।
सीहोदर कहइ भरत न जाणइ, गुण दूषण तेहना तिण ताणइ ॥५॥
सीहोदर कहइ माहरउ, ए तउ चाकर राय।
हठियउ हठ लेई रह्यउ, न नमइ माहरा पाय ॥

॥ चाल ॥

न नमइ माहरा पाय ते माटइ, मारि करिस एहनइ दहवाटइ।
भरतनइ तात किसी ए करणी, आपणी करणी पार उतरणी ॥६॥
कहइं लखमण तु भरतनी, जउ नवि मानइं आण।
मुंकि विरोध तुं करि हिवइ, मुझ अगन्या प्रमाण ॥

॥ चाल ॥

मुझ आज्ञा तुं जउ नहीं मानइ, तउ तुं पडीसि कृतात नइ पानइं
इणवचने सीहोदर रूठउ, जमराणइ सरिखउ ते झूठउ ॥७॥
रे रे कटक सुभट तुम्हें, एहनइं मारउ झालि।
विटवा लागा सुभट भट, लखमण छूटीं चालि ॥

॥ चाल ॥

लखमण छूटी चालि निवारया, मुठि भुजादंड केई मार्या ।
मारतां २ केई नाठा, कंईक मुख लीधा त्रिण काठा ॥८॥
सीह आगलि जिम मिरगला, रवि आगलि नक्षत्र ।
गज गंधहस्ती आगलि, त्रासि गया यत्र-तत्र ।

॥ चाल ॥

त्रासि गया यत्र-तत्र कटक भट, कुप्या सीहोदर वल उत्कट ।
गज आरूढ़ थिकु धसि आयउ, चतुरंग वल पणि चिहुं दिस धायउ ॥९॥
लखमणनइ वींटी लीयउ, मेघघटा जिमसूर ।
आलान थंभ उथेडिनइं, कटक कायउ चकचूर ॥

॥ चाल ॥

कटक कीयउ चकचूर हजूरी, वज्रजंघ देखे रह्यउ दूरि ।
ऐ ऐ देखउ अतुल पराक्रम, एकलइ कटक भाज्यउ इणि नर किम ॥१०॥
ए नर सुर के असुर के विद्याधर कोइ,
तेहवइ लखमण पाडीयउ सीहोदर पणिसोइ ।

॥ चाल ॥

सीहोदर पणि नीचउ पाड्यउ, पाछे वाही वाधी पछाड्यउ ।
आण्यउ राम समीपि सीहोदर, राम कहइ सावासि सहोदर ॥११॥
सीहोदर अंतेउरी, करइ विलापनी कोडि ।
पूठइ आवी इम कहइ, देवदयापर छोडि ॥

॥ चाल ॥

देव दयापर छोडि अम्हारउ, प्रीतम, उपगार गिणस्या तुम्हारउ ।
सीहोदर ओलग्यउ ए राम, हा मइं भुंडु कीधूं काम ॥१२॥
जे कहउ ते हिव हुं करूं, राम कहइं सुणि राय ।
वज्रजंघ सुं मेलि करि, जिमि तुझ आणद थाय ।

॥ चाल ॥

जिमि तुझ आणद तेहवइं ते नर, आवीनइ प्रणमइ राम सीतावर ।
राम कुशल खेम पूछइं बात, मुझ परसादि कहइ सुखसात ॥१३॥
राम कहइं तू धन्यजे, कीधउ साह्मी काम ।
वज्रजंघ बइठउ तिहा, रामनइं करि प्रणाम ।

॥ चाल ॥

रामनइं कहइ वज्रजघ निसुणि पहु, इणि मुझनइं उपगार कीयउ बहु ॥
सीहोदर वज्रजंघनइ भेलाकरि, मेल करायउ रामइं बहुपरि ॥१४॥
दिवरायउ वज्रजंघनइ, विहिची आधउ राज ।
हयगय रथ पायक सहू, सीधा वंछित काज ॥

॥ चाल ॥

सीधा वंछित काज सहूना, विजुआनइं कुंडल निज वहूना ।
सहोदर राय त्रिणसय कन्या, वज्रइं आठ आगइं धरि अन्या ॥१५॥
कहइं लखमण एहा रहउ, कन्या नि जोखीम ।
अम्हे परदेसइं भमी, जा आवा ता सीम ॥

१—उव्यो ।

॥ चाल ॥

जां आवां तां सीम अंगीकरि, पहुता वि राजा निज-निज पुरि ।
साहमीवछल रामइ कीयउ इम, कहइ गौतम श्रेणिक सुणि दृढ़धर्म ।१६।

राम सीता लखमणसहू तिहां थी चल्या उछांह ।
कूपचंड उद्यानमइं, पहुता वइठा छांह ॥
वइठा छांह सहुको जेहवइ, त्रीजाखंडनी चउथीढाल तेइवइं ।
पूरीथई साहमी नुं वच्छल, समयसुंदर कहइं करि ध्रम निश्चल ।।१७।।

[सर्वगाथा १११]

दूहा ८

सीता नइं लागी घणी, भूख-तृषा समकालि ।
लखमण जल जोवा भणी, गयउ सरोवर पालि ।।१।।

तिहां पहिलउ आयउ हुँतउ, राजकुंयर सहु साजि ।
लखमण देखी मूंकीयउ, चाकर तेडण काजि ।।२।।

लखमण नइ ते इम कहइं, अम्ह सामी सुविचार ।
तुम्हनइ तेडइ ते भणी, तिहां आवउ इकवार ।।३।।

लखमण चालि तिहां गयउ, तिण दीधउ वहुमान ।
निज आवास तेडी गयउ, करि आग्रह असमान ।।४।।

सिंहासन वइसारनइ, पूछउं विनय वचन्न ।
तुं कुण किहां थी आवीयउ, दीखइं पुरुष रतन्न ।।५।।

मुझ वांधव लखमण कहइं, वाहिर वइठउ जेथि ।
तेहिनइं पासि गयां पछी, वात कहिसि हुं तेथि ।।६।।

तुझ भाई तेडुं इहां, मानी लखमण बात।
माणसमुंकी रामनइ, तेडायउ नृपजात ॥७॥
राजकुंयर आदर घणइं, प्रणमइं रामना पाय।
एकांतइ करइं वनती, भोजन भगति कराय ॥८॥

सर्वगाथा ११६

ढाल पांचवीं

राग मल्हार

मेरा साहिब हो श्री शीतलनाथ कि वीनती सुणो ए० ॥

राजेसर हो सुण वीनती एक कि, मनवाछित पूरि माहरा।
भाग जोगइं हो मुझनइं मिल्यउ आजकि, चरणन छोडूँ ताहरा। १ रा०।

इणनगरी हो वालिखिल्ल नरिंद कि, पटराणी पृथिवी धणी।
तिण वांध्यउ हो म्लेच्छाधिप रायकि, रणि विढतांवयरी भणी।२।रा०।

ग्रभवंती हो राणीनइं जाणिकि, सीहोदर राजा कह्यउ।
पुत्र होस्यइ हो जे एहनइ तासकि, राज देईस निश्चउ ग्रह्यउ ॥३ रा०॥

हुँ पुत्री हो हुइ करम संयोगि कि, राजा पुत्र जणावियउ।
सहु साजण हो संतोषी नामकि, कल्याण माली आपीयउ ॥ ४ रा० ॥

मुझ माता हो मंत्री विण भेदकि, केहनइं ते न जणावीयउ।
पहिरावी हो मुझ पुरुष नउ वेसकि, मुझ नइ राजा थापीयउ ॥५ रा० ॥

ए तुम्ह नइ हो कही गुह्यनी वातकि, स्त्रीनउ रूप प्रगट कीयउ।
हुँ आवी हो जोवन भरपूरकि, तुम्ह देखी हरख्यउ हीयउ ॥ ६ रा० ॥

मुझनइ तुम्हे हो करु अंगीकारकि, प्रारथना सफली करउ।
भाग जोगइहो मिल्या पुरुष प्रधानकि।
हिव मुझ नइ तुम्हे आदरउ ॥ ७ रा० ॥
लखमण कहइ हो धरि पुरुषनउ वेसकि, केइक दिन राज पालि तुं।
छोडावां हो अम्हे तोरो तातकि, ता सीम चिंता टालि तुं ॥ ८ रा० ॥
समझावी हो इम चाल्या तेहकि, विंध्याटवि पहुता सहू।
सीता कहइ हो सुणउ किणहीक साथकि, वेढिहुस्यइ तुम्हनइं वहू ।९रा०।
तुम्हारउ हो हुस्यइ जयकारकि, किम जाण्यउं तइं ते कहइं।
सीता कहइ हो कडुयइ तरुकागकि, वोल्यउ इण वामइं पहइं ॥१० रा०॥
खीररूंखइ हो वोलयउ एक कागकि, विजय जणावइं तुम्हनइं।
वायस रुत हो आगम अनुसारकि, जाणपणु छइं अम्हनइं ॥११ रा०॥
खंड तीजउ हो तसु पाचमी ढालकि, राम सीता लखमण भमइं।
समयसुन्दर हो कहइ करइ उपगार कि।
नाम लीजइ तिण प्रहसमइं ॥१२॥रा०॥

[सर्वगाथा १३१]

दूहा ७

लखमण राम आघा गया, विंध्याटवी माहि ॥
आगइं दीठउ अति घणउ, म्लेच्छ कटक अत्थाह ॥१॥
तीर सडासड़ नाखता, त्रूट पड्या ततकाल।
पण लखमण तिम त्रासव्या, जिम हरि नादि शृगाल ॥२॥
तिण म्लेच्छाधिपनइं कह्यउ, ते चड़ी आव्यउ वेगि।
मारिन कीधउ अधमूयउ, लखमण मारी तेग ॥३॥

सूरवीर तुम्हें साहसी, मुखि करतउ गुण ग्राम ॥
आगलि आवी ऊभउ रह्यउ, रामनइं करइ प्रणाम ॥४॥
मुझ आगइ रिपु आजथी, ऊभउ न रह्यउ कोइ ।
हेलामइं जीतउ तुम्हें, इन्द्रभूति हूँ सोइ ॥५॥
जे कहउ ते हिव हुं करूँ, पभणइ वे कर जोड़ि ॥
राम कहइं इन्द्रभूति तु वालिखिल्लनइ छोडि ॥६॥
तुरत तेडावी तेह नइ, छोड्यउ राम हजूर ।
वालिखिल्ल हरपित थयउ, रुद्र नइं कीयउ सनूर ॥७॥

[सर्वगाथा १३८]

ढाल छठी

ढाल—ईडरियै २ उलगाणइ आबू उलग्यउ आ० रे लाल ॥

करजोड़ी राजा कहइ, किहा थी आवीया ।
किहां थी आवीया रे लाल, किहां थी आवीया ॥
कुण तुम्हें २ मइंवासी म्लेच्छ हराविया । म्ले० लाल । वि० ॥१॥
किम जाण्यउ २ कहउ राजा वालखिल्ल वाधियउ । वा० लाल वा०
विण ओलख्या २ इवड़उ उपकार तुम्हें किउ लाल उ० ॥२॥
राम कहइ २ तू जाणिसि आपणइ घरि गयउ आ० लाल आ० ॥
वाल्हेसर २ कहिस्यइ विरतात जिकउ थयउ । वि० लाल वि० ॥३॥
इम कहि नइ २ राजानइ घर पहुचाडियउ । घ० लाल । घ०
परमारथ २ वाल्हेसर सहु समझाडियउ । स० लाल स० ॥४॥
पूरविली २ परिपालइ वालखिल्ल राजनइ । वा० लाल । वा०॥
सापुरसा २ सरिखउ कुण पर काज नइ । प० लाल । प०॥५॥

संचाल्या २ अटवी मइं जिहां पाणी नहीं। जि० लाल ॥जि०॥
सीता नइं २ त्रिस लागी ते न सकइ सही। ते० लाल। ते० ॥६॥
कहइ सीता २ सुणि प्रीतम हूँ तिरसी मरू। हुं० लाल। हुँ।
जीभड़ली सूकाणी हिवहुँ किम करूँ। हि० लाल हि० ॥७॥
आणीनइं २ पाणी पाइ उतावलउ ॥ पा० लाल। पा०॥
छूटइछइ २ माहरा प्राण सूकाणउ गलउ ॥ सू० लाल। सू०॥८॥
आघेरी २ सीता चलि करि माटी पणउ ॥ क० लाल ॥क०॥
उ दीसइं २ गामडलउ तिहां पाणी घणउ ॥ति० ला०॥ ति० ॥६॥
तिहां पाणी २ हुं पाइसि सीतल तुज्भ नइं ॥ सी० ला० सी।
राम कहइ २ धरि धीरज झालि तुं मुज्झ नउ ॥झा० ला० झा० ॥१०॥
इम कहि नइं २ सीतानइं राम लेई गयउ ॥ रा० ला० ॥रा०॥
गामड़लुं २ नामइते अरूण पड्यउ ढह्यउ ॥अ० ला० अ० ॥११॥
वाभणीयउ २ नामइ ते कपिल तिहां वसइ। क० ला० ॥क०॥
सीतानइं २ जल पायुं तसु घरणी रसइं। त० ला० त० ॥१२॥
ए छट्ठी २ ढाल छोटी खण्ड त्रीजा तणी ॥ खं० लाल खं०॥
सीतानइं २ पाणीनी समयसुंदर भणी ॥ स० ला०। स० ॥१३॥

[सर्वगाथा १५१]

दूहा २

राम सीता लखमण सहू, तिहां लीधउ आसास ॥
सीतल पाणी बांभणी, पायउ परम उलास ॥१॥
तिहा सहूको सुखीया थया, थाकेलउ ऊतारि ॥
विप्र घरे वासउ रह्या, मीठा वोली नारि ॥२॥

[सर्व गाथा १५३]

ढाल सातवीं

ढाल–नाहलिया म जाए गोरीरइ वणहटइ

राग-मल्हार

सीता कहइ तुम्हे सांभलउ। राम जी ॥एक करूँ अरदास॥
इहां थी आपानइ भलउ ॥रा०॥ अटवीनउ वनवास ॥१॥

प्रीयुडा न रहियइं मंदिर पारकइं, इहां नहि को उलखाण।
माहीनर नजाणइं इहां कोइ आपणो। मूरख लोकइं अजाण ॥२ प्रि०॥

आ० तेहवइ ते घर नउ धणी ॥रा०॥ आयउ कपिल पिण विप्र ॥
फलफूल इंधण हाथमइं ॥ देखि रिसाणउ खिप्र ॥३॥ ॥प्रिय॥

क्रोध करी नइं धमधम्यउ ॥रा०॥ वाभणी नइं द्यइ गालि ॥
रे रे घरमइं घालिया ॥रा०॥ एकुण घर सम्भालि ॥४॥ ॥प्रिय॥

वचन कठोर कह्या घणा ॥रा०॥ मारण उठ्यउ डील ॥
घर माहि का पइसिवा दीया ॥रा०॥ धूलि धूसरिया भील ॥५॥ ॥प्रि०॥

रे रे इहा थी नीसरउ ॥रा०॥ घर कीधउ अपवित्र।
वांभणी लागी वारिवा ॥रा० तिम वली लोक विचित्र ॥६॥ ॥प्रिय॥

वाभण न रहइ बोलतउ ॥रा०॥ मुंहडा छूटी गालि ॥
सीता कहइ न सकुं सही ॥रा०॥ छोडिखोलउ वेढिटालि ॥७॥ ॥प्रि०॥

वसती थी अटवी भली ॥रा०॥ जिहां दुरवचन न होइ ॥
इच्छाइं रहियइं आपणी ॥रा० फलफूल भोजन सोइ ॥८॥ ॥प्रि०॥

धिग धिग ए पाणी पियउ ॥रा०॥ भलउ निर्झरण नुं नीर।
दुरजण माणस संग थी ॥रा०॥ भलउ त्रिगला नउं तीर ॥६॥ ॥प्रि०॥

कक्करि पाणी करि घणुं ॥ रा० ॥ धण नइ न मेल्हइ पास ॥
कुवचन कानि न साभलइं ॥रा०॥ वारू पुल्लिदह वास ॥१०॥ ॥प्रि॥
सीता वचन सुणीकरि ॥रा०॥ कीधउ लखमण क्रोध ॥
वांभण टांग झाली करी ॥रा०॥ ऊंचउ भमाड्यउ जोध ॥११॥ ॥प्रि०॥
राम कहइं लखमण मा मां ॥रा०॥ मुंकी दे तूँ एह ॥
ए वात तुझ जुगती नही ॥रा०॥ उत्तम द्यइ नहि छेह ॥१२॥ ॥प्रि०॥
बालक वृद्ध नइ रोगियउ ॥रा०॥ साध ४ वांभण ५ नइ गाइ ॥६॥
अबला ७ एहन मारिवा ॥रा०॥ मास्या महापाप थाइ ॥१३॥ ॥प्रि०॥
इम कहि राम मुंकावियउ ॥रा०॥ ते वाभण ततकाल ।
ते घर छोडिनइ नीसस्या ॥रा०॥ राम कहीजइ कृपाल ॥१४॥ ॥प्रि०॥
त्रीजा खडनी सातमी ॥ रा० ॥ ढाल पूरी थइ तेम ।
तीजउ खंड पूरो थयउ ॥रा०॥ समयसुन्दर कहइ एम ॥१५॥

सर्वगाथा १६८ इतिश्रीसीतारामप्रवन्धे वनवासे परोपकार वर्णनो नामस्तृतीय खण्ड सम्पूर्णः ।

(४)

दूहा १५

दानशील तप तिन्ह भला, पिणि विन भाव न सिद्धि ।
तिण करणे कह्यउ जोईजइ, चउथउ खंड प्रसिद्ध ॥१॥
लखमण सीताराम सहु, गया आघेरा जेथि,
गाजवीज करि वरसिवा, लागउ जलधर तेथि ॥२॥
सिगलइं अंधारउ थयउ, मुसलधार करि मेह ।
वूठउ नइ वाहला वूहा,धजण लागी देह ॥३॥

वड दीठउ इक तिहां वडउ, वहुल पत्र रह्यउ छाइ ॥
वड आश्रय वइठा जई, त्रिण्हे एकठा थाइ ॥४॥
यक्ष वसइं इक तिण वडइ, पणि तसु तेज पडूर ।
अणसहतउ उठी गयो, वडायक्ष हजूर ॥५॥
ते कहइ कुण वरजी सकइ, एतउ पुरुष प्रधान ।
अवधिज्ञान मइ ओलख्या, दीजइं आदर मान ॥६॥
वडउ यक्ष आयउ वही, पलिंग विछायो पास ।
सखर तलाई पाथरी, उसीसा विहुं पास ॥७॥
सुखसेती सूता त्रिण्हें, प्रह ऊगमतइ सूर ।
सहुको झबकी जागीया, वागा मंगल तूर ॥८॥
रामचंदनइ पुण्यइ करि, तिण यक्षइ ततकाल ।
देवनीमी नगरी नवी, नीपाई सुविसाल ॥९॥
गढमढ मन्दिर मालीया, ऊँचा वहुत[1] आवास ।
राजभुवन रलियामणा, लखमी लील विलास ॥१०॥
कोटीधज विवहारिया, वसइं लखेसरी साह ।
गीतगान गहगट घणा, नरनारी उछाह ॥११॥
सीता लखमण रामनइं, देखी थयो अचंभ ।
अटवी मांहि अहो २, प्रगटी नगरी सयंभ ॥१२॥
नगरी कीधी मइं नवी, यक्ष कहइं सुसनेह ।
मसकति एह छइ माहरी, पुण्य तुम्हारा एह ॥१३॥

---

१ महल

लखमण राम सीता रह्या, तिहाँ बरसाला सीम।
रामपुरी परसिद्ध थई, नगरी निःजोखीम ॥१४॥
अटवीमइं भमतउ थकउ, वीजइ दिवस अदूर।
कपिल विप्र तिहाँ आवीयो, देखइं नगरी नूर ॥१५॥

ढाल १ : राग—आसाउरी

वेसर सोना की घरि देवे चतुर सोनार। वे०। वेसर पहिरी सोना की रक्षे नदकुमार। वे०। ए गीत नी ढाल।

नगरी तिहाँ देखी नवी, ऊपनो कपिल संदेह।
पूछइ नगरी नारिनइं, कुणनगरी कहउ एह ॥१॥
नगरी रामकी, सुणि वांभण सुविचार। न०।
नगरी रूडी रामकी, सरगपुरी अवतार ॥२॥ न०॥
नगरी करि दीधी नवी, देवै रामनइ एह।
लखमण राम सुखइं रहइ, तइं साभली नहीं तेह ॥३ न०॥
सूरवीर अति साहसी, वड दाता वड चित्त।
दीन हीननइं ऊधरइं, द्यइ मन वंछित वित्त ॥४ न०॥
वलि विशेष साहमी भणी, द्यइ बहु आदर मान।
भोजन भगति करइं घणी, ऊपरि फोफल पान ॥५ न०॥
कहइं वाभण लोभी थकउ, किणही परि लहुं राम।
सुणि वांभण कहइं यक्षिणी, इम सरिसइं तुझ काम ॥६ न० ॥
इणनगरी पइसइ नहीं, सांझनी वेला कोइ।
पूर्वणि रव दिसि बारणइ, जिणमदिर छइ जोइ ॥७ न०॥

तिहाँ जे जिण पूजइ नमइ, साध वांदइ कर जोडि।
सूधइ मनि जिन ध्रम करइ, मूढ मिथ्यामति छोडि ॥८ न०॥
कपिल भेद लहइ सांभली, जिन ध्रम सूधइं चित्त।
साध समीपि जायइ सदा, देव जुहारइं नित्त ॥६ न०॥
प्रतिवूधउ ध्रम साभली, कीधउ गांठिनउ भेद।
श्रावकना व्रत आदस्या, समकित मूल उमेद ॥१० न०॥
लहि जिन धर्म खुसी थयो, दलिद्री जेम निधान।
विप्र आयो घरि आपणइ, कहइ विरतांत विधान ॥११ न०॥
चउथा खंड तणी भणी, पहिली ढाल इम जोइ।
समयसुन्दर कहइ पुण्यथी, रनि वेलाउल होइ ॥१२॥ न०।

[सर्वगाथा २७]

दूहा ६

वांभणी वात सुणी करी, संतोषाणी चित्त।
कहइं प्रियुं मइ पिण आदस्यउ, जिन ध्रम साचउ तत्त ॥१॥
कपिल वांभण नै[1] वाभणी, वेउं श्रावक सिद्ध।
देव जुहारइं दान द्यइ, गुरु वचने प्रतिबुद्ध ॥२॥
अन्य दिवस अरथी थकउ, कपिल लेइ निज नारि।
रामनो दरसण देखिवा, आव्यो नगर मझारि ॥३॥
धरम तणइ परभाव थी, रोक्यो नही किण लोकि।
राजभुवनि आव्यो वही, रह्यो लखमण अवलोकि ॥४॥

१—अनइते

निज करतूत संभारतो, पाछो नाठो जाम ।
निज नारी मूकी गयउ, तेड्यउ लखमण ताम ॥५॥

महापुरुषानइ देखिनइं, कीधउ चरण प्रणाम ।
पूछ्यो राम किहांथकी, आव्यउ स्युं तुम्ह नाम ॥६॥

ते कहइं हुं छुं पापियउ, कपिल छइ माहरुं नाम ।
घरथी वाहर काढिया, जिण तुम्हनइ गई माम ॥७॥

करकस वचन मइ बोलिया, आगण वइठा देखि ।
आयो किम ऊठाडियइं, वलि सापुरुष विशेखि ॥८॥

हुँ अपराधी हुँ पापियो, तुम्हे खमज्यो अपराध ।
अवगुण कीधां गुण करइं, ऊनम नाणइं षाध ॥९॥

सर्वगाथा ३६॥

ढाल २ बीजो

राग वयराडि

(१) जाजारे बाँधव तुँ वडउ ए गुजराती गीतनी ढाल ।
अथवा वीसारी मुन्हें वालहइ तथा हरियानी

राममीठे वचने करी, संतोष्यो रे देई आदर मान ।
तुम्ह दूषण विप्र को नही, पांतरावइ रे नरनइं अगन्यांन ॥१॥

सगपण मोटउ साहमी तणउ, कांई कीजइं रे तेहनइ उपगार ।
भोजन दीजइ अति भला, वलि दीजइ रे द्रव्य अनेक प्रकार ॥२ स० ॥

धन-धन तुंजिनध्रम लियो, वलि मुक्यो रे अगन्यान मिथ्यात ।
कपिल जनम तइं सफलउ कीयो, अम्हारो रे साहमी तुं कहात ॥३स०

इम परसंसी तेहनइ, जीमाड्यउरे भोजन भरपूर ।
स्त्री भरतार पहिरावियां, धन देई रे घणउ कीधा सनूर ॥४ स०॥
संप्रेड्या घर आपणइं, कर साहमी रे वछल सुविसाल ।
कपिलइं संयम आदर्‌यो, केतलइ इकरे वलि जातइ कालि ॥५स०॥
वरसालो पूरो रही, वलि चाल्योरे राम अटवी मझारि ।
यक्ष करइं पहिरावणी, राम दीधउरे स्वयंप्रभहार ॥६ स०॥
लखमणनइं कुंडल दीया, सीतानइं रे चूणामणि सार ।
वीणा पणि दीधी वली, वलिखाम्योरे अविनय अधिकार ॥७ स०॥
राम चल्यां पछि अपहरी, ते नगरी रे जाणे इन्द्रजाल ।
चउथा खंड तणी भणी, ए वीजेरे समयसुन्दर ढाल ॥८स०॥

सर्वगाथा ॥४४॥

दूहा २

राम तिहांथी चालिया, विजयपुरी गया पासि ।
वड पासइ विश्रामिया, राति तणी रहवासि ॥१॥
वड हेठइ लखमण सुण्यो, विरहणि नारि विलाप ।
लखमण आघेरउ गयो, संभलिवानी टाप ॥२॥

सर्वगाथा ॥४६॥

ढाल त्रीजी ३

(३) देखो माई आसा मेरइ मनकी सफल फलीरे ।
आनन्द अंगि न माय, एगीतनी ढाल ॥

सुण वनदेवी मोरी वीनती, साम्हो जोइ रे ।
हुँ निरभागिणि नारि, इण भवि नाह न पामियउ
लखमण कुमार रे, परभव होइज्यो सोइ ॥१॥ सु० आ० ॥

इम कहिनइ ऊँची चढी, पासी गलइ ल्यइं जाम ।
लखमण छोडि पासइं गयो, जाइ बोलावी ताम ॥२। सु०॥
मां मां मरइं कां कामिनी, पासी नाखी त्रोडि ।
तुज्झ पुण्ये हुं आणीयो, पूरि तुं वंछित कोडि ॥३। सु०॥
लखमण फरसइ खुसीथई, झीली अमृतकुंड जाणि ।
लखमण लेई आवीयो, राम पास हित आणि ॥४। सु०॥
चंदइ कीधो चंद्रणो, सीता दीठी ते नारि ।
कहइ हसि देउर ए किसी, चंद्ररोहिणी अणुसारि ॥५। सु०॥
लीलामई लखमण भणइ, ए देराणी तुज्झ ।
बात कही पासीतणी, थइ अस्त्री मुज्झ ॥६। सु० ॥
सीता वात पूछंइ वली, तु कुण केहनी पुत्रि ।
कहि तुझ दुख केहउ हुंतउ, पासी लीधी कुण सूत्रि ॥७। सु०॥
ते कहइ सुणि नगरी इणइ, राजा महीधर नाम ।
इन्द्राणी नाम एहवउ, पटराणी अभिराम ॥८। सु०॥
वनमाला वल्लभ घणु, हुं तस पुत्री चंग ।
बालपणइ वइठी हुती, बाप तणइं उछंगि ॥९। सु०॥
राजसभा सवली जुडी, मांगण करइं गुणग्राम ।
बोलइ घणी विरुदावली, लखमणनो लेई नाम ॥१०। सु०॥
लखमण ऊपरि ऊपनो, मुझ मनि अति महाप्रेम ।
दूरिथका पणि ढूकडा, कमलिनी सूरिज जेम ॥११। सु०॥
एह प्रतिज्ञा मइ करी, इण भवि ए भरतार ।
दसरथ सुत लखमण जिको, प्रियु देजे करतार ॥१२। सु०॥

बाप वीजा कुमरा भणी, देतउ हूँतो दिन राति।
पणि मंइ को वाछ्यो नही, लखमणनी मन वात ॥१३॥ सु०॥
अन्य दिवस वापइ सुण्यो, दीक्षा दसरथ लीध।
भरतनइ राजा थापीयो, राम देशवटउ दीध ॥१४॥ सु०॥
सीता लखमण साथि ले, वनमइं भमइं निसदीस।
वाप विषाद पाम्यो घणो, स्युं कीधो जगदीस ॥१५॥ सु०॥
इन्द्रपुरी नगरी धणी, सुन्दर रूप कुमार।
वाप दीधी मुझ तेहनइ, मइ मनि कीधउ विचार ॥१६॥ सु०॥
कइ लखमण परणुं सही, नही तरि मरणनी वात।
दृष्टि वंची परवारनी, हुं नीसरी गई राति ॥१७॥ सु०॥
वड वृक्ष हेठि ऊभी रही, पासी माडी जाम।
किणही पुण्य उदय करी, लखमण आव्यो ताम ॥१८॥ सु०॥
वनमाला वात आपणी, सीतानइ कही तेह।
ढाल त्रीजी चउथा खंडनी, समयसुन्दर कहइ एह ॥१६॥ सु०

सर्वगाथा। ६५।

दूहा ७

जेहवइ वनमाला कहइ, सीता आगलि वात।
तेहवइ पोकारी सखी, वनमाला न देखात ॥ १ ॥

सुभट चिहुँ दिसि दोडिया, जोवा लागा तास।
जोता जोता आवीया, रामचंदनइ पास ॥ २ ॥

वनमाला दीठी तिहा, राजानइ कह्यउ आइ।
लखमण राम आया इहा, वनमाला मिली जाइ ॥ ३ ॥

महिधर राय सुखी थयो, मुग मांहि ढल्यो वीय।
विछावणो लह्यो उंघतां, धानपछइ त्रेसीय ॥ ४ ॥

राम समीपइ अवीयो, राजा करी प्रणाम।
स्वागत पूछइ रामनइं, भलइ पधास्या स्वाम ॥ ५ ॥

पइसारो करि आणियो, आपणइ भुवन मझारि।
रलीय रंग वद्धामणा, आदर मान अपार ॥ ६ ॥

रामचंद नइ आपीया, ऊँचा महल आवास।
वनमाला महिला मिली, लखमण लील विलास ॥ ७ ॥

सर्वगाथा ॥७२॥

ढाल ४

(४) राग गउडी। हिव श्रीचद सकल वन जोतुं ए देसी।

इण अवसरि आयो इक दूत, नंदावर्त्त नगरी थी नूत।
अतिवीरिज राजा मुंकियो, महिधर पासि आवी कूकियो ॥ १ ॥

अम्ह सामी वोलाय तुम्हें, तुम्हनइ तेडण आव्या अम्हे।
भरत संघाति थयउ विरोध, वीजा पणि वोलाया जोध ॥ २ ॥

वहु विद्याधर जस सादूल, प्रमुख तेडाया जे अनुकूल।
हिव तुम्हें आवउ उतावला, भरत मारिनइं त्रोडा तला ॥ ३ ॥

सीहोदर नइ लीधउ साथि, हय गय रथ पणि मेली आथि।
भरत अयोध्या थी नीसरी, साम्हउ आव्यउ साहस करी ॥ ४ ॥

महिधर सुणि अणवोल्यो रह्यउ, पणि लखमण थी नगयउ सह्यउ।
कहे दूत किमि थयो विरोध, भरत ऊपरि अतिवीरिज क्रोध ॥५॥

दूत कहइ तु सुणि महाभाग, अम्ह सामी दीठउ ए लाग।
लखमण राम गया वनवास, भरतनइं पाडुं आपणइं पासि ॥६॥
दूत मुकिनइ भरतनइ कह्यउ, मानि आणि किम वइठउ रह्यउ।
आण न मानइ तउ था सज्ज, लहुं आपउ देखि सकज्ज ॥७॥
दूत वचन राजा कोपियो, भरत कहइ क्रोधातुर थयो।
अतिवीरिज नइ कहतां एम, सत खंड जीभ थई नही केम ॥ ८ ॥
केसरि सीहन सेवइ स्याल, रविनइं किसी ताराओसिपाल।
दुरभाषित नइ देइसि दंड, मारि करिसी वयरी सतखंड ॥ ६ ॥
दूत कहइ तुं गेहे सूर, ते राजानो सबल पडूर।
इम कठोर कहतइ ते दूत, झालि गलइ नाख्यउ रजपूत ॥ १० ॥
पछोकडि मारो काढीयो, तिण जाई प्रभु कोपइ चाढीयो।
भरत गिणइ नइ तुझ नइं गांन, फोकट केहउ करइ गुमांन ॥११॥
दूत वचन सुणि कोपउ चड्यो, मेलि कटकनइ साम्यउ अड्यो।
थयो विरोध थे कारण एह, तिण महिधर नइ तेड़इ तेह ॥ १२ ॥
कहइ महिधर आवा छा अम्हे, दूत आगइ थी पहुची तुम्हें।
राम कहइ सुणि महिधर राज, एतउ आज अम्हारो काज ॥१३॥
भरत अम्हारउ भाई तेह, साहिजनी वेला छइ एह।
द्यउ तुम्हेंपुत्र अम्हारइ साथि, अतिवीरिजनइं दिखाडाहाथ ॥१४॥
महिधर सुत दीधा आपणा, सीता सहित राम लखमणा।
रथ बइसी नइ साथइ थया, छाना सा तिन नगरी गया ॥ १५ ॥
नंद्यावर्त नगरीं नइ पासि, डेरा ताण्या सखर फरास।
सिंहासण वइसास्या राम, सीता लखमण उत्तम ठाम ॥ १६ ॥

समी सांझ कीधो आलोच, सीता कहइ मुझ ऊपनि सोच ।
अतिवीरिज सांभलियइ सबल, भरत जुद्धकिम करिस्यइ निबल ॥१७॥
भरत कदाचित जउ हारिस्यइ, तउ तुम्हनइ मेहणउ लागिस्यइ ।
लखमण कहइं चिंता मति करइ, जयहोस्यइ परमेसर करइ ॥१८॥
राम कहइ सूरिज प्रकटइ, काल विलंब न करिवउ घटइं ।
कोइक करिवउ सही उपाय, राति गई इण अध्यवसाय ॥१९॥
प्रहऊठी जिन मंदिर गया, देवजुहारी निःपापथया ॥
पूजा कीधी भलइ प्रकार, सफल थयउ मानव अवतार ॥२०॥
अधिष्टायक देवी गण पालि, रामनइ प्रगट थई ततकाल ।
कहइ तुम्हे चिंता म करउ काइं, अतिवीरिज पाडिसि तुम्ह पाइ ॥२१॥
चउथा खंडनी चउथी ढाल, राम अजी वनवास विचाल ॥
समयसुंदर कहइ जउ हुइ पुण्य, तु ते वसती थाई अरण्य ॥२२॥

[सर्वगाथा ६४]

दूहा ४

देवी सहु सुभटां तणउ, कीधउ नट्टुई रूप ।
देवी हुकमइ राम ते, ले चाल्यउ जिहां भूप ॥१॥
राज सभा सबली जुड़ी, विचि बइठउ राजान ।
राम जाई ऊभा रह्या, प्रच्छन रूप प्रधान ॥२॥
नट्टुई पणि ऊभी रही, राजा आगलि तेह ।
अतिवीरिज आदर दीयो, दीठी सुंदर देह ॥३॥
राम रूप नायक कह्यउ, जउ करइ राजि हुकम्म ॥
तउ नट्टुई नाटक करइं, भाजइ सहू भरम्म ॥४॥

[सर्वगाथा ४]

ढाल पाचवीं

॥ राग गउडी ॥

वाज्यउ वाज्यउ मादल कउ धोंकार, ए गीतनी जाति ।
महिमा नइ मनि वहु दुख देखी, वोल्यउ मित्र जुहार ए देसी ॥

राजा हुकम कीयो नाटक कउ, नटुई वाल कुमारि ॥
चंदवदन मृगलोयणि कामिणी, पगि झाझर झणकार ॥१॥
ततत्थेई नाचत नटुई नारि, पहिस्था सोल शृंगार ।
राम नायक मन रंगी नचावते, अपछर के अणुहारि ॥२ त०॥
गीत गान मधुर ध्वनि गावति, संगीत के अनुहारि ।
हाव भाव हस्तक देखावति, उर मोतिण कउ हार ॥२ त०॥
सीस फूल काने दो कुण्डल, तिलक कीयो अतिसार ।
नकवेसर नाचति नक ऊपरि, हुं सबमइं सिरदार ॥४ त०॥
ताल खाव वजावति वासुली, अरु मादल धोंकार ।
अंग भग देसी देखावत, भमरी द्यइ वार-वार ॥५ त०॥
ताल उपरि पद ठावति पदमिनि, कटि पातलि थणभार ।
रतन जडित कंचूकी कस वांधति, ऊपरि ओढणिसार ॥६ त०॥
चरणाचीरि चिहूं दिसि फरकइ, सोलसज्या सिणगार ।
मुख मुलकति चलति गति मलपति, निरखति नजरि विकार ॥७ त०॥
नाटक देखि मोही रह्यो राजा, मोह्या राजकुमार ।
राज सभा पणि सगली मोही, कहइं ए कवण प्रकार ॥८ त०॥
ऐ ऐ विद्याधरी ए कोई, के अपछर अवतार ।
के किन्नरि के पाताल सुंदरी, सुंदर रूप अपार ॥९ त०॥

तिण अवसरि नटुइ नृप पूछयो, भरत विरोध विचार।
मानि हिवइं तू आण भरत की, मुँकि मूरिख अहंकार ॥१० त०॥
अम्ह वचने तु मानि भरत नइ, ए तुम्ह सरण अधार।
लागि-लागि रे भरत ने चरणे, नहि तरि गयो अतवार ॥११ त०॥
कोप करी राजा ऊपाड्यो, मारण खडग प्रहार।
नटुई मिल चोटी थी झाल्यो, हूयो हाहाकार ॥१२ त०॥
खडग उपाडि कहइ इम नटुई, मानि के नाखिस्यां मारि।
लखमण चोटी झालि लेई गयो, राम तणइ दरबारि ॥१३ त०॥
राम सीता हाथी वडसी नइं, गया जिनराज विहार।
सीता कहइं मुंकि २ गरीवनइ, ए नहिं तुम्ह आचार ॥१४ त०॥
सीता वचने मुंक्यो अतिवीरिज, वरत्या जय जय कार।
समयसुंदर कहइं ढाल ए पांचमी, नाटकनो अधिकार ॥१५ त०॥

[सर्वगाथा ११२]

दूहा २२

कहइ लखमण तुं भरथनो, साचा सेवक थाइ।
अतिवीरिज वयराग धरि, राम समीपइ जाइ ॥१॥
कहइ इण राजइं मुझ सस्यो, ए अपमाननो ठाम।
हुँ संसार थी ऊभग्यो, संयम लेइसि सामि ॥२॥
राम कहइ ते दोहिलो, संयम खडगनी धार।
हिवडां भोगवि राज तु, हुए आगइ अणगार ॥३॥
राजा वयरागइ चड्यो, पुत्र नइ दीधो राज।
गुरु समीप दीक्षा ग्रही, सास्या आतम काज ॥४॥

तप संयम करइ आकरा, उद्यत करइं विहार।
पुत्र विजयरथ ते थयउ, भरत नउ अगन्याकार ॥५॥
लखमण राम विजयपुरइं, रहि केतला एक दीह।
वनमाला तिहा मुकि नइं, आघा चाल्या सीह ॥६॥
खेमंजलि नगरी गया, वाहिर रह्या उद्यान।
लखमण पूछी राम नइं, माहि गयउ सुणइ कानि ॥७॥
सत्रुदमन राजा कहइं, जे मुझ सकति प्रकार।
सूरवीर सहइ तेहनइं, पुत्री द्यूं अति सार ॥८॥
लखमण कोतुक देखिवा, गयउ राजा नइ पासि।
आदर मान घणउ दीयउ, वइठउ मन उल्हास ॥९॥
रूप अधिक देखी करी, राजा पूछ्यो एम।
किम आव्या तुम्हें कवन छउ, कहो वात धरि प्रेम ॥ १० ॥
भरत तणउ हूं दूत छु, आयो काम विशेषि।
पांच सकति तु मुकि हुं, सहिसि तमासो देखि ॥ ११ ॥
जितपद्मा राजा सुता, देखी लखमण रूप।
सूरपणो काने सुणी, ऊपनो राग अनूप ॥ १२ ॥
लखमणनइं छानो कहइं, राजकुंयरि कर जोड़ि।
महापुरुष तुं मत मरइ, जीवि वरसनी कोडि ॥ १३ ॥
कहइ लखमण तुं वीहि मा, ऊभी देखि तमास।
कहइ राजा नइं कां अजी, ढील करउ नहि हास ॥ १४ ॥
इम कहइ राजा उठीयो, रह्यो ठाण वय साप।
मुॅकी पाच अनुक्रमइ, सकति पराक्रम दाखि ॥ १५ ॥

एक सकति जिमणइं करइं, बीजी डावइं हाथि।
त्रीजी चउथी काख मइं, पाचमी दातां साथि ॥ १६ ॥
लखमण सकति सहु ग्रही, लागो न को प्रहार।
कुसम वृष्टि देवे केरी, प्रगट्यउ जय-जय कार ॥ १७ ॥
लखमण कहइ एक माहरउ, सहि तुं सकति प्रहार।
राजा लागो कांपिवा, हूउ ते हाहाकार ॥ १८ ॥
जितपद्मा कहइ छोडिदे, खमि अपराध कृपाल।
हिव हुं तो थइं ताहरी, भगत थयो भूपाल ॥ १९ ॥
कहइ राजा हिव परणि तुं, मुझ पुत्री गुण गेह।
कहइ लखमण छइ माहरइं, भाई जाणइ तेह ॥ २० ॥
सत्रुदमन तिहां जाइनइं, प्रणमी रामना पाय।
तेडी आण्यउ नगर मइ, रामचन्दनइ राय ॥ २१ ॥
जितपद्मा परणी तिहां, लखमण लील विलास।
केइक दिवस तिहा रही, वलि चाल्या वनवास ॥ २२ ॥

सर्वगाथा ॥ १३५ ॥

ढाल ६

॥ राग गउड़ी ॥

जंबुद्वीप मझार म० ए सुबाहु संधिनी ढाल

नगर वंसस्थल नाम, पहुता पाधरा, राम सीता लखमण सहूए,
तिण अवसरि तिहांलोक, दीठा नासता बालवृद्ध तरुणा वहूए ॥ १ ॥
रामइ पूछ्या लोक, केहनइ भयकरी, नासइ भाजइ बीहताए,
राजा राणी मंत्रि, धसमसता थका, आतमनइं हित ईहताए ॥ २ ॥

किण कह्यो परवत पासि, रुड महा निसि, सुणियइ शवद वीहामणउए
मतको करइं विणास, आवि अम्हारडउ, मरणतणउ भय अति घणउए।
कहइ सीता सुणि नाह, आपे पिणि हिवइं, इहाँ सुं नासां तउ भलउए।
राम कहइ मतवीहि, नासइ नहिं कदे, उत्तम नर मांडइं किलउए ॥४॥
सीतानउ ग्रहि हाथ, राम उंच्यो चड्यउ, लखमण नइं आगइ कीयो ए।
गिरिऊपरिगया तेथि, दीठा साधवी, देखत हिंयडउ हरखीयउए ॥ ५ ॥
कठिन क्रिया तप जप, करइ आतापना, चरम ध्यान तत्पर थकाए।
तिण्हि प्रदक्षिण देइ, रामसीता सहू, वांदइ साधनइ ऊछकाए ॥ ६ ॥
उरग भुयगम भीम, गोणस अजगर, साधु वीठ्यउ सोपकरी ए।
धनुष अग्र सुं राम, छेडि दूरइं कीया, देह उघाड़ी साधरीए ॥ ७ ॥
फासू पाणी सेति, चरण पखालिया, सीता कीधी वंदनाए।
रामइ वाई वीण मधुर सुरइं करी, मुनिगण गाया इकमनाए ॥ ८ ॥
सीता करि श्रृंगार, सारंगलोयणा, साधु भगति नाटक करइए।
पूरव वयर विशेखि, कोई सुर निसिभर, उपसर्ग करइंतिण अवसरइए ।९।
अगनि सीरीषा केस, आंखि विली जिसी, निपट नासिका चीपडीए।
काती सरिखी दाढ, अति वीहामिणी, भाल उपरि भृकुटी चडीए ॥१०॥
काती नइ करवाल, करि झाली करी, नाचइं कूदइं आंफलइए।
काया मनुष्यनी काटि मांस, खायइं मुखि, हसइ घणुं नइ हूकलइए ।११।
मुकई अंगिनी झाल, खांउ खाउ खांउ करइ, भूतप्रेत अंवर तलइंए।
क्रूरमहा विकराल, भीम भयकर काल, कृतांत रीसइं वलइए ॥ १२ ॥
सीता देखी भूत, वीहतीं रामनइ, आलिंगन देई रहीए।
रामकहइ मत वीहि, कर साहस प्रिया, रहिमुनिवर ना पाय ग्रहीए ॥१३॥

जा लगि भूत पिसाच, अम्हे त्रासवां, इम कहि रामनइ लखमणाए।
लाठी लीधी हाथि, अनइ आफाली ऊंची, तेभूत नाठा ततखिणाए ॥१४॥
उपसर्ग-कारी देव, जाण्यो ए नर, राम अनइ लखमण सहीए।
जोर न चालइ मुज्झ तुरत नासी करी, अपणइं ठामि गयो वहीए ॥१५॥
ते मुनिवर तिणराति, सुकल ध्यान नइं चड्या, घातिक करम नउखय कीयोए।
पाम्यो केवलन्यान, भाण समोपम, लोकालोक प्रकासीयोए॥ १६ ॥
कनक कमल वइसारि, वाइं दुंदुभी, केवल महिमा सुरकरइए।
राम कहइ कर जोडि, कहउ तुम्हें भगवन, ए कुण सुर द्वेष कां धरइए॥
छट्ठो ढाल रसाल, चउथा खडनी, साधुनइ केवल ऊपनोए।
समयसुन्दर कहइ एम, द्वेपनो कारण, सांभलो सहु को इकमनोए ॥१८॥

[सर्वगाथा ५२]

ढाल ७

(७) कपूरहुवइ अति ऊजलोरे वलि रे अनूपम गध एगीतनी ढाल ॥

राम सीता लखमण सुणउरे, पांछला भवनो वयर।
विजय परवत राजा हूं तोरे, उपभोगा तसु वयर॥ १॥

पूरव वयर केवलि एम कहॅति, एतउ उपसर्ग साधु सहंति। पू०।
कीधा करम न छूटीयइरे, सुख-दुख सहुको सहंति ॥ २ पू० ला० ॥

अमृतसर राजा तणउरे, दूत हुतउ सुविचित्र।
राणीसुं लुवधउ रहइरे, वसुभूति नामइ मित्र॥ ३ पू०॥

भूप हुकम्मि वसुभूति सु रे, दूत चाल्यो परदेश।
विप्रइ दूतनइ मारियोरे, पापी पाड़ई लेस॥ ४। पू०॥

पाछइ आवी इम कहइरे, राजा आगलि वात।
दूत पाछउ मुँनइ वालियोरे, कहइ वीजउ न सुहात ॥ ५ । पू० ॥
राणी अति हरषित थईरे, वांभण सु वहु प्रेम।
काम भोग सुख भोगवइरे, विप्र कहइ वलि एम ॥ ६ । पू० ॥
उदित १ मुदित २ सुत ताहरारे, एकरिस्यइं अंतराय।
मारि परा तुं तेहनइ रे, जिम सुख भोगव्या जाय ॥ ७ ।पू०॥
वांभणी भेद जणावीयोरे, उदितकुमर नइ तेह।
तुझ माता मुझ नाह सुं रे, कुकरम करइं निसंदेह ॥ ८ । पू० ॥
खडग सुँ माथो वाढियो रे, उदितइ मार्‍यो विप्र।
विप्र मरीनइं ऊपनो रे, म्लेच्छपल्ली नइ खिप्र ॥ ९ । पू० ॥
उदित मुदित विहुँ वाधवे रे, आव्यो मनि संवेग।
धिग २ ए संसारनइ रे, अनरथ पाप उद्देग ॥ १० । पू० ॥
विहुँ वाँधव दीक्षा ग्रही रे, मतिवर्द्धन मुनि पास।
उग्र तपइ तप आकरा रे, मोडइं भवनो पास ॥ ११ । पू० ॥
समेतसिखर जात्रा भणी रे, चाल्या मुनिवर वेइ।
म्लेच्छ पालि माहें गया रे, म्लेच्छे द्वेष करेइ ॥ १२ । पू० ॥
साधुनइ मारण उठीयो रे, क्रोधी काढि खडग।
सागारी अणसण करी रे, मुनि रह्या मेरु अडिग ॥ १३ । पू० ॥
सत्रु मित्र सरिपा गिणइं रे, भावना भावइ अनित्य।
देही पंजरइ दुखनउ रे, मुगति तणा सुख सत्य ॥ १४ । पू० ॥
पल्लीपति नइ ऊपनी रे, करुणा परम सनेह।
मारतउ राख्यो म्लेछ नइ रे, उत्तम करणी एह ॥ १५ । पु ॥

काइंक धरम विराधियो रे, कीधो अनुक्रमि काल।
गुरुडाधिप देवता थयां रे, खेमंकर भूपाल ॥ ३८ । पू० ।
ते अणुद्धर पणि एकदा रे, कौमुदी नगर मझार।
तापस सेती आवीयो रे, अगन्यान कष्ट अपार ॥ ३६ । पू० ।
वसुधारा राजा तिहाँ रे, पिण तापसनो भक्त।
मदनवेगा तसु भारिजा रे, ते जिन धरम सुं रक्त ॥ ४० । पू० ।
इक दिन राणी आगलइं रे, वसुधारा राजान।
तापस परसंसा करइं रे, को नहि एह समान ॥ ४१ । पू० ।
राणी तउ सुध श्राविका रे, सह न सकइं कहइ राय।
ए अगन्यांन मिथ्यामती रे, मुझ नइ नावइ दाय ॥ ४२ । पू० ।
साचा साध तो जैनना रे, जीवदया प्रतिपाल।
निरमल सील पालइं सदा रे, विषय थकी मन वाल ॥ ४३ । पू०
सत्रु मित्र सरिषा गिणइ रे, नहि किणसुं राग रोस।
आप तरइं नइं तारवइ रे, निरुपम गुण निरदोस ॥ ४४ । पू० ।
राणी वचन सुणी करी रे, रीसाणउ नर राय।
तुं जिनधरम नी रागीणी रे, तिण तापस न सुहाय ॥ ४५ । पू० ।
राणी कहइ राजन सुणउ रे, तापसनी एक वार।
दृढता देखउ धरमनी रे, सगली लहिस्यउ सार ॥ ४६ । पू० ।
इम कहि राणी आपणी रे, वेटी रूप निधान।
मुकी तापसनी मढी रे, निसि भर नव जोवान ॥ ४७ । पू० ॥
ते कन्या गई एकली रे, प्रणम्या तापस पाय।
करजोड़ी करइ वीनती रे, साभलो करि सुपसाय ॥ ४८ । पू० ॥

मुझ नइ काढी बाहिरी रे, माता विण अपराध।
सरणइं आवी तुम्ह तणइं रे, द्यउ दीक्षा मुझ साध ॥ ४६। पू० ॥
नव जोवन दीठी[1] भली रे, कुंकू वरणी देह।
चन्द्रवदनि मृगलोयणी रे, अपछर जाणो एह ॥ ५०। पू० ॥
ते कन्या देखी करी रे, तापस पणि तिण वार।
चूकउ अणुधर चित्तमइं रे, जाग्यउ मदन विकार ॥ ५१। पू० ॥
कहइ अणुद्धर सुणि सुन्दरी रे, मुझनइ सरणो तुज्झ।
कामअगनि करि वलि रही रे, टाढी करि तनु मुज्झ ॥ ५२। पू० ॥
आवि आलिंगन दे मुंनइ रे, मानि वचन कहइ एम।
आलिंगन देवा भणी रे, वांह पसारी प्रेम ॥ ५३। पू० ॥
तितरइं तिण कन्या कह्यो रे, अहो अकज्ज अकज्ज।
मुझ नइ को अजी नाभड्यो रे, हुं तो कन्या सलज्ज ॥ ५४। पू० ॥
जइ संग वांछइ माहरो रे, तउ तापसध्रम छोड़ि।
मुनइ मा पासि मांगीलइं रे, मागता का नहि खोडि ॥५५। पू० ॥
अमुकइ घरि[2] छइ माहरी रे, माता चालि तुं तेथि।
कन्या पूठइं चालियो रे, ते गई गणिका जेथि ॥ ५६। पू० ॥
गणिकानइं पाये पडी रे, वीनति करइं वार-वार।
ए पुत्री द्यो मुझ भणी रे, मानिसि तुझ उपगार ॥ ५७। पू० ॥
छांनउ रह्यो राजा सुणइ रे, तापस वचन सराग।
पाछी वाहे वांधियो रे, फिट निरलज निरभाग ॥ ५८। पू० ॥
देसथी बाहिर काढियो रे, थयो तापसथी विरत्त।
मयणवेगानइं इम कहिइ रे, तू कहिती ते तत्त ॥ ५६। पू० ॥

---

१ जोरइ चढी २ मइ

साध तिहाथी चालिया रे, पहुता गिरि समेत।
विधि सेती जात्रा करी रे, अणसण लीधउ तेथि॥ १६। पू०॥

पहिलइ देवलोकि देवता रे, उपना वेउ उदार।
म्लेछ संसार भमी करी रे, आव्यो नर अवतार॥ १७। पू०॥

तापसी दीक्षा आदरी रे, कीधो अगन्यान कष्ट।
ज्योतिपीयां माहि ऊपनोरे, पणि परिणामे दुष्ट॥ १८। पू०॥

नगर अरिष्टपुरइ तिसइ रे, प्रियवन्धू राजान।
तेह तणइ वे भारिजा रे, जीवन प्राण समान॥ १६ पू०॥

पदमाभा नइ कनकाभा रे, अपछर जाणि प्रतिखि।
ते सुर देवलोक थी चवीरे, ऊपना पदमाभा कूखि॥ २०। पू०॥
एक रतनरथ रूयड़उरे, नामइं विचित्र रथ अन्न।
जोतिपी सुरपणि तिण समइरे, कनककाभा कूखि उपन्न॥ २१। पू०॥
नाम अणुद्धर एहवोरे, मा वोपे तसु दीध।
राजदेई वडा पुत्रनइ रे, राजा संयम लीध॥ २२। पू०॥
प्रियवन्धू मुनि पामीया रे, सरग तणा सुख सुद्ध।
अणुद्धर अति मच्छर धरइं रे, विहुं भाई उपरि दुद्ध॥ २३। पू०॥
लागउ देसनइ लूटिवारे, वाहिर काढ्यो भूप।
तापस व्रत लीधउ तिणइं रे, पणि प्रद्वेष सरूप॥ २४। पू०॥
राजा रतनरथ अवसरइं रे, विचित्ररथ संयोगि।
राज छोड़ी संयम लीयो रे, गया पहिलइ देवलोगि॥ २५। पू०॥
सुख भोगवि देवातणा रे वेउं चव्या समकालि।
सिद्धारथपुरनो धणी रे, खेमंकर भूपाल॥ २६। पू०॥

विमला पटराणी तणा रे, ऊपना पुत्ररतन्न।
देसभूषण कुलभूषणा रे, नाम गुणोनिष्पन्न ॥ २७ । पू० ॥
राजा भणिवा घालिया रे, नेसालइं वे पुत्र ।
काल घणे ते तिहा रह्या रे, भणि गुणि थया सुविचित्र ॥ २८ ॥ पू ।
पूठइं मां बेटी जिणी रे, कमलूसवा तसु नाम ।
रूप लावण्य गुणे भरी रे, सकल कला अभिराम ॥ २९ । पू ॥
सकल कला सीखी करी रे, निज घरि आया कुमार ।
दीठो कन्या रूवड़ी रे, जाग्यो मदन विकार ॥ ३० । पू ।
वहिनिपणुं जाणइ नही रे, मन माहि चिंतवइं एम ।
तात कन्या आणी इहा रे, अम्ह निमित्त सप्रेम ॥ ३१ । पू ।
पुत्री किणही भूपनी रे, मृगलोयणि सुकुमाल ।
सुख भोगविस्यां एहसुं रे, हिव अम्हे चिरकाल ॥ ३२ । पू० ।
तिण अवसरि जस बोलियो रे, किणही भूपनो एम ।
धन-धन खेमंकर प्रभू रे, धन-धन विमला तेम ॥ ३३ । पू० ।
उत्तम कन्या जेहनइ रे, कमलूसवा कहवाय ।
बे भाई ते सांभली रे, कहइ अनरथ हाय-हाय ॥ ३४ । पू० ।
अहो अम्हे अगन्यांन अधिले रे, वहिनसुं वाछ्यो भोग ।
धिग धिग काम-विटंबना रे, काम विटंब्या लोग ॥ ३५ । पू० ।
इम मनमाहें चिंतवइं रे, जाण्यो अथिर संसार ।
सुव्रतसुरि पासइं जई रे, लीधउ संयम भार ॥ ३६ । पू० ।
खेमंकर दुखियो थयो रे, दोहिलो पुत्र वियोग ।
रात दिवसि रहइ झूरतो रे, परिहरया भोग संयोग ॥ ३७ । पू० ।

ए विरतात देखी करी रे, प्रतिबूध्यो नरराय।
श्रावकनो ध्रम आदर्‌यो रे, मिथ्यात दूरि गमाय ॥ ६० । पू० ॥
तापस पिणि निंदीजतो रे, कुमरण मुँवो तेह।
भूरि संसार माहे भमी रे, दीठा दुक्ख अछेह ॥ ६१ । पू० ॥
वलि मानव भव पामीयो रे, लीधो तापस धर्म्म।
काल करी थयो देवता रे, अनलप्रभ सुभ कर्म्म ॥ ६२ । पू० ॥
अवधिज्ञान प्रजुजुता रे, अम्हनइं दीठा एति।
पूरवलउ वयर साभरयो रे, उपसर्ग कीया इण हेति ॥ ६३ । पू० ॥
उपसर्ग करितउ वारियो रे, राम तुम्हे ते देव।
विण भोगव्यां किम छूटइं रे, करम सवल नितमेव ॥ ६४ । पू० ॥
केवलि सासो भाँजियो रे, सांभल्यो सहु विरतात।
राम सीता लखमण कहइ रे, धन-धन साध महंत ॥ ६५ । पू० ॥
केवलीनी पूजा करइं रे, राम भगति मनि आणि।
सीता कहइं धन-धन तुम्हे रे, जनम तुम्हारो प्रमाण ॥ ६६ । पू० ॥
महानुभाव मोटा तुम्हे रे, देवता नइं पूजनीक।
राग द्वेष जीता तुम्हे रे, उपसर्ग सह्या निरभीक ॥ ६७ । पू० ॥
केवल लखमी पांमिया रे, जे जगमइ दुरलंभ।
सीता साध प्रसंसती रे, शिव सुख कीधा सुलंभ ॥ ६८ ॥ पू० ॥
[इण अवसरि इहां आविउ रे, गरुड़ाधिप शुभ मन्न।
केवलि नइ प्रणमी करी रे, राम कहइ सुवचन्न ॥]
साध भगति कीधी भली रे, तिणइ तूठो तुम्ह।
जे मांगे ते द्युं अम्हे रे, अचिंत सकति छइ अम्ह ॥ ६९ ॥

राम कहइं किण आपदारे, सानिधि करिज्यो सांमि।
केवली महिमा साभली रे, नगरी-नगरी ठाम-ठाम ॥ ७० । पू० ।
नगर-नगर ना राजवी रे, तिहाँ आथा सहु कोय।
राम कीधी पूजा साधनी रे, ते देखी रह्या जोय ॥ ७१ । पू० ।
वंसत्थल पुरनो धणी रे, आयो सुरप्रभ भूप।
राम सीता लखमण तणी रे, कीधी भगति अनूप ॥ ७२ । पू०
राम आदेश तिणि गिरइ रे, सहु राजवीये तार।
जिनप्रासाद करावियो रे, प्रतिमा रतन उदार। ७३ । पू० ।
कीधी रामइ तिणि गिरइ रे, क्रीडा अनेक प्रकार।
ते भणी रामगिरि तेहनउ रे, प्रगट्यो नाम उदार ॥ ७४ । पू० ।
सातमी ढाल पूरी थई रे, साभलिज्यो इक मन्न।
चउथउ खंड पूरो थयो रे, समयसुंदर सुवचन्न ॥ ७५ । पू० ।

[सर्वगाथा २२८]

इतिश्री सीताराम प्रवन्धे केवलि महिमा वर्णनो नाम चतुर्थ खंडः ॥

खंड ५

दूहा ५

हिव वोल्युं खंड पाचमो, पाच मिल्या जसवाद।
पांचामाइं कहीजियइं, परमेसर परसाद ॥ १ ॥
सीताराम सहू वली, आगइं चाल्या धीर।
दण्डकारण्य वनइ रह्या, कन्नरवानइं तीर ॥ २ ॥
नदी स्नान मज्जन करइं, वन फल मीठा खाइं।
वस कुटीर करी रहइं, सुखइ दिवस तिहाँ जाइं ॥ ३ ॥

अडकधान आंबा फणस, दाडिम फल जंभीर।
लखमण आणइ अति भला, वन सुरभीना खीर ॥४॥
खाता पीतां विलसतां, केइक दिन गया जेथि।
तेहवइं साधु वि आविया, पुण्य योग करी तेथि ॥ ५ ॥

ढाल १

॥ राग केदारो गोडी ॥

चाल—आवो जुहारो रे अक्तारउ पास, मननी पूरइ आस।

साध बे आयोरे अंबरचारि, पहुचाडइ भव पार।
तप कर दीपइं तेहनी देह, निरुपम गुण मणि गेह ॥ १ । सा० ।
वंदना कीधीरे लखमण राम, बे कर जोडी ताम।
आनंद पांम्योरे दरसण देखि, चंद चकोर विशेषि ॥ २ । सा० ।
सीता वांद्या रे मुनिवर बेइ, त्रिहि प्रदक्षिणा देइ।
सीता बोली रे द्यो मुझ लाभ, वइसउ तउ सूझतो डाभ ॥ ३ । सा० ।
सीता थइ रे रोमंच सरीर, सखर विहरावी खीर।
नारंग केला रे फणस खजूर, फासू दिया रे भरपूर ॥ ४ । सा० ।
सानिधि कीधी रे समकित दृष्टि, थइ वसुधारा वृष्टि।
दुंदुभी वागी रे दिव्य अकास, अहो दान सबल उलास ॥ ५ । सा० ।
सीता कीधो रे सफल जनम्म, त्रोड्या अशुभ करम्म।
दुरगंधउ हुतोरे पंखी एक, थयो रिषी देखि विवेक ॥ ६ । सा० ।
आवी वांद्या रे साधना पाय, तुरत सुगंध ते थाय।
साध प्रभावइ रे रतन समान, देह तणो थयो वान ॥ ७ । सा० ।

रामचंद देखी रे पंखी सरूप, अचिरजि पाम्यो भूप।
रामइ पूछ्यो रे साध त्रिगुप्ति, नामइं करउ भवलुप्ति ॥ ८। सा०।
भगवन भाखो रे ए विरतात, कौतुक चित्तन मात।
कहउ किम पंखी रे तुम्हारो पाय, पडियो दूर थी आय ॥ ९। सा०
दुरगंध देही रे थई क्यों सुगंध, साध कहउ संबंध।
साध जी भाखइ रे मधुरी वाणि, राम पूरव भव जाणि ॥१०। सा०।
राजा हुंतउ रे दंडकी नाम, कूडलपुरनउं सामि।
मक्खरि नामा रे तसु पटराणि, श्रावक धरमनि जाणि ॥११। सा०।
पिणि मिथ्याती रे राजा तेह, साधसु तसु नही सनेह।
एक दिन दीठो रे साध महात, काउसिग रह्यो एकात ॥ १२। सा०।
राजा घाल्यो रे साधु नउं कंठि, सांप मुयो गलि गंठि[1]।
साधनु देखी रे अगन्यान अंध, राजा करइं क्रम बंध ॥ १३। सा०।
साधइ कीधउ रे अभिग्रह आप, जा लगि छइ गलइं साप।
हुंनहिं पारुं रे काउसग्ग ताम, रहिस्युं सुद्ध प्रणाम ॥ १४। सा०।
राजउ दीठो रे बीजइं दीह, तिमहीज साध अबीह।
राज्या रंज्यो रे उपसम देखि, वली वयराग विशेषि ॥ १५। सा०।
दंडकी राजा रे चितवइ एम, ए मुनि कुंदन हेम।
तपसी मोटउ रे ए अणगार, गुणमणि रयण भंडार ॥ १६। सा०।
हा मइ कीधो रे मोटा पाप, साधनइ कीधो सताप।
हुं महापापी रे आसातनाकार, छूटिसि केण प्रकार ॥ १७। सा०।
मै तो जाण्यो रे आज ही मर्म, साचो श्री जिन धर्म्म।
साप उतार्यो रे कंठथी तेह, साधु वाद्या सुसनेह ॥ १८। सा०।

१—लेइ उलठि।

अपराध खाम्यो रे चरणे लागि, जिन ध्रम आदर्‍यो भागि ।
राजा आयो रे आपणइ गेह, साध भगत करइं तेह ॥ १९ । सा० ।

तिण नगरी मइ तापस रुद्र, रहइं पणि मनमां क्षुद्र ।
नृपनइ दीठो रे साधनइ भक्त, मच्छर आण्यो विरक्त ॥ २० । सा० ।

साधनइ मारूं रे केण प्रपंच, इम चितवि कियो संच ।
तापस कीधो साधनो वेप, साध उपरि धर्‍यो द्वेष ॥ २१ । सा० ।

जइ नइ पईठारे अंतेउर मांहि, राणी विडंबी साहि ।
राजा दीठो रे आंपणी मीटि, बाहिर काढ्यो पीटि ॥ २२ । सा० ।

मूलथी मार्‍यो रे तापस साध, अपणो कीधो लाध ।
राज्या कोप्यो रे तेणइं मेलि, साधनइं एकठा भेलि ॥२३ ॥ सा०

घाणी पील्या रे सगला साध, एकतणइं अपराध ।
अगल्यान आंधउरे अन्याई राय, न करी विचारणा काय ॥२४॥ सा०

साध एक कोई गयो थो अनेथि, ते पिणि आयो तेथि ।
लोके वार्‍यो रे तेथि म जाय, आगइं अनरथ थाय ॥२५॥ सा०

साध वहीनइ रे गयो तिण ठाम, अनरथ दीठो ताम ।
पापी राजा रे रिषि निरदोषि, पील्या चड्यो तिण रोषि ॥२६॥ सा०

साध विचार्‍यो रे सूत्र कहेइ, समरथ सज्जा देइ ।
चक्रव्रति सेना रे चूरइ साध, लवधि पुलाक अराध ॥२७॥ सा०

साधइं मार्‍यो रे राति अबीह, चिहुं पहुरे चारि सीह ।
साधइं मार्‍यो रे मछीगर एग, टाल्यो मच्छ उदेग ॥२८॥ सा०

सुमंगल दहिस्यइ रे मुनि प्रत्यनीक, राजानइ निरभीक ।
नमुचिनइं मार्‍यो रे विष्णुकुमार, दूपण नहीय लिगार ॥२९॥ सा०

तेजोलेश्या रे मुंकी तेण, नगर वाल्यो सहिजेण।
राजाराणी रे वल्यो सहु कोइ, सर्वत्र समसान होइ ॥३०॥ सा०
देश बल्यो रे सहु ते ठाम, दंडकारण्य थयो नाम।
दंडकी राजा रे भमी संसार, दंडकारण्य मझार ॥३१॥ सा०
पंखी हूयो रे गृद्ध कुबंध, करम करो दुरगंध।
अम्हनइ देखी रे थयो सुभ ध्यान, जातीसमरण न्यान ॥३२॥ सा०
ए प्रतिवूधो रे वंदना कीध, त्रिणहि प्रदक्षिणा दीध।
धरम प्रभावइ रे सुंदर देह, थइं पखी वात एह ॥३३॥ सा०
रामनइ सुणी रे साध वचन्न, रोमंचित थयो तन्न।
कहइ तुम्हें वारुरे कह्यो विरतांत, अम्हनइं साध महांत ॥३४॥ सा०
मुनि प्रतिवोध्यो रे पंखी गृद्ध, आदर्यो जिनध्रम सुद्ध।
पाडूया जाण्या कर्म विपाक, जेहवा फल किंपाक ॥३५॥ सा०
सूधउ पालइ रे समकित धर्म्म, न करइं हिंसा कर्म्म।
झूठ न वोलइ रे पालइ सील, परिग्रह नही विण डील ॥३६॥ सा०
राति न खायइ वरज्जइ मंस, न करइ पाप नो अंस।
ए ध्रम पालइ रे आतम साध, मुगति तणइ अभिलाष ॥३७॥ सा०
साध भलायो रे पंखी तेह, सीतानइ सुसनेह।
सार सुधि करिजे रे एहनी नित्य, सीता कहइ पूज्य सत्य ॥३८॥ सा०
साध सिधाया रे आपणी ठाम, जप तप करइं हितकाम।
सीता कीधी रे तसु सुजगीस, परिचरिजा निसिदीस ॥३९॥ सा०
पंखी थयो रे सीता सखाय, मनगमतो सुखदाय।
तसु तनु सोहइं रे जटा अभिराम, पंखी जटायुध नाम ॥४०॥ सा०

साधनइं दीधो रे भलइं प्रस्ताव, दानतणइं परभाव।
रामनइं थई रे रिधि अदभूत, माणिक रतन[1] परभूत, ॥४१॥ सा०
देवता दीधो रे रथ श्रीकार, चपल तुरंगम च्यार।
रथ वइसीनइ रे सीताराम, मन वंछित भमइ ठाम ॥४२॥ सा०
भमता देखइ रे कोतुक वृंद, पामइं परमाणंद।
खंड पांचमानी रे पहिली ढाल, समयसुंदर कहइं रसाल ॥४३॥ सा०

[सर्वगाथा ४८]

दूहा ६

सीता लखमण राम बलि, दंडकारण्य मझारि।
पहुँता तिहा कोइक नदी, तिहाँ वन खंड उदारि। १॥
रामचंद सीता सहित, उत्तम मंडप माहि।
बइठा लखमण नइं कहइ, आणी मन उच्छाहि ॥२॥
गिरि वहु रयणे भर्‌यो, नदी ते निरमल नीर।
वनखंड फल फूले भर्‌या, इहाँ बहु सुख सरीर ॥३॥
माता बाधव मित्र सहु, ले आउ इणि ठाम।
आपे सहु रहिस्याँ इहाँ, नवो वसावी गाम ॥४॥
तउ वलतो लखमण कहइ, ए मुझ गम्यो विचार।
मुझनइ पिण इहाँ उपजइ, रहतां हरष अपार ॥५॥
इम ते आलोची करी, दसरथ राजा पुत्र।
जाइ तिहाँ रहइ तेहवइ, जे थयो तेसुणो तत्र ॥६॥

[सर्वगाथा ५४]

१—मणि माणिक

ढाल २

ढाल :—सुणउरे भविक उपधान वूहा विण, किम सूझइ नवकार जी ।
अथवा—जिनवर सु मेरो मन लीनो, ए देसी ॥

तिण अवसरि लंकागढ़ केरो, रावण राज करेइजी ।
समुद्रतणी पाखतियां खाई, दससिर नाम धरेइजी ॥१॥ ति०
तेहतणी उतपति तुम्हें सुणिज्यो मूलथकी चिरकालजी ।
वैताढ्य परवत उपरि पुर इक, रथनेउर चक्रवालजी ॥२॥ ति० ।
मेघवाहन विद्याधर राजा, इन्द्र सुं वयर छइ जासजी ।
अजितनाथनइं सरणइं पइठो, इन्द्र तणो पड्यो त्रास जी ॥३॥ ति०
चरणकमल वादीनइ वइठो, भगति करइं करजोडि जी ।
मेघवाहन राजा इम वीनवइं, भव संकट थी छोड़ि जी ॥४॥ ति०
तीर्थंकरनी भगति देखीनइं, रंज्यो राक्षस इंदजी ।
मेघवाहन राजानइ कहइ इम, सुणि मेटुं तुझ दंद जी ॥५॥ ति०
लवण समुद्र मझार त्रिकूटगिरि, उपरि राक्षसदीप जी ।
सर्गपुरी सरिपी छइ नगरी, तिहां लका जिहां जीप जी ॥६॥ ति०
तिहां जा तुं करि राज नरेसर, मुझ आगन्यां छइं तुज्झजी ।
तिहां रहतां थकां कोउ नहि थायइं, अवर उपद्रव तुज्झ जी ॥७॥ ति०
वलि पृथ्वीना विवर माहे छइ, आठ जोयण उचानिजी ।
पातालपुर पइं दंडगिरि हेठइ, दुप्रवेस शुभ शांतिजी ॥ ८ । ति० ॥
ते पणि नगरी मंइ तुझ दीधी, जा तुं करि आणंदजी ।
मेघवाहण लंका जइ वइठो, राज करइं निरदंदजी ॥ ९ । ति० ॥

राक्षसदीप राखइ विद्याधर, तिणि राक्षस कहवाइ जी।
पिणि राक्षस अन्नेरा केई, सुरनहीं छइ इण ठाइजी ॥ १० । ति० ॥
मेघवाहन विद्याधर वंसइं, बहु राजा हुया केइजी।
तसु क्रमि रतनाश्रव अंगज, रावण राज करेइ जी ॥ ११ । ति० ॥
प्रवल प्रचण्ड त्रिखंड तणो धणी, त्रैलोक्य कंटक तेहजी।
तेज प्रताप तपइं रवि सरिखउ, अखिल गंजण एहजी ॥ १२ । ति० ॥
वालपणइं वापइ पहिरायो, देव संबधी हारजी।
तसु रतने बालक नवमुहढ़ा, प्रतिबिम्बा अति सार जी ॥१३ । ति०॥
दसमुहडा देखी वालकना, रतनाश्रव थयो प्रेमजी।
दीधउ नाम दसूठण दिवसइ, ए दसवदन ते एमजी ॥१४ । ति०॥
इकदिन अष्टापद गिरि ऊपरि, बहता थम्यो विमानजी।
भरत कराया चैत्य मनोहर, उल्लंघ्या अपमानजी ॥१५ । ति०॥
चित चमक्यो तिहां देखि दसानन, तप करतो रिषि वालि जी।
इण रिषि सहीय विमान थम्यो मुझ, कीधउ कोप चण्डालजी ।१६। ति०।
अष्टापद ऊपाड्यो उंचउ, भुजादंड करि जेणजी।
चैत्य रक्षा भणी वलि करि चाप्यो, वालि रिपीसरतेणजी ॥१७। ति०॥
मुक्यो मोटो राव सवद तिणि, रावण वोजो नाम जी।
ते रावण राजा लंकागढ, राज करइं अभिरामजी ॥ १८ । ति० ॥
चन्द्रनखा नामइ तसु भगिनी, चन्द्रमुखी रूपवन्त जी।
खरदूषण नइ ते परणावी, जीवसमी गिणइ कन्तजी ॥१९ । ति०॥
पाताल लंकानो राज दीधो, रावण निजमनि रंगजी।
चन्द्रनखा अगजात वे वेटा, संब संवुक्क सुचंगजी ॥२० । ति०॥

संबुक विद्या साधण चाल्यो, वारीतो सूरवोर जी ।
दंडकारण्य गयो एकेलो, कुंचरवा नदी तीर जी ॥२१। ति०॥
गुपिलमहावंसजालि माहे जई, विद्या साधइ एह जी ।
पग उचा मुखनोचौराखो, धूम्रपान करेइं तेहजी ॥ २२ । ति० ॥
वारह वरस गया साधन्ता, वलि उपरि च्यार मासजी ।
तीन दिवस थाकइ पूरइ थयइ, लहियइ लील विलासजी ॥२३।ति०॥
पंचमा खण्ड तणी ढाल वीजी, रांवण उतपति जाणजी ।
समयसुन्दर कहइं हुँछूँ छदमस्थ, केवलि वचन प्रमाणजी ॥२४। ति०॥

सर्वगाथा ॥७८॥

दूहा १२

तिणअवसरि लखमण तिहा, भवितव्यता विशेपि ।
वनमाहि भमतो अवीयो, लिख्या मिटइं नही लेख ॥ १ ॥
दिव्य खडग दीठो तिहां, वंस उपरिली जालि ।
केसर चन्दन पूजियउ, तेजइ झाकझमाल ॥ २ ॥
लखमण ते हाथे लियो, वाह्यो तिण वस जालि ।
ते छेदंतइ छेदियो, मस्तक वंस विचाल ॥ ३ ॥
कनक कुण्डल काने विहुँ, मस्तक कमल सुगन्ध ।
दीठो पृथिवीतलि पड्यो, उंचो तासु कबन्ध ॥ ४ ॥
लखमण पणि विलखो थयो, धिग मुझ पुरुपाकार ।
धिग वीरज धिग वाहवल, धिग धिग मुझ आचार ॥ ५ ॥
ए कोइ विद्या साधतउं, विद्याधर जप जाप ।
निरपराध मइं मारियो, मोटो लागो पाप ॥ ६ ॥

इणपरि आपो निंदतो, करतो पश्चात्ताप।
राम समीपइ आवियो, खडग लेइ नइं आप ॥ ७ ॥
रामभणी लखमण कह्यो, ते सगलो विरतांत।
राम कहइं कीजइ नहीं, ए अनरथ एकांत ॥ ८ ॥
तीर्थंकर प्रतिषेधियो, अनरथदंड एकांत।
आज पछइं तुं मत करइं, एहवउ पाप अभ्रांत ॥६॥
चंद्रनखा आवी तिहां, प्रति जागरण निमित्त।
मुयो देखि निज पुत्र नइ, धरती ढली तुरत्त ॥ १० ॥
मूर्छागत थई मावडी, दोहिलो पुत्र वियोगि।
वलि पाछी वलि चेतना, करिवा लागी सोग ॥ ११ ॥
करम विटंबइ मोहनी, करइं अनेक विलाप।
चंद्रनखा विलिखी[1] थई, व्याप्यो सोग संताप ॥ १२ ॥

सर्वगाथा ॥ ६० ॥

ढाल ३

तोरा नडउ रज्यो रे लाषीरण जाती 'ए गीतनी ढाल'

तोरा कीजइ म्हांका लाल दारू पिअइजी, पड़वइ पधारउ म्हाकालाल।
लसकर लेज्योंजी तोरी अजब सूरति म्हाको मनड़उ रज्योरे लोभी लज्यो जा ॥
बोलडउ देयो संबुक पुत्र, साम्हो जोवो जी।
विद्यापूरी साधउ पुत्र, कां तुम सोयो जी।
तोरी मावडी झूरेरे पुत्र जी बोलड़ो द्यो जी।
हा पुत्र हा अंगजात हा हा वालेसर जी ॥ १ ॥

१—दुखिनी

हा मन वच्छल हा जीवन प्राण राजेसर जी।
तोरी मावडी रोइरे पुत्र जी रण मइं जी ॥ २ ॥ वो० ॥
विद्यापूरी दिको पुत्र किहां तुं चाल्यउ जी।
दंडकारण्य में जाइ पुत्र मइ तू नइं पालउ जी।
तोरी मावडी दुखी रे पुत्र जी आवि नइं जी ॥ ३। वो०।
साज लइ हुं आवी पुत्र पहिरउ वागो जी।
मीठा भोजन जीमो पुत्र, सूता जागो जी॥
तोरी मावडी तेडइ रे पुत्र उठि नइ जी ॥ ४। वो०।
तुं कुलदीवो तुं कुलचंद, तुं कुल मंडण जी।
तुं आधार तु सुखकार, तु दुख खंडण जी।
तोरी मावडी कहइ रे पुत्र, तो विण क्युं सरइं जी ॥५॥ वो० ॥
तुं का रीसाणो वालिभ पुत्र, आवो मनावुं जी।
भामणो जावुं वोलो पुत्र, हुं दुख[1] पावूं जी।
तोरी मावडी मरइ रे पुत्र, वोल्या वाहिरी जी ॥ ६। वो०।
हा पापी हा दिरद्य दैव, हा हत्यारा जी।
हा गोमारा हा दुराचार, हा संहारा जी।
म्हारउ रतन उदालयो का तंइ, पापिया जी ॥ ७। वो०।
हा पापिण मइ पाप अघोर, केई कीधा जी।
थापण मोसा कीधा केइ, पर दुख दीधा जी।
रतन उदा लीधा केइ कोई केहना जी ॥ ८॥ वो० ॥
अथवा केहना पुत्र वियोग, कीधा पापिणी जी।
अथवा केई राजकुमार, खाधी सापिणी जी।
कादमिया विष विछूथई माणस मारिया जी ॥ ९ ॥ वो० ॥

---

१ सुख

अथवा केई तापस साध, मइं संताप्याजी।
अथवा लूटी लीधा द्रव्य, गला केहना काप्याजी।
आग लगाडी वाल्या गाम, त्रियंच वालियाजी ॥ १० ॥ वो० ॥

को मइ मारी जूनइ लीख के व्रत भांगाजी।
के ग्रभ गाल्या चोस्या द्रव्य, ए पाप लागाजी।
पुत्रनइं वियोग मोनइ दुख पाड्याजो ॥ ११ ॥ वो० ॥

चन्द्रनखा इम कीया विलाप मोहनी वाहीजी।
पुत्र न वोलइं मुँयो कूण, राखइ साही जी।
पीटी कूटी रही रोई रडवडी जी ॥ १२ ॥ वो० ॥

किण मास्यो ए माहरो पुत्र ढुंढ़ी काढूं जी।
जउ देखुं तो तेहनइ झालि, मारुं वाढूंजी।
जोती भमइ रे दंडकारण्य मइरे ॥ १३ । वो० ॥

पंचमा खण्डनी त्रीजी ढाल पूरी कीधी जी।
इहां थी हिव अनरथनी कोडि, चाली सीधी जी।
समयसुन्दर कहइ ते सुणउ जी ॥ १४ । वो० ॥

सर्वगाथा ॥१०४॥

दूहा ६

चन्द्रनखा भमती थकी दीठा दसरथ पुत्र।
रूप अनोपम देखि करि, विस्मय पड़ी तुरत्त ॥ १ ॥
पुत्रसोग वीसरि गयो, जाग्यो मदन विकार।
इण सेती सुख भोगवुं, नही तर धिग अवतार ॥ २ ॥

कन्यारूप करी नवो, पहुंची राम समीपि।
हावभाव विभ्रम करइं, कामकथा उदीपि ॥ ३ ॥
ऐ ऐ काम विटंवना, काम न छूटइ कोइ ।
पुरुष थकी ए अठगुणो,[1] अस्त्रीनइं ए होइ ॥ ४ ॥
रामउं पूछ्यो कवण तु, सुंदरि साचो बोलि।
किण कारण वनमइं भमइं, एकली निपट निटोल ॥ ५ ॥
वणिक सुता हुं ते कहइ, वंसस्थल मुझ गाम।
मावाप माहरा मरिगया, हुं आवी इण ठाम ॥ ६ ॥
कामी १ लिंगी २ वाणियो ३, कपटी ४ अनइं कुनारि।
सांच न वोलइं पांच ए, छट्ठउ वली जूयार ६ ॥ ७ ॥
हिव मुझ सरणो तुम्ह तणो, हाथसुं झालउ हाथ।
प्रारथिया पहिडइ नही, उत्तम करइं सनाथ ॥ ८ ॥
मौनकरी वइसी रह्या, रांम उत्तम आचार।
पडउत्तर दीधो नही, पणि कुण थयो प्रकार ॥ ६ ॥

सर्वगाथा ॥ १२३ ॥

ढाल ४

सहर भलो पणि साकडो रे, नगर भलो पणि दूर रे। हठीला वयरी नाह भलो पणि नान्हडोरे लाल। आयो २ जोवन पूररे हठीला वयरी। लाहो[2] लइ हरपालका रे लाल। एहनी ढाल नायकानी ढाल सारिखी छइ। पणि आकणी लहरकउ छइ ॥

चन्द्रनखा विलखी थइ रे, वोलावी नहीं राम रे चतुरनर।
फोकट आपो हारियो लाल, पणि को न सर्यो कामरे चतुरनर ॥ १ ॥

---

१ चउगुणउ २ हीरउ रे

अस्त्रीचरित न को लहइ रे लाल। जोवो २ चित्त विचारिरे ।।च०आ०।।
खुद-खुद शवद तुरंगनोरे, गुहिर जलद गरजाररे। च०।
कोन लहइ भवितव्यतारे लाल, वरसण रहण विचार रे ।२। च०।
रामउपरि रीसइं चडीरे, राची विरची नारिरे।। च०।।
आपसुं आप विलूरियोरेलाल, उर करि अधर विदारिरे।। ३। च०।
रोती रडवडती[1] थकीरे, पहुंती आपणइं गेहरे। च०।
खरदूपण विद्याधरइं रे लाल, प्रिया पूछी ससनेह रे। ४। च०।
तुझनइं संतापी किणइ रे, कहिते नाखुं मारि रे।
गदगद सरि रोती कहइ रे लाल, चंद्रनखा ते नारि रे।। ५।।
किणही भमते भूचरे रे, खडग लियो चंद्रहास रे। च०।
संवुक मार्‍यो माहरो रे लाल, हुं गई पुत्रनइं पासि रे।। ६। च०।
हुं अवला अण वांछती रे, जोरइं आणी हजूरि रे। च०।
कीधी मुझ काया इसी रे लाल, नख दंतासु विलूरि रे ।। ७। च०।
हुं छूटी किणही दुखे रे, जिम तिम राख्यो सील रे। च०।
प्रियडा पुण्य तुम्हारडंइ रे लाल, हुं आवी अवहीलि रे।। ८। च०।।
खरदूषण कोपइ चड्यो रे, दीधी दमांमे चोट रे। च०।
चडतरा तूर वजाडिया रे लाल, द्युं दुसमण सिर दोट रे। ९। च०
चउद सहस साथे चड्या रे, सुभट कटक सूरवीर रे। च०।
दूतमुंक्यो रावण भणीरे लाल, आविज्यो अह्मारी भीररे।। १०। च०।
गयणागणि ऊडी गयो रे, खरदूषण जिहा राम रे। च०।
देखी कटक सीता डरी रे लाल, वाजइं तूर विराम रे।। ११। च०।

---

१ रसवड़ती

रामचंद्र इम चिंतवइ रे, लखमण मास्यो जेहरे।
तेहना वाधव आवीया रे लाल, वेढि कारण नहि एहरे॥ १२॥ चे०
ए अनरथ तिण कामिनी रे, कीधौ प्रियु भंभेरि रे॥ च०
धनुष लेउं निज हाथमइं रे लाल, नहितर लेस्यइं घेर रे॥ १३। चे०
तेहवइं लखमण ऊठियो रे, कहइ वांधव नइ एम रे च०॥
मुझ वांधव वइठां थकां रे लाल, जुद्ध करो तुम्हे केम रे॥ १४। च०।
लखमण धनुष चडावियु रे, साम्हउ गयउ सूरवीर रे॥ च०॥
सीहनाद जु हूं करु रे, तु मुझ करियो भीर रे॥ १५॥ च०॥
तुम्हें सीतानइ राखिज्यो रे, हूं झूझिसि जाईवीर रे। च०।
देखी लखमण आवतो रे लाल, चाल्या विद्याधर तीर रे। १६। च०।
सुभटे हथियार वाहिया रे, मोगर नइ तरवारिरे। च०।
लखमण नइ लगा नहिरे लाल, जिम गिरि जलधर धाररे॥ १७। च०।
तीर सडासड मुंकिया रे, लखमण वज्राकार रे। च०।
सुभट कटक उपरि पडइरे लाल, करइ यम भड ज्यु संहाररे॥१८। च०।
मस्तक छेदइं केहनो रे, केहनी दाढो मुंछ रे। च।
वलि छेदइं रथनी धजा रे, केहना हयनी पुंछ रे॥ १६। च०।
चपल तुरंगम त्रासवइं रे, नीचा पडइं असवार रे। च०।
रथ भाजी कुटका करइं रे लाल, कायर करइं पोकार रे॥ २०। च०।
ऊंची सूंडि उल्लालता रे, हाथी पाडइं चीस रे। च०।
पायक दल पाछा पडइं रे, आघा नावइं अधीस रे। २१। च०
लखमण परदल भांजियो रे, एकलइ अडिग अवीह रे। च०।
हत प्रहत करि नांखीयो रे लाल, हस्ति घटा जिमि सीह रे। २२।

चद्रनखा दउडी गइ रे, भाई दसानन पासि रे। च०।
पुष्प विमान वइसी करी रे लाल, रावण आयो आकास रे ॥२३।च।
रावण दीठी आवतइं रे, सीता राम समीपि रे। च०।
काया कंचण सारिखी रे लाल, रूप रही देदीप रे॥ २४। च०।
रति रतिपति पासइ रही रे, इंद्राणी इन्द्र पासि रे। च०
चंद्रनइं पासइ रोहिणी रे लाल, जिम सोहइ सुप्रकास रे॥ २५। च०
चपल लोचन अणियालडा रे, मुख पूनिमकउ चन्द रे। च०।
अधर प्रवाली ऊपमा रे लाल, वचन अमीरस विंद रे। २६। च०
पोन पयोधर पदमिनी रे, गंगापुलिण नितंव रे। च०।
उरु केली थभ सारिखा रे लाल, पग कूरम प्रतिविम्वरे॥ २७। च०॥
एहवी सीता देखिनइं रे, कामातुर थयो तेह रे। च०।
रावणमनमांहे चिन्तवइ रे ला० धिग मुझ जीवत एह रे॥ २८। च०॥
धिग मुझ विद्या जोरनइं रे ला०, धिग मुझ राज पडूर रे।
जस मृगनयणी एहवी रे ला०, नहिं नयण हजूर रे ॥ २९। च०॥
अथवा प्रियुपासइं थकां रे, किम साम्हो जोवाय रे।
ए वांछइ किम मुझनइं रे ला०, तउ करूं कोउ उपाय रे॥ ३० ।च०॥
अवलोकनि विद्या वलइं रे, जाण्यो सर्व संकेतरे।
लखमण जे कीधो हुतउ रे लाल, रामसेती अभिप्रेतरे॥ ३१। च०॥
सिंहनाद सवलो कीयो रे लाल, रावण राक्षस तेमरे।
राम सवद ते सांभल्योरे ला०, सीतानइ कहइ एमरे॥ ३२। च०॥
हुँ लखमण भणी जाउं छुं रे, तुं रहिजे इण ठाम रे।
ए तु जटायुध जालवे रे ला०, आज पड्यो तुझकाम रे॥ ३३। च०॥

लखमण साम्हउ चालतां रे, कुसुकन वास्यो राम रे।
तो पणि धनुप आफालतोरेला, गयों बांधव हित कामरे ॥३४। च०॥
सीता दीठी एकली रे, हाथ सुं झड़फी लीधरे।
मयंगलइ ज्युं कमलनी रेला, रावण कारिज कीधरे॥ ३५ । च० ॥
दीधा जटायुध पंखीयइ रे, पांखा सेती प्रहार रे।
रावण तनु कीयो जाजरो रे ला, सामिभगत अधिकार रे॥३६। च०॥
तिण तडफडतो पंखीयो रे, काठो धनुप सुं कूटि रे।
नीचो धरती नाखियो रे ला, कडिवांसो गयो त्रुटि रे॥ ३७। च० ॥
पुष्प विमान वइसारनइ रे, ले चल्यो सीता नारि रे।
सीता दीन दयावणी रे ला, विलवइ अनेक प्रकार रे॥ ३८। च० ॥
रावण जातउ चिंतवइ, एतो दुखिणी आजरे।
जोर करूँ तो माहरो रे ला, सुस जाइ सहु भाजिरे॥ ३९। च० ॥
साध समीपइ मइंलीयो रे, पहिलो एहवो सुस रे।
हुँ अस्त्री अणवाछती रे, भोगवु नहि करि हुंस रे॥ ४०। च० ॥
रह्यां अति संतोपता रे, अनुकूल थासइं एहरे।
मुझ ठकुराई देखिनइ रे ला, धरिस्यइ मुझ सुँ सनेह रे॥ ४१। च० ॥
राम संग्रामइ आवियो रे, लखमण दीठो तामरे।
कहइ सीता मुँकी तिहारे ला, कां आया इणि ठामरे ॥ ४२। च० ॥
राम कहइ हुँ आवियोरे, सांभलि तुझ सिंहनाद रे।
मइ न कीयो लखमण कहइ रे ला, करिवा लागो विषाद रे॥ ४३ ।च०॥
तुह्मनइ छेतरिवा भणी रे, कीधो किण परपंच रे।
तुम्हे जावो ऊतावलारे ला, सीता राखो सुसंचरे ॥ ४४। च० ॥

१—कसक

वांधव वात सुणीकरी रे, पाछो आव्यो राम रे।
सीता तिहा देखइ नहीं रे ला, जोई सगली ठाम रे ॥ ४५ । च० ॥
चउथी ढाल पूरी थई रे, पाचमा खण्डनी एहरे।
राम विपलाप जिके कीया रे ला, समयसुन्दर कहइ तेह रे ॥ ४६ ।च०
[सर्वगाथा १५८]

दूहा ८

ध्रसकइ स्युँ धरती पड्यो, मुरछागत थयो राम।
खिण पाछी वली चेतना, विरह विलाप करइ ताम ॥ १ ॥
हाहा प्रिया तू किहां गई, अति ऊतावलि एह।
विरह खम्यो जायइ नहीं, मुझनइ दरसण देहि ॥ २ ॥
म करि रामति छांनी रही, मइ तू नयणे दीठ।
हांसो मकरि सभागिणी, बोलि वचन वे मीठ ॥ ३ ॥
प्रांण छुटइं तो वाहिरा, तूं मुझ जीवन प्राण।
तुझ पाखइ जीवुं नहीं, भावइं जांणि म जांणि ॥४॥
इम विलाप करता थकां पंखी दीठो तेह।
सीता हरण जणावतो, मरतां तणो सनेह ॥ ५ ॥
रामनइ करुणा ऊपनी, दीधो मंत्र नउकार।
पंखी सुधो सरदह्यउ, ए मुझनइ आधार ॥ ६ ॥
तिरजंच देही छोडिनइ, पामी देही दिव्य।
देवलोक सुख भोगवइं, जीव जटायुध भव्य ॥ ७ ॥
सीता विरहे रामवलि, करइ विलाप अनेक।
जीवनप्रांण गयो पछी, किहांथी रहइ विवेक ॥ ८ ॥
सर्वगाथा ॥१६७॥

ढाल ५

॥ राग मारुणी ॥

"माम्फि रे बाबा वीरगोसांई" एगीतनी ढाल ॥

रामइं सीता खबर करावी, दण्डकारण्य मझारि जी।
वलि आसइं पासइं ढुंढावी, न लही वात लिगार ॥ १ ॥
रे कोई जाणइ रे। कोई खबरि सीतानइ आणइं रे।
किण अपहरी राय राणइं । को०। आ० ॥

इण समइ एक विद्याधर आयो, लखमण पासि उदासजी।
चन्द्रोदय अनुराधा नन्दन, राम विरहियो जासजी ॥ २ ॥ रे०

खरदूषण संताप्यो तेहनइ, वयर वहइ तसु साथि जी।
करी प्रणाम कहइ लखमणनइ, द्यो मुझ वासइ हाथ ॥ ३ ॥ रे०

हुं सेवक तोरो थयो सामी, लखमण कीधो तेमजी।
सवल विद्याधर मिल्यो सखाई, पुण्यउदय करि एम ॥ ४ ॥ रे०

लेई विरहियो साथइ लखमण, करिवा लागो जुद्ध जी।
खरदूपण देखी लखमणनइं, कहिवा लागो क्रुद्ध ॥ ५ ॥ रे०

रे रे दूठ धीठरे भूचर, मुझ अंगजनइ मारि जी।
वलि मुझ साम्हउ जुद्ध करइं तूँ, देखि मनावुं हारि ॥ ६ ॥ रे०

कहइ लखमण रे जीभ वाहइ ते, नर नहि पणि निरबुद्धिजी।
सुभटातणा पराक्रम कहिस्यइं, सगली कारिज सिद्धि ॥ ७ ॥ रे०

वचन सुणी अति कुप्यो विद्याधर, करुं लखमण सिंहार जी।
खडग वाहइ खरदूषण जेहवइं, लखमण दीयो प्रहार जी ॥ ८ । रे०

चद्रहास खडगस्यु छेद्यो, खरदूषणनो सीस जो।
वेटा पासि वापनइं मुक्यो, लखमण लही जगीस जी ॥ ६ । रे०
वीजो कटक दिसोदिसि भागो, जीतो लखमण जोध जी।
करइं प्रणाम रामनइ आवी, टाली वयर विरोध जी ॥ १० ॥ रे०।
किहां सीता दीसइं नही पासइं, राम कहइं सुणि वात जी।
सो आवतां पहिली किण अपहरी, भेद न को समझात जी ॥११ ॥ रे०
वलि कहइं राम कवणए खेचर, महापुरुष महाभाग जी ॥
कहइं लखमण सगली वातनी, युद्ध सीम सोभाग जी ॥ १२ ॥ रे०।
करि सीतानी खवर विरहिया, सीता विण श्री राम जी।
छोडइं प्राण तिवारइं हुं पिणि, काष्टभक्षण करुं ताम जी ॥१३॥ रे०
ते भणी जा तुं देस प्रदेसे, जल समुद्र मझारि जी।
पइसि पातालि ढुंढि गिरि कानन, करि सीतानी सार जी ॥ १४ ॥ रे०
तहति करि विरहियो चाल्यो, जोवइं सगली ठामजी।
तेहवइं एक विद्याधर वरतइं, रयणजटी तसु नाम जी ॥१५॥ रे०।
तिणि रावण ले जाती दीठी, करती कोडि विलाप जो।
हाक वुंब करि तिणि हाकोटयो, रे किहा जायसि पाप जी ॥ १५ ॥ रे
रयणजटी ते पूठवइं द्रोड्यो, कहिवा लागो एम जी।
रामतणी अस्त्री सीता ए, तुॅ लेजायइं केम जी ॥१ ॥ रे०।
रावण मंत्र प्रंजुजी तेहनी, विद्या नांखी छेदि जी।
कंवुसेल परवत उपरि पड्यो, थयो मूर्छित तिणि भेदि जी।
समुद्रवाय करि थयो सचेतन, ते खेचर रहइ तेथि जी ॥
तिणि सीतानी खवरि कही पिणि, वीजइ न लही केथि जी ॥१६ ॥ रे०

मणि पडी समुद्र माँहि किम लाभइं, करइं राम अति दुक्ख जी।
मकरि दुक्ख कहइं विद्याधर, हूं करिसु तुम्ह सुखुजी ॥ २० ॥ रे०।
सीतानइं आणिसी ऊतावलि, चालो इहा थी वेगि जी।
ल्यउ पातालपुरी तुम्हे नगरी, मारो मुहकुम तेग जो ॥ २१ ॥ रे०।
वचन मानि रामरथ वइंसी, चाल्या चित्त उदास जी।
लीधो साथि विरहियो खेचर, पहुता नगरी पासि जी ॥ २२ ॥ रे०।
चन्द्रनखा सुत सुंदि विढंतो, जीतो ततखिणि रामजी।
सहु पैठा पातालपुरी मइ, जाणी निरभय ठाम जी ॥ २३ ॥ रे०।
मंदिर महुल लह्या अति सुंदर, सरगपुरी परतक्ष जी।
सीता विरह करी दुख साल्या, रामचंद्र नइं लक्ष जी ॥ २४ ॥ रे०।
पांचमा खंडतणी ढाल पांचमी, सीताराम वियोग जी।
करमथकी छूटइ नही कोई, समयसुंदर कहइ लोग जी ॥ २५ ॥ रे०।

[सर्वगाथा १६२]

दूहा २३

हिव सीता रोतो थकी, रांवण राखइ एम।
मारग मइ जोतो थको, मधुर वचन धरि प्रेम ॥ १ ॥
कामी रांवण इम कहइ, सुणि सुंदरि सुजगीस।
बीजा नामइं एक सिर, हूं नामुं दससीस ॥ २ ॥
मुंकि सोग तुं सर्वथा, आणि तुं मन उल्हास।
साम्हो जोइसि रागसुं, हुं तुम्ह किंकर दास ॥ ३ ॥
कां बोलइ नहि कामिनी, द्यइ मुम्ह को आदेश।
सोम्हो जोइ सभागिणी, मुम्ह मनि अति अंदेस ॥ ४ ॥

जउ तुं हंसि बोलइ नही, तो पणि करि एक काम ।
दे निज चरण प्रहार तुं, मुझ तन आवइं ठाम ॥ ५ ॥
सीता सुंदरि देखि तुं, पृथिवी समुद्रासीम ।
तेहनो हुं अधिराजीयो, भांजु दुरजण भीम ॥ ६ ॥
राजरिद्धि अति रूयड़ी, तुं भोगवि भरपूर ।
इंद्र इंद्राणीनी परइं, पणि मुझ वंछित पूरि ॥ ७ ॥
इम वेखास घणा कीया, रावण कामी राय ।
सीता उपराठी रही, कहइ कोपातुर थाय ॥ ८ ॥
हा हतास हा पापमति, हा निरलज निरभाग ।
पररमणी वांछइं जिको, ते तो कालो काग ॥ ९ ॥
आज पछी मुझ एहवी, मत कहइ वात सपाप ॥
कां मइलो करइ वंस नइं, कां लाजविइं मावाप ॥ १० ॥
नरग पडइं का बापडा, काइ लगाड़इ खोडि ।
रावण हुयो कुसीलियो, कहिस्यइं कवियण कोडि ॥ ११ ॥
कां तुं परणी आपणी, छोडि कूलीनी नारि ।
परणी वांछइ पारकी, मूरख हियइ विचारि ॥ १२ ॥
इण परि घणु निभ्रंछियो, राणो रांवण सीति ।
बार-बार पाए पडइं, कहइ मुझसुं करि प्रीति ॥ १३ ॥
सीताइ तृण सरिखउ गिण्यउं, सीधो उत्तर दिद्ध ।
तो पणि लंका ले गयो, रावण आसा वद्ध ॥ १४ ॥
देवरमण उद्यानमइं, मुंकी सीता नारि ।
आडंबरसुं आप [1] पिण, पहुतो भवन मझारि ॥ १५ ॥

१—आपणइ

सिंहासन वइठउं सभा, रांणो रावण जाम।
चंद्रानखा रोती थकी, ततखिण आवी ताम ॥ १६ ॥
साथे ले मंदोदरी, प्रमुख दसानन नारि।
सुणि वाधव हुं दुख भरी, मुझ वीनति अवधारि ॥ १७ ॥
खरदूषण मुझ प्राणपति, वलि सवुक सुपुत्र।
ए विहुंनो मुझ दुख पड्यो, नहि जीवणनो सूत्र ॥ १७ ॥
अरि करि गजण केसरी, तूझ सरीखा जसु भाई।
तसु भगिणी नइं दुख पडइ, तउ हिव स्युं कहिवाइ ॥ १९ ॥
रावण कहइ तु रोउ मां, मकरि सहोदरि दुखु।
पाछा नावइं जे मुआ, सरिज्या हुवइं सुखु दुखु ॥ २० ॥
हुवनहारी वात तेहवइ, करम तणइ परणामि।
दानवदेव लाघइ नही, मरण वेला थिति ठाम ॥ २१ ॥
थोड़ा दिनमाहि देखि हुं, मारूं दुसमण तुज्झ।
मुंकु यमघरि प्राहुणो, तउ हुं वाधव तुज्झ ॥ २२ ॥
वहिनभणी आसासना, इम दे वहु परकारि।
आप अंतेउर माहि गयो, जिहां मंदोदरि नारि ॥ २३ ॥

सर्वगाथा ॥२१५॥

ढाल ६
राग वंगालो

"इमसुणि दूतवचन कोपिउ राजामन्न" एमृगावती नी चौपइनी वीजा खडनी दसमी ढाल ॥

दीठइ मंदोदरि कंत, दिलगीर चिंतावंत।
कहइ अन्य वालिभ लोक, मुंआ न कीधो सोक ॥ १ ॥

जिम खरदूषणनइ नास, नाखइं घणा नीसास ।
भोजन न भावइं धान, खायइं नहीं तुं पांन ॥ २ ॥
आवइ नहीं तुझ उंघ, न्याय नीति नाखि उल्लंघि ।
मोसुं न मेलइ मीटि, मुंकइ घणी मुखिसींटि ॥ ३ ॥
तब मुंकि सगली लाज, बोलीयो रांवण राज ।
जो करउं नहिं तुं रोस, जो करइं मुझ संतोष ॥ ४ ॥
तउ कहुं मननी वात, विण कह्या नावइं धात ।
भरतानो तुं भक्त, ते भणो कहिवो युक्त ॥ ५ ॥
मंदोदरी कहइं नाह, साच कहइ मुझ उछाह ।
मनि रीस न करइ कोइ, जे मनुष्य डाहो होइ ॥ ६ ॥
प्रीतम जिको प्रिय तुज्झ, ते बात अतिप्रिय मुज्झ ।
तु कहइं जे मुझ काज, ते करुं तुरत हुँ आज ॥ ७ ॥
तब कहइं रावण एम, अपहरी सीता जेम ।
आणी इहां मइ तेह, पणि धरइ नहीं ते नेह ॥ ८ ॥
जो तेहनादरइ मुज्झ, तो साच कहुं छुं तुज्झ ।
मुझ प्राणजास्यइं छूटि, हुं मरिसि हियड़ो फूटि ॥ ६ ॥
तातइ तवइं जलबिंद, नवि रहइ तिम मुझ जिंदि ।
मइकही माहरी बात, तु करिज्यु मुझ[1] पोसात ॥ १० ॥
मंदोदरी कहइ नारि, सीता नहीं सुविचारि ।
तु सारिखो जे भूप, देवता सरिखो रूप ॥ ११ ॥

१—तुझ

वेलास करतो जाणि, नादरइ तो तसु हाणि।
अथवा ते सुभगा नारि, रमणी सिरोमणि सार ॥ १२ ॥
तो सारिखा जिहांरत्न, जोगीन्द्र जाणो (जोग) तन्त्र।
अथवा किसो जंजाल, ते नारि अवला वाल ॥ १३ ॥
जोरइं आलिंगण देहि, मनतणी साध[२] पूरेहि।
तव कहइ रांवण एम, सुण प्रिया इम हुइ केम ॥ १४ ॥
अनंतवीरज साध, मइं धरमनो मरम लाध।
ते पासि लीधउ सुंस, एहवउ आणी हुंस ॥ १५ ॥
करिजोरि पारिकी नारि, भोगवु नहिं अवतारि।
ए पणिजउ सुंसअभग्ग, पालउं कदाचि सुमग्ग ॥ १६ ॥
मुझ पड्यउ दुरगति माहि, काढइ ताणी सहि साहि।
व्रत भांजता बहु दोप, व्रत पालता संतोप ॥ १७ ॥
सुंस लीयो मोटउ कोइ, भागो तो दुरगति होइ।
लघु सुंस लीधउ तोइ, पाल्यो तो सुभगति होइ ॥ १८ ॥
तिण करूं नही हुं जोर, नवि करु पाप अघोर।
वलि कहउं मंदोदरि एम, तो एथि आणी केम ॥ १९ ॥
पाडीयउ नाह वियोग, वइठी करइ छइ सोग।
रावण कहइं प्रिया जाणि, आसावधइ मइ आणि ॥ २० ॥
जाण्यो हुस्यइ मुझ एह, भारिजा अति सुसनेह।
मदोदरी डाहियार, चित कीयो एह विचार ॥ २१ ॥
जो पणि न कीजइ आम, तो पणि करूं ए काम।
वहि गई सीता पासि, साथे सहेली जास ॥ २२ ॥

२—इच्छा

चइसी करी कहइ एम, दिलगीर थाई केम।
रावण जिसो भरतार, पुण्य हुइ तो द्यइ करतार ॥ २३ ॥
कल्पवृक्ष दुरलभ जेम, प्रीतम दसानन तेम।
ए रतनाश्रवनो पुत्र, एहनइ राजस सूत्र ॥ २४ ॥
ए रूप तो कंदर्प, रूठो तो कालो सर्प्प।
अपछरानइ दुरलंभ, वाछइ ते तुंनइ अचंभ ॥ २५ ॥
भोगवि तुं भोग सुरम्म, करि सफल आपणो जम्म।
कहइ जनक तनया ताम, ए ताहरो नहि काम ॥ २६ ॥
जे सती हुवइ लवलेस, ते न द्यइ ए उपदेस।
जे हुयइ सुभगाचार, ते न द्यइ कुमति लिगार ॥ २७ ॥
मंदोदरी तु जाणि, किम प्रीति होवइं प्राणि।
मंदोदरी कहइ जेम, तुं कहइ वात छइ तेम ॥ २८ ॥
जो पडइं कारण कोइ, तउ अजुगतो पणि होई।
पति प्राण धारण कज्जि, इम कह्यो मइ निरलज्जि ॥ २९ ॥
मुनिव्रत विराधन नित्त, निज जीवितव्य निमित्त।
वलि करि दसानन आस, आवीयो सीता पासि ॥ ३० ॥
तुझ पतिथकी कहि केण, ओछउ छु गुणे जेण।
तुं नादरइं मुझ कांइं, ए निफल दिन सहु जांइं ॥ ३१ ॥
सीता कहइं करि रीस, तु साभले दससीस।
मुझ दृष्टि थी जाइ दूरि, मत छिवइ अंग हजूरि ॥ ३२ ॥
जो हुयइ साक्षात इंद, अथवा तु हुयइं असुरिंद।
वलि हुवइं तु कामदेव, जउ करइं अहनिसि सेव ॥ ३३ ॥

तउ पणि न वाछुं तुज्झ, करि सकइं ते करि मुज्झ।
पापिष्ट इहाथी गच्छि, नाखीयो इम निभ्रंछि ॥ ३४ ॥
चिंतवइ वलि ऊपाय, केलवु माया काय।
वीहती जिम ते आय, मुझ आलिंगन द्यइ धाय ॥ ३५ ॥
आथम्यो सूरिज जेथि, अंधकार पसर्‌यो तेथि।
रावण विकुर्व्या सीह, वेताल राक्षस वीह ॥ ३६ ॥
इम किया उपसर्ग एणि, सीता न वीही तेण।
नवि आवि रावण पासि, नवि थई चित्त उदासि ॥ ३७ ॥
विलखउ थयो दससीस, हाथ घसइ हा जगदीस।
स्युं थयो हे जगनाथ, धरती पड्या वे हाथ ॥ ३८ ॥
फालथी चूको सीह, एहवइ ऊगउ दीह।
आया विभीषण सर्व, वर सुभट धरता गर्व ॥ ३९ ॥
प्रणमति रावण पाय, पुछइ विभीषण राय।
ए नारि रोती कवण, रावण रह्यो करि मुंण ॥ ४० ॥
सीता कहइ सहु वात, रावण तण अवदात।
हुं जनकराजा पुत्रि, भगिनी भामण्डल सूत्रि ॥ ४१ ॥
रामनी पहिली नारि, नामइं सीता सुविचारी।
अपहरी आंणी एण, रावणइं कामवसेण ॥ ४२ ॥
सद्गुरु[1] तणइं परसाद, मत करइं तुं विषवाद।
दससिरनइं करि अरदास, मेल्हीसि पतिनइं पास ॥ ४३ ॥
आसासनां इम देइ, रावण भणी पभणेइं।
परकी नारी एह, तइं कांइ आणी तेह ॥ ४४ ॥

१—देवगुरु

जेहवी आगिनो झाल, विसकन्दली विकराल।
वाघणि भुजंगी होइ, परनारि कहइ सहु कोइ ॥ ४५ ॥
ए नारि रावण जाणि, अनरथ दुखनी खांणि।
का कुलनइं चइं तुं कलंक, का खोयइं अपणी लंक ॥ ४६ ॥
कां जस गमाडइ कुराहि, का पडइं दुरगति मांहि।
ए नारि पाछी मुँकि, मसलति थकी म चूकि ॥ ४७ ॥
रावण कहइ ए भूमि, माहरी छइ करि फूमि।
ते माहे ऊपनी स्वाइ, परकी किम कहवाइ ॥ ४८ ॥
इम जुगति कहतो पाप, चढ्यो महल उपरि आप।
चउनारि पुष्प विमाणि, ले गयो सीताप्रांणि ॥ ४९ ॥
चतुरंग सेना साथि, रावणइ लीधी आथि।
वाजित्र वाजइं तूर, अति सबल प्रबल पडूर ॥ ५० ॥
गयउ पुष्पगिरिनइं शृंगि, उद्यान तिहा अति चंग।
नारिंलनइं नारिंग, बहु फणस चंपक चंग ॥ ५१ ॥
बहु नागनइं पुन्नाग, जिहां घणा सरला लाग।
आसोग तिलक उतंग, सहकार वृक्ष सुरंग ॥ ५२ ॥
कंचण तणा सोपान, जिहा जल अमृत समपान।
एहवी वावडी नीर, सीता मुँकी दिलगीर ॥ ५३ ॥
रावण तणइ आदेस, सुन्दर वणावी वेस।
वीणा रबाप रसाल, वांसली मादल ताल ॥ ५४ ॥
नर लेइ नाटक साज, सहुइ आवी सुन काजि।
नांना आगइ करइ गान, आलापइं ताननइं मान ॥ ५५ ॥

सीता खुसी हुयइ केम, लंकेस सुं धरइं प्रेम।
तउ पणि न भीजइ सीत, राम विना नावइं चीत ॥ ५६ ॥
नवि करइ भोजन पान, नवि करइं देह सनान।
नवि करइ कुसमनो भोग, वइठी करइ एक सोग ॥ ५७ ॥
वलि कहइ मुडइ एम, मइ कीयो एहवो नेम।
श्रीराम लखमण दोय, कहइ कुसल खेम छइ सोय ॥ ५८ ॥
जां सीम न सुणुं कन्न, ता सीमे न जिमुं अन्न।
सीतातणो विरतंत, नदुवी कह्यउ जइ तत ॥ ५६ ॥
भोजन न वाछइ जेह, किम तुम्हनइं वाछइ तेह।
इम सुणी रावण राय, थयो तेहवइ कहिवाय ॥ ६० ॥
खिण रोयइ करइ विलाप, खिण कहइ पोतइं पाप।
खिण करइ गींतनइं गान, खिण करइ जापनइं ध्यान ॥ ६१ ॥
खिण एक द्यइ हुंकार, कारण विना वार वार।
नाखइं मुखइ नीसास, खिण खंचिनइ पडइ सास ॥ ६२ ॥
खिण आगणइ पडइ आइ, खिण एक नीसरि जाइ।
खिण चडइ जाइ आवासि, पातालि पइसइ नासि ॥ ६३ ॥
खिण हसइं ताली देइ, खिण मिलइ साईं लेइ।
खिण द्यइ निलाडइ हाथ, खिण गलहथो खिण वाथ ॥ ६४ ॥
खिण कहइ हा हा देव, इम कीजीयइ वलि नैव।
एक वसी हीयडइ सीत, नहि वात वीजी चीत ॥ ६५ ॥
विरही करइ जे वात, ते किण कवी कहवात[1]।
मइं कही थोडीसी एह, रांवणइ कीधी जेह ॥ ६६ ॥

१—तेकिणइ कही न जात

ऊपाडियो कैलास, जिण भुजासुं सुखास ।
जिण भाजिया अरि भूप, तेहनो एह सरूप ॥ ६७ ॥
वलि करइ रांवण खिप्र, तिहां नगर चिहुँ दिसि वप्र ।
बुरजे चडावी नालि, दारू भरी सुविसाल ॥ ६७ ॥
मुखि दीया गोला लोह, कांगरे कांगरे जोह ।
माड्या सतघ्नी जंत्र, वलि कोया मंत्रनइं तंत्र ॥ ६६ ॥
रावणइ सीता तेथि, राखी रूडी परि एथि
आजी पणि न मुंकइ आस, सीता रहइ आवास ॥ ७० ॥
ए कही छट्ठी ढाल, रावण विरह विकराल ।
कहइ समयसुंदर एम, पाडुयो प्रमदा प्रेम ॥ ७१ ॥

सर्वगाथा ॥२८६॥

दूहा ६

तिण अवसरि आयो तिहा, राजा श्री सुग्रीव ।
किंकिंधानगरी थकी, पिण दिलगीर अतीव ॥ १ ॥
खरदूषण मार्‍यो जिए, ते मोटा सूरवीर ।
राम अनइं लखमण कुमर, ए करिस्यइं मुझ भीर ॥ २ ॥
इम चिंतवि पातालपुरि, गयो सुग्रीव नरेश ।
साथइं सेना अति घणी, पणि मनमइं अंदेस ॥ ३ ॥
राम चरण प्रणमी करी, आगइ बइठो आवि ।
कुसल खेम छइ पूछीयो, राम तिणइ प्रस्तावि ॥ ४ ॥
जंबूनंद नामइ निपुण, मंत्री कहइ करि जोडि ।
देव तुम्हारउ दरसणइं, सीधा वंछित कोडि ॥ ५ ॥

पणि अम्ह कुसल किहां थकी, ते सुणिज्यो सुविचार।
तुम्हे समरथ साहिब वड़ा, करो अम्हनइ उपगार ॥ ६ ॥
किष्किंध परवत उपरइं, किंकिंध नगर सदीव।
आदीतरथना पुत्र वे, वालि अनइ सुग्रीव ॥ ७ ॥
वाली वलसाली सवल, मोटी जेहनी माम।
रांवण खवि खीजी रह्यो, पणि नकरइ परणाम ॥ ८ ॥
वयरागइं संयम लीयो, सुग्रीव पालइं राज।
नाम सुतारा तेहनइं, पटराणी सुभ काज ॥ ९ ॥

॥ सर्वगाथा १६५ ॥

ढाल ७

उल्लालानी, अथवा भरत थयोत्रृपि राया रे। अथवा "जगि छइ घणाइघणेरा, तीरथ भला भलेरा" एतवननी ढाल ॥

इण अवसरि एक कोई, कपटइ सुग्रीव होई।
विद्याधर तारा पासे, आव्यो परम उल्हासे ॥ १ ॥
तारा जाण्यो ए अन्न, ते नहीं लक्षण तन्न।
नासीनइ गइ दूरि, जई कहइ मंत्रि हजूरि ॥ २ ॥
ते विद्याधर दुट्ठ, सिंहासन उपविट्ठ।
तेहवइ वालिनो भाई, आव्यो महलमइ धाई ॥ ३ ॥
दीठो आप सरूप, बीजो सुग्रीव भूप।
तुरत थयो लथपत्थ, नाख्यो दे गलहत्थ ॥ ४ ॥
बीजइ कीयो सिंहनाद, लागो माहो माहि वाद।
मुंहते विहुंनइ धिक्कास्था, जुद्ध करंता ते वास्था ॥ ५ ॥

निरति पडइ नहि काइ, वे सुग्रीव कहाई ॥ ६ ॥
दक्षिण दिसि गयो साचो, उत्तर दिसि गयो काचो।
तारा रक्षा उद्दिस्सि, वालि नदन चंदरस्सि ॥ ७ ॥
थाप्यो मंत्रि प्रधान, सहुको रहइ सावधान।
इम तारा थकी वेऊ, वियोग पमाड्या छइ तेऊ ॥ ८ ॥
साचउ सुग्रीव वहतो, हनुमत पासि पहुतो।
आपणो दुक्ख जणायो, कटक करी नइ ते आयो ॥ ६ ॥
किंक्किध नगरीनइं पासि, अलीक लह्यउ भेद तास।
साम्हो कटक करेई, आयो द्वेष धरेई ॥ १० ॥
करिवा लागा वे जुद्ध, कुण झठो कुण सुद्ध।
सरिखी देखी वे देह, हनुमंत पड्यो संदेह ॥ ११ ॥
हनुमंत अण कीधइ काम, पहुतो आपणइं गाम।
हिव एक तुम्ह तणुं सरणं, सुग्रीव प्रणमति चरणं ॥ १२ ॥
बोल्या राघव ताम, अम्हे करिस्या तुम्ह काम।
तुम्हें आव्या भलइ एथि, मत जावो हिव केथि ॥ १३ ॥
करिवउ तेहनो घात, ए छइ थोडीसी वात।
पणि हिव सांभलो तुम्हे, दुखिया छुं आज अम्हे ॥ १४ ॥
सीता लेगयो अपहरि, दुष्ट दुरातमा छल करि।
ते रिपुनो कोई नाम, जाणइ नही तसु ठाम ॥ १५ ॥
ते भणी तुम्हे पणि निरति, थायइ तो करो किण धरति ॥
बोल्यो सुग्रीव राय, राम तुम्हारइ पसाय ॥ १६ ॥

१—राति

सातै दिवस माहे देखो, निरति आणिसि लेज्यो लेखो ।
नहि तरि आगि मां पइसुं, वोल्युं पालिसि अइसुं ॥ १७ ॥
एह वचन अभिराम, सुणि हरषित थयो राम ।
सुग्रीव सार्थ तुरत्त, किंक्रिध नगरी संपत्त ॥ १८ ॥
आवतो सांभलि एम, भूठो सुग्रीव तेम ।
आडइ थई नइ जुद्ध, करिवा लागो ते क्रुद्ध ॥ १६ ॥
माया सुग्रीव सीधउ, सत सुग्रीवनइं दीधो ।
सवल गदानो प्रहार, पाड्यो धरती निरधार ॥ २० ॥
मूर्छित थयो ते अचेतन, खिण माहि वलिद सचेतन ।
पहुतउ रामनइं पासइं, मननी वात प्रकासइं ॥ २२ ॥
किम न करी मुझ भीर, तुम्हें हुंता मुझ तीर ।
राम कहइ नहि निरति, कुणत्तु, छइ कुण कुदरति ॥ २२ ॥
तिण मइ तेह न मास्यो, हिवतुं इहा रहि हास्यो ।
हुं एकलो तिहां जाइसि, तुझ वयरीनइं हूं घाइसि ॥ २३ ॥
इम कहि श्रीराम तेथि, गया ते सुग्रीव जेथि ।
रामनो तेज प्रताप, सहिन सकइं तेह आप ॥ २४ ॥
तुरत विद्या गइ नासी, मूलगी देह प्रकासी ।
साहसगति नामइ लेह, विद्याधर हुंतो जेह ॥ २५ ॥
लोके ओलख्यउ तुरत्त, एतो तेहीज कुदरत ।
देखि वानरपति क्रुद्ध, तिण सेती माड्यो युद्ध ॥ ३६ ॥
विढतो वानर राय, वास्यो लखमण धाय ।
साहसगति करी गर्व, वांनर वल भागो सर्व ॥ २७ ॥

रामइ जीवतो झाल्यो, यम रांणानइ ले आल्यो ।
साहसगति मुयो देख्यो, सुग्रीवनो हियो हरख्यो ॥ २८ ॥

सुग्रीव लखमण राम, आव्या आपणइ गाम ।
राख्या उद्यान माहे, घरि गयो आप उछाहे ॥ २९ ॥

तारा राणी नइ मिलियो, विरहतणो दुख टलियो ।
अश्व रतन बहु भेटि, दीधा रांमनइ नेटि ॥ ३० ॥

लुबधो रहइ तारा सेती, कहुँ तेहनी बात केती ।
पणि प्रतिज्ञा वीसारी, चूको सुग्रीव भारी ॥ ३१ ॥

सुभट तिहा सहु मिलिया, विरहिय प्रमुख जे वलिया ।
तेरह सुग्रीव कन्या, चंद्रप्रभादिक धन्या ॥ ३२ ॥

रांम आगलि आवी तेह, इम वीनवइ सुसनेह ।
अम्हारो भरतार, दि सामी करतार ॥ ३३ ॥

राम उपरि दृष्टि घोती, पासि ऊभी रही जोती ।
पिण श्रीराम न जोयइ, सीता विरह वियोगइ ॥ ३४ ॥

रांम विनोद निमित्त, नाटक करइं एक चित्त ।
तउ पिणि दृष्टि देवइं, केहनइ न बोलावइं ॥ ३५ ॥

सीतानो एक ध्यान, ते विन सहु सूनो रान ।
लखमणनइ कहइ राम, सीधो सुग्रीव काम ॥ ३६ ॥

पणि सुग्रीव निचिंत, किम बइठो ग्रही एकंत ।
परवेदन कुण जाणइ, काम कीधो कवण पिछाणइ ॥ ३७ ॥

काम सरया वैद्य वइरी, थायइ इम दीसइं छइरी ।
तां लगि सहु करइ सेव, ता आराधइं ज्युं देव ॥ ३८ ॥

तां लगि प्रगटइ सनेह, तां पगि झटकइ खेह।
जां लगि पोतानो काज, सीझइ नउ सहु साज ॥ ३९ ॥
काम सीधां पछइ सोई, वात चीतारइं नहि कोई।
एहवा रांम वचन्न, साभलि लखमण कन्न ॥ ४० ॥
गयो सुग्रीवनइं पासइ, एहवो आकरो भासइं।
रे तुं कृतघन खेचर, तूं तो अधम नरेसर ॥ ४१ ॥
वीसार्‍यो आगीकार, नहि उत्तमनइ आचार।
तुं आंपणो बोल्यो पालि, उठि तूं आलस टालि ॥ ४२ ॥
नहि तर सुग्रीव (साहसगति) जेम, तुझनइं करिसि हुं तेम।
इण परि निभ्रंछयो बहुपरि, सुग्रीव थरहर्‍यो भय करि ॥ ४३ ॥
लखमण नइ कहइप्रणमी, सामी अपराध मुझ खमी।
हुँ लाज्यो हिव अति घणु, ते परमारथ हुँ भणुं ॥ ४४ ॥
मइ मतिहीण न जाण्यो, त्रूटइं अति घणो ताण्यो।
हुँ रहुं महल आवासि, राम रहइं बनवासि ॥ ४५ ॥
तारा मुझ प्रिया सुखिणी, सीता विरहिणी दुखिणी।
मुझ वयरी मार्‍यो राम, रामनउ वयरी समाम ॥ ४६ ॥
तुम्ह कियो मुझ उपगार, मुझथी न सर्‍यो लगार।
पहिलो करइ उपगार, अमूलिक तेह संसार ॥ ४७ ॥
उपगार कियां उपगार, क्रय विक्रय व्यवहार।
उपगार कीधा जे कोई, पाछो न करइं ते होइ ॥४८॥
सींग विना सहि ढोर, भूमिका भार कठोर।
इम आंपणी निंदा करतो, उपगार चित्तमइं धरतो ॥४९॥

लखमण सुं इम कहतो, रामतणइ पासि पहुतो।
कीधो राम नइं प्रणाम, करजोडी कहइ आम ॥५०॥
हिव हुं जाउं छुं स्वामि, निरति करिसि ठामि ठामि।
तुम्हें धीरप धरिज्यो, मुझ उपरि कृपा करिज्यो ॥५१॥
एहवइं सातमी ढाल, पूरी थई ततकाल।
समयसुंदर इम बोलइं, सीतानइं कोइ न तोलइं ॥५२॥
पाचमो खंड रसाल, पूरुं थयो सात ढाल।
समयसुंदर कहइ आगइं, कहतां दिन घणा लागइं ॥५३॥

सर्वगाथा ।२४८॥

इति श्री सीताराम प्रवन्धे सीता संहरणनाम पचम खडः समाप्तः ॥

खंड ६

दूहा १४

मात पिता प्रणमुं सदा[1], जनम दीयो मुझ जेण।
वांदुं दीक्षागुरु वली, धरमरतन दीयो तेण ॥१॥
विद्यागुरु वांदु वली, ज्ञान दृष्टि दातार।
जगमांहि मोटो जाणिज्यो, ए त्रिहुँनो उपगार ॥२॥
ए त्रिहुनइं प्रणमी करी, छट्ठो खंड कहेसि।
पटरस मेली एकठा, सगला स्वाद लहेसि ॥३॥
सुग्रीव सेवक साथि ले, निसर्यो खवरि निमित्त।
भामंडल भाई भणी, मुंक्यो लेख तुरत्त ॥४॥

---

१ —मुदा

गाम नगर वन गिरि गुहा, जोतो थको सुग्रीव।
कंबुसेल सिखरइं चढ्यो, सुणी रतनजटि रोव ॥५॥

सुग्रीव पूछ्यो का इहा, दुखियो रहइ अत्यन्त।
ते कहइ सुणि सुग्रीव तूं, सगलो मुझ विरतंत ॥६॥

रावण सीता अपहरी, ले जातो थको दीठ।
मइ सीतानइं राखिवा, केडइ कीधी पूठि ॥७॥

जुद्ध करतां रांवणइ, दीधो सकति प्रहार।
विद्या छेदी माहरी, तिण हुं करुं पोकार ॥८॥

राम समीपइं पणि हिवइं, जा न सकूं करुं केम।
सुग्रीव ऊपाडी गयो, राम समीपि सप्रेम ॥९॥
रतनजटी विद्याधरइं, प्रणमी रामना पाय।

कहइं सीतानइं ले गयो, रावण लंकाराय ॥१०॥
वात कही सहु आंपणी, झगडउ कीधो जेम।

मुझ विद्या छेदी तिणइं, आवी न सक्यो तेम ॥११॥
सीता खवरि सुणी करी, हरष्यो श्रीरामचंद।
रोमाचित देहो थई, सिंची अमृत विंद ॥१२॥

सीता आलिंगन सारिखो, सुख पायो सुजगीस।
डीलतणा आभरण सहु, करइं राम वगसीस ॥१३॥

रामचन्द्र पूछ्यो वली, विद्याधर कहो मुज्झ।
लंका नगरी छइं किहां, किहा ते सत्रु अवुज्झ ॥१४॥

मल्लि तीरथ तणा वीसपाटां तणी[1], कोडि षट साध सीधा संथारइ।
कोडि त्रिण साधनी वीसमा जिन तणी, मुगति गई बात सहुको सकारइ
एक कोडि साध मुगति गया नमितणा, इणिधणी कोडिवलि सिवनिवासी
नाम ए कोडिसिल तेणि कारण कही, ए सहु वात प्रकरण प्रकासी ॥२०॥
वाम भुजदंड करि प्रथम वासुदेव ते, कोडिसिल गगनि उंचीउपाडइं ॥
सीस वोजइ त्रिजइं कण्ठतांई करी, उर लगी जोर चउथउ दिखाडइं ॥
हृदय लगि पांचमो करइं छठो कडइं, सातमो साथलां सीस आणइ
आठमो जानु लगि एम नवमो वली, भूमि थी आंगुलां च्यार तांणइ।
कोडिसिल पासि कोहुको मिल्यो आविनइं, लखमणाकुमर नवकारसमरी
वाम भुजदंड सू कोडिस्सिलइ उद्धरी, धन्य हो धन्य कहइं अमर अमरी।
देवता फूलनी वृष्टि करी ऊपरइं, राम सुग्रीव सहु सुभट हरख्या।
कोडिसिलवादि सम्मेतसिखरइं गया, नयण जिनराजना थूंभ निरख्या
राम लखमण विमाने सहु वइसिनइ, नगरि केकिंध पहुता सकोई।
राम कहइं सुणो सुग्रीव सहु को तुम्हे, वइसि रह्या केम निश्चिंत होई ॥
लंकगढ़ लेण चालउ सहु को सुभट, मत करे मुझ विरह अगति ताती।
सीत वलि जाइस्यइ तो मरण माहरो, थाइस्यइ फाटस्यइ दुख छाती ॥
सुभट सुग्रीव कहइं देव सुणो वीनती, जुद्ध रावण संघातइंम मडउ।
जेण विद्यावलइं तेण अधिको सदा, आजलगि तेज तेहनउ अखंडउ ॥
तेभणी तेहनो भाइ छइ अति वलउ, परम श्रावक अनइ परम न्याई।
परम उपगारकारी विभीषण सबल, प्रार्थना भंग न करइं कदाई ॥

१—पेढी लगइ

दूत मुंकी करी तेहनइं प्रारथो, तेह रावण भणी सीख देस्यइं ।
राम कहइं इहां कुंण एहवो दूत छइं, जेह इण काम सोभाग लेस्यइं ॥
एह खेचर माहे को नही एहवो, जे लंका जाइनइं काम सारइं ।
जेण दुरगम विषम लंकगढ पइसता, दैत्य देखइ तुता भालि मारइं ॥
पणि अछइं पवननो पुत्र एक एहवो, नाम हनुमंत एहवो[1] कहीजइं ।
ते सापुरसनइं देव इहा तेडियइ, तेहनी वात सहुको पतीजइ ॥३१॥
वात ए चित्त मानी सहू को तणइं, मुँकियो दूत सिरभूति नामा ।
जाइ हनुमंतनइ वात सगली कहइं, लखमणाकुमर सु थया संग्रामा ॥
खरदूषण संवुक मास्या सुणी, अनंगकुसुमा हनुमत नारी ।
वाप वाधव तणो दुक्ख लागो सवल, रोण लागी घणु वारवारी ॥३३॥
सर्व अंतेउरी सहित मंत्री मिली, दुक्ख करती थकी तेह राखी ।
प्रोतिकर भूतिकर पूछियो दूतनइं, ते कहइं वात सहु सत्यभाखी ॥३४
मारि मायावि सुग्रीवनइं रामचंद, नारि तारा मुँकावी महातइं ।
हिव श्री सुग्रोव उपगार करिवा भणी, सीत मुँकाविवा करइं एकातइं ।
सुता सुग्रीवनी नारि हनुमतनो, नाम कमला घणु दूत मानइं ।
रामगुणि रजियो गयो किंकिंधपुरि, वेगि हनुमंत वइसी विमानइं ॥
कीयो परणाम सुग्रीवनइं जाइकरि, तेण श्री रामनइं पासि आण्यो ।
आवतो देखिनइं राम ऊभाथया, आपणो काम मीठो पिछाण्यो ॥३७
देइ आदर घणो राम साईए मिल्या, कुसल खेम पूछिनइं हरष पाम्यो ।
लखमण कुमर सनमान दीधो घणो, हनमंतउ रामनइं सीस नाम्यो ॥
भणइं हनुमंत श्रीरामनइं तुम्हतणा, गुण सुण्या चंद्रकिरणा सरीखा ।
जनक धनुष चाढियो प्रगट पछाडियो, कपट सुग्रीव कीधी परीखा ॥

[1] जेहनउ

ढाल १

॥ राग रामगिरी ॥

'भणइ मदोदरी दैत्य दसकध सुणि' ए गीतनी ढाल। अथवा चढ्यउ रण जूझिवा चडप्रद्योत नृप—ए बीजा प्रत्येकबुद्ध ना खडनी, ढाल।

सुणउ श्रीराम लंकापुरी छइ जिहां, वदइ विद्याधरा हाथ जोड़ी।
दैत्य रावण तिहा राय अति दीपतो, कोइ न सकइं तसु मान मोडी ॥१॥
लवणनामइ समुद्र माहि राक्षसतणो, दीप एक देव मोटउ सुणीजइं।
सात जोयण सयांते तेह पिहुलप्पणइ, इहा थकी दूरि तेतो कहीजइ ।२।
तेहमाहे त्रिकूटनाम परवत तिहाँ, पाँच जोयण सयापिहुलमान।
वलिय नव जोयण उंचपण तेहनो, तेह उपरि लंकापुरी थांन ॥३॥
तेथि परचंड राजा दसानन अछइं, तेह त्रैलोक्य कंटक कहावइं।
नवग्रह जेण सेवक कीया निजतणा, विधि तणइं पासि कोद्रदंलावइ ॥
वलि विभीषण कुंभकर्ण नृप सारिखा, जेहनइ भाई जगमंइ वदीता।
अतिसवल इंद्रजितइ मेघनाद सरिषा[1], सुभट पिण तेहना किण न जीता।
विषमगढ़ नालिगोला विषम भूमिका।
वलि विपम चिहुं दिसइ समुद्र खाई ॥
अभंग भड अतुलबल कटक अक्षौहिणी
प्रथमथी कुण सकइ तेथि जाई ॥ ६ ॥ सु०
जे तुम्हारइं रुचइ ते करो हिव तुम्हे, तेहनइ आज कोई न तोलइं।
दैत्य रावण तणी वात सगली सुणी, लखमणा कुमर तव एम बोलइ ७

---

१ — अगजा

जे हरइ पारकी नारि निरलज निपट, अधम तेहनी किसी कहो वड़ाई।
राम कहइं रे सुभट सुणहु विद्याधरा, देखि कुण हेलि करूं तेथि जाई ८
पारको स्त्री हरइं को नही आज थी, एहवी वात करूं हुं प्रमाणुं।
लंकागढ़ लूटिनइ मारि पाधर करु, छेदि दस सोसनइ सीत आणुं ॥९॥
भणि जंबुवत साहिव सुणो वीनतो, चतुर विद्याधरी ए कुमारी।
तुम्हतणी रागिणी आवि आगइं खड़ी, आदरो वात मानो हमारी १०
भोग संजोग तुम्हे एहसुं भोगवो, सीत वालन तणी वात मूको।
अन्यथा दुक्ख भागी हुंस्यो एहवा, मूढ़ नर पथिकनर जेमचूको ॥११॥
भणइ लखमण इम म कहि जुं जंवुवंत तु, उद्यमे जेण दालिद्र नासइ।
गोह पन्नग भणी मारिनइ औषधी, वलइं लीधो लोक एम भासइं १२
जेम तिण औपधी वलय लीधो निपुण, तेम अम्हे मारि रिपु सात लेस्यां
जपइ जंववंत मंत्रीस सुग्रीवनो, एह उप्पाय अम्हे कहेस्यां ॥ १३ ॥
एकदा रांवणइ अनंतवीरज मुणी, पूछियो केहथी मुज्झ मरणं।
ते कह्यो कोडिसिल जेह ऊपाडिस्यइं, तेहथी मरण डर चित्त धरणं १४
भणइं लखमण भुजादंड आफालतो, देखि तु माहरो वल प्रचंडं।
सिंधु देसइ गयो राम सुग्रीव सुं, खेचरे भूचरे करि घमंडं ॥१५॥ सु०
कोडिसिल नाम एकासिला तेथि छइं, भरतखंडवासि देवी निवासां।
एक जोयण उछेधांगुले ऊंचपणि, पिहूल पणि तेतली सुप्रकासा ॥१६॥
शांति गणधर चक्रायुध मुनि परिवरयो, सिद्धि पामी तिहासुद्ध भावइं
बत्तीस पाटांगुली तेहथी तिहां वली, मुनि तणी कोडि वहु मुगतिपावइं
कुंथु तीरथ अठावीस जुगसीम वलि, सिद्धिगइ साध संख्यात कोडी।
अरतणा साधवलि पाट चउवीस लगि, वारकोडि मुगतिगया कर्मत्रोडी

हुँ जाउं हुकम द्यो एकलो लंकागढि, मारि भांजुं भुजादंड सेती।
वेगि रावण हणी सीत आणुं इहां, तुम्हे रहो एथि एवात केती ॥४०॥
भणइ श्रीराम हनुमंत एक वार तुं, तेथि जा सीतनइ कहि संदेसो।
तुज्झ विरहइं करी रामजीवइं दुक्खइं,
मुज्झ विरहइं जिसो तुज्झ अंदेसो ॥४१॥
तुं प्रिया जिमतिमकरी रहे जीवती, जीवतो जोव कल्याण देखइं।
जाम लखमण लेई साथि आवु तिहां, धर्म वीतराग नइं करी विशेषइं
माहरा हाथनी आ देजे मुद्रडी, सीतनइं जेम वेसास होई।
आवतो तेहनी राखड़ी आणिजे, मुज्झ नइं पणि हुवइं सुखु सोई ॥४३
एम समझाविनइं रामचंद मुकियो, वीर हनुमत सेना संघातइ।
खंड छठ्ठातणी ढाल पहिली इसी, समयसुंदर भणो भलीय भांतइं ॥
सर्वगाथा ॥५८॥

दूहा २५

आकासइं ऊडी गयो, हनुमंत सेन समेत।
पहुतो गढ लंकापुरी, पणि रुंध्यो गढ तेथि ॥१॥
हनुमंत पूछ्यो केण कियो, ए ऊँचो गढ संच।
कहइं मंत्री राक्षस तणो, सहु माया परपंच ॥२॥
कूड यंत्र माहे तिसइ, असालिया मुख दिट्ठ।
दाढ विडंवित उग्र विष, अहि वेढियो अनिट्ठ ॥३॥
वज्र कवच पहिरी करी, हनुमंत गयो हजूर।
कूड यंत्र प्राकार सहु, भांजि किया चकचूर ॥४॥

तस मुखमइ पइठो तुरत, गदा हाथि हथियार ।
उदर विलूरी नीसर्यो, नखना दिया प्रहार ॥५॥
आसालिया विद्यातणो, वज्रमुख सुणी पोकार ।
जुद्ध करइ हनुमंत सुं, आरक्षक अहंकार ॥६॥
हनुमंते वज्रमुख मारियो, चक्र सुं छेदिउ सीस ।
अधो लंक सुंदरी सुता, आवी बापनी रीस ॥७॥
हनुमंत सुं रण मंडियो, जेहवइं नाखइं तीर ।
तेहवइ तेहनइ हाथ थी, धनुष झूटि ल्यइ वीर ॥८॥
मोगर सकति मुंकइ वली, लंकासुदरि जाम ।
हथियार हाथ थी झूटता, दृष्टि पड्यो रूप ताम ॥९॥
कामातुर हनुमंत थयो, ते पणि हनुमंत देषि ।
कंदर्पने बांणेकरी, वींधाणी सुविशेषि ॥१०॥
लंकासुंदरी चिंतवइं, इण विण जीव्युं फोक ।
कहइं जिम तइं मुझ मन मोहिउ, मइं पणि तुझ सहु थोक ॥११॥
हाथ संघातइं हाथ मुझ, हिवइ तु झालि सुजाण ।
हनुमंत लंकासुंदरी, कीधो वचन प्रमाण ॥१२॥
खोलइं वइसारी करी, गाढालिंगन दिद्ध ।
विद्यावलि तिण विकुरवी, नगरी तेथि समृद्ध ॥१३॥
रातइं ते साथे रही, हनुमंत चाल्यो प्रभात ।
अधो लंकसुंदरि भणी, जुद्धतणी कहि वात ॥१४॥
पहुतउ ते लंकापुरी, गयो विभीषण गेह ।
करि प्रणाम ऊभो रह्यो, कर जोडी सुसनेह ॥१५॥

आदर देनइं पूछियो, राय विभीषण तेह।
कहउ किण कांमइ आवीया, तब हनुमंत कहइं एह ॥१६॥

रांम सुग्रीव हुं मुंकियो, प्रभो तुम्हारइं पासि।
नीति निपुण तुम्हें सांभल्यो, सुणो एक अरदास ॥१७॥

रामतणी सीता रमणि, आणी रावण राय।
पणि पररमणी फरसता, निज कुल मइलउ थाय ॥१८॥

कुण न करइं रिधि गारवउ, नारि सुं कुण न मुज्झ।
विधिना कुंण न खंडीयो, कुण चूको नहि वुज्झ ॥१९॥

जउपिणि जगत इसो अछइ, तउ पिणि जाणउ एम।
निज बाधव रावण तणी, करउ उपेक्षा केम ॥२०॥

रांवण समझावी करी, पाछी मुंकउ सीत।
कहइ विभीषण मइ कही, पहिली घणी कफीत ॥२१॥

तउपणि ते मांनइ नही, वलिहुं कहिसि विशेषि।
विसनी रांवण अति हठी, स्युं कीजइं तुं देखि ॥२२॥

हनुमंत चाल्यो तिहांथकी, पहुतो सीता तीर।
दीठी सीत दयामणी, दुरबल क्षीण शरीर ॥२३॥

जेहवी कमलनी हिमवली, तेहवी तनु विछाय।
आंखे आंसू नाखती, धरती दृष्टि लगाय ॥२४॥

केसपास छूटइ थकइं, डावइं गाल दे हाथ।
नीसांसा मुख नाखती, दीठी दुख भर साथि ॥२५॥

ढाल बीजी

राग मारुणी

लंका लीजइगी, सुणि रावण लका लीजइगी। ओ आवत लखमण कउ लसकर,
ज्यं घन उमटे श्रावण। ए गीतनी ढाल।

सीता हरिखीजी, निज हीयडइ सीता हरिखीजी।
हनुमंत दीध रामना हाथनी, मुंद्रडी नयणे निरखीजी ॥१॥ सी०
हलुयइ २ हनुमंत जाई, सीत प्रणाम करेई।
मुद्री खोला माहे नाखी, आणंद अगि धरेई ॥ २ ॥ सी०
मुंद्रडी देखि सीता मन हरषी, जाणि हुयो प्रिय सगम।
अमृतकुंडमाहे जाणे नाही, विहस्यो तनु थयो संभ्रम ॥ ३ ॥ सी०
रतन जडित रंगीलो ओढणा, सीता वगिस्यउ उत्तम।
हनुमंतनइ वलि पूछइ हरपइ, कुशलखेम छइ प्रीतम ॥ ४ ॥ सी०
कहइ हनुमंत संदेसो सगलो, राम कह्यो जे रंग भरि।
सुणि सीता वलि अतिघणुं हरपी, देखि भणइ मंदोदरि ॥ ५ ॥ सी०
सुॅदरि आज तुॅ किम हरपित थई, संतोषी मुझ प्रियुडइ।
कोप करइ सीता कहइ का तु, फोकट फाटइ हियडइ ॥ ६ ॥ सी०
हरपनो हेतु जाणि तुं ए मुझ, प्रियुनी कुशलि खेमी।
इणि सापुरस मुद्रडी आणी, आणंद तेण करेमी ॥ ७ ॥ सी०
पूछइ सीता कहि तु कुण छइं, केहनो पुत्र तुं परकज।
कहइ हुं पवनंजय नो नंदन, अंजनासुंदरि अंगजु ॥ ८ ॥ सी०
हनुमंत माहरो नाम कहीजइ, सुग्रीवनउ हूं चाकर।
सुग्रीव पणि रामनो चाकर, राम सहूनो ठाकुर ॥ ९ ॥ सी०

तुझ विरहइ मुझ प्रियु दुख मानइं, अधिको दुखु नरगथी ।
वेधक जन कहइं प्रीतम संगम, अधिको सुखु सरगथी ॥ १० सी०
तिण कारण मुनिवर वाछइ नही, प्रीतम संगम कोई ।
जे भणी प्रीतम विरह दुखनो, पालण पछइ न होई ॥ ११ ॥ सी०

कहइ सीता सुणि ए वात इम हीज. तउपणि विरला ते नर ।
न करइं प्रेम तणो जे प्रतिबंध, पणि हुं नहि साहसधर ॥ १२ ॥ सी०

वलि आखे आसू नाखती, कहइ सीता हनुमंतनइं ।
लखमण सहित रामचंदकहितउ, किहां दीठो मुझ कंतनइं ॥ १३ ॥ सी०

सरीर समाधि अछइं मुझ प्रियुनइ, के मुद्रडी पडि पाई ।
कहइ हनुमंत सांभलि तुं सामिणि, आरति म करे काई ॥ १४ ॥ सी०

कुशल खेम तुझ प्रीतमनइं छइ, वसइं[1] किकिंध विशेषइं ।
पणि प्रियुनइ एतो छइ अकुसल, तुझ मुख कमल न देखइं ॥१५॥ सी०

पणि श्रीराम कह्यो छइ इमरे, जानावु तुझ पासइं ।
तुझ सरिपा कहि सुभट किता तिहा, वलि सीता इम भासइं ॥१६॥सी०

कहइ हनुमंत मुझ माहे तउ छइ, सुभटपणो निज गेहइं ।
राम समीपि जे सुभट अभंग भड, तेह तणइ हुं छेहइ ॥१७॥ सी०

इण अवसरि मन्दोदरी बोली, सुणि एहनुं बल एतल ।
रावण आगइ वरुणादिक रिपु, मारि भाज्या एकलमल ॥१८॥ सी०

ए सरिखो कोई सुभट नहीं इहा, तुष्टमान थयो रावण ।
चंद्रनखा निज भगिनी तनया, परणावी सुखपावन ॥१९॥ सी०

१—नगरी

पति अनंगकुसमानो ए नर, पणि थयो धरणीधर वर।
कहइ हनुमंत सांभलि मंदोदरी, तसु उपगार अधिकतर ॥२०॥ सी०
प्रत्युपकार करण भणी सुंदरि, दूतपणउ अम्ह भूषण।
पणि तुं सीता विचि थइ दूती, ते मोटो तुझ दूषण ॥२१॥ सी०
जिण कारणि कवियण कहइ एहवा, अन्य रमणि नी संगति।
अस्त्री प्रीतम नइ वांछइ नहीं, वर तजइं प्राण अहंकृत्ति ॥२२॥ सी०
कोपकरी मंदोदरी कहइ किम, सुग्रीव वानर प्रमुखा।
दसमुख पंचानन सेवा तजि, राम जुंबक भजइं विमुखा ॥२३॥ सी०
तिण कारणि तुं छोडि रामनइं, भजि रावण राजेसर।
सुणि हनुमंत तुं करि आतम हित, ए मुझ पति परमेसर ॥२४॥ सी०
अहंकार वचन सुणि सीता कहइं, कां तुं मुझ पति निंदइ।
वज्रावरत धनुप जिण चाड्यो, जगत सहू पद वंदइ ॥२५॥ सी०
रिपु गज घटा विडारण केसरि, लखमण जास सहोदर।
थोडा दिवसमइं तु पणि देखिसि, प्रगट रूप परमेसर ॥२६॥ सी०
तुझ पति अपराधी नइं देस्यइ, मुझ पति डंड प्रबलतर।
पापी जीव भणी जिम प्रायश्चित्त, द्यइ गीतारथ सदगुर ॥२७। सी०
वचन सुणी सीता ना कोपी, मंदोदरि करइ भरछन।
पापिणि माहरा पतिनै इम तुं, का बोलइ ए कुवचन ॥२८॥ सी०
यष्टि मुष्टि प्रहारै सीता, मारण माडी पापिणी।
फिट फिट करि हनुमंत निभ्रंछी, निरपराध संतापणि ॥२९॥ सी०
कहइ मंदोदरि जइ रावणनइ, हनुमंत दूत समागम।
सेना सुं हनुमंत नइ भोजन, सीता द्यइ सुमनोगम ॥३०॥ सी०

आप एकातइ वइसी सीता[1], राम नाम धरि हियइं ।
गुणि नउकार पछइ कर भोजन, अवधि पूगी तिण लीयइं ॥३१॥ सी०
हनुमंत सीता नइ इम विनवइ, वइसी खवइ मुझ स्वामिनी ।
जिम श्रीराम पासिईं लेइं जाऊँ, सुख भोगिवी तुं सुहागिनी ॥३२॥ सी०
कहइ सीता रोती हनुमंत नइं, एह वात नहीं जुगती ।
पर पुरुष सुँ फरसुं नहिं किदिहुं, ऊडण की नहिं सगती ॥३३॥ सी०
आप राम आवइ जो इहां किणी, तो जाउं तिण सेती ।
जा हनुमंत[1] रावण करइं उपद्रव, ढील म करि खिण जेती ॥३४॥ सी०
मुझ वचने कहिजे प्रीतम नइं, पडिलाभ्यो गुरु ग्यानी ।
थयो नीरोग जटायुध पंखो, वृष्टि थई सोना नी ॥३५॥ सी०
वलि देजे चूडामणि माहरी, सहिनाणी प्रीतम नइं ।
इम कहिनइ कीधी सीख तिणसुँ, हनुमंत कल्याण तुम्हनइं ॥३६॥
सीता रोती नइं हनुमंत द्यइ, इम मां वीहिसि[2] वहुपरि ।
आया देखि राम नइं लखमण, इहाँ वइठी धीरज धरि ॥३७॥ सी०
हनुमत सीता चरण नमीनइं, चाल्यो संदेशा हारण ।
रांवण केडि मुँकिया राक्षस, मूल थी मारण कारण ॥३८॥ सी०
वन माहे गयो हनुमंत वानर, तितरइं दीठा परदल ।
विविध वृक्ष उनमूली माड्या, गदा हाथि अतुली वल ॥३९॥ सी०
रिपु दल त्रुटि पड्या समकालइं, हनुमंत उपरि ततक्षण ।
हनुमंत रिपुदल भाजी नाख्या, वृक्ष प्रहार विचक्षण ॥४०॥ सी०

१—इकवीसमइ दिवसइ सीता
१—जा तु मत २—वाभीसि

वलि सहु सुभट मिलीनइं धाया, हनुमंत ऊपर असिधर।
हनुमंत हण्या गदा हथियारइ, अंधकार जिमि दिनकर ॥४१॥ सी०

सुभट दिसोदिसी भाजि गया सहु, सीह सबद जिम मृगला।
नासइ नाग गरुड देखीनइं, अथवा सेन थी वगला ॥४२॥ सी०

वलि हनुमंत चड्यो अति कोपइं, वानर रूप करी नइं।
पाछो वलि लंकापुरि आयो, कौतुक चित्त धरी नइं ॥४३॥ सी०

घर पाडंतउ तोरण तेहना, त्रोडंतो हाथा सुं।
त्रासंतो गज तुरग सुभट भट, वीहावतो वाथा सुं ॥४४॥ सी०

लंका लोकनइं क्षोभ उपजावतो, गयो रांवणनइं पासइं।
रांवण निज नगरी भाजती, देखी नइ इम भासइं ॥४५॥ सी०

रे रे सुभट इंद्र वरुण यम, इम मइं हेलइ जीता।
केलासगिरि उंचउ ऊपाड्यो, ए मुझ विरुद वदीता ॥४६॥ सी०

ते मुझ विरुद गमाड्या वानर, मुझ नगरी त्रासंतइं।
वाई वेगि चढत री भेरी, केडि करूं नासंतइ ॥४७॥ सी०

गय गूडउ पाखरो तुरंगम, रथ समूह जोत्रावो।
पालिहार पाचे हथियारे, सनद्ध वद्ध हुइ[1] धावो ॥४८॥ सी०

वेगि करी वानरडो मारुं, इम कहिनइ चडइ जितरइ।
कर जोडी वीनवइ पितानइं, कुमर इंद्रजित तितरइं ॥४९॥ सी०

कीडी ऊपरि केही कटकी, हुक्म्म करो ए अम्हनइ।
जिमहुँ वानर झालि जीवतो, तुरत आणी द्यूं तुम्हनइं ॥५० सी०

१—थइ

ले आदेस पितानो इंद्रजित्त, गज चडि हनुमंत सनमुख।
पहरि सन्नाह शस्त्र ले चाल्यो, साल्यो सबलो अरि दुख ॥५१॥ सी०
मेघनाद पणि साथइं चाल्यो, गज चड़ि सेना सेती।
अरिदल मिल्या मांहोमहि वेडं, विच थोड़ी सी छेती ॥५२॥ सी०
युद्ध करंता हनुमत आपणी, नासती सेना निरखी।
आप ऊठि अतुलीवल सगली, राक्षस सेना धरखी ॥५३॥ सी०
निजसेना भागी देखीनइं, इन्द्रजित चड्यो अमरसइं।
तीर सडासडि नाखइं ततपर, जिम नव जलधर वरसइ ॥५४॥ सी०
हनुमंत अर्द्धचंद्र वाण सुँ, आवता छेद्या ते सर।
वलि मुकइं रावणसुत मोगर, तेम सिला वलि वानर ॥५५॥ सी०
राक्षस सुत मुकइ वलि सबलो, सगति प्रहार धरि मच्छर।
लघलाघवी कला करि टाल्यो, हनुमंत कपि विद्याधर ॥५६॥ सी०
इन्द्रकुमरि नागपासे करि, हनुमंत देही वाधी।
रांवण पासि आणि ऊभो कीयो, कहइ ए तुम्ह अपराधी ॥५७॥
वात कहइ सगली हनुंमतनी, रावण आगलि राक्षस।
सीता दूत ए सुग्रीव मुंक्यो, गढ़ भागो जिण धसमस ॥५८॥ सी०
इण मार्‍यो वलि वज्रमुख राजा, लंकासुंदरि लीधी।
वानर रूप पदमवन भागउ, लकामइ हेल कीधी ॥५९॥ सी०
इम अपराध सुणीनउं रावण, रूठउ होठ दंत ग्रहि।
साकलि सुं वांधो मारउं, कहइ अपणउ कीधउ एह लहि ॥६०॥ सी०
रे पापिष्ट दुष्ट निरलज्ज तुं, अधम सिरोमणि वानर।
भूचर नउ तु दूत थयो, तो नहि पवनंजय कुयर ॥६१॥ सी०

नहि अंजणासुंदरि अंगज, आचारे ओलखियइ ।
वलि दस दिवसे दोहिलो सहियइं, पणि अपणी माम रखियइ ॥६२॥
हनुमंत कहइ हसीनइ तुम्ह माहि, नाहि उत्तमनो लक्षण ।
असमंजस वोलइ का मुहडइ, का करइं अपवित्र भक्षण ॥६३॥ सी०
उत्तम हूइ परनारि सहोदर, अधम हरइ परनारी ।
नहि तूँ रतनाश्रव नो नंदन, का हुयउ कुल क्षयकारी ॥६४॥ सी०
इण वचने रांवण अति कोप्यो, हुकम करइं सुभटानइं ।
देखो दुष्ट वचन वोलतो, पालण मारि कटानइं ॥६५॥ सी०
सांकल वांध सिहर मइं सगलइ, घर-वर गली भमांडउ ।
लंका लोक पासि हीलावउ, दुख वांनरनइ दिखाडउ ॥६६॥ सी०
रावणरीस वचन सुणी वानर, वल करि बंधन छोडइं ।
जिम मुनिवर सुभ ध्यान धरी नइं, तुरत करम वध त्रोडइ ॥६७॥ सी०
ऊडि गयो उंचो आकासइं, सीता दूत जिम समली ।
भांज्यो भुवन सहस जिहा थाभा, चरण लता दे सवली ॥६८॥ सी०
पडतइ भुवन धरा पिण कांपी, सेषनाग सलसलिया ।
लंका लोक सवल खलभलिया, उदधि नीर ऊछलिया ॥६९॥ सी०
इम हनुमंत महातम अपणो, देखाडी लंकामइं ।
किंक्किंधनगरी नइं चाल्यो, राम वधावणि कामइं ॥७०॥ सी०
सीता हनुमंत जातउ जाणी, असीस द्यइ जस लेजे ।
द्यइ पुष्पांजलि साम्ही हुई नइं, कुशल खेम पहुचेजे ॥७१॥ सी०
खिण एक माहि गयो ऊडीनइं, किंक्किंध नगरीमइ ।
सुग्रीव पासि गयो सुखसेती, भलो काम कीयो भीमइं ॥७२॥ सी०

सुग्रीव उठि दीयो वहु आदर, राम पासि ले आयो।
ऊठ्यो राम देखि आवंतो, परमानंद मनि पायो ॥७३॥ सी०
करि प्रणाम हनुमंत चूडामणि, रामचंद नइं दीधी।
सीता मिलण समो सुख पायो, हीयडइं आगलि लीधो ॥७४॥ सी०
वीजी ढाल भणी अति मोटी, हनुमंत दूत गमन की।
समयसुंदर कहइ खंड छठ्ठा नी, रसिक माणस सुखजनकी ॥७५॥ सी०
सर्वगाथा ॥ १५८ ॥

दूहा ११

कहइ सीता नइं कुशल छइं, हनुमंत वोलइ एम।
तिहां जाता नइ आवतां, वात थई छइ जेम ॥१॥
संदेसो सीता कह्यो, थोडां दिवस मंझारि।
जो नाया तउ जीवती, नहि देखो निजनारि ॥२॥
सीता सहिनाणी सुणो, सुणी तास संदेस।
आपो निंदइ रामजी, आंणइ मनि अंदेश ॥३॥
धिग धिग जीवित तेहनो, धिग धिग तसु अवतार।
जसु महिला रिपु मंदिरे, निवसइं नित निरधार ॥४॥
रांमनइ आमणदूमणो, देखी लखमण ताम।
कहइ सोचा[1] म करो तुम्हे, सीतल परना काम ॥५॥
लखमण तेडाया सुभट, सुग्रीवादिक भत्ति।
ते कहइं भामंडल अजी, नायो करो निरत्ति ॥६॥
ढील नहि छइ अम्ह तणइं, चालो लंका जेथि।
पिण किम तरिस्या भुज करी, आडो समुद्र छइं एथि ॥७॥

१—चिन्ता

सिंह्नाद खेचर कहइ, एतो वात अयुक्त।
आतम हित ते कीजियइं, संत तणो ए सूक्त ॥८॥
हनुमंत भागा जेहना, लंका भुवन प्राकार।
ते रावण कोपी रह्यो, अम्हनइ नाखिस्यइं मारि ॥ ९ ॥
चंद्रसमि तेतइ कहइ, सिंहनाद सुणि एह।
कुण वीहइ रावण थकी, अम्ह वल कटक अछेह ॥ १० ॥
राम तणइं कटकइं मिलइं, कुण कुण सुभट अभंग।
नाम सुणो हिव तेहना, जे करइं सवलो जंग ॥ ११ ॥
॥ सवगाथा १६६ ॥

ढाल ३

पद्धडी छंदनी

अति सवल घनरति सिंहनाद, घृतपूरह[1] केवलि किल प्रल्हाद।
कुरुभीमकूट नइं असनिवेग, नलि नील अंगद सवल तेग ॥ १ ॥
वज्र वदन मंदरमालि जाण, चद्रजोति केता करूं वखाण।
रणसीह सिंहरथ वज्रदत्त, लागूल दिनकर सोमदत्त ॥ २ ॥
रिजुकीर्ति उलकापातु धोर, सुग्रीव नइं हनुमंत वीर।
वलि प्रभामंडल पवनगत्ति, इंद्रकेत नइ प्रहसंत कित्ति ॥ ३ ॥
भलभला एहवा सुभट भट्ट, वानर कटकमइ अति प्रगट्ट ॥
चंद्ररसमि विद्याधर वचन्न, सुणि करइं वानर रण जतन्न ॥ ४ ॥
तिण वेलि कोपइ चड्या राम, चाडियो त्रिसलि नजरि स्याम ॥
आफालियो निज धनुप चाडि, सिंहनाद कीधो वल दिखाडि ॥ ५ ॥

१—घृतवरह

जिसो प्रलयकाल सूरिज प्रचंड, तिसो राम देखी तप अखंड।
सुग्रीव प्रमुख वानर सलज्ज, दसवदन उपरि थया सज्ज ॥ ६ ॥
मगसिर तणउ जे प्रथम पक्ष, रविवार पाचम दिन प्रत्यक्ष।
शुभ लगन वेलि विजय योग, राम कीयो चालणरो प्रयोग ॥ ७ ॥
भलभला शकुन थया समस्त, निरधूम अगनि साम्ही प्रशस्त ॥
आभरण पहिरे सधव नारि, हासला घोड़उ करइ हेपार ॥ ८ ॥
निग्रंथ दरसण नयण दिठ्ठ, वायउ पवन अनुकूल पिठ्ठ ॥
चामर धजा तोरण विचित्र, गजराज पूरण कुंभ छत्र ॥ ६ ॥
संखनउ सवद सवच्छि गाय, नवलीयो दक्षिण दिसइं जाय।
अतिवृद्ध पुरुपनइं सिद्ध अन्न, साभल्यो भेरी सवद कन्न ॥ १० ॥
खीर वृक्ष ऊपरि चलित पक्ष, वासियो वायस वाम पक्ष ॥
बीजा थया वलि शकुन जेह, सहु कहइं कारिज सिद्ध तेह ॥ ११ ॥
चाल्यो लंका दिसि रामचंद, साथइ विद्याधर तणा वृंद।
नक्षत्र वीट्यो चंद जेम, आकास सोहइ राम तेम ॥ १२ ॥
सुग्रीव हनुमंत नइ सुसेण, नलनील अंगद शत्रुसेण।
एहनइ वानर चिन्ह जाणि, वाजते तूरे वहइ विमाणि ॥ १३ ॥
खेचर विरोहिय चिन्ह हार, सिंहरथ तणइं तोसीहसार।
मेघकंत नइ मातंग मत्त, रणसूर खेचर ध्वजारत्त ॥१४ ॥
इण परि विमाने वाहनेषु, गजरथ तुरंगम चिन्ह देखु।
आप आपणे वइसी विमान, विद्याधरइ कीधुं प्रयाण ॥ १५ ॥
लखमण सहोदर साथि लिद्ध, वांनरे मारकि फोज किद्ध।
जिम लोकपाले करीय इंद, सोहइ त्युं सुभटे रामचंद ॥ १६ ॥

गयणे वहइं सहु जाणि पक्षि, देवता दीसइं ते प्रत्यक्ष।
अनुक्रमइ वेलधर समीप, गया समुद्र काठइ[1] तिहां महीप ॥ १७ ॥
आवतो वानर सैन्य देखि, करइं झुद्ध सवलो नृप विशेप।
ततकाल जीतो नलिइं तेह, रामना प्रणामइ पाय एह ॥ १८ ॥
आपणी कन्या चतुर च्यार, लखमण भणी द्यइ अति उदार।
तिहा रह्या रंग सु एक राति, वलि चालिया उठी प्रभाति ॥ १९ ॥
ततखिण गया लंका समीपि, उतर्या नीचा हंसदीपि।
राजा तिहा हंसरथ प्रसिद्ध, सेवक थई वहु भगति किद्ध ॥ २० ॥
मुकियो माणस रामचंद, वेगि आवि भामंडल नरिंद।
रामइ कियो तिणठामि मेल्हाण, पणि पड्यो लंकापुरी भंगाण ॥ २१ ॥
ऊछली समुद्रनी जाणि वेल, खलभली लंका तेण मेल।
आविया वानर दल उलट्टि, खिण माहि नगरी थई पलट्टि ॥ २२ ॥
दसवदन वाई मदन भेरि, ततकाल सुभटे लियो घेरि।
वाया वली रण तणा तूर, तिण मिल्या रण झूझार सूर ॥ २३ ॥
आवीया सगला सूरवीर, वडवडा रावण तणा वजीर।
हिव एण अवसरि करि प्रणाम, वाधव विभीषण कहइ आम ॥ २४ ॥
इन्द्र समो राम नी रिद्धि आज, अति सवल वानर तणउ अवाज।
राम सुं रावण म करि झुज्झ, तुं मानि हित नी वात मुज्झ ॥ २५ ॥
का सुजस खोवइं आलिमालि, का पाप करि पइंसइंपयालि।
भलभली ताहरइं नवल नारि, तिणा थकी अधिकी नहि संसारि ॥२६॥

---

1 नामइ

सीता भणी पाछी संप्रेडि, नहीतरि न छोडइं राम केडि।
इम सुणि विभीपण तणा वोल, कहइं इन्द्रजीत तुं रहइं अवोल ॥ २७॥

इहाँ तुज्झ ऊपरि नहिं वंधाण, वीहइ तो वइसी रहि अयाण।
संग्राम करि वहु सुभट मारि, आणी जिणइ ए सीत नारि ॥ २८ ॥

रावण तिको किम तजइ तेह, परमान्न भूख्यो जेम एह।
किम अमृत मुंकई त्रिष्यो जेह, दससीस तिम सीता सनेह ॥ २६ ॥

वलतो विभीपण कहइ एम, तुं सत्रुभूत सुत थयो केम।
जे वचन तुं एहवा जंपेइ, ते आगि मांहि इंधण खिवेइ ॥ ३० ॥

लंका तणो गढ़ भाजि भूक, करि महल मंदिर टूक-टूक।
जदि आवि लखमण कीध हेल, तदि सीत देस्यो मुंकि खेल ॥ ३१ ॥

एकलो राम जीतो न जाय, लखमण सहित किम युद्ध थाय।
एक सीहनइं पाखस्यो होइ, कुण सकइ साम्हो तास जोइ ॥ ३२ ॥

ए मिल्या सुभट मिल्या अनेक कोडि, सुग्रीव हनुमंत साथ जोडि।
नलनील अंगद अनलवेग, तेहनी अति आकरीज तेग ॥ ३३ ॥

पाछी सीता देता ज भव्य, आपणो राखो जीवितव्य।
हुं कहुँ केती अधिक वात, बीजी न सूझइं काइं धात ॥ ३४ ॥

इम सुणी विभीषण कठिन वोल, कोपीयो रावण अति निटोल।
उठीयो आपणो खडग काढि, मारुं विभीपण सोस वाढि ॥ ३५ ॥

तेतइ विभीषण त्रटक्कि, सूरवीर साम्हो थयो सटक्कि[1]।
उनमूलि थयो थंभ एक, मारुं दसानन टलइ उदेग ॥ ३६ ॥

१—झटक्कि

जुद्धकरण लागा ततकालि, कुंभकर्ण भाई पड्यो विचालि
काढ्यो विभीषण रांवणेण, निज नगर थी कोपातुरेण ॥ ३७ ॥
राजा विभीषण करिय रीस, अक्षोहिणी ले साथि तीस।
गयो हंसदीप सबलइ पड्डूरि, वाजते वाजे नवल तूर ॥ ३८ ॥
पड़ी खलभली वानर कटक्कि, चाडिउ धनुष रामइ झटक्कि।
लखमण लिउ रविहास खग्ग, सावधान सुभट्ट थया समग्ग ॥ ३६ ॥
वांनरा केरो कटक देखि, वीह्यो विभीषण अति विशेषि।
रामचंद्रनइ मुकियो दूत, जई कहइं वीनति ते प्रभूत ॥ ४० ॥
सीता तणो देता प्रबोध, मुझ थयो भाई सु विरोध।
हुं आवियो हिव तुम्ह पास, तुं सामिनइं हूं तुज्झ दास ॥ ४१॥
साभलो दूतना वचन सार, राम मंत्रि सु माडयो विचार।
मंत्रीस मतिसागर कहेउ, कहो वात कूड नी कुण लहेइ ॥ ४२ ॥
मत रावणइं करि कपट कोइ, मुक्यो विभीषण भाई होइ।
वेसास करिवो नहीं तेण, पंडित बृहस्पति कहइ जेण ॥ ४३ ॥
मतिसमुद्र कहइ जउ पणि छइं एम, तो पणि न थायइ एम केम।
सीता विरोध सुणियइ प्रसिद्ध, धरमी विभीषण नय समृद्ध ॥ ४४ ॥
ते भणी निरदूषण कहाय, पछइ तुम्हें जाणो महाराय।
सुणि राम मुकइं प्रतीहार, तेडउ विभीषण सपरिवार ॥ ४५ ॥
आयो विभीषण तुरत तेथि, श्रीराम बइठा हुंता जेथि।
कर जोडि चरणे कीयो प्रणाम, अति घणउं आदर दियो राम ॥ ४६ ॥
कहइ सीत काजि विरोध मुज्झ, थयउ तेण आयो सरणि तुज्झ।
हरषिया हनुमंत सुभट सर्व, सूरिमा जागी चड्या गर्व ॥ ४७ ॥

तेहवइ भामंडल भुवाल, आवियो भाकभमाल भाल।
श्रीराम आदर मांन दिद्ध, वानरे वहु प्रतिपत्ति किद्ध ॥ ४८ ॥
तिहां हंसदीव[1] किताक दीह, रह्या राम लखमण अबीह ॥
ए खंड छट्ठा तणी ढाल, त्रीजी पूरी थई तिण विचाल ॥ ४६ ॥
मुझ जनम श्री साचोर मांहि, तिहां-च्यार मास रह्या उछांहि।
तिहा ढाल ए कीधी इकेज, कहइ समयसुंदर धरिय हेज ॥ ५० ॥

सर्वगाथा ॥२१६॥

दूहा ३१

लंका साम्हा सहु चल्या, पहुता संग्राम ठाम।
वीस जोयण माहे रह्यो, कटक तणो आयाम ॥ १ ॥

कुंभकरण सामंत सहु, निज-निज कटक ले साथि।
रावण नइं पासइं गया, सहु हथियारे हाथि ॥ २ ॥

राक्षसपति पूज्या सहू, वस्त्राभरण विशेषि।
आदर मान घणो दीयो, यथा युगति ते देखि ॥ ३ ॥

एकवीस सहस नइं आठसइं, सत्तरि गजरथ सार।
एक लाख नव सहस वलि, सढ त्रिणसय पालिहार ॥४॥

पांसठि सहस छसइ वली, दस अधिका केकाण।
संख्या एक अक्षोहिणी, तेहनो ए परिमाण ॥ ५ ॥

१—हंसदीव आठ दीह

च्यारि[1] सहस अक्षोहिणी, रावण कीधी सज्ज ।
एक सहस अक्षोहिणी, वांनर तणी सकज्ज ॥ ६ ॥
पांच[2] सहस अक्षोहिणी, थई एकठी प्रगट्ट ।
तेहवइं रामतणो कटक, आयो नगरी निकट्ट ॥ ७ ॥
घर थी नीसरता थका, खिण एक थयो विलंब ।
आंप आंपणी अस्त्री कीयउ, पासइं मिल्यउ कुटंब ॥ ८ ॥
काचित नारी इम कहइं, प्रीतम कंठइ लागि ।
साम्हे घाये झूझिजे, पणि मति आवइं भागि ॥ ९ ॥
काचित नारी इम कहइ, जिम तइं मुझ नइ पूठि ।
नहीं दीधी तिम शत्रुनइं, पणि देजे मा ऊठि ॥१०॥
काचित नारी इम कहइ, तिम करीज्ये तू कत ।
घा देखी तुझ पूठिनउ, सखियण मुझ न हसंत ॥ ११ ॥ का०
काचित नारी इम कहइ, रणमइ करतउ झूज्झ ।
प्रेमपियारा प्राणपति, मत चीतारइ मुज्झ ॥ १२ ॥
काचित नारी इम कहइ, तिम मुखि लेजे घाय ।
जिम मुख देतो माहरइं, नख खिति साम्हो आय ॥१३॥
काचित नारी इम कहइ, पाघडी मूके मुज्झ ।
जिमहुं अति वहिली मिलु, सरगपुरी मइं तुज्झ ॥ १४ ॥
काचित नारी इम कहइ, जय पामी घरि आवि ।
ए अस्त्री वीर भारिजा, मुझनइ विरुद कहावि ॥ १५ ॥

१— भामडल सेना सहित वानर तणी सकज्ज । एक सहस अक्षोहिणी, राम कटकि थई सज्ज । ६ । २—चार सहस अक्षोहिणी, रावण कटक प्रकट्ट ।

काचित नारी इम कहइ, ए वात तुज वखाण।
मत दिइ मुझ रंडापणो, जयश्री लहे सुजांण ॥ १६ ॥
काचित नारी इम कहइ, रे कालुया केकाण।
भर रण माहे भेलिजे, घा वाजता समांण ॥ १७ ॥
काचित नारी इम कहइ, भागइ सुण्यो वयणि।
तउ सगपण ए आपणइं, तुं भाइ हु भयणि ॥ १८ ॥
काचित नारी इम कहइ, रण तूं झूझि सरीसि।
अपछर मइ मुझ ओलखे, हुं तुझ वली वरीसि ॥ १६ ॥
कचित नारी इम कहइ, विरह खमेसि हुं केम।
प्रीतम गलि विलगी रही, गज गलइ कमलिनी जेम ॥ २० ॥
काचित नारि इम कहइ, भागा नहीं भय कोइ।
जिम तिम आवे जीवतउ, सुख भोगवस्यां दोइ ॥ २१ ॥
काचित नारी इम कहइ, जिम झूझे झूझार।
जेम पवाड़े गाइजइं, ले पडिजे सिरदार ॥ २२ ॥
सुभट कहइ सुणि कामिनी, म करउ अम्ह असूर।
अम्ह पहिली लेजाइस्यइं, जस कोई मत सूर ॥ २३ ॥
सुभट तिके ज सराहियइं, जे रण पहिलो भेलि।
सेना भांजइ सत्रुनी, अणिए अणिए मेलि ॥ २४ ॥
अरि करि दंत उपरि चडी, हणइ ऊपरि सिरदार।
धड़ विण घा मारइ घसी, ते साचा झूझार ॥ २५ ॥
एक जोर अमरस तणउ, बीजउ अस्त्री प्रेम।
मांहो मांहि भाट भडि, हुई थोडी-सी एम ॥ २६ ॥

समझावी सहु कामिनी, सुभट चल्या सहु कोइ।
वली रांवण ना कटक मइ, कुण-कुण भेलो होइ ॥ २७ ॥
साढी च्यार कुमारनी, कोडि सुं रावण पुत्र।
मेघनाद नइं इन्द्रजित, गजारुढ़ गया तत्र ॥ २८ ॥
चढि विमान जोतीप्रभइ, ले त्रिसूल निज हाथि।
कुंभकरण राजा चल्यो, सुभट तणो ले साथि ॥ २६ ॥
राणउ रावण चालियो, वइसी पुष्प विमान।
पृथिवी नभ आपूरतउ, बाजते नीसाण ॥ ३० ॥
भूकपादिक चालता, हुया महा उतपात।
रांवण ते मान्या नहीं, भावी न मिटइ बात ॥ ३१ ॥

सर्वगाथा ॥२५०॥

ढाल ४

॥ राग सोरठ जाति जांगड़ानी ॥

हो संग्राम राम नइ रावण मंडाणा, जलनिधि जल ऊछलिया।
इंद्र तणा आसण खलभलिया, शेषनाग सलसलिया ॥ १ हो सं० ॥
प्रबल वेड ं दल दीसइ ं पूरा, अणिए अणिए मिलिया।
सूरवीर ऊं चा ऊछलिया, हाक बुंब हूंकलिया ॥ २ हो सं० ॥
समुद्रवेलि सारिषउ राक्षस वल, दीठउ साम्हउ आयो।
रांम तणउ पणि वानर नउ दल, त्रूटिनइ साम्हो धायो ॥ ३ हो सं०॥
कुण कुण राम कटक नइं बानर, नाम सुणउ कहुं केता।
जयमित्र १ हरिमित्र २ सवल ३ महाबल ४, रथवर्द्धन ५ रथनेता ६ ॥४॥

दृढ़रथ ७ सिंहरथ ८ सूर ६ महासुर १०, सूरपवर ११ सूरकंता १२ ।
सूरप्रभ १३ चंद्राभ १४ चंद्रानन १५, दमितारी १६ दुरदंता १७ ।५।हो०
देववल्लभ १८ मनवल्लभ १६ अतिवल२०, सुभट प्रीतिकर२१ काली २२
सुभकर २३ सुप्रसनचंद २४ कलिंगचंद्र २५,
लोल २६ विमल २७ गुण माली २८ ॥ ६ ॥ हो०

अप्रतिघात२६ सुजात३० अमितगति ३१, भीम३२ महाभीम३३ भाणुं३४
कील ३५ महाकील ३६ विकल २७ तरंगगति ३८,
विजय ३६ सुसेण ४० बखाणुं ॥ ७ ॥ हो०

रतनजटी ४१ मनहरण ४२ विरोहिय ४३, जल वाहन ४४ वायुवेगा ४५
सुग्रीव ४६ हनुमंत ४७ नल ४८ नील ४६ अंगद ५०,
अनल ५१ अतुलीवल तेगा ॥ ८ ॥ हो० ॥

इम अनेक विद्याधर वानर, वली विभीषण ५१ राजा ।
सन्नद्ध वद्ध हुया सगलाई, करता वहुत आवाजा ॥ ६ ॥ हो०

पूरा सहु पाचे हथियारे, सुभट विमाने वइठा ।
रामचंद आगइ थया रण मइं, प्रथम फोज मइ पइठा ॥ १० ॥ हो०

सरणाइं वाजइं सिंधुडइं, मदन भेरि पणि वाजइं ।
ढोल दमांमां एकल घाई, नादइं अंवर गाजइ ॥ ११ ॥ हो०

सिंहनाद करइं रणसूरा, हाक वुंब हुंकारा ।
कांने सवद पड्यो सुणियइ नहीं, कीधा रज अंधारा ॥ १२ ॥ हो०

युद्ध माहोमाहि सवलो लागो, तीर सडासडि लागी ।
जोर करीनइं घा मारंता, सुभटे तरुयारि भागी ॥ १३ ॥

कुहक वांण छूटइ नालि गोला, विंदूक वहइ बिहुं पासे[1] ।
रीठ पडइ मोगर खडगांरी, अगनि ऊडइ आकासे ॥ १४ ॥ हो०
साम्हे घाए झूझइ सूरा, धड विण राणी जाया ।
दल रांवण रड भाजत देखी, हत्थ विहत्थ भड धाया ॥ १५ ॥ हो
तिण वानर नो कटक धकाया, पाछा पग दिवराया ।
तितरइ राम तणां हलकारया, नील अनइ नल धाया ॥ १६ ॥ हो०
हत्थ विहत्थ हथियारे मारया, राक्षस वल मचकोड्यो ।
राति पडी आथमियो सूरिज, वे दल विढवो छोड्यो ॥ १७ ॥ हो०
वीजइ दिन वलि रण झूझता, वानर सेना भागी ।
हाक मारि नइ हनुमत ऊठ्यो, सवल सूरिमा जागी ॥१८॥ हो०
पवनपुत्र आवउ पेखी, कहइं राक्षस कोपंता ।
काल कृतांत जिसो ए कोप्यो, आज करइ अम्ह अंता ॥१९॥ हो०
साम्हो थई मुँकइ सर[2] धोरणि, सुभट सिरोमणि माली ।
हनुमंत वाण क्षुरप्र संघातइं, वाढ़ी नाखइं विचाली ॥२०॥ हो०
वज्रोदर राजा वहि आयो, हनुमंत सन्नाह भेद्यो ।
काढ़ि खडग कोपातुर हनुमंति, वज्रोदर सिर छेद्यो ॥२१॥ हो०
रावण सुत जंवुमालि प्रमुख नइं, हणइं हनुमंत वलि हेलइं ।
हाथ त्रिसूल लेई नइ धायो, कुंभकरण तिण वेलइं ॥२२॥ हो०
कुंभकरण आवतो देखी, चंदरसमि चंद्राभा ।
रतनजटी भामंडल धाया, जिम भाद्रव ना आभा ॥२३॥ हो०

१—वद्का छूटइ चिहु पासि २—रण

दशनावरणी विद्या थंभा, कुँभकरणइ छलि लीधा।
हाथ थकी हथियार पड्यो सहु, निद्रा घूर्मित कीधा ॥२४॥ हो०
ते ऊपरि त्रूटीनइं धायो, सुग्रीव वांनर राजा।
मुँकी निज पडिवोहिणी विद्या, जागरूक थया साजा ॥२५॥ हो०
सुभटवली सावधान थई नइ, जुद्ध करण रण सूरा।
कुंभकरणनइ सुभटे भागो, वलि वागा रण तूरा ॥२६॥ हो०
इन्द्रजित विढता आडउ आयो, कहइं वीनति अवधारो।
तुम्ह आगइं संग्राम करिसि हुं, तुम्हे वासोवपुकारो ॥२७॥ हो०
इम जंपंत गज उपरि चडि, रिपुसेन सर वीधी।
भामंडल सुं सुग्रीव धायो, सवल झडाझडि लीधी ॥२८॥ हो०
तुरगी तुरगी सुं तरुयारे, रथी रथी सुं प्रहारे।
गजी गजी सुँ जंग मंडाणो, पालिहार पालिहारे ॥२९॥ हो०
कहइ इन्द्रजित तुझ मस्तके छेदिसि, सुणि तुं सुग्रीवराया।
कां तुं लंकापति छोडीनइं, सेवइ भूधर पाया ॥३०॥ हो०
कंकपत्र सर मुंकइ इन्द्रजित, सुग्रीव आवता छेदइं।
मेघवाहन भामंडल पणि वलि, एक एकनइं भेदइं ॥३१॥ हो०
वज्रनाम विरोही रुंध्यो, विद्या वलि रण माहे।
सुग्रीवनइं बांध्यो नागपासइं, विद्या हथियार वाहे ॥३२॥ हो०
घनवाहन भामंडल बांध्यो, देखि कटक डमडोल्यो।
लषमण राम समीपइं आवी, एम विभीषण बोल्यो ॥३३॥ हो०
सुभट अम्हारा रांवण बेटे, नागपास करि बांध्या।
कुम्भकरण हनुमन्त नइ बांध्यो, वलराक्ष ना बांध्या ॥ ३४ ॥ हो०

रांम हुकम अंगद नृप ऊठ्यो, कुंभकरण दल मोडइं ।
हाक मारि हनुमन्त वीर तितरइं, नागपासि निज त्रोडइं ॥३५॥हो०
हनुमन्त वीर अनइ अंगद नृप, वेऊं विमाने वइठा ।
लखमण कुमर विरोही विद्याधर, भर रण माहे पइठा ॥३६॥ हो०
लखमण सहु संतोष्या वचने, पास वंधण जे पडिया ।
इन्द्रजित कुमर विभीपण तेहवइं, वे माहोमांहि अडिया ॥३७॥हो०
इन्द्रजित कुमर चिंतवा लागो, ए मुझ वाप नी ठामइं ।
जुद्ध करी जीता पणि नहि जस, ओसरिवो इण कांमइं ॥३८॥ हो०
ओसरतो भामंडल सुग्रीव नइ वांधी नइ नीसरीयो ।
देखी रांमभणी कहइ लखमण, आरति चिंता भरियो ॥३९॥ हो०
इसा सुभटां विण किम जीपायइ, रावण विद्या पूरउ ।
रांम हुकम लखमण सुर समस्यो, आयो वोलतउ सूरो ॥ ४० ॥हो०
चउथी ढाल थई ए पूरी, पिणि सग्राम अधूरो ।
समयसुंदर कहइ सुर करइं सानिधि, पुण्य हुयइ जउ पूरो ॥४१॥हो०

सर्वगाथा ॥२९१॥

दूहा १८

रामचन्द नइ देवता, दीधी विद्या सीह ।
गुरुड तणी लखमण भणी, तेहथी थया अवीह ॥ १ ॥

प्रहरण सन्नाहे भस्या, रथ दीधा वलि दोय ।
नामइं वज्रवदन गदा, लखमण नै द्यइ सोय ॥ २ ॥

हल मूसल दीया राम नइ, रथ जोत्राया सीह ।
विहुं रथ वइठा वे जणा, हनुमन्त साथि ग्रहीह ॥ ३ ॥

गयासंग्राम मांहे वली, लखमण राम उल्हास ।
गरुड धजा तसुदेयतां, नागपासि गया नासि ॥ ४ ॥
भामंडल सुग्रीव सहु, मुकाणा ततकाल ।
आइ मिल्या श्रीराम नउ, गयो जीव जंजाल ॥ ५ ॥
पूछइ करि जोडी प्रभो, सकति किहा थी एह ।
राम कहइं तुम्हे साभलो, जिम भाजउं सन्देह ॥ ६ ॥
जलभूषण देसभूषणा, मुनिवर परवत शृंगि ।
उपसर्ग सहता ऊपनो, केवलज्ञान सुरंग ॥ ७ ॥
अम्हनइ वर दीधो हुंतो, गुरुडाधिप तिण ठाम ।
आज अम्हे ते मांगियो, सीधा वंछित काम ॥ ८ ॥
विद्याधर इम साभली, रंज्या साधु गुणेण ।
परससा करइं पुण्यनी, पुण्य करो सहु तेण ॥ ९ ॥
करवा लागा जुद्ध वलि, कटक बेउं बहु बार ।
सुग्रीव सुभटे जीपिया, राक्षस ना झूझार ॥ १० ॥
रावण ऊठ्यो रीस भरि, रथ बइसी रण सूर ।
सुभट सहू वांनर तणा, भांजि कीया चकचूर ॥ ११ ॥
वानर कटक धकेलियो, देखि विभीसणराय ।
सन्नद्ध बद्ध हुई करि, रांवण साम्हउ धाय ॥ १२ ॥
रावण कहइ जा माहरी, दृष्टि थकी तू दूरि ।
बाधव वध जुगतो नहीं, नावे मुझ हजूरि ॥ १३ ॥
वदइ विभीषण एम पणि, जुगति नही[1] छइ काइं ।
रिपु नइं बीहतो पूठि द्यइ, कायर ते कहवाइ ॥ १४ ॥

१—न दीसइ

रांवण कहइ जुगतो किसो, तउ कीधो छइ काज।
तजि रतनाश्रव वंस नइ, अरि चाकर थयो आज ॥१५॥
वदइ विभीषण दसवदन, सुणि तइं जुगत न कीध।
परस्त्री आणी पापिया, कुलनइं लांछन दीध ॥ १६ ॥
जुगत बात तउ मइं केरी, दियो अन्याई छोडि।
न्यायवंत पासइं रह्यो, मुझनइं केही खोडि ॥ १७ ॥
अजी सीम गयो क्युं नहीं, मानि अम्हारउ बोल।
सीता पाछी सूंपि तुं, भूलि मानिपट निटोल ॥ १८ ॥

सर्वगाथा ॥२०६ ॥

ढाल पांचमी

॥ खेलानी ॥

इमसुणि रांवण कोपियो जीहो, माडियो जुद्ध विभीषण साथि के।
बांण वाहइ ते विहुंगमा जीहो, तीर भाथा भरी धनुष ले हाथि के ॥१॥
राम रांवण रण माडियो जीहो, झूझइ छइ राणी रा जाया झूझार के।
हाक मारइं मुखि हुकलइं जीहो, सूर नइ वीर वडा सिरदार के ॥२॥
इन्द्रजित लखमण सु अड्यो जीहो, कुभकरण करइं राम सुं जुद्धके।
सीह अड्यो साम्हो नीलसु जीहो, नल सु अड्यो दुरमद अति क्रुद्धके ॥३॥
सयंभु सुभट अड्यो संभु सुं जीहो, इम अनेरी वलि सुभट नी कोडि के।
सूर पुरुष चड्या सूरिमा जीहो, कायर कापइ छइ निज वल छोड़ि के ॥४॥
लखमणइ इन्द्रजित वाधियो जीहो, राम वाध्यो कुंभकर्ण सगर्व के।
इम मेघवाहन प्रमुख नइ जीहो, वाधीया नागपासे करी सर्व के ॥५॥

वांनरे आपणइं कटक मइं जीहो, आणिया राक्षस बांधणे बंधि के।
इण अवसरि विभीषण प्रतइ जीहो, क्रोध करी नइ कहइं दसकंध के ॥६॥
सहि तुं प्रहार एक माहरो जीहो, जो रणसूर छइ सबल जूझार के।
कहइं विभीषण एक घाइ सुं जीहो, मुंकि प्रहार अनेक प्रकार के ॥७॥
बांधव मारण मूकियो जीहो, रावणइं सबल त्रिसूल हथियार के।
लखमण आवतो ते हण्यो जीहो, बांणसुं वपु पुण्यप्रकार के ॥८॥
कोपीयइं रावणइं करि लीयो, अमोघ विजय महा सगति हथियार के।
आगलि दीठे ऊभउ रह्यो जीहो, मरकत मणि छवि वरण उदार के ॥६॥
श्रीवछ करि सोभित हियो जीहो, गरुजध्वज लखमण महासूर के।
लंकापति कहइं घ्युं ऊभउ रह्यो जीहो, रे धीठ माहरी दृष्टि हजूर के।१०।
गजचडी लखमणइं माडियो जीहो, संग्राम रांवण सुं ततकाल के।
सकति मुंकि राणइं रावणइं जीहो, ऊछली अगनिनी झाल असराल के।११
लखमण नइं लागी होयई जीहो, ऊछली वेदना सहिय न जाय के।
धुसकि नइ धरणी उपरि पड्यो जीहो,मुरछित थयो गया नयण मीचायके
लखमणनइ धरती पड्यो जीहो, देखिनइं राम करइं रण घोर के।
छत्र धनुप रथ छेदिया जीहो, दीया दससिर नइं प्रहार कठोर के॥१३॥
लंकपति भय करी कांपियो जीहो, झालि सकइ नहीं धनुप हथियारके।
नवे-नवे वाहने झूझतो जीहो, राम कीधो रथ रहित छवार के ॥१४॥
मार सिक्युं नहि मूलथी जीहो, पिणि निभ्रंछियो वचन विशेषि के।
रे रे तइं लखमणनइं हण्यो जीहो,हिवइं हुं तुनइ करुं य ते देखि के॥१५॥
रथ थकी रावण ऊसर्यो जीहो, पइठो लंकापुरी मांहि तुरन्त के।
मइं माहरो रिपु मारीयो जीहो, तेण हरपित थयो तेहनो चित्त के ॥१६॥

राम सुणी सहोदर तणी जीहो, वध तणी वात द्रोडी आयउ पासके ।
सगति मास्यो पृथिवी पड्यो जीहो, देखिनइं दुखु लायो घणो तासके।१७।
विरह विलाप करतो थको जीहो, नाखतो आसु नीर प्रवाह के ।
मूर्छित थई पृथिवी पड्यो जीहो, सवल सहोदर नो दुख दाह के ॥१८॥
सीतल जल सचेतन करयो जीहो, राम विलाप करइं वली एम के ।
हा वछ ए रणभूमिका जीहो, ऊठि सहोदर सूइजइ केम के ॥१९॥ रा०
समुद्र लाघो इहा आवीया जीहो, सवल संग्राम माहे पड्या आज के ।
तुॅ कां अणवोल्यइ सी रह्यो जीहो ,किम सरिस्सइं इम आंपण काज के॥
विरह खमुं किम ताहरो, जीहो वोलितु वच्छ जिम धीरज होइ के ।
राज नइ रिद्धि रमणी किसी जीहो, वाधव सरिसो ससारि न कोइ के
अथवा पूरव भव मइं कीया जीहो, जाणीयइ छइ कोई पाप अघोर के
सीता निमित्त इहाँ आवीया जीहो, पड्यो लखमण हिव केह तुं जोर के
रे हीया कां तुं फाटइ नही जीहो, वज्र समो हुवो केण प्रकार के ।
जे विना खिण सरतो नही जीहो, तेह वोल्यां थई अतिघणी वार के ॥
पाच सकति मुंकी तुज्झ नइ जीहो, सत्रुदमनि तेतउ टाली तुरन्त के।
एक रावण तणी सकति तइं जीहो, झालि न राखी वाधव किम झत्तिके
ऊठि वाधव धनुष ए हाथि लइ, साधि तुं तीर लगाइ मा वार के ।
ए मुझ मारण आवीयो जीहो, सत्रुनइ कहि कुण वारणहार के ॥२५॥
इणि परि वाधव दुख भस्यो जीहो, राम करइ घणा विरह विलाप के ।
कहइ सुग्रीव नइ हिव तुम्हे जीहो, आप आपणी ठाम सहु जाय आप के
मुझ मनोरथ सहु मनमाहि रह्या जीहो, सुणि विभीपण राजा कहुँ तेह के
तइं उपगार मुझ नइं कियो जीहो, मुझ पछतावो रह्यो एहके ॥२७॥

प्रत्युपकार मइं तुम्भ नइं जीहो, करि न सक्यो ते सालइ घणु बोल के
नही सीता दुख तेहवो जीहो, जेहवो ए बोल दहइ छइ निटोल के ।२८।
सुग्रीव प्रमुख सुभट सहू जीहो, आपणइ घरि जास्यइं सहु कोइ के ।
तुं पणि जा घरि आपणइं जीहो, हिव मुझ थी कांइ सिद्धि न होइ के ।
राम वचन इम साभली जीहो, जंपइ जंबवंत विद्याधर एम के ।
राम अंदोह दुखु का करो जीहो, विरह विलाप करो तुम्हे केम के ॥
हुवो हुसियार धीरज धरो जीहो, उत्तम सुख दुख एक सभाव के ।
सूरिज तेज मुंकइ नहीं जीहो, ऊगतइ आथमइ तेण प्रस्ताव के ॥३१॥रा०
अति सबल संकट पड्यो सहइं जीहो, साहसंवत पुरुष संसारि के ।
वज्रनो घात पृथिवी सहइ जीहो, नवि सहइ तु तू एम विचार के ॥३२॥
लखमण सकति विद्या हण्यो जीहो, मूर्छित थयो पणी नही मुंयो एह के ।
को उपचारे करी जीविस्यइं, जीहो ए वातनो इहां नहीं संदेह के ॥३३॥
ते भणी उपचार कीजीयइ जीहो, राति माहे तुम्हें मत करो ढीलि के ।
नहि तउलखमणमरिस्यइ सही जीहो, जउरविकिरण तसु लागिसइ डीलिके
राम आदेस विद्याधरे, जीहो विद्या वलिइं कीया सात प्रकार के ।
सात सेना सबली सजी, जीहो सात सेनानी सबला सिरदार के ॥३५॥
नल पहिलइ रह्यो वारणइ, जीहो धनुष चडावी नइं खंचि करि तीर के
नील बीजइ रह्यो वारणइं, जीहो हाथ गदा लेई साहस धीर के ॥३६॥
अतिबल हाथि त्रिसूल ले, जीहो त्रीजइ वारणइ रह्यो सूरवीर के ।
कुमुद रह्यो चउथइं वारणइं, जीहो पहरि सन्नाह कडि बांधि तूणीर के
हाथि भालउ ग्रही नउ रह्यो, जीहो पांचमइं वारणइ परचंडसेन के ।
सुग्रीव छट्ठइं वारणइ, जोहो झालि रह्यो हथियार बलेन के ॥३८॥ रा०
भामंडल रह्यो सातमइं, जीहो वारणइ विरुद बांची रह्यो सूर के ।
सुभट रह्या सगली दिसइ, जीहो अभंग भड अतुलबल प्रबल पडूर के ॥

लखमणनी रक्षा करइ, जीहो सहु सावधान रहइ सुविशेष के।
आवि रावण तिहाँ दुखकरइ, बांधव पुत्र वे वाधिया देखि के ॥४०॥
हां कुंभकरण हा बांधवा, जीहो इन्द्रजित पुत्र हा मेघनाद के।
मो जीवतइ तुम्हें बाधीया, जीहो धिग मुझनइ पड्यो करइ विपवाद के
धिग विलसित विधाता तणो, जीहो जिण मुझनइं दुख एवडउ दीध के
जउ कदाचित लखमण मुंयो, जीहो तुउ करिस्यइं का ए किसुं सीध के ॥
बांधव पुत्र वाधे थके, जीहो परमारथ थकी हुं बाधीयउ नेटि के।
रांवण चिंतातुर थको, जीहो कहइ परमेसर संकट मेटि के ॥४३॥ रा०
तिण अवसरि वात सांभली, जीहो सीतापणि करइं दुखु विलाप के।
लखमण सकति सुं मारियो, जीहो पृथिवी पड्यो माहरइ पोतइं पाप के
करुणसरि आक्रंद करइं, जीहो दीन दयामणी वचन कहइ एम के।
हुं हीन पुण्य अभागिणी, जीहो माहरइं कारज थयो दुःख केम के।४५।
हे लखमण जलनिधितरी, जीहो आवियो तुं निज बाधव काजि के।
ए अवस्था (हिव) पामीयो, जीहो बांधवनइ कुण करिस्यइं सहाजि के।
है है हुं वालक थकी, जीहो कांइ मारी नहीं फिट करतार के।
जेहना पग थकी मारीयो, जीहो मुझ प्रियु नइ जीव प्राण आधार के ॥.
हे देवर तुम्हनइ देवता, जीहो राखिज्यो सुगुरु तणी आसीस के।
सील सतीयां तणो राखिज्यो, जीहो जीविज्यो लखमण कोडि वरीस के
इणपरि सीता रोती थकी, जीहो राखी विद्याधरे वांभीस देइ के।
तुज्झ देवर मरिस्यइ नहीं, जीहो वचन अमगल मात न कहेइ के ॥४६॥
छट्ठा खंडनी पाचमी, जीहो ढाल मोटी कही एणि प्रकार के।
समयसुदर कहइं हुं स्युं करूं, जीहो गहन रामायन गहन अधिकार के-
॥ सर्वगाथा ३५६ ॥

दूहा १२

मीतायइ धीरज धर्यो, तेहवइ खेचर एक ।
राम कटक मइं आवियो, मनि धरी परम विवेक ॥१॥
पणि भामंडल रोकियो, आवंता दरबारि ।
पूछ्यो कहि किम आवियो, ते कहइ सुणि सुविचार ॥२॥
लखमण नइ जउ जीवतो, तुं वांछइ सुभमत्ति ।
तउ जावा दे मुज्झ नइ, रांम समीपइ झत्ति ॥३॥
जिम हुँ तिहां जाई कहुँ, साल उधरण उपाय ।
भामंडल हरपित थकउ, राम पासि ले जाय ॥४॥
विद्याधर इम वीनवइ, राम नइ करी प्रणाम ।
चिंता म करउ जीविस्यइ, लखमण ते विधि आम ॥५॥
आणंद रामनइं अपनो, कहइ तुझ वचन प्रमाण ।
भद्रक तुझ होइजो भलो, तुं तउ चतुर सुजाण ॥६॥
कहि तुं किहां थी आवियो, लखमण जीवइ केम ।
रामइं इण परि पूछियो, विद्याधर कहइ एम ॥७॥
सुरगीत नाम नगर धणी, ससिमंडल सुपवित्र ।
उदर शसिप्रभा ऊपनउ, हुं चंद्रमंडल पुत्र ॥८॥
गगन मंडल भमतइ थकइ, मइ तसु लाधी वइर ।
सहसविजय नइ जांणीयो, मुझ नइं देखी वइर ॥९॥
वेढ करता तेण मुंझ, दीधउ सकति प्रहार ।
पड्यो अयोध्या पुर तणइ, हुँ उद्यान मझार ॥१०॥
दुखियो भरतइ देखियो, मुझ नइ पड्यो ससल्ल ।
चंदनरस छांटी करी, कीधो तुरत निसल्ल ॥ ११ ॥

मइ पूछ्यो श्री भरतनइं, कहो ए जल परभाव ।
किम जाण्यो किहां पामीयो, ते कहो सहु प्रस्ताव ॥ १२ ॥
सर्वगाथा ॥ ३७१ ॥

ढाल ६

प्रोहितियारी अथवा सघवीरी

रांम कहइं सुण विद्याधर वात हो, पहिले इण नगरी मइ मरकी हुंती
प्रजा पीडामी दिनराति हो, दाय उपाय तिहां लागइ नहीं ॥ १ ॥ रा०
थयो नीरोग द्रोण भूपाल हो, परिवार सेती भरतइ साभल्यो
ते तेडायो ततकाल हो, पूछयो मामा किम रोग गयो टली ॥ २ ॥ रा०
द्रोणमुख राजा कह्यो एम हो, माहरइ बेटी विसल्या छइ घरे
तिण गरभ थकी पणि खेम हो, कीधो माता नो रोग गमाडीयो ॥३॥रा०
ते जिनसासन सिणगार हो, मानइ तेहनइ सहु को जिम देवता ।
ते स्नान करंती नारि हो, लागउ पाणी नो धावि नइ बिंदुयो ॥४॥रा०
तेहनो ततखिण गयो रोग हो, तिण नगरी मइ वात प्रसिद्ध थई ।
ते जल लेई गया लोग हो, रोग रहित सहु नरनारी थया ॥५॥ रा०
थयो भरतनइ अति अचरज्ज हो, तेहवइ चउनाणी साध समोसस्या ।
गयउ भरत वादण थई सज्ज हो, पूछइ वे करि जोडी साधनइ ॥६॥रा०
कहउ भगवन पूरव जनमि हो, इण कन्यायइ पुण्य किसा किया ।
ए कन्या करेउ धम्मि हो, सुर नर नारी सहु विसमय पड्या ॥७॥ रा०
कहइ न्यानी एम मुणिंद हो, विजय पुण्डरीकणि चक्रनगर भलो ।
तिहां राजा तिहुंणाणंद हो, चक्रवर्ती केरी पदवी भोगवइ ॥ ८ ॥ रा०
तेहनी पुत्री रुववत हो, अनंगसुदरी नामइ अति भली ।
ते सकल कला सोभंत हो, जोवन लहरे जायइ उल्लटिउ ॥९॥ रा०

ते रमती घर उद्यान हो, दीठी प्रतिष्ट नगरी नउ राजीयइ ।
पुणवसु तेहनउ अभिधान हो, सबलो विद्याधर ते कामी घणुं ॥१०॥रा०
तिण अपहरी कुमरी तेह हो, चक्रवर्ति सुभटे जुद्ध सबलो कीयो ।
तसु जाजरी कीधी देह हो, भागउ विमान नइं कन्या भूंपडी ॥११॥
ते अडवी डंडाकार हो, पडता दुखीणी कुमरी अति घणुं ।
करइ दुख अनेक प्रकार हो, अत्राण असरण तिहा रहइ एकली ॥१२॥
धरइं अरिहंत नउ ध्यान हो, सहु संसार असार करी गिणइं ।
तसु सूधू समकित ज्ञान हो, तप करइ अट्ठम दसम ते आकरा ॥१३॥
ते भोजन करइ इकवार हो, फल फूल खायइ तप नइ पारणइ ।
इण रहणी रहता अपार हो, त्रिणसइ वरसां सीम तप कीयो आकरो १४
संलेषण कीधी एम हो, अणसण कीधुं चउविहार आकरुं ।
तसु धरम ऊपरि बहु प्रेम हो, वलि तिण कीधउ अभिग्रह एहवउ ॥१५॥
सउ हाथ उपरि मुझ नीम हो, इहाथी अधिकी धरती जाउं नहीं ।
इम दिवस छट्ठा लगी सीम हो, रहतां चडते परणामे चडी ॥१६॥ रा०
तेहवइ मेरु प्रतिमा वादि हो, आवतइ दीठी किण विद्याधरइं ।
ते पभणइं एम आणंद हो, चालि पिता पासि मुकुं तुज्झ नइं ॥१७॥रा०
कहइ कन्या ताहरी ठाम हो, तुं जा ताहरउ अधिकार इहा नही ।
ते पहुतो चक्रपुर गाम हो, वात कहइ सगली चक्रवर्ति नइ ॥१८॥ रा०
पुत्री नइ ते गयो पासि हो, चक्रवति प्रेम घणउ पुत्री तणो ।
अजगिर आवी गली तारु हो, किमही न टलइ ए भवितव्यता ॥१९॥रा०
ते विरतांत देखी बाप हो, द्रउडी नइं आयो नगरी आपणी ।
ते करतउ कोडि[1] विलापहो, वइराग आयउ मन मांहे आकरउ ॥२०॥

१—विरह

राय लीयो संयम भार हो, वाइस सहस वेटा सुं परिवरयइ ।
ते जाणती मंत्र अपार हो, पणि तिण अजिगरनइ वारयो नहीं ।।२१।।रा०
तसु मेरु अडिग रह्यो मन्न हो, सुख समाधि संवातइं ते मुंई ।
ते धरमणि कन्या धन्न हो, ते देवलोक माहे देवी ते थई ।।२२।। रा०
ते खेचर पुणवसु नाम हो, कन्या नइ विरह करि दुखियो थयो ।
तिण व्रत लीधो अभिराम हो, तपजप कीधा तिण अति घणा[१]।।२३।।रा०
ते काल करी थयो देव हो, तिहांथी चवी नइ ते लखमण थयो ।
तिहां भोगवि सुख नितमेव हो, ते पणि देवी तिहा कणि थी चवी ।।२४।।
थइ द्रोण नरिंदनी धूय हो, नामइ विसल्या कुमरी विस्तरी ।
तसु पूरव पुन्य प्रभूय हो, तिण न्हवणोदकि रोग टलइ सहू ।।२५।। रा०
वलि पूछ्यो मुनिवर तेह हो, कहउ किम भगवन मरगी ऊपनी ।
कहइ मुनिवर कारण एह हो, गजपुर वासी विंझउ वाणियउ ।।२६।।रा०
ते पोठभरीनइ एथि हो, आयो वहु भार करी नइं आक्रम्यो ।
एक भइ सउ पडियो तेथि हो, किणही तसु सार नइं सुद्ध करी नही २७
ते मुंयो सहि वहु दुखु हो, करम थोडा किया अकाम निरजरा ।
लह्या वायुकुमार ना सुखु हो, जातीसमरण करि पूरवभव जाणीयो ।।
ते कोप चड्यो ततकाल हो, मरगी उपजावइं सगली गाम मइं ।
पणि सील प्रभाव विसाळ हो, रोग विसल्या न्हवणोदकि गया ।।२६।।
ए भरतनइं कह्यो विरतंत हो, साधइ भरतइ पणि मुझ नइ दाखियो ।
मइंते तुम्ह कह्यो तुरन्त हो, तुम्ह न्हवणोदक आणो तेहनो ।।३०।। रा०

१—सबला

ते पाणी तणइ प्रभावि हो, सहिय सहोदर लखमण जीविस्यइ।
इम जाण्यो भेद ते जीव हो, अति घणउ रामनइं संतोप ऊपनो ॥३१॥
ए छट्ठा खंडनी ढाल हो, छट्ठी पूरी थई वात छती कही।
ते सुणता सखर रसाल हो, समयसुंदर कहइ चतुर सुजाण नइ ॥३२॥ रा०

सर्वगाथा ॥४०३॥

दूहा १३

जंवु नदादिक मत्रि सुं, आलोची नइ राम।
भामंडल मुंक्यो तिहा, नगर अयोध्या ठाम ॥ १ ॥
भरत देखि नइ ऊठियो, पूछइ कुशल नइ खेम।
ते कहइं कुशल किहा थकी, वात थई छइ एम ॥ २ ॥
सीता रांवण अपहरी, सवलउ थयो सग्राम।
लखमण नइ लागी सकति, दुखियो वरतइं राम ॥ ३ ॥
भरत वात ए साभली, कोप चड्यो ततकाल।
ऊठ्यो अति ऊतावलो, करि झाली करवाल ॥ ४ ॥
रे रे किहां रावण तिको, ते देखाडो मुज्झ।
जिण मुझ वांधव नइ हण्यो, तिण सेती करुं झुज्झ ॥ ५ ॥
भामंडल आडइ पड़ी, भरत नै वरिज्यो ताम।
विषम समुद्र खाई विषम, विषमो लंका ठाम ॥ ६ ॥
भरत कहइ तो स्यु करुं, भामंडल कहइ एम।
आणि विसल्या स्नानजल, जीवइ भाई जेम ॥ ७ ॥
भरत कहइ ए केतलो, न्हवणोदक नी बात।
जावो विसल्या ले तुम्हे, जल जोखीम कहात ॥ ८ ॥

मुनिवर पिण भाख्यो हुतो, चीता आव्यो तेह ।
लखमण नइं महिला रतन, होस्यइं कन्या एह ॥ ६ ॥
इम कहिनइ मुंक्यउ तुरत, द्रोणमेघ नइ दूत ।
ते कन्या आपै नहीं, सीह जगाओ सूत ॥१०॥
जुद्ध करण ततपर थयो, गई केकेई ताम ।
अति मीठे वचने करी, समझायो हित काम ॥११॥
वहिनि वचन वहु मानियो, मुंकी कन्या तेह ।
सहस सहेली परिवरी, रूपवंत गुण गेह ॥१२॥
सखर विमान वइसारिनइं, पहुती कीधी तेथि ।
संग्रामइं सकतइं हण्यो, लखमण सूतो जेथि ॥१३॥

सर्वगाथा ॥४१६॥

ढाल ७

राग मल्हार

'श्रावण मास सोहामणउ ए चउमासिया' ए गीतनी ढाल ।

राम नइं दीधी वधावणी, आई विसल्या एथ्योजी ।
हरखित श्रीरामचंद हुया, पूछ्यो कहो कहो केथ्यो जी ॥
कहो केथि तेहवइ राजहंसी, परिवरी हसी करी ।
ऊतरी नीची मानसरवर, जेम तिम ते कुयरी ॥
चिहुं दिसइं चामर वीजती नइ, सहेली साथइं घणी ।
पदमणी लखमण पासि पहुंती, राम नइ दीधी वधावणी ॥१॥
लखमण नउ अंग फरसीयो, हाथ विसल्या लायोजी ।
सकति हीया थी नीसरी, अगनि मुंकती जायोजी ॥

मुंकति जायइ अगनि झाला, हनुमंतउ काटी ग्रही ।
कामिनी रूपइ कहइ सुणि तुं, दोस माहरउ को नही ॥
तु मुंकि मुझ नइ वात सांभलि, मइं सहु को संतापीयो ।
हुँ सकति रूप अमोघ विजया, लखमणनो अंग फरसियो ॥२॥

अष्टापद नाटक कीयो, रांवण आणी रंगोजी ।
नृत्य करइ मंदोदरी, भगवंत भगति अभगोजी ॥
भगवंत भगति अभंग करता, वीण तात त्रूटी गई ।
तिण भुजा थी नस काढि साधी, भगति भगवंत नी थई ॥
ए सकती दीधी नागराजा, रावण ऊपरि रंजीयो ।
ए आज पहिली किण न जीती, अष्टापद नाटक कीयो ॥३॥

आज विसल्या मुझ तणो, जीतउ तेज प्रतापोजी ।
पूरव भव तप आकरा, इण कन्या कीया आपोजी ॥
कीया आकरा तप एणि हुँ. हिव जाउं छुं मुझ छोडि दे ।
सापुरुष खमि अपराध माहरउ, बात जुगती जोड़ि दे॥
इम छोडि दीधी सकति नइ हिव, आगला संबन्ध सुणो ।
कीयो राम नइ परणाम कन्या, आज विसल्या मुझ तणो ॥४॥

लखमण पासि वइठी जई, आदर दीधो रामोजी ।
कर सुं लखमण फरसीयो, सुरचंदन अभिरामोजी ॥
अभिराम लखमण थयो वइठो, सावधान थयो तदा ।
पूछियो कहो ए विरतात कुण, ए कहइ राम सुणो मुदा ।
रावणइ सकति प्रहार मुंक्यो, तुं पड्यो अचेतन थई ।
इण कुँयरि तुझ नइ दीयो जीवित, पीडा सहु दूरइ गई ॥५॥

मंदिर प्रमुख सुभट मिल्या, प्रगट्या परम प्रमोदोजी ।
लखमण कुंमर निषेधिया, कीजइ किस्सा विनोदोजी ॥
कीजीयइ झूठ विनोद केहा, जीवतइ रावण अरी ।
कहइं राम रावण हण्यइं सरिखो, गुंजतइं तइं केसरी ॥
श्रीराम वचनइ सुभट साजा, विसल्या कीधा वली ।
कन्या ते लखमण नइ प्रणावी, मदिर प्रमुख सुभटा मिली ॥६॥

ए विरतात सुण्यो सहू, रावण सेवक पासोजी ।
उंडउ आलोच माडियो, महुँता सेती विमासोजी ॥
सुविमासि नइं मिरगाक मंत्री, करइ एहवी वीनती ।
तु रूसि भावइं तुसि सामी, कहिसुं तुझ नइ हित मती ॥
ए राम लखमण सवल दीखइं, एहनइ लसकर वहू ।
जिण तुज्झ वांधव पुत्र वाध्या, ए विरतांत सुण्यो सहू ॥७॥

सकती विद्या नाखी हणी, तेहनइ किम पहुचायोजी ।
सीता पाछी सुपियइ, तउ सहु जंजाल जायोजी ॥
जंजाल जायइं मेल थायइं, तो भलो हुयइ सर्व नो ।
तेहनइ आगली भाजीयइ तउ, किसो वहिवो गर्व नो ॥
लंकेस कहइ मइ वात मानी, पणि सीतानइ मेलहणी ।
अनइ मेल करिस्युं राम सेती, सकति विद्या नी हणी ॥८॥

इम आलोची मुकियो, दूत एक परधानोजी ।
करि प्रणाम श्रीराम नइं, वीनति करइं वहुमानोजी ॥
वहुमान रावण एम बोलइ, मेलि करि पाछा वलो ।
रण थकी मनुष्य संहार थास्यइ, पाप करम थकी टलो ॥

माहरो महातम अधिक जाणइं, इन्द्र जेण हरावियउ।
मत करइ राम संग्राम मुझ सुँ, इम आलोची मुंकियइ ॥६॥

पंचमुख पणि गिरवर रहते, गजी न सकइ कोयोजी।
तउ दसमुख किम गजियइ, राम विमासी जोयोजी॥
विमास नइं तुँ मुकि माहरा, सुभट पुत्र सहोदरा।
तु सासहि सीता माहरइ घरि, मेल करि सुमनोहरा॥
लंकातणा दो भाग देस्युं, दूत वचन न सरदह्यो।
राम कह्यो ते सुणिज्यो सहू को, पंचमुख पणि गिरवर रह्यो ॥१०॥

राज सुं काम कोई नहीं, अन्य रमणि नहि कामोजी।
तुझ पुत्रादिक छोडिस्युं, द्यइ सीता कहइ रामोजी॥
कहइ राम तेहवइ दूत वोल्यो, म करि राम तूं गर्व ए।
तु जुद्ध करतो सहिय हारिसि, राज सीता सर्व ए।
ए दूत ना दुरवचन साभलि, भामंडल कोप्यो सही।
काढ़ियो खडग प्रहार देवा, राज सुँ काम कोई नहीं ॥११॥

लखमण आडउ आवियो, दूत न मारइ कोयो जी।
दूत निभ्रछी नासीयो, ले गयो माम गमायो जी॥
गयो दूत मांम गमाइ सगली, वात रावण नइ कही।
जीवतउ राम कदे न मुकइ, सीतानइ जाणे सही॥
ए तत्व परमारथ कह्यो मइं, त्रुटिस्यइ अति ताणीयो।
ताहरइं आवइं चिन्त ते करि लखमण आडो आवियो ॥१२॥

रावण एम विमासए, पणि मन माहि उदासोजी।
जउ वयरी हुं जीपिस्युं, तउ पिण पुत्र नो नासोजी॥

सउ पुत्र नो पणि नास थासइ, कहउ किसी पर कीजीयइ ।
सुरंग देई सुत आणीजै, तउ पणि कुजस लहीजीयइ ॥
वहुरूपिणी साधिस्युं विद्या, करिसुं तसु अरदास ए ।
हुं देवता नइं अजेय थास्युं, रावण एम विमास ए ॥१३॥

दुरजय वयरो जीपि नइं, सुत आणी निज गेहोजी ।
सीता सुं सुख भोगवुं, मनि धरी अधिक सनेहोजी ॥
मनि धरी अधिक सनेह सवलो, साहिबी लका तणी ।
सहुपुत्र मित्र कलत्र सेती, करिसि सुख साता भणी ॥
इम चिंतवी नइं सातिनाथ नो देहरो उद्दीपिनइ ।
चंद्र्या तोरण तुरत वाध्या, दुरजय वयरी जीपिनइं ॥१४॥

फूलहरो गुँथावियो, पूजा सतर प्रकारोजी ।
वारइं मुनिसुव्रत तणइ, जिन मन्दिर अधिकारोजी ॥
जिन मंदिरे मंडित करावी, धरा देस प्रदेस ए ।
लंका तणे देहरइ दीधउ मंदोदरि आदेस ए ॥
सा करइ नाटक स्नात्रपूजा, महुच्छव मंडावियो ।
दिन आठ सीम करइं अठाई, फूलहरो गुँथावियो ॥१५॥

वाजित्र तूर वजाडिया, महिमा मंडी सारोजी ।
नंदीसर जिमि देवता, करइ अठाई उदारोजी ॥
उदार निज गृह पासि शांति नइं, देहरइ पइंसइ मुदा ।
करि स्नान मज्जन लंक सामी, करि प्रणाम मन मइ तदा ॥
कुट्टिम तलइं लंकेस बइठो, भगति भाव दिखाडिया ।
देहरो फटिक रतन तणउ ते, वाजित्र तूर वजाडिया ॥१६॥

नगर ढंढेरो फेरियो, वलि वरतावी अमारोजी।
आविल तप जप आखडी, हुक्म कीयो तसु नारोजी ॥
तसु नारि मंदोदरि नगरी, माहि धरम करावए।
दिन आठ सीम लगी अहिसा[1], सील वरत पलावए ॥
वलि कहइं जे कोइ पाप करिस्यइं, तेह ऊँचउ टेरिइ।
जाणिज्यो गूदरिस्यइ[2] नहीं को, नगर ढंढेरो फेरइ ॥१७॥

लोक सको लंका तणो, लागो करिवा धम्मोंजी।
लोक थकी लह्यो बानरे, रावण विद्या नो मर्मोजी ॥
रावण विद्या नो मर्म लाधो, जउ विद्या ए सीझिस्यइं।
तो देवता पिण एहनइ का, सही संग्राम न जीपिस्यइं ॥
ते भणी लंका माहि जई नइं, त्रास उपजावा घणो।
बहू रूपिणी विद्या न सीझइ, लोक सको लंका तणउ ॥१८॥

वलिय विभीषण इम कहइ, अवसर वारू एहोजी।
देहरइं श्रीशातिनाथ नइं, बइठउ रावण तेहोजी ॥
बइठउ ते रावण जाइ झालो, पछइ को न सकइ ग्रही।
श्रीराम कहइं तु सुणि विभीषण, बात कहइ साची सही ॥
पणि जुद्ध कीधा विण न मारुं, वलि विशेषइ देहरइं।
पणि करिसि कोइ उपाय बीजो, वलिय विभीषण इम कहइं ॥१९॥

सुग्रीवादिक मुँकिया रावण, क्षोभ निमित्तो जी।
लंका नगर माहे गया, सेना सजी विचित्रो जी।

१—दिन आठ लगइ एहवु करावी २—मेहलसिइ

विचित्र सेना सजी सबली, गया देखइ लोक ए।
मुदमुदित क्रीडा करइ सगला, नहीँ तिल पणि सोक ए ॥
अहो पुत्र भाई कुंभकरणादिक सुभट सह बाँधिया।
तउपणि न कोई करइं चिंता, सुग्रीवादिक मुँकिया ॥२०॥
विभीषण सुत सुभीषण कहइ, वइर बिना सहु कोयो जी।
हतप्रहत पर जात करउ, जिम कोलाहल होयोजी ॥
करउ सबल कोलाहल नगर मइं, लंकागढ़ भांजो तुम्हें।
आवास मंदिर महुल ढावो, हित वचन कहुं छूं अम्हे ॥
सहु मिली सुभट तिम हीज कीधो, एह उपद्रव कुण सहइ।
समकाल सगलइ सोर ऊठ्या, विभीषण सुत सुभीषण कहइं ॥२१॥
राखि राखि लंका धणी, लोक करइ पुकारोजी।
दउडो दउडो[1] वाहरू, चडि आवउ असवारोजी ॥
असवार आवो करउ रक्षा, वानरे गढ भेलियो।
ए नगर मारि विध्वंस नाख्यो, धूडि धाणी मेलियो ॥
ऊठियो रावण वुंब सांभलि, जोध जंग करण भणी।
वारियो मंदोदरी नारि, राखि राखि लंका धणी ॥२२॥
साति भुवन सानिधिकरा, देवता ऊठ्या वेगोजी।
सबल कोलाहल खलभली, देखी लोक उदेगोजी ॥
उदेगि देखी देवताए, विभीषण वानर भडा।
खिण एक मांहे मारि भागा, सुर आगइ किम रहइ खडा ॥
देवता वीजा देहराना, ऊठीया क्रोधातुरा।
करइं जुद्ध सातिना देव सेती, साति भुवन सांनिधिकरा ॥२३॥

१—धाउ धाउ

सातिनो देव हरावीयो, नासि गयो ततकालोजी ।
वानर वलि गढ भांजिवा, ढूका करइ ढक चालोजी ॥
ढक चाल वानर तणो, देवता दोइ आविया ।
पूर्णभद्रनइं मांणिभद्र नामइ, रावण दिस ते धाविया ॥
वांनर ऊठ्या वेढिकारे वामाणि भइ तव वोलीयो ।
रे सुणो वानर वात माहरी सातिनउ देव हरावीयो ॥२४॥

रांवण ध्यान धरम धरी, वइठउ देहरा माँहोजी ।
इन्द्र साक्षात आवइ इहाँ, ते पणि न सकइ साहोजी ॥
कोइ साहि न सकइ कदे तेहनइ, खोभावइ पणि को नही
वानरे रावण पासि जाता, रुंधि नइं राख्या सही ॥
वलि जुद्ध करताँ देवते पिण, गया नासी डर करी ।
पणि पाथरे वानर पछाड्या, रावण ध्यान धरम धरी ॥२५॥

देव भणइ राघव भणी, दिइ ओलंभउ एहोजी ।
शांति जिणेसर देहरइं, रावण वइठउ तेहोजी ॥
वइठउ दसानन देहरा मइं, नगर केम विधंसीयो ।
दसरथ तणा अंगज कहीजउ, न्याय धरम रहीजीयो ॥
प्रज पीड करतां वांनरा नइ, तुम्हें राखो जग धणी ।
लखमण कहइ सुणि देवता तुं, देव कहइ राघव भणी ॥२६॥

न्याय धरम माँहि जे रहइ, तेहनउ कीजइ पक्षोजी ।
तुं विपरीत पणो करइं, ते नहि जुगत प्रतक्षोजी ॥
ते नही जुगत प्रतक्ष तुं हिव, रहि मध्यस्थ पणइ सदा ।
महाभाग कोप तुं मुँकि मनसुं, वात मुझ साँभलि मुदा ॥

बहुरूपणी विद्या थई तउ, तेज एहनो कुण सहइ ।
ते भणी करिस्यइ विघन एहनइ, न्याय धरम माँहि जे रहइं ॥२७॥
देव भणइं लखमण भणी, प्रजालोक नइं मूकोजी ।
बीजउ जे रुचइं ते करइं, न्याय धरम थी म चूकोजी ॥
म चूक धरम थकी करउ सहु, इम कही गया सुरवरा ।
हिव रामचंद उपाय करिस्यइं, मुँकिस्यइं सेवक खरा ॥
ए खंड छठ्ठो थयो पूरो, सात ढाल सोहावणी ।
कहइ समयसुंदर सील पालो, देंव भणइं लखमण भणी ॥२८॥

सर्वगाथा ॥४४४॥

इति श्री सीताराम प्रवधे राम रावण युद्ध, विमल्या कन्या समुद्धृत, लखमण शक्ति, रावण समाधारित वहु रूपिणी विद्यादि वर्णनों नाम षष्ठः खण्ड : समाप्त :

खण्ड ७

दूहा २२

सात क्षेत्र मिलइ सामठा, तउ सगला सुख होइ ।
तिण कारणि कहुँ सातमो, खंड सुणो सहु कोय ॥१॥
हुँ नहि थातउ आखतो, जोडंतो ए जोड ।
रामायण मोटा हुवइं, सुणिज्यो आलस छोडि ॥२॥
अंगद प्रमुख कुमर घणा, हय गय रथ आरुढ ।
रांवण नइ खोभाविवा, मूक्या राम अमूढ ॥३॥
पइठा लंका माहि ते, करता कोडि किलेस ।
निरख्यो रावण भुवन तिहा, अति दुरगम परवेस ॥ ४ ॥

तिहा जंत्र पुरुष खलीजता, मोहीता चित्राम।
मरकत मणि थाभे करी, रुंधीता ठाम ठाम ॥ ५ ॥
देखइ एक फटिक घरइ, तरुणी सुंदर देह।
दिस भूला पूछइ किहां, शातिनाथ नो गेह॥ ६ ॥
ते ऊतर पाछउ न द्यइ, झाली कुमर करेण।
तितरइं देखी लेपमय, लाज्या परस्परेण ॥ ७ ॥
आगइं जाता एकना, दीठो देतो साद।
पूछ्यो तिण देखाडियो, शांतिनाथ प्रासाद ॥ ८ ॥
सेना वाहिर मुंकिनइ, कुमर जे अंगद नाम।
देहरा माहे पइसि नइ, कीधो जिन परणाम ॥ ९ ॥
रावणनइं निभ्रंछि नइ, दीधउ सवल उलंभ।
रे सीता नइ अपहरी, ए स्यउ मांड्यो दंभ ॥ १० ॥
जउ तुं त्रिभुवन नाथ नउ, आगइ रह्यो न हुंत।
तउ रे अधम करंत हुं, यम पणि ते न करंत ॥ ११ ॥
इम अनेक निभ्रंछना, कीधी तेण कुमार।
वांधी पाछे वांहियां, अंतेउरी उदार ॥ १२ ॥
आभ्रण ऊतारी लीया, वस्त्र लीया ऊतारि।
वांधी चोटी सु सहू, कामिनी करइं पोकार ॥ १३ ॥
रे पापी तइं छल करी, अपहरी सीता नारी।
हुं तुझ नारी देखता, ले जाउ छु वारि॥ १४ ॥
जउ तुझ माहे सकति छइ, तउ तुं आडउ आवि।
केस झालि मंदोदरी, निसर्यउ इम वोलावि ॥ १५ ॥

वालि कहइं रावण देखि तु, तुझ वाल्हेसर नारि।
हुं वानर पति थाइसुं, धिगधिग तुझ अवतार ॥ १६ ॥
हीयो हाथ सुं ढाकती, खोस्या आभ्रणचीर।
आंखे आंसू नाखती, देखि तुं नारि दिलगीर ॥ १७ ॥
करइं विलाप मंदोदरी, हे वाल्हेसर सार।
वानर जायइं अपहरी, करि बाहर भरतार ॥ १८ ॥
लका गढनो तुं धणी, इवडी ताहरी रिद्धि।
वलि मांडी तइं साधना, केही थास्यइ सिद्धि ॥१६॥
का वइठां तु मौन करि, ऊठि - ऊठि प्रीउ वेगि।
छेदि सीस वानरतणो, जेम मुझ टलइ उदेग ॥ २० ॥
इम विलाप मन्दोदरी, कीधा अनेक प्रकार।
रावण सुणि डोल्यो नहीं, ध्यान थी एक लिगार ॥२१॥
अडिग रह्यो रावण इहा, जाणे मेरु गिरिंद।
साहसोक सिरोमणी, रतनाश्रव कुलचन्द ॥ २२ ॥

ढाल १

॥ राग रामगिरी ॥

'छानो नइ छिपी नइ वाल्हो किहा रहिउ' एगीतनी ढाल।

विद्या नइं सीधीरे वहुरूपिणी, रांवण पुण्य विशेपिरे।
सवल रावण साहस करी, मेरु अडिग मन देखिरे ॥१॥ वि० ॥
प्रगट थई परमेसरी, कहइं करजोडी एमरे।
दसमुख द्यइ मुझ आगन्या, तुं कहइ ते करूं तेमरे ॥ २ ॥ वि० ॥

इम कहिनइ रे गई देवता, आपणइ ठाम आणंद रे।
अठार सहस अन्तेउरी, तेहवइं जाणावइ ते दन्द रे ॥ ३ ॥वि० ॥
चरण नमी नइ करइं वीनती, कंतजी सुणउ पोकार रे।
अम्हानइ विगोइ इण वांनरे, तुम सिर थकां भरतार रे॥ ४ ॥वि० ॥
कहइ रे रावण कोपइ चढ्यो, तुम्हें करउ लील विलास रे।
नाम फेडुं रे वानर तणो, तउ मुझ देज्यो साबासि रे ॥ ५ ॥ वि० ॥
नीसर्यौ शाति ना चैत्य थी, स्नान मज्जन करि सार रे।
पूजा कीधी वीतरागनी, आभ्रण पहिस्या उदार रे॥ ६ ॥ वि० ॥
भोजन कीधा रावण अति भला, सज्जन संतोष्या सहु कोइ रे।
आनंद विनोद करतं थकु, सुभट साथिइ थया सोइ रे ॥७॥वि०॥
विद्यानी परीक्षा करिवा गयो, रावण क्रीडा उद्यान रे।
हय गय रथसुं परिवस्यउ, मनि धरतउ अभिमान रे॥ ८ ॥ वि० ॥
रांवण रूप कीधा घणां, महियल सुं मारइ हाथि रे।
पदम उद्यान माहे गयो, सेवक लीधा सहु साथि रे ॥ ९ ॥ वि० ॥
कटक देखी रांवणतणो, सीता वीहती चिंतवइ एम रे।
इन्द्र पणि जीपी न सकइ एहनइ, मुझ प्रियु जीपिस्यइ केम रे॥१०॥वि०॥
छूटीसि किम राक्षस थकी, सवल चिंता करइं सीत रे।
तिण अवसरि रावण भणइं, सुणि सुंदरि सुविदीत रे ॥११॥वि०॥
राग मगन सइं आणी इहां, पणि न सक्यो करी भोग रे।
व्रत भंग थकी वीहतइं थकइं, वलि विरूयो कहि लोग रे ॥१२॥वि०॥
पणि हिव भोगविस्युं सही, कारणि व्रत भंग जाणि रे।
पुष्पविमान वइठी थकी, तु पणि मन सुख माणि रे ॥१३॥वि० ॥

सुणि रावण सीता भणइं, मुझ ऊपरितु ताहरु' सनेह रे।
थोडोई पणि जो धरइ, जाणि परमारथ एह रे ॥१४॥वि०॥
लखमण राम भामंडला, जा जीविस्यइ ता सीम रे।
हुंपणि जीविसि तां लगी, एहवो जाणिजो नीम रे ॥१५॥वि०॥
इम कहती धरणी ढली, ए ए मोहनी कर्म रे।
मरण समान सीता थई, रावण जाण्यो ते मर्म रे ॥१६॥वि०॥
अवसर देखिनइं इम कहइं, हा हा मइं कीधउ अन्याय रे।
निरमल कुल मइ कलंकियो, कुमति ऊपनी मुझ काइ रे ॥१७॥वि०॥
अत्यन्त राग मगन थका, हा हा विछोह्या सीता राम रे।
भाई विभीषण दूहव्यो, मइ कीधो भुण्डो काम रे ॥१८॥वि०॥
जउ हु' सीतानइ पाछीसुपस्यु, तऊ लोक जाणिस्यइ आम रे।
देखो लंकापति बीहतइं, ए कीधो असमरथ काम रे ॥१९॥वि०॥
हिव मुझ इम जुगतो अछइ, संग्राम करू एक वार रे।
लखमण रांम मुंकीकरी, बीजा नो करूं संहार रे ॥२०॥वि०॥
इम मन मइ अटकल करी, उठ्यो संग्राम निमित्त रे।
तिणि समइं तिहा उपद्रव हुवा, भूकंपा दिग्दाह नित्त रे ॥२१॥वि०॥
आडउ कालउ साप ऊतर्यो, चालता पड्यो सिर छत्र रे।
सेठ सेनापति मंत्रवी, वारीजतो यत्र तत्र रे ॥ २२ ॥ वि० ॥
नगरी लंका थकी नीसर्यो, सजि संग्रामनो साज रे।
बहुरूपिणि इन्द्ररथ सज्यो, तिहां बइठो जाणे सुरराज रे॥२३॥वि०
आगइ हजार हाथी कीया, पाँच पूरे हथियार रे।
माथइ मुगट रतने जड्यो, काने कूडल अति सार रे ॥२४॥वि०॥

मेघाडम्बर सिर धस्यो, चामर वीजतो सार रे ॥
वाजित्र वाजइ अति घणा, भेदी मदन भंकार रे ॥२५॥वि०॥

आप समा विद्याधरा, सुभट सहसदस साथि रे ।
इन्द्र तणी परि सोहतो, रावण हथियार हाथि रे ॥२६॥वि०॥

एहवइ आडम्बर रावण आवतो, दीठो दसरथ तणे पुत्रि रे ।
जगत्र प्रलय जलधर जिसउ, कालकृतान्त नइ सूत्रि रे ॥२७॥वि०॥

भणइं लखमण भो भो भड, वावो मदन भेरि वेगि रे ।
सहु को महारथ सज करो, गय गुडो बाधव तेग रे ॥२८॥वि०॥

चपल तुरंगम पाखरो, प्रगुणा[1] थावो पालिहार रे ।
टोप सन्नाह पहिरो तुम्हे, वेगि म लावो वार रे ॥२६॥वि०॥

हुकम सुणी सहु को जणा, आया श्रीराम नइं पासि रे ।
केसरी रथइं रामचंद चड्या, लखमण गरुड उल्हास रे ॥३०॥वि०॥

हय गय रथ वयसी करी, वीजा सुभट सिरदार रे ।
भामण्डल हनुमन्त सहु, राजवी रण भूझार रे ॥३१॥वि०॥

सहु मिली आया रणभूमिका, रणक्रीडा रसिक अपार रे ।
सखर सकुन थया चालता, जयत जणावइ निरधार रे ॥३२॥वि०॥

सातमा खंड तणी भणी, ए पहिली मइं ढाल रे ।
समयसुदर कहइ आगइ सुणो, कुण-कुण थया ढक चाल रे ॥३३॥

सर्वगाथा ॥५५॥

१—सज

दूहा १७

अरिदल साम्हो आवतो, देखी रावणराय ।
करि आगइं रथ आपणो, साम्हो आयो धाय ॥ १ ॥
आम्हो साम्हो वे मिल्या, दल बादल असराल ।
निज-निज धणी हक्कारिया, ते झूझइं ततकाल ॥ २ ॥
युद्ध थयो ते केहवो, ते कहियइं अधिकार ।
कहतां पार न पामियइं, पणि कहुं एक लिगार ॥ ३ ॥
रुधिर तणी वूही नदी, नर संहार निसीम ।
रामायण सबलो मच्यो, महाभारथ रण भीम[1] ॥ ४ ॥
इण अवसरि गज रथ चड्यो, राक्षस कटक प्रगट्ट ।
हत प्रहत हनुमंत कीयो, दूरि गयो दहवट्ट ॥ ५ ॥
कोप करी आव्यो तिहां, मन्दोदरी नो बाप ।
तीरे मारे तेहनइ, करि काठउ ग्रहि चाप ॥ ६ ॥
सर वींधी हनुमन्त सकल, कंचण रथ कीयो चूर ।
वलि रावण दीधउ नवो, विद्यावल भरपूर ॥ ७ ॥
रथ रहित कीधा तिणइं, भामण्डल हनुमन्त ।
सुग्रीवादिक पणि सुभट, पणि पाला झूम्झंत ॥ ८ ॥
देखि विभीषण ऊठियो, सबल करउ संग्राम ।
रावण सुसरइं वींधियो, तीरा सु तिण ठाम ॥ ९ ॥
भेदि विभीषण भेदियो, केसरीरथ तिण तीर ।
रामचंद ऊठ्या तुरत, करुं विभीषण भीर ॥ १० ॥

१—सीम

तीर सडासड मारिनइं, तुरत कीयो ते दूरि।
रावण उठ्यो रीस भरि, नजरि करी अतिक्रूर ॥ ११ ॥
रांवणनइ देखी करी, लखमण उठ्यो वेगि।
रे तसकर ऊभउ रहे, देखि मोरि तुं तेग ॥ १२ ॥
रे भूचर रावण कहइं, तुझसुं करंता युद्ध।
हु लाजु तुं जा परउ, विद्या मुज्झ विसुद्ध ॥ १३ ॥
लखमण कहइं लाज्यो नही, पर नी हरतो नारि।
रे पापी इण पगि रहे, आवुं गर्व उतारि ॥ १४ ॥
रे पापिष्ट निकृष्ट तुं, निरमरजाद निलज्ज।
इम निभ्रंछी नाखियो, रावण कियो अकज्ज ॥ १५ ॥
रावण अति कोप्यो थको, भलका नाखइं भीड।
गगन सरे करि छाइयो, जाणो ऊड्या[2] तीड ॥ १६ ॥
लखमण वार्या आवता, कंकपत्र करि तेह।
शस्त्र रहित रावण कियो, राखी सवली रेह ॥ १७ ॥

सर्वगाथा ॥७२॥

ढाल बीजी

॥ हो रंग लीयाँ हो रंग लीयां नलद० एहनी जाति ॥

रावण वहु रूपिणी वोलावी, ते पणि वेगि ऊभी रही आवी ॥ १ ॥
रावण लखमण सेती झूमइ, पिण काई अगली वात न सूझइं ॥ २ ॥

२—आव्या

रावण मेहशस्त्र नडं मूकइं, लखमण पवण उडाडी फूकइं ॥ ३ ॥
रावण अन्धकार विकुरवइं, लखमण सूरिज तेज सुं हरवइ ॥ ४ ॥
रावण साप मुँको वीहावडं, लखमण गुरुड मुंकी नइ हरावइं ॥ ५ ॥
इण परि खेद खिन्न घणो कीधो, लखमण रावण नइं दुख दीधो ॥६॥
संनिधि करिवा तिण प्रस्तावइ, देवी वहूरूपिणी तिहां आवइ ॥ ७ ॥
वहुरूपिणी परभाव विशेपइ, लखमण रण माहे इम देखइ ॥ ८ ॥
सुन्दर मुकुट रतन करि मंडित, रावण सीस पड्या अति खण्डित ॥६॥
केऊर वीर वलयकरी सुन्दर, मणिमय मुद्रिका श्रेणि मनोहर ॥ १० ॥
एहवी वीस भुजा पडि दीखइ, लखमण जाणइ मुज्झ जगीसइ ॥११॥
लखमण आपणइं चित्त विचार्‍यो, मइं तो रावण राक्षस मार्‍यो ॥१२॥
तेहवइं रावण ऊठी आयो, ततखिण त्रूटि पडीनइ धायो ॥ १३ ॥
अपणा सहस भुजादण्ड कीधा, भुज-भुज सहस शस्त्र तिण लीधा॥१४॥
तरुयारि तीर भाला अणीयाला, तोमर चक्र मोगर विकराला ॥ १५ ॥
रावण शस्त्र मुंकइ समकालइ, लखमण आवता सगला टालइ ॥ १६ ॥
लंकानाथ चड्यो अहंकारइं, आपणो चक्ररतन चीतारइं ॥ १७ ॥
ततखिण चक्र आवी करि वइठो, रावण लोचन अमीय पइठो ॥ १८ ॥
ते चक्र सहस आरे करी सोहइ, मनोहर मोती माला मोहइ ॥ १६ ॥
ते तउ चक्र रतनमय दीपइं, ते थकां वयरी कोइ न जीपइं ॥ २० ॥
रावण चक्र मुक्यो तिण वेला, लखमण सुभट कीया सहु भेला ॥२१॥
राघव सुग्रीव हनुमंत वीरा, भामंडल नृप साहस धीरा ॥ २२ ॥
तिण मिली रावण हथियार छेद्या, सुभटे साम्हा आवता भेद्या ॥२३॥
तो पिण चक्र वहीनइ आयो, लखमण कर ऊपरि ते ठायो ॥ २४ ॥

देखी सुभट सहु को हरख्या, ए सही वासुदेव करि परख्या ॥२६॥
अम्हनइं अनन्तवीरिज कह्यो पहिलो, ते पणि वचन थयो सहु वहिलो
ए तो वासुदेव वलदेवा, ऊपना सुरनर करिस्यइ सेवा ॥ २७ ॥
लखमण हाथि रह्यो चक्र देखी, रावण चिंतवइं चित्त विद्धेषी ॥ २८ ॥
जेहनइ चक्र रतन हुयइ हाथइं, जेहनइ पुण्डरीक छत्र नइ माथइं ॥२९॥
तेहनी सेव करइ राय राणा, तेहनी आन करइ परमाणा ॥ ३० ॥
धिग मुझ विद्या तेज प्रतापा, रावण इण परि करइं पछतापा ॥ ३१ ॥
मुझनइं भूमिगोचर निभ्रंछइं, मुझनइं लखमण जीपिवा वांछइ ॥३२॥
हाहा ए संसार असारा, बहु विध दुखु तणा भंडारा ॥३३॥
हाहा राज रमणि पणि चंचल, जोवन उलट्यो जाय नदी जल ॥३४॥
हाहा कडुआ करम विपाका, जेहवा निंव धतूरा आका ॥३५॥
धिग धिग काम भोग संयोगा, दुरगति दायक अंति वियोगा ॥३६॥
सोलइ रोग समाकुल देहा, कारिमा कुटुंब संबंध सनेहा ॥३७॥
इम हुं जाणंतो पणि मुरछांणो, पारकी स्त्री हरतो पांतराणो ॥३८॥
हा हा धिग धिग मुज्झ जमारो, मइं तो निफल गमाड्यो सारो ॥३९॥
इम वइराग चड्यो लंकेसर, विभीषण बोल्यो देखी अवसर ॥४०॥
राजन मांनि अजी मुझ वचनं, सीता पाछी सुंपि सुरचनं ॥४१॥
भोगवि राज पडूर लंका नो, मानि वचन ए लाख टंकानो ॥४२॥
तो पिण रांवण वात न मानइं, किम ही सीता पडइं मुझ पानइं ॥४३
लखमण कहइ भो रावण राणा, तुं हिव कां करइं खाचाताणा ॥४४॥
हिव तुं मानि वचन बाधव नो, जो तुं पुत्र छइ रतनाश्रव नो ॥४५॥
जउ तुं जीवत वाछइ अपणउ, तउ तुं थारे राक्षस समझणो ॥४६॥

रावण रोस करि कहइं जाण्यो, तइं तउ चक्र तणो वल आण्यो ॥४७॥
इम वोलइ तो रावण दीठो, लखमण जाण्यो ए तो धीठो ॥४८॥
लखमण चक्ररतन ले मुंकइं, ते पणि रावण थकी न चूकइ ॥४९॥
ए चक्र रावण नइ थयो एहवो, पर आसक्त नारी जन जेहवो ॥५०॥
जे तिण करि झाल्यो सुविचारी, तेहिज फिरि नइ थयो क्षयकारी ॥५१॥
रावण लखमण चक्र प्रहारइं, ततखिण ढलि पड्यो धरती तिवारइं ॥
जाणे प्रबल पवन करि भागो, रावण ताल ज्युं दीसिवा लागो ॥५३॥
जाणे केतु ग्रह ऊपरती, किंवा त्रुटि पड्यो ए धरती ॥५४॥
रावण सोहइ पडियो धरती, जाणे आथमतउ सउ दिनपती ॥५५॥
रावण पडतउ देखी त्राठा, राक्षस सुभट सहु जायइं नाठा ॥५६॥
तव सुग्रीव विभीषण भाखइं, इम आश्वासन देई राखइं ॥५७॥
तुम्हनइ ए नारायण सरणं, मत को आणो डर भय मरणं ॥५८॥
सगलउ रावण कटक नउ मेलो, जई थयो रामचद नइ भेलो ।५९
ढाल ए सातमी खंडनी जाणो, बीजी ढालइ मार्‍यो रावण राणो ॥६०
पामी जयत पताका रामइं, इम कहइ समयसुंदर इण ठामइं ॥६१॥
॥ सर्वगाथा १३३॥

ढाल त्रीजी

रे रगरत्ता करहला मो, प्रीउ रत्तउ आणि ।
हु तो ऊपरि काढिनइ, प्राण करूं कुरवाण ॥१॥
सुरंगा करहा रे, मो प्रीउ पाछउ वालि, मजीठा करहा रे ए गीतनीं ढाल

राग मारुती

रावणनइ धरती पड्यउ, देखि विभीषण राय ।
आपघात करतउ थकउ, राख्यो घणे उपाय ॥१॥

राजेसर रावण हो, एकरसउ मुखि बोलि।
हठीला रावण हो, साम्हउ जोइ सनेह सुं।
तुं का थयो निठुर निटोल ॥ रा०। आंकणी ॥
मुरछागत थई नइ पड्योरे, दोहिलो बाधव दुखु।
वाय सचेत कीयो वली रे, पिण विलाप करइ लक्खु ॥२॥ रा०
तो सरिखा महाराजवी रे, लंकागढ ना नाथ।
नवग्रह निज वस आणिया, तुं इन्द्र नइं घालतो बाथ ॥३॥ रा०
एहवो तुं पणि पामीयोरे, ए अवस्था आज।
तउ जग मइं थिर का नहीं रे, उठि उठि महाराज ॥४॥ रा०
इह लोक परलोक हित तणो तइं, वचन न मांन्यो मुज्भ।
तउ पणि बाधव ऊठि तुं, हुं बलिहारी जाउं तुज्भ ॥५॥ रा०
खम्मि अपराध तुं माहरो रे, कां थायइ कठिन निटोल।
हीन दीन मुझ देखिनइं, तुं दिइ मुझ बांधव बोल ॥६॥ रा०
इण अवसरि अंतेउरी, मंदोदरि दे आदि।
सपरिवार आवी इहाँ, करइं विलाप विषाद ॥७॥
पियारा प्रीतम हो एक रसउ ॥ आकणी।
धरणी ढलि अंतऊरी रे, मूर्छागति थई तेह,
वलि सचेत थईं सुदरी रे, करइ विलाप धरि नेह ॥८॥ पी०
हा जीविन हा वल्लहारे, हा अम्ह जीवनप्राण।
हा गुण गरुया नाहलारे, हा प्रियु चतुर सुजाण ॥९॥ पि०
हा राजेसर किहां गयो रे, अम्हनइ कुण आधार।
नयण निहालो नाहला रे, वीनति करां वारवार ॥१०॥ पि०

रे हतियारा दैव तइं, कां हण्यो पुरुष प्रधान।
अम्ह अवलानइं एवडु, तइं दुख दीध असमान ॥११॥ पि०

इम विलाप करती थकी रे, अंतेउर नइ देखि।
केहनइ करुणा न ऊपजइं रे, वलि विरही नइ विशेखि ॥१२॥ पि०

विभीषण मंदोदरी रे, दुखु करंता देखि।
रामचन्द आवी तिहारे, समझावइं सुविशेष ॥१३॥ पि०

भावी वात टलइ नहीं रे, वयर हुवइ मरणात।
मन हटकी लयउ आपणउ रे, म करउ सोक अशांत ॥१४॥ रा०

प्रेत क्रतूत करो तुम्हे रे, राम कहइ सुविचार।
विभीषण सहु को मिली रे, करइं रावण संसकार ॥१५॥ रा०

बावना चंदन आणीया रे, आण्या अगर उदार।
चय उपरि पउढाडियो रे, कीयो किसुं करतार ॥१६॥ रा०

रावण नइ संसकारि नउ रे, लखमण राम उदास रे।
पहुता पदम सरोवरइं रे, द्यइ जल अंजल तास ॥१७॥ रा०

इंद्रवाहन कुभकर्ण नइ रे, मुंकाव्या श्रीराम।
सोक मुँकउ सुख भोगवउ रे, द्यइ आसानना आम ॥१८॥ रा०

ए संसार असार मइं रे, कवण न पामइ दुखु।
इम चिंतवता चित्त मइं रे, गया मन्दिर मन लुखु ॥१९॥ रा०

त्रीजी ढाल पूरी थई रे, सातमा खंड नी एह।
समयसुंदर कहइं साभलो, वयराग नी वात जेह ॥२०॥ रा०

॥ सर्वगाथा १५३ ॥

दूहा ६

तिण अवसरि वीजउ दिनइं, लंकापुरी उद्यान ।
अप्रमेयवल नाम मुनि, आया उत्तम ध्यान ॥ १ ॥
साथइं छप्पन्न सहस मुनि, साधु गुणे अभिराम ।
शुभ लेश्या चड्यो साधजी, अप्रमेयवल नाम ॥ २ ॥
अनित्य भावना भावतां, धरतां निरमल ध्यान ।
आधी रातइ ऊपनो, निरमल केवलन्यान ॥ ३ ॥
केवल महिमा सुर करइं, वायइ वाजित्र तूर ।
मुनि वांदण आवइ भविक, प्रह ऊगमतइ सूर ॥ ४ ॥
देव तणी सुणि दुन्दुभी, लखमण राम समेत ।
विद्याधर साथे सहू, आया वंदण हेत ॥ ५ ॥
कुंभकरण वलि इन्द्रजित, मेघनाद सुविलास ।
त्रिण्ह प्रदक्षिण देकरी, वइठा केवलि पास ॥ ६ ॥

सर्वगाथा ॥ १५६ ॥

ढाल ४

॥ राग बंगालु ॥

॥ जानी एता मान न कीजीयइ ए गीत नी ढाल ॥

लखमण राम विभीषण वइठा, वइठा सुग्रीव राय रे ।
कुंभकरण मेघनाद सहुको, वइठा आगइ आय रे ॥ १ ॥
द्यइ केवली भगवंत देसना, हां ए संसार असार रे ।
जन्म मरण ग्रभवास जरादिक, दुखु तणो भंडार रे ॥ २ ॥ द्य० ॥
डाभ अणी ऊपरि जल जेहवो, तेहवो जीवित जाणि रे ।
संध्याराग सरीखो यौवन, गरथ ते अनरथ खांणि रे ॥३॥ द्य० ॥

इन्द्रधनुष सरिखी रिधि जाणो, अथिर अनित्य संसार रे।
आसू ना आभला सरीखा, प्रिय संगम परिवार रे ॥४॥ द्य० ॥
काम भोग गाढा अति भूंडा, जेहवा फल किंपाक रे।
मुख मीठा परिणामइ कडुया, जेहवो नींब नइ आक रे ॥५॥ द्य० ॥
विरह वियोग दुख नानाविध, सोग संताप सदाई रे।
सोलह रोग समाकुल काया, कारिमी सहु ठकुराई रे ॥ ६ ॥ द्य० ॥
जरा राक्षसी प्रतिदिन पीडइ, मरणे आवइं नेडउ रे।
छाया मिस माणस तिण मुक्या, जमराणा नो तेडउ रे ॥७॥ द्य० ।
मायाजाल जंजाल मुकि द्यो, वलि मुंको विषवाद रे।
वलि मांनव भव लहतां दोहिलो, म करो धरम प्रमाद रे ॥८॥ द्य० ॥
विषय थाकी विरमउ तुम्हें प्रांणी, विषय थकी दुख होइ रे।
सीतासंगम वाछा करतो, राणो रावण जोई रे ॥ ९ ॥ द्य० ॥
साधतणी देसना सांभलि, ऊपनो परम वयराग रे।
कुंभकरण मेघनाद इन्द्रजित, इण लाधो भलौ लाग रे ॥ १० ॥ द्य० ॥
परम संवेगइ केवलि पासइं, लीधो संयम भार रे।
मन्दोदरि पति पुत्र वियोगइ, दुखु करइं वार वार रे ॥ ११ ॥ द्य० ॥
संयमसिरी पहुतणो प्रतिबोधी, पाम्यो परम संवेग रे।
मन्दोदरि पणि दीक्षा लीधी, अलगुं टल्यो उद्वेग रे ॥ १२ ॥ द्य० ॥
सहस अठावन दीक्षा लीधी, चन्द्रनखादिक नारी रे।
तप जप सूधो संयम पालइं, आतम हित सुखकारी रे ॥१३ द्य० ॥
प्रतिबूधा बहुला तिहां प्राणी, साभलि ध्रम उपदेसा रे।
समयसुन्दर कहइं ए ढाल चउथी, सातमा खण्डनी एसा रे ॥१४॥द्य०॥

सर्वगाथा ॥१७३॥

ढाल ५

॥ राग परजियो कालहरो मिश्र ॥

सिहरा सिरहर त्रिवपुरी[1] रे, गढा वडो गिरिनारि रे।
राण्या सिरहरि रुकमिणी रे, कुंयरा नन्द कुमार रे॥१॥
कंसासुर मारण आविनइ, प्रह्लाद उधारण, रास रमणि घर आव्यो।
घरि आव्यो हो रामजी, रास रमणि घरि आव्यो॥२॥

॥ एगीतनी ढाल ॥

जयतसिरीं पामी करी रे, लषमणनइ श्रीराम रे।
सुग्रीव हनुमन्त साथि ले रे, भामण्डल अभिराम रे॥ १ ॥
लंकागढ़ लीधउ, लेई नइ विभीषण नइ दीधउ।
राम लंकागढ़ लीधउ॥
गढ़ लीधउ हो हो रामजी। राम लंकागढ़ लीधउ॥ आं० ॥
लंकागढ रलियामणउ रे, सुंदर पोलि प्रकार रे।
चउरासी चउहटा भला रे, सरगपुरी अवतार रे॥ २ ॥ लं०
लखमण राम पधारिया रे, लंका नगरी माहि रे।
पइसारो सवलो सज्यो रे, अति घणो अंगि उछाह रे॥ ३ ॥ लं०
गउखि चडी कहइ गोरडी रे, ऊ लखमण ऊ राम रे।
चामरधारी पूछियउ रे, कहउ सीता किण ठाम रे॥४॥ लं०
पुष्पगिरि परवत तणइं रे, पासइं पदम उद्यान रे।
सीता तिहां वइठी अछइ रे, धरती प्रियुनो ध्यान रे॥५॥ लं०

१—मधुपुरी।

राम खुसी थका चालिया रे, तुरत गया तिण ठाम रे।
गज थी नीचा ऊतस्या रे, सीता दीठी श्रीराम रे ॥६॥ लं०
दुख करती अति दूबली रे, विरह करीनइ विछाय रे।
सीतापणि श्री रामजी रे, आवता दीठा धाय रे ॥७॥ लं०
दूर थकी देखी करी रे, आणंद अंगि न माय रे।
आंखे आंसु नाखती रे, ऊभी रही साम्ही आय रे ॥८॥ लं०
विरह माहि दुख जे हुयइ रे, संभास्यो थकउ सोइ रे।
ते वाल्हेसरनइ मिल्या रे, कोडि गुणउ दुख होइ रे ॥६॥ लं०
सीता नइ रोती थकी रे, रामजी हाथे झालि रे।
हे दयिता दुख मुकि दे रे, कहइ प्रियु साम्हो निहालि रे ॥१०॥ लं०
हिव तुं धरि धीरज पणो रे, सुख फाटी हुयइ दुखु रे।
जग सरूप एहवो अछइ रे, दुख फीटी हुयइ सुखु रे ॥११॥ लं०
पुण्य विशेषइं प्राणीया रे, पांमइ सुखु अपार रे।
पाप विशेषइं प्राणीया रे, पामइ दुखु किवार रे ॥१२॥ लं०
इणपरि समझावी करी रे, दे आलिंगन गाढ रे।
सीता संतोषी घणुं रे, हीयो हुयो अति ताढ रे ॥१३॥ लं०
जांणे सींची चंदनइं रे, झीली अमृत कुंड रे।
छांटी कपूर पाणी करी रे, इम सुख पाम्यो अखंड रे ॥१४॥ लं०
सीता राम साम्हो जोयो रे, राम थया अति हृष्ट रे।
चक्रवाक जिम प्रह समइ रे, चक्रवाकी नी दृष्टि रे ॥१५॥ लं०
राम सीता बेउं मिल्या रे, जेथयो सुखु सनेह रे।
ते जाणइ एक केवली रे, के वलि जाणइं तेह रे ॥१६॥ लं०

सीता सहित श्रीराम नइ रे, निरखी सुर हरखंत रे।
कुसुम वृष्टि ऊपरि करइ रे, गंधोदक वरपंति रे ॥१७॥ लं०
परसंसा सीता तणी रे, वलि करइ देवता एम रे।
धन धन ए सीता सती रे, साचो सील सुं प्रेम रे ॥१८॥ लं०
रावण खोभावी नही रे, ऊठि कोडि रोमराइ रे।
मेरु चूला चालइ नही रे, पवन तणी कंपाइ रे ॥१९॥ लं०
लखमण सीतानइ मिल्यो रे, कीधउ चरण प्रणाम रे।
सीता हियडइ भीडीयो रे, बोलायो लेइ नाम रे ॥२०॥ लं०
भामंडल आवो मिल्यो रे, वहिन भाई वहु प्रेम रे।
सुग्रीव हनुमंत सहु मिल्या रे, आणंद वरत्या एम रे ॥२१॥ लं०
हिव श्रीराम हाथी चडी रे, सीता सहित उछाह रे।
लखमण नइं सुग्रीव सुँ रे, पहुता लंका माहि रे ॥२२॥ लं०
सीस ऊपरि धरता थका रे, मेघाडंवर छत्र रे।
चामर वीजइं विहुं दिसइ रे, वाजइं वहु वाजित्र रे ॥२३॥ लं०
जय जय शवद वंदी भणइ रे, सुहव द्यइ आसीस रे॥
रांमचंद राजेसरू रे, जीवउ कोडि वरीस रे ॥२४॥ लं०
रावण भुवण पधारिया रे, रांमचंद नरराय रे।
गज थी नीचा ऊतरी रे, पहिला देहरइ जाय रे ॥२५॥ लं०
सांतिनाथ प्रतिमा तणी रे, पूजा कीधी सार रे।
तवना कीधी तिहां घणी रे, पहुचाडइ भवपार रे ॥२६॥ लं०
तवना करि वइठा तिहां रे, लखमण नइं हनुमंत रे।
रतनाश्रव सुमालि नइ रे, विभीषण मालवंत रे ॥२७॥ लं०

रामचंद्रइं परिचाविया रे, सहू सोकातुर तेह रे।
सोक मुँकी ऊठी करी रे, पहुता निज निज गेह रे ॥२८॥ लं०
इण अवसरि विभीषणइ रे, सपरिवार श्रीराम रे।
आपणइं घर पधराविया रे, सहस रमणी अभिराम रे ॥२९॥ लं०
स्नान मज्जन भोजन भला रे, भगति जुगति सुविचित्र रे।
सहु मिली कीधी वीनती रे, राज्याभिषेक निमित्त रे ॥३०॥ लं०
रामचंद कहइ माहरइ रे, राज सुं केहो काज रे।
पंच मिलीनइं थापीयो रे, भरत करइ छइ राज रे ॥३१॥ लं०
रामचंद लंका रह्या रे, सीता सु काम भोग रे।
इंद्र इंद्राणी नी परइं रे, सुख भोगवइ सुर लोग रे ॥३२॥ लं०
लखमण पणि सुख भोगवइ रे, राणी विसल्या साथ रे।
बीजा विद्याधर वहू रे, पासि रहइ ले आथि रे ॥३३॥ ल०
राम अनइ लखमण वली रे, दे आपणा सहिनाण रे।
पूरवली कन्या सहू रे, आणावी अति जाण रे ॥३४॥ लं०
ते सगली परणी तिहां रे, के लखमण के राम रे।
सुख भोगवइं लंकापुरी रे, राज करइं अभिराम रे ॥३५॥ लं०
पचमी ढाल पूरी थई रे, सातमा खंडनी एह रे।
कहइं (समय) 'सुदर' सीलवंतनी रे, पग तणी हुँ छुं खेहरे ॥३६॥लं०

सर्वगाथा ॥२०६॥

दूहा १७

अन्य दिवस नारद रिषी, कलिकारक परसिद्ध।
वलकल वस्त्र दीरघ जटा, हाथ कमंडल किद्ध ॥१॥

नभ थी नीचउ ऊतर्यो, आयो सभा मझारि ।
आदर मान घणो दीयो, रामचंद सुविचार ॥२॥
रामइं पूछ्यउ किहा थकी, आया रिपि कहइ एम ।
नगर अयोध्या थी कहउ, भरत नइ कुशल छइ खेम ॥३॥

कुशल खेम तिहा कणि अछइ, पणि तिहां अकुशल एह ।
तुम्ह दरसण दीसइ नही, सालइ अधिक सनेह ॥४॥

सीता रावण अपहरी, लखमण पड्यो संग्राम ।
इहां थी विसल्या ले गया, दुखी सुण्या श्रीराम ॥५॥

आगइ खबरि का नहीं, तिण चिंता करइ तेह ।
झूरि झूरि माता मरइ, दुखु तणो नहि छेह ॥६॥

नारद वचन सुणी करी, लखमण राम दयाल ।
सहु दिलगीर थया घणुँ, नयणे नीर प्रणाल ॥७॥

नारद तुम्हे भलो कीयो, वात कही सहु आय ।
नारद रिपि संप्रेडियो, पूजी अरची पाय ॥८॥

राम अयोध्या जाइवा, उछक थया अत्यंत ।
राम[1] विभीषण पूछियो, ते वीनवइ वृतांत ॥९॥

सोलह दिन ऊभा रहो, रांमइ मानी वात ।
भरत भणी मुँक्या तुरत, दूत चल्या परभात ॥१०॥

तुरत अयोध्या ते गया, भरत नइ कियो प्रणाम ।
सगली वात तिणइ कही, ले ले नाम नइ ठाम ॥११॥

१—राय

तेह विसल्या कन्यका, तिहाँ आवी ततकाल।
लखमण नइ जीवाडियो, काढी सकति कराल॥१२॥
लखमण रावण मारीयो, मुँकी पाछो चक्र।
सीता सु सुख भोगवइ, रामचंद जिम शक्र॥१३॥
विद्याधर राजा तणी, कन्या स्त्री सिरताज।
परणी राम नइ लखमणइं, भोगवइं लंका राज॥१४॥
भरत दूत नइ ले गयो, माता पासि उल्हास।
तिहाँ पिणि वात तिका कही, लाधी लील विलास॥१५॥
दूत भणी माता दीया, रतन अमूलिक चीर।
अति संतोष्यो दूतनइं, वेगा आवो वीर॥१६॥
भरत राम भइया[2] तणो, सुणि आगमन आवाज।
पइसारो करिवा भणी, सजइ सामग्री साज॥१७॥

॥ सर्वगाथा २२६ ॥

ढाल ६

॥ राग मल्हार ॥

वधावारी ढाल

भरत महोछव माडियउ, वुहरावी हे गली नगर मझारि।
अयोध्या राम पधारिया, पधास्या हे वलि लखमण वीर॥अ०॥
गंधोदक छांटी गली, विखेस्या हे फूल पंच प्रकार॥१॥ अ०
केसर रइ गारइ करी, लीपाव्या हे मंदिर तणा बार।
मोती चउक पूरावीया, वारि वाध्या हे तोरण तिण वार॥२॥ अ०

२—भाया

घरि घरि गूडी ऊछलइ, हाट छाया हे पंचवरण पटकूल।
छतउ बाजार छायाविउ, चंदूवा हे चिहुंदिसि वहुमूल ॥३॥ अ०
बाध्या मोती झुंबखा, मणि माणक हे रतनां तणी माल।
लंबी बांधी लहकती, ठाम ठाम हे वलि लाल परवाल ॥४॥ अ०
केलि थाभा ऊँचा किया, सोना ना हे तिहां कलस विसाल।
वनरमाल वाधी वली, लोक वोलइ हे आयो पृथिवी नो पाल ॥५॥ अ०
इण अवसरि विद्याधरे, आवीनइ हे विभीषणनइ आदेश॥ अ० ॥
रतनवृष्टि कीधी घणी, घरे घरे हे त्रिक चउक्क प्रदेस ॥ अ० ६ ॥
उत्तुंग तोरण देहरा, अति ऊंचाहे अष्टापद गिरि जेम।
कंचणमय कीधा तिहा, कोसीसा हे मणि रतन ना तेम ॥ ७ ॥ अ०
जिन मंदिर महोछव घणा, मंडाव्या हे पूजा सतरप्रकार।
नगरी अयोध्या एहवी, सिणगारी हे सुरपुरी अवतार ॥ ८ ॥ अ०
हिव दिन सोला गयेहुंते, लंकाथी हे चाल्या श्रीराम।
सीता विसल्या साथिले, सहोदर हे लखमण अभिराम ॥ ९ ॥ अ०
सहु परिवार ले आपणो, चडी वइठा हे राम पुष्प विमान।
साकेत साम्हा चालिया, विद्याधर हे साथि अति सोभमान ॥१०॥अ०
हय गय रथ वाहन चड्या, विभीषण हे हनुमंत सुग्रीव।
राम संघातइं चालिया, देखता हे गिरि वन पुर दीव ॥११॥ अ०
राम दिखाडइ हाथ सुं, अस्त्रीनइ हे आपणा अहिठाण।
इहां सीतानइं अपहरी, पडिलाभ्या हे इहां साधु सुजाण ॥ १२ अ० ॥
आया आकास मारगइ, खिणमाहे हे निज नगर साकेत।
चतुरंगिणी सेना सजी, साम्हो आयो तिहां हे भरत सुहेत ॥१३॥ अ०

सुभट विद्याधर सहु मिल्या, सहु हरख्या हे नगरी नर नार ।
ढोल दमामा दुडवड़ी, भेरि वाजइ हे भला भुंगल सार ॥ १४ ॥ अ०
ताल कंसाल नइ बांसुली, सरणाई हे चह चहइ सिरिकार ।
सर मंडल मादल घुमइ, वीणा वाजइ हे झालरि झणकार ॥ १५ ॥ अ०
बत्रीस बद्ध नाटक पडइ, गीत गायइ हे गुणियण अतिचंग ।
बंदी जण जय-जय भणइ, रुडी बोलइ हे विरुदावली रग ॥१६ ॥ अ०
आकास मारिग आवता, देखीनइं हे लोक हरप अपार ।
पूरणकुंभ ले पदमिनी, बधावइ हे गायइ सोहलउ सार ॥ १७ ॥ अ०
गउख ऊपरि चडी गोरडी, कहइ केई हे देखउ ए रामचंद ।
ए लखमण केई कहइ, ए सुग्रीव हे ए विभीषण नरिंद ॥ १८ ॥ अ०
ए हनुमत सीता सती, विसल्या हे ए लखमण नारि ।
बडवखती केई कहइ, बे भाई हे राम लखमण बलिहारी ॥ १९ ॥ अ०
अटवी मइ गया एकला, पणि पामी हे रिधि एह अनंत ।
के कहइ सीता सभागिणी, चूकी नहि हे रावण सु एकंत ॥ २० ॥अ०
धन्य विसल्या केई कहइ, जीवाड्यो हे जिण लखमण कंत ।
हनुमंत धन्य केई कहइ, सीता नइ हे कह्यो प्रियु विरतंत ॥२१॥ अ०
पुष्पविमान थी ऊतरी, साभलता हे इम जन सुवचन्न ।
पहुता माता मंदिरइं, मा दीठा हे बेउ पुत्र रतन्न ॥ २२ ॥ अ०
सौमित्रा अपराजिता, केकई हे थयो आणंद ताम ।
ऊठीनइ ऊभी थई, पुत्रे कीधउ हे माता चरण प्रणाम ॥ २३ ॥ अ०
माता हियडइं भीडिया, बेटा नइ हे पुचकार्या बोलाइ ।
बहू सासू ने पगे पड़ी, कहइ सासू हे पुत्रवंती तूं थाइ ॥ २४ ॥ अ०

भरत सत्रुघन आविनइ, वेऊं भाई हे नम्या अति बहु प्रेम।
वात पूछी मा पाछिली, ते दाखी हे सहु थई जिम तेम ॥ २५ ॥ अ०
स्नान मज्जन भोजन भला, जीमाड्या हे ऊपर दीधा तंबोल।
घरि-घरि रंग वधामणा, राज माहे हे थया अति रंगरोल ॥ २६ ॥ अ०
सीतादिक स्त्रीनइ दिया, रहिवानइ हे रुडा कनक आवास।
दासी दास दीया घणा मणि माणिक हे सहू लील विलास ॥२७॥ अ०
इम माता वावय प्रिया, परवार ना हे पुरवइ मनकोडि।
मन वंछित सुख भोगवइ, श्रीराम नइं हे लखमण तणी जोडि ॥२८॥अ०
इक दिन भरत नइ ऊपनो, मनमाहें हे वारू अति वयराग।
करजोडी कहइ रामनइं, मुझ वीनति हे तुम्हें सुणो महाभाग ॥२९॥अ०
एह तुम्हे राज भोगवो, हुं लेइसि हे संयम तणो भार।
ए संसार असार छइं, मइ जाण्यो हे बहु दुख भंडार ॥ ३० ॥ अ०
पहिलो पणि मुझ नइं हुंतो, दीक्षा नो हे मनोरथ अतिसार।
दसरथ राजा राज नइ, छोडी नइं हे लीधो संयम भार ॥ ३१ ॥ अ०
पणि जणणी आग्रह करी, राज लीधो हे मइ तो मन विण एह।
हिव ए राज नइं ल्यउ तुम्हें, अम्हारइ हे मनि धरम सनेह ॥ ३२ ॥अ०
राजलीला सुख भोगवउ, मन मान्या हे करउ वछित काज।
राम कहइ वापइं दीयो, कांइ छोडउ हे भाई भरत ए राज ॥ ३३ ॥अ०
वृद्धपणइं संयम ग्रहे, जुवांनी हे माहे नहि व्रत लाग।
इंद्री दमता दोहिला, वलि दोहिलो हे सहु स्वाद नो त्याग ॥३४॥ अ०
भरत कहइ भाई सुणो, संयम हे दोहिलो कह्यो तेह।
वृद्धपणइं पणि नादरइं, भारी क्रमा हे नर संयम एह ॥३५॥ अ०

तरुणा केइ हलुकर्मा, व्रत आदरइ हे आपणइं उछरंग।
ते भणी मुझ आदेस द्यौ, मन मान्यो हे अम्ह संयम रंग ॥३६॥ अ०
आदेस लीधो राम नो, तिण वेला हे तसु भाग संयोग।
श्रीकुलभूषण केवली, पधास्या हे गयो वांदिवा लोग ॥३७॥ अ०
भरत नरेसर भावसुं, व्रत लीधो हे नृप सहस सघाति।
सामग्री सबली सजी, राम कीधो हे महुछव बहु भांति ॥३८॥ अ०
तप संयम करइ आकरा, सुध साधइ हे राजरिषि सिवपंथ।
आप तरइं अउरा तारवइं, नित वांदुं हे ते हुं भरत निग्रंथ ॥३९॥ अ०
छट्ठी ढाल पूरी थई, राम लाधा हे अयोध्या सुख लील।
भरतइं दीक्षा आदरी, समयसुंदर हे कहइ धन पालइ जे सील ॥४०॥ अ०

सर्वगाथा ॥२६६॥

दूहा १२

इण प्रस्तावइं वीनव्यो, राम नइं राज्य निमित्त।
सुग्रीव प्रमुख विद्याधरे, ते कहइ राम तुरन्त ॥ १ ॥
राज्य द्यउ लखमण नइं तुम्हें, वासुदेव छइ एह।
तिण पाम्यइं मइं पामियो, मुझ पद प्रणमइं तेह ॥२॥
सहु राजा सहु मन्त्रवी, सहु अधिकारी लोक।
मिली महोछव मांडियो, मेल्या सगला थोक ॥ ३ ॥
गीत गान गाईजते, वाजंते वाजित्र।
वलि चामर वींजीजते, सिरि ऊपरि धरि छत्र ॥४॥
कनक पदम[1] वइसारि नइ, बे बांधव सुसनेह।
कनक कलस जलसुं भरी, मिल्या विद्याधर तेह ॥ ५ ॥

१—पट्ट

तिण कीधो अभिषेक तिहां, राम हुवा वलदेव।
पटराणी सीता सती, लखमण पणि वासुदेव ॥ ६ ॥
पटराणी लखमण तणी, थई विसल्या नारि।
लोक सहू हरषित थया, वरत्या जय-जयकार ॥ ७ ॥
राम विभीषण नइ दियो, लंकानगरी राज।
कीयो किंकिध नो धणी, सुग्रीव सहु सिरताज ॥ ८ ॥
हनुमंत नइं श्रीपुर धणी, कीयो मया करि राम।
चद्रोदर सुत नइं दियो, पाताल लंका ठाम ॥ ६ ॥
रतनजटी नइं थापियो, गीतनगर रो राय।
दक्षिण श्रेणि वैताढ्य नउ, भामंडल सुपसाय ॥ १० ॥
यथायोग बीजा भणी, दीधा देस नइ गाम।
विद्याधर संतोषीया, सीधा वंछित काम ॥ ११ ॥
अर्ध भरत साधी करी, अरि वसि करि आवाज।
लखमण राम वे भोगवइ, नगर अयोध्या राज ॥ १२ ॥

सर्वगाथा ॥२७८॥

ढाल ७

राग सारंग

॥ आंबो मउर्यो हे जिण तणइ ए गीतनी ढाल ॥

सीता दीठउ हे सुहणउ, अन्य दिवस परभात।
पति पासइ गई पाधरी, सहु कही सुपन नी वात ॥ १ ॥ सी० ॥
सामी सींह मइं देखीयो, अंगइ अधिक उछाह।
ते ऊतरतो आकास थी, पइसतो मुझ मुख माहि ॥ २ ॥ सी० ॥

वलि हुं जाणुं विमानथी, धरती पडी धसकाय ।
झबकि जागी नइ हुं झळफली, कहउ मुझ कुण फल थाय ॥३॥सी०॥
राम कहइं सुणि ताहरइ, पुत्र युगल हुस्यइ सार ।
पणि तुं पडी जे विमान थी, ते कोइ असुभ प्रकार ॥ ४ ॥ सी० ॥
ते तू उपद्रव टालिवा, करि कोइ धरम उपाय ।
प्रियु पासइ इम सांभली, सीता चिंतातुर थाय ॥ ५ ॥ सी० ॥
सीता मन माहे चिंतवइं, अहो मुझ दुख नउ अंत ।
अजि लगि देखो आयउ नही, पोतउ पाप दीसंत ॥ ६ ॥ सी० ॥
रे दैव का तूं केडइ पड्यो, कुण मइ कीयो अपराध ।
त्रिपतउ न थयो रे तुं अजो, वन्दि पाडी दुख दाध ॥ ७ ॥ सी० ॥
अथवा स्यउं दोस दैवनो, अपणा करमनो दोस ।
भव माहे भमतां थकां, सुख तणो किसो सोस ॥ ८ ॥ सी० ॥
इम मन माहे विमासतां, आयो मास वसंत ।
छयल छबीला रंगइं रमइं, गुणियण गीत गायंत ॥ ९ ॥ सी० ॥
केसर ना करइ छांटणा, ऊडइं अबल अबीर ।
लाल गुलाल ऊछालियइं, सुन्दर सोभइ सरीर ॥ १० ॥ सी० ॥
नरनारी तरुणी मिली, खेलइ फूटरा फाग ।
झीलइ नीर खंडोखली, रमलि करइ धरि राग ॥ ११ ॥ सी० ॥
लखमण राम तिणइ समइ, क्रीडा करण निमित्त ।
अन्तेउर परिवार ले, पहुता बाग पवित्त ॥ १२ ॥ सी० ॥
सीता सुं रमइ रामजी, विसल्या सुं वासुदेव ।
एक सीता सेती मोहीया, राम रमइ नितमेव ॥ १३ ॥ सी०

पेखी सउकि प्रभावती, प्रमुख धरइं मनि द्वेष।
सीता वसि कीयो वालहो, अम्हनइ नजरि न देख ॥ १४ ॥ सी० ।
सउकि मिली मनि चींतव्यउ, ए दुख सह्यउ रे न जाय।
चित्त उतारिस्यां एहथी, करि कोइ दाय उपाय ॥ १५ ॥ सी० ॥
रमलि करी घरि आवीया, इक दिन महुल मझारि।
सउकि मिली सहु एकठी, सीता तेडी संभारि ॥ १६ ॥ सी० ॥
आदर मान देई करी, पूछी सीता नइ वात।
कहो रावण हुंतो केहवो, दसमुख जेह कहात ॥ १७ ॥ सी०
पदमवाडी मइं वइठां थकां, सीताजी तुम्हें तेह।
रावण अविसि दीठो हुस्यइं, रूप अधिक तसु देह ॥ १८ ॥ सी० ॥
तेहनउ रूप लिखी करी, देखाडउ अम्ह आज।
कहइ सीता मइ दीठउ नही, तिणसुं नहि मुझ काज ॥ १९ ॥ सी० ॥
मइं रोती ते जोयो नही, सउकि कहइ वलि ताम।
तउ पणि अंग उपांग को, जे दीठो अभिराम ॥ २० ॥ सी० ॥
ते देखाडउनइ सामिनी, कहइ सीता सुविवेक।
मइं नीचइ मुखि निरखीउ, रावण पदयुग एक ॥ २१ ॥ सी० ॥
वीजो क्यु मइं दीठो नही, तउ वलतो कहइ तेह।
पग पणि अम्हनइ दिखाडि तूं, अम्हनइ मनोरथ एह ॥ २२ ॥ सी० ॥
तव सीतायइं आलिखीया, रावण ना पग वेउ।
सोकि गई घरे आपणे, रावण ना पग लेउ ॥ २३ ॥ सी० ॥
अन्य दिवस मिली एकठी, कह्यो श्रीराम नइं एम।
तुम्ह सरिखा पणि राजवी, राचइ कारिमइ प्रेम ॥ २४ ॥ सी० ॥

लपटाणा प्रेम जेहसुं, जिण तुम्हनइं वसि किद्ध।
ते सीता तुम्हे जाणीज्यो, रावण नइं प्रेम विद्ध ॥२५॥ सी० ॥
राम कहइ किम जाणियइ, अस्त्री कहइं सुणि देव।
रावण ना पग माडिनइं, ध्यान धरइं नितमेव ॥ २६ ॥ सी० ॥
दीठी वार घणी अम्हे, पणि चाडी कुण खाइं।
आज कही अम्हे अवसरइं, अणहुंती न कहाय ॥ २७ ॥ सी० ॥
अस्त्री चरित विचारियइं, अस्त्री चंचल होइ।
अन्य पुरुष सुं क्रीडा करइ, चित्त अनेरडइ कोइ ॥२८॥ सी० ॥
अन्य पुरुष सुं साम्हो जोवइ, अनेरा नो ल्यइ नाम।
दूषण द्यइ अवरां सिरइं, कूड कपट नो ए ठाम ॥२९॥ सी० ॥
जो ए वात मांनो नहीं, तो देखो पग दोय।
राम विमास्युं ए किम घटइ, दूधमइं पूरा न होइ ॥ ३० ॥ सी० ॥
किम वरसइ आगि चन्द्रमा, किम चालइ गिरि मेर।
किम रवि पच्छिम ऊगमइ, किम रवि राखइ अंधेर ॥ ३१ ॥ सी० ॥
जो सीता पणि एहवी, तब त्री केहो वेसास।
ते भणी सउकि असांसती, कहइ छइ कूडी लबास ॥ ३२॥ सी० ॥
पणि ए सीता सती सही, राम नइ पूरी प्रतीति।
सातमी ढाल पूरी थई, समयसुंदर भली रीति ॥ ३३ ॥ सी० ॥
सातमो खंड पूरो थयो, साते ढाल रसाल।
समयसुदर सीलवंतना, चरण नमइ त्रिण्हकाल ॥ ३४ ॥ सी० ॥

सर्वगाथा ॥३१२॥

इति श्री सीताराम प्रबन्धे रावणवध, सीतापश्चादानयन।
श्रीरामलखमणायोध्याप्रवेश, सीताकलंकप्रदान वर्णनोनाम सप्तम खण्ड ॥

॥ खण्ड ८ ॥

दूहा १४

आठ प्रवचन माता मिल्या, सूधउ संयम होइ ।
आठमो खण्ड कहूं इहां, सलहइ सील स कोइ ॥ १ ॥
इम चिंतवतां राम नइं, अन्य दिवस प्रस्तावि ।
सीता डोहलो ऊपनउ, गरभ तणइं परभावि ॥ २ ॥
जिनवर नी पूजा करूं, दीना नइं द्युं दान ।
सूत्र सिद्धन्त हे साभलुं, साधु नइ द्युं सनमान ॥ ३ ॥
तिण डोहलइ अणपूजतइं, दुर्बल थई अपार ।
रामइं आंमणदूमणी, दीठी सीता नारि ॥ ४ ॥
रामइ पूछ्यो हे रमणि, तुम्हनइं दूहवी केण ।
किंवा रोग को ऊपनो, कइ कारणि अंवरेण ॥ ५ ॥
जे छइ बात ते मुज्झ कहि, कह्यो सीता विरतंत ।
एहवउ डोहलउ ऊपनो, ते पहुचाडो कंत ॥ ६ ॥
रांम कहइ हुं पूरिस्युं, म करे दुखु लिगाररे ।
तुरत मंडावी देहरे, पूजा सतर प्रकार ॥ ७ ॥
देतो दान दीना भणी, मुनि वादिवा निमित्त ।
अंतेउर सुं चालियो, राम धरम धरि चित्त ॥ ८ ॥
देहरे देव जुहारि करि, पूजा करी प्रधान ।
गुरु वांदी घरि आवीया, राम सीता बहुमान ॥ ९ ॥
सीता डोहलउ पूरीयो, धरम सम्बधी तेह ।
सुख भोगवइ संसार ना, राम सीता सुसनेह ॥ १० ॥

एहवइ सीता नारि नी, फुरकी जिमणी आंखि।
कहिवा लागी कंतनइं, मुख नीसासा नाखि ॥ ११ ॥
कहइं प्रीतम ए पाडुई, असुभ जणावइ एह।
एह उपद्रव जिम टलइ, करि उपचार तुं तेह ॥ १२ ॥
तीर्थस्नान करि दान दे, भजि भगवंत अभिधान[1]।
सीता सगलो ते कियो, पणि ते करम प्रधान ॥ १३ ॥
अस्त्री माहे ऊछली, एहवी सगलइ वात।
पूर्वकर्म प्रेरी थकी, सीता नी दिन-राति ॥ १४ ॥

ढाल १

॥ राग मारुणी ॥

अमा म्हाकी चित्रालंकी जोइ। अमां म्हाकी।
मारुड़इ मइवासी को साद सुहामणो रे लो ॥ ए गीत नी ढाल ॥

सहियां मोरी सुणि सीता नी वात। सहिया मोरी।
आपणड़इं घरि रावण राजीयइ रे लो ॥ स० ॥
ते कामी कहवाइ ॥ स० ॥
ते पासइ बइठा पणि लोक मइं लाजीयइ रे लो ॥ १ ॥ स० ॥
सीता सतीय कहाइ ॥ स० ॥
पणि रावण भोगव्यां विण सही मुंकइ नही रे लो ॥ स० ॥
भूख्यो भोजन खीर ॥ स० ॥
विण जीम्या छोडइ नही इम जाणउ सही रे लो ॥१॥ स० ॥

१—नउ नाम

स० तिरस्यो न छोडइ नीर ॥ स० ॥
पंडित सुभाषित रसियो किम तजइ रे लो ॥ २ ॥ स० ॥
दरिद्री लाधो निधान ॥ स० ॥
किम छोडइ जाणइ इम वलि नहि संपजइ रे लो ॥ ३ ॥ स० ॥

स० तिण तुं निश्चय जाणि ॥ स० ॥
भोगवि नइं मुंकी परही सीता रावणइ रे लो ॥ स० ॥
रामइ कीधउ अन्याय ॥ स ॥
सीता नइ आपणइ घर माहि आणिनइ रे लो ॥ ४ ॥ स० ॥

स० लोकां मइं अपवाद ॥ स० ॥
सगलइ ही सीता श्रीरामनो विस्तर्यो रे लो ॥ स० ॥
स० अंतेउर परिवार ॥ स० ॥
वीहते लोके इम कह्यो तेने मनइ धर्यो रे लो ॥ ५ ॥ स० ॥

स० एक दिवस एक ठामि ॥ स० ॥
नगरी मइं महिला ना टोल मिलया घणा रे लो ॥ स० ॥
तिहां एक बोली नारि ॥ स० ॥
अस्त्री मइं सवला पुण्य आज सीता तणा रे लो ॥ ६ ॥ स० ॥

स० देवी नइ दुरलंभ ॥ स० ॥
ते रावण राजा सुं सीता सुख लह्यो रे लो ॥ स० ॥
स० सीता सतीय कहाय ॥ स० ॥
ए न घटइ एवडी वात इम वीजी कह्यो रे लो ॥ ७ ॥ स० ॥
एक कहइ वलि एम ॥ स० ॥
अस्त्री नो सील तांलगि कहियइ सावतो रे लो ॥ स० ॥

जां लगि कामी कोइ ॥ स० ॥
प्रारथना न करइं बहुपरि समझावतो रे लो ॥ ८ ॥ स० ॥
एहनइ रावणराय ॥ स० ॥
वीनति नव नव वचने वसि कीधी घणुं रे लो ॥ स० ॥
राची अस्त्रा रंगि ॥ स० ॥
तन मन धन सगलो आपइ आपणुं रे लो ॥ ६ ॥ स० ॥

एक कहइ वलि एम ॥ स० ॥
सीता नइ जाणो तुम्हे जगि सोभागिणी रे लो ॥ स० ॥
नारी सहस अढार ॥ स० ॥
मंदोदरि सारिखी सहु नइ अवगणी रे लो ॥ १० ॥ स० ॥

लंकागढ नो राय ॥ स० ॥
सीता सुं लपटाणो राति दिवस रह्यो रे लो ॥ स० ॥
मनवांछित सुख माणि ॥ स० ॥
सीता पणि कीधो सहु जिम रावण कह्यो रे लो ॥ ११ ॥ स० ॥

साचो ते सोभाग ॥ स० ॥
सीलरतन साचइ मन पूरउ पालीयइ रे लो ॥ स० ॥
न करइ वचन विलास ॥ स० ॥
पर पुरुषा संघातइं परचउ टालियइ रे लो ॥ १२ ॥ स० ॥

जुगति कहइं वलि एक ॥ स० ॥
कुसती जउ सीता तउ किम आणी धणी रे लो ॥ स० ॥
कहइ अपरा वलि एम ॥ स० ॥
अभिमानइं आंणी रमणी आपणी रे लो ॥ १३ ॥ स० ॥

कहइ कामिणी वलि काइं ॥ स० ॥
आणीतउ मानी कां रांम सीता भणी रे लो ॥ स० ॥
कहइ वलि वीजी कांइ ॥ स० ॥
सीता सुं पूरवली प्रीति हुंती घणी रे लो ॥ १४ ॥ स० ॥

जे हुयइ जीवन प्रांण ॥ स० ॥
ते मांणस मूंकंता जीव वहइ नहीं रे लो ॥ स० ॥
अपजस सहइ अनेक ॥ स० ॥
प्रेम तणी जाइयइ किम वात किणइं कही रे लो ॥ १५ ॥ स० ॥

एक कहइ हित वात ॥ स० ॥
लोकां मइं अन्याई[1] नृप राम कहीजीयइ रे लो ॥ स० ॥
कुल नइ होइ कलंक ॥ स० ॥
ते रमणी रूडी पणि किम राखीयइ रे लो ॥ १६ ॥ स० ॥

ऊखाणउ कहइ लोक ॥ स० ॥
पेटइ को घालइ नहीं अति वाल्ही छुरी रे लो ॥ स० ॥
राम नइं जुगतउ एम ॥ स० ॥
घर मइ थी सीता नइं काढइ बाहिरी रे लो ॥ १७ ॥ स० ॥

सेवके एहवी वात ॥ स० ॥
नगरी मइ साभलिनइ राम आगइ कही रे लो ॥ स० ॥
राम थया दिलगीर ॥ स० ॥
एहवी किम अपजस नी वात जायइ सही रे लो ॥ १८ ॥ स० ॥

१—न्याई ।

अन्य दिवस श्रीराम ॥ स० ॥
नष्ट चरित नगरी मइं रातइं नीसस्या रे लो ॥ स० ॥
किणही कालवारि ॥ स० ॥
छाना सा ऊभा रहि कांन ऊंचा धस्या रे लो ॥ १६ ॥ स० ॥
तेहवइं तेहनी नारि ॥ स० ॥
वाहिरथी असूरी आवी ते घरे रे लो ॥ स० ॥
रीस करी भरतार ॥ स० ॥
अस्त्रीनइ गाली दे ऊठ्यउ वहुपरे रे लो ॥ २० ॥ स० ॥
रे रे निरलज नारि ॥ स० ॥
तुं इतरी वेला लगि वाहिर किम रही रे लो ॥ स० ॥
पइंसिवा नहि द्युंमांहि ॥ स० ॥
हुं नहिं छुं राम सरिखउ तुं जाणे सही रे लो ॥ २१ ॥ स० ॥
सुणि कुवचन श्रीराम ॥ स० ॥
चिंतविवा लागा मुझ देखोद्य मेहणो रे लो ॥ स० ॥
खत ऊपरि जिम खार ॥ स० ॥
दुखमाहे दुख लागो राम नइ अति घणो रे लो ॥ २२ ॥ स० ॥
राम विचास्यो एम ॥ स० ॥
अंपजस किम लोकां मांहि एहवउ ऊछल्यो रे लो ॥ स० ॥
सीता एहवी होइ ॥ स० ॥
सहु कोई वोलइ लोक कुजस टोले मिल्यो रे लो ॥ २३ ॥ स० ॥
पर घर भंजा लोक ॥ स० ॥
गुण छोडी अवगुण एक वोलइं पारका रे लो ॥ स० ॥

चालणि मइदउ मुंकि ॥ स० ॥
छाती नइ थूला देखाडइ असारका रे लो ॥ २४ ॥ स० ॥
ते को नहीय उपाय ॥ स० ॥
दुसमण नउ किणही परि चित्त रंजीजीयइ रे लो ॥ स० ॥
सूरिज पणि न सुहाइ ॥ स० ॥
घुयड नइं रातइं केही परि कीजीयइ रे लो ॥ २५ ॥स०॥
सीत नो पालण आगि ॥ स० ॥
तावड नो पणि पालण ताढी छाहडी रे लो ॥ स० ॥
तरस नो पालण नीर ॥ स० ॥
माणस ना अवेसास पालण वांहडी रे लो ॥ २६ ॥ स० ॥
सहु ना पालण एम ॥ स० ॥
पणि दुरजण ना मुखनो पालन को नही रे लो ॥ स० ॥
साचउ साचइ[1] भूठ ॥ स० ॥
मइं मइलो माहरो कुल वंस कियो सही रे लो ॥ २७ ॥ स० ॥
कुजस कलंक्यो आप ॥ स० ॥
अजीतांई सीता नइ छोडुं तउ भली रे लो ॥ स० ॥
इम चिंतवतां राम ॥ स० ॥
इण अवसरि आव्या तिहां लखमण मन रली रे लो ॥ २८ ॥स०॥
चिंतातुर श्रीराम ॥ स० ॥
देखीनइ दुख कारण लखमण पूछीयइ रे लो ॥ स० ॥

१—मावइ।

तुम्ह सरिखा पणिसूर ॥ स० ॥
सोचा नइं चिंता करि मुख विलखो कियो रे लो ॥ २९ ॥ स० ॥
कहिवा सरिखउ होइ ॥ स० ॥
तउ मुझनइं परमारथ बांधव दाखीयइ रे लो ॥ स० ॥
राम कहइ सुणि वीर ॥ स० ॥
तेस्यु छइ जे तुम्ह थी छानो राखियइ रे लो ॥ ३० ॥ स० ॥
लोग तणउ अपवाद ॥ स० स० ॥
सीतानो सगली वात ते रामइ कही रे लो । स०
रावण लंपट राय ॥ स० स० ॥
सीता तिहा सीलवंतो कहि ते किम रही रे लो ॥ ३१ ॥
एहवी साभलि वात ॥ स० स० ॥
कोपातुर लखमण कहइं लोको साभलो रे लो । स० ।
सीता नउ अपवाद ॥ स० स० ॥
जे कहिस्यइ तेहनउ हुँ मारि त्रोडिसी तलो रे लो ॥३२॥ स०
राम कहइ सुणि वच्छ ॥ स० स० ॥
लोकां ना मुहडा तउ वोक समा कह्या रे लो । स० ।
किम मुदीजइ तेह ॥ स० स० ॥
कुवचन पणि लोकां ना किम जायइं सह्या रे लो ॥३३॥ स०
सुणउ लखमण कहइ राम ॥ स० स० ॥
झख मारइ नगरी ना लोक अभागियो रे लो । स० ।
साचउ सीता सील ॥ स० स०॥
ए वात नउ परमेसर थास्यइ साखियो रे लो ॥ ३४॥ स०

जउ पणि वात छइ एम ॥ स० स० ॥
तउ पणि विण छोड्या मुझ अपजस नूतरइ रे लो । स० ।
इण परि चित्त विचारि ॥ स० स० ॥
वात सहु न्याई राम सुणिज्यो जे करइ रे लो ॥३५॥
पहिली ढाल रसाल ॥ स० स० ॥
साभलतां सुवडा नउ हीयडउ गहगहइ रे लो । स० ।
कीधा करम कठोर ॥ स० स० ॥
विण वेयां छूटइ कुण समयसुंदर कहइ रे लो ॥ ३६ ॥ स०

सर्वगाथा ॥५० ॥

दूहा २६

लखमण तउ वार्‌या घणुं, पणि न रह्या श्रीराम ।
तुरत बोलायउ सारथी, जसु कृतांतमुख नाम ॥१॥
रे रे सुणि तु सारथी, सीता वहिलि वइसारि ।
छोडि आवि तुं एहनइ, अटवी डंडाकार ॥२॥
लोक मांहि तु इम कहेइ, डोहला पूरण काजि ।
तीरथनी जात्रा भणी, ले जाउं छुं आज ॥३॥
राम वचन मांनी करी, सारथि सीता पासि ।
आवी नइ इम वीनवइं, देवि सुणउ अरदास ॥४॥
मुझ आदेश दियउ इसो, श्रीरामइ सुणि मात ।
सीता डोहलो पूरि तूं, तीरथ जात्र सुहात ॥५॥
रथ वइसउ तुम्हे मातजी, सीता गुणि नउकार ।
रथ वइसी चाली तुरत, ले अरिहंत आधार ॥६॥

सारथि थयउ उतावलो, खेड्यो पवन नइ वेगि ।
सीता समझि पडइ नहीं, पणि मन मइं उद्वेग ॥७॥

आगइ जातां देखीयो, सूका रूंख नी डालि ।
कालउ काग करुंकतो, पांख वे ऊँची वालि ॥८॥

नारी वलि निरखी तिहां, करति कोडि विलाप ।
रवि साम्ही ऊभी रही, छूटे केस कलाप ॥९॥

फेकरी पणि बोलती, सुणि सीतायइं कानि ।
अशुभ जणावइ अपशकुन, निरती वाद निदान ॥१०॥

भवितव्यता टलिस्यइ नहीं, किसी करुं हिव सोच ।
गाम नगर गिरि निरखती, चली चित्त संकोच ॥११॥

पहुती सीता अनुक्रमइ, अटवी माहि उदास ।
अंब कदंबक आंबिली, ऊँचा ताल आकास ॥१२॥

चांपउ मरुयउ केवडउ, कुंद अनइ मचकुंद ।
खयर खजूरी नारियल, बकुल अनइ अरविंद ॥१३॥

भार अढार वनस्पति, गुहिर गभीर कराल ।
सीह बाघ नइ चीतरा, भीषण शबद भयाल ॥१४॥

एहवी अटवी देखती, कहइ सारथि नइं एम ।
किम आंणी मुझ एकली, राम न दीसइं केम ॥१५॥

नहिं पूठइ परिवार को, ए कुण बात विचार ।
कहइ सारथि पूठइ थकी, आविस्यइ तुझ परिवार ॥१६॥

मत चिंता करइं मातजी, इणि परि धीरप देइ।
नदी लांघि पइलइ तटइं, गयो सीत नइं लेइ ॥१७॥

रथ थी ऊतारी करी, कहइ सारथि कर जोडि।
आंखें आंसू नाखतो, वइसि इहाँ रथ छोडि ॥१८॥

हीन भाग्य सीता निसुणि, वात किसी कहुँ तुज्झ।
रामचंद रुठइ थकइं, हुक्म कीयो ए मुज्झ ॥१९॥

सीता नइं तुं छांडिजो, अटवी डंडाकार।
सीता एह वचन सुण्यो, लागो वज्र प्रहार ॥२०॥

मुरछागत धरणी पडी, वलि खिण थई सचेत।
कहि रे सारथि मुज्झ नइं, इहा आणी किण हेत ॥२१॥

कहि रे अयोध्या केतलइं, जई नइं आपुं साच।
सारथि कहइ अलगी रही, राम नी विरुई वाच ॥२२॥

राम कृतांत जिसउ कुप्यो, न जुयइ साम्हउ तुज्झ।
कठिन करम आया उदय, तुं छोडी वन मज्झि ॥२३॥

हुं निरदय हुं पापीयो, जे करुं एहवो काम।
कीधा विण पणि किम सरइं, सामि रीसायइ राम ॥२४॥

चाकर कूकर सारिखा, धिग ए सेवा वृत्ति।
सामि हुकम मारइ सयण, बांप नइं बांधव झत्ति ॥२५॥

सीता छोड़ी रांन मइं, सारथि पाछउ जाइ।
विरह विलाप सीता किया, ते केतला कहवाय ॥२६॥

सर्वगाथा ॥७६॥

ढाल बीजी

॥ राग मारुणी ॥

झांखर दीवा न वलइ रे कालरि कमल न होइ।
छोरि मूरिख मेरी वाहडिया, मींया जोरइंजी प्रीति न जोइ।
कन्हइया वे यार लवासिंया, जोवन जासिया वे, वहुर न आसिया।
ए गीतनी ढाल। ए गीत सिंघ माहे प्रसिद्ध छइ।

सीता विलाप इसा करइ रे, रोती रांन मझारि।
विण अपराध का वालहा, मुँनइं छोडी डंडाकार ॥१॥
पियारा हो वाल्हेसर रामजी, इम किम कीजयइ हो,
छेह न दीजयइ ॥ आकणी ॥
हा वल्लभ हा नाहला रे, हा राघव कुलचंद।
मुझ अवला नइ एवडउ, तइ का दीधउ दुखदंद ॥२॥ पि०
विण पति विण परिवार हुँ रे, किम रहुँ अटवी मॉहि।
कुण सरणो मुझ नइं हिवइ रे, जा रे जीवित्त जाहि ॥३॥ पि०
सावासि लखमण तुज्झ नइं रे, कां तइ उपेक्षा कीध।
तुं माहरो सील जाणतो का, राम नइं हटकि न लीध ॥४॥ पि०
भउजाई नइं वालहो रे, देउर हासा ठाम।
तुझ सुं पणि कहि मइं कदे रे, हासो कीधो सकाम ॥५॥ पि०
हे तात तइं राखी नहीं रे, हे भामंडल भाइ।
सासरइ पहिड्यइ पाधरी रे, अस्त्री पीहरि जाइ ॥६॥ पि०
तउ पणि तात राखो नहीं रे, नाण्यो पुत्री सनेह।
पहिड्या पीहर सासरा रे, मुझ संकट पड्यो एह ॥७॥ पि०

स्नेह भंग कीधउ नहीं रे, अविनय न कीयउ कोइ ।
सरदहजे मत सुंहणइं, पियु सील खड्यउ पणि होइ ॥८॥ पि०
अथवा कत तुम्हें कदे रे, विण अविचार्यो काज ।
कीधो नहिं पणि माहरा के, पाप प्रगट थया आज ॥९॥पि०॥
अथवा मइं भवि पाछिलइं रे, व्रत भागउ चिर पालि ।
रतन उदाल्यो केहनउ के, मां थो विछोह्या बाल ॥१०॥पि०॥
अथवा किणही साध नइं रे, दीधो कुडउ आल ।
अस्त्री नइं भरतारसुं मइं, पाड्यो विछोहउ विचाल ॥११॥पि०॥
एहवा पाप कीधा घणारे, तिण ए अवस्था लाध ।
नहिं तरि मुझनइं वालहउ किम, छोडइ विण अपराध ॥१२॥पि०॥
अथवा दोस देऊं किसा रे, नहिं छइ केहनो दोस ।
दोस छइ माहरा कर्म्म नो, हिव रांम सुं केहो रोस ॥१३॥पि०॥
कीधा करम न छूटीयइ रे, विण भोगव्या कदेय ।
तीर्थङ्कर चक्रवर्ति पणि सहु, भोगवि छूटा तेय ॥१४॥पि०॥
सुख दुख केहनइ को न द्यइं रे, छइ अपना किया कर्म्म ।
दोस नहीं हिव केहनो रे, वात तणो ए मर्म्म ॥१५॥पि०॥
धन धन नारी ते भली रे, तेहनो जनम प्रमाण ।
बालपणइ संयम लीयो जिण, छोड्यो प्रेम बंधाण ॥१६॥पि०॥
प्रेम कादम खूता नहीं रे, विषय थकी मन वालि ।
काज समार्‌या आपणा रे, तेहनइं वादुं त्रिकाल ॥१७॥पि०॥
इम विलाप करती थकी रे, सीता रान मझार ।
तिहां बीहती बइसी रही रे, समरंती नउकार ॥१८॥पि०॥

पुंडरीकपुर राजीयो रे, वज्रजंघ जसु नाम।
गज झालण तिहां आवियो रे, तसु नर आया तिण ठाम ॥१९॥पि०॥
तिण दीठी रोती तिहा रे, सीता दुखिणी नारि।
पणि रूपइ अति रूयडी रे, झरंती लावण्य धार ॥२०॥पि०॥
देखी सीता ते चिंतवइ, किं इंद्राणी एह।
किंवा पाताल सुन्दरी रे, किंवा अपछर तेह ॥२१॥ पि०॥
किंवा कंद्रप नी प्रिया रे, अचरजि थयो अपार।
जई राजा नइं वीनव्यो रे, सीता सकल प्रकार ॥२२॥पि०॥
सुणि राजा चाल्यो तिहा रे, सबद सुण्यो आसन्न।
कहइ राजा काईक छइ रे, एतो नारि रतन्न ॥२३॥पि०॥
राजा नी अंतेउरी रे, गर्भवती छइ काइ।
स्वर लक्षण करि अटकली रे, किणि कारण इहां आइ ॥२४॥पि०॥
इम कहिनइं नृप मूकिया रे, निज नर सीता अंति।
ते देखी नर आवता रे, सीता थई भयभ्रंति ॥२५॥पि०॥
थरहर लागी कांपिवा रे, आभ्रण दूरि उतारि।
मत छिवजो मुझ नारि नइं रे, इम कहइ सीता नारि ॥२६॥पि०॥
ते कहइ आभ्रण को न ल्यइ रे, नहिं को केहनइ काम।
अम्हनइं वज्रजंघ मुंकिया रे, कुण ए किम इण ठाम ॥२७॥पि०॥
कुण तुं केहनी कामिनी रे, किम एकली रही ऐथि।
इम पूछतां आवियो रे, वज्रजंघ पणि तेथि ॥२८॥पि०॥
देखी विसमय पामीयो रे, ऐ ऐ रूप अपार।
हा हा किम ए कामिनी रे, दुखिणी एण प्रकार ॥२९॥पि०॥

कहइ राजा जे पापीयो रे, अस्त्री एह रतन्न ।
इहा मुंकीनइ घरे गयो रे, वंज्रमय तेहनो मन्न ॥३०॥पि०॥
राजा वइसी पूछीयो रे, किण छोडी इण ठाम ।
तइं अपराध किसो कियो रे, कहि आपणो तुं नाम ॥३१॥पि०॥
सोकातुर बोलइ नहीं रे, सीता नारि लिगार ।
मतिसागर मुंहतो कहइ रे, सुणि सुंदरि सुविचार ॥३२॥ पि०॥
सोक मुंकि तुं सवेथा रे, ए संसार असार ।
खिणभंगुर ए भाव छइ रे, जीवित अथिर अपार ॥३३॥पि०॥
लखमी पणि चंचल घणुं रे, जाणे गंग तरंग ।
भोग संयोग ते सुंहणो रे, विहडइ प्रीतम संग ॥३४॥पि०॥
भव माहे भमता थका रे, केहनइ दुखु न होइ ।
केहनइ रोग न ऊपजइ रे, वाल्हउ विहडइ सोइ ॥३५॥पि०॥
सुख दुख सउ नइं सरिखा रे, म करि तुं दुखु लिगार ।
धीरपणो मन मइं धरी रे, बोलि तुं बोल विचार ॥३६॥पि०॥
सामी एह छइ माहरो रे, वज्रजंघ जसु नाम ।
पुडरीकपुर राजीयो रे, जिन धरमी अभिराम । ३७॥पि०॥
पर उपगार सिरोमणी रे, महाभाग दातार ।
दृढ समकित धर दृढव्रती रे, अति उत्तम आचार ॥३८॥पि०॥
ए अति उत्तम साहमी रे, साहमीवच्छल एह ।
एहनी संगति तुज्भनइं रे, आविस्यइ दुखु नउ छेह ॥३९॥पि०॥
ते भणी एहसुं बोलि तुं रे, कहि अपणी तुं वात ।
इम मंत्री समभावतां रे, सीता ऊपनी सात ॥४०॥पि०॥

साह्मी सबद सुणी करी रे, हरषी हीयडइ मुज्झ।
कर जोडी सीता कहइ रे, साह्मी वंदना तुज्झ ॥४१॥पि०॥

सीता वात सहु कही रे, अपनी आमूल चूल।
जिम रावण गयो अपहरी रे, राम हुवो प्रतिकूल ॥४२॥पि०॥

सउकि लोक अपजस सुणी रे, राम मुंकी वनवास।
वात कहइ रोती थकी रे, नाखंती नीसास ॥४३॥पि०॥

वात सुणी सीता तणी रे, वज्रजघ कहइ एह।
हे रमणी तुं रोइ मा रे, कारिमो कुटंब सनेह ॥४४॥पि०॥

कहि संसारमइ कुण सुखी रे, नारिकि ना दुख होइ।
कुंभीपाक पचावणो रे, ताडना तर्जना जोइ ॥४५ ॥पि०॥

तिरजंच दुख सहइ बापडा रे, भूख त्रिषा सी ताप।
भार वहइ परिवस पड्या रे, करता कोडि विलाप ॥४६॥पि०॥

देवता पणि दुखिया कह्या रे, विरह वियोग विकार।
एक एकनी अस्त्री हरइ रे, मुहकम मारामारि ॥४७॥पि०॥

मनुष्यतणी गति मइं कह्या रे, विरह वियोग ना दुक्ख।
जनम मरण वेदन जरा रे, ताडन तर्जन तिक्ख ॥४८॥पि०॥

आंप थकी तुं जोइनइं रे, सुख दुख हुयइ जग माहि।
भव वन महि भमतां थकां रे, कदि तावड कदि छांह ॥४९॥पि०॥

ए संसार सरूप छइ रे, जांणिनइं तुं जीव वालि।
धरम वहिनि तुं माहरइ रे, सील सुधइ मनि पालि ॥५०॥पि०॥

चालि नगर तुं माहरइ रे, दुखु जलंजल देहि।
जिनध्रम करि बइठी थकी रे, नरभवनो फल लेहि ॥५१॥पि०॥
पछइ करे तुं ताहरइ रे, जे मनि मांनइ तेह।
सीता बांधव जाणि नइं रे, इम बोलइ सुसनेह ॥५२॥पि०॥
हे बांधव तुं माहरउ रे, मइं तुझ सरणो कीध।
वज्रजंघ नृप पालखी रे, तुरत अणावी दीध ॥५३॥पि०॥
पइसारो सबलो करी रे, पुंडरीकपुर मांहि।
सीता आंणी आवासमइं रे, अंगइ अधिक उछाह ॥५४॥पि०॥
बीजी ढाल पूरी थई रे, आठमा खंडनी एह।
समयसुन्दर कहि कारिमो रे, अस्त्री पुरुष नो नेह ॥५५॥पि०॥

सर्वगाथा ॥ १३१ ॥

दूहा १५

नगर लोके सीता तणो, देखी रूप उदार।
अचरजि पामी चित्त मइं, बोलइ विविध प्रकार ॥१॥
के कहइ गुण अवगुण तणों, भेद न जाणइ राम।
दुरलंभ देवा नइं जिका, ते सीता तजी आम ॥२॥
पुण्यहीन पामी थकी, भोगवि न सकइ लच्छि।
रतन रहइ किहांथी घरे, आवणहार अलच्छि ॥३॥
के कहइ अस्त्री एहवो, रे रे दैव सुणेइ।
जउ द्यइ मांग्यो रूप तो, तो सीता सरिखो देइ ॥४॥
दूषण संभावीजतो, नहि छइ इण मइं कोइ।
पिण दुसमण किणही दीयो, आल इसो छिद्र जोइ ॥५॥

वज्रजंघ राजा घणो, दीधो आदर मान ।
स्नान मज्जन भोजन भला, संतोषी सुविधान ॥६॥

महुल दीयो रहिवा भणी, धण कण रिद्धि समृद्धि ।
दासी दास दीया घणा, रहइ तिहा सुप्रसिद्ध ॥७॥

भाग्यवंत जायइ जिहा, रान वेलाउल तेथि ।
पुण्य किया पहड़इ नही, सुख लहइ सीता एथि ॥८॥

हिव कृतांत मुख सारथी, सीता नइं वन छोडि ।
रांमचंद आगइ कही, वात सहू कर जोडि ॥९॥

नदी लाघि जिम ऊतरया, जिम छोडी वन माहि ।
जिम मुरछाणी जिम थई, वली सचेत निरुछाह ॥१०॥

रोती मृग रोवरावीया, वलि तुम्ह नइ कह्यो एम ॥
सीता ना मुखथी कहुं, भूठ कहुं तो नेम ॥११॥

जेम परीक्षा विण कीया, मुम्ह नइ छोड़ी रत्न ।
तिम मत छोडे कंत तुं, श्री जिन धरम रतन्न ॥१२॥

वलि अपराध अजाणती, मइं कोइ कीधो होइ ।
मिलियइ कइ मिलियइ नही, प्रीतम खमिजो सोइ ॥१३॥

रामचंद इम साभली, सीता तणा वचन्न ।
गुण ग्रहतो गहिलो थयो, रामचंद नो मन्न ॥१४॥

वज्राहत धरणी पड्यो, मूर्छागत थयो राम ।
विरह विलाप करइ घणा, थयो सचेतन जाम ॥१५॥

सर्वगाथा ॥१४६॥

ढाल त्रीजी

॥ नोखा रा गीत नी जाति ॥

मारूयाड, ढूढाड़ मइं प्रसिद्ध छइ

राग—मल्हार

हा चंद्रवदनी हा मृगलोयणी, हा गोरी गजगेलि।

चतुर सुजाण रे सीता नारि, कनक कलस जिसा॥

पयोधर जुग तिसा हा! मनमोहनि वेलि॥१॥

चतुर सुजाण रे सीता नारि, महुल पधारो रे सी०।

विरह निवारो रे सी०।

निसि सूतांनींद नावइं, दिवसइं अन्न न भावइं।

तुं मुझ जीवन प्रांण॥च०। भा०।

केसरि कटि लंकाली कामिनी, वचन सुधारस रेलि। च०।

अपछर साक्षात एह, प्रीतम सुं सुसनेह॥ च०

गुण ताहरा चीतारुं केता, हालति चालति ढेलि॥२॥ च०

प्रियभाषिणी प्रीतम गुणरागिणी, सुघड़ घणुं सुविनीत। च०

नाटक गीत विनोद सहू मुझ, तुझविण नावइ चीत॥३॥ च०

सयने रंभा विलासी, गृहकाम काज दासी, माता अविहड़ नेह।

मंत्रिवी बुद्धि निधान।

धरित्री क्षमा निधान, सकल कला गुण गेह॥४॥ च०

गुण ताहरा चीतारुं केता, तुझ सम नहिं को संसारि। च०

हा हुं हिव कहउ कदि देखिसि, सीता मुख सुखकार॥५॥ च०

अस्त्रीरतन किहां रहइ माहरइ, हा हा हुं पुण्यहीन। च०

तुझ विण सूनो राज अम्हारो, वचन कहइ मुख दीन॥६॥ च०

धिग-धिग मूढ सिरोमणि हुं थयो, दुख तणी महाखाणि । च०
दुरजण सोके तणे दुरवचने, हुई हांसी घरि हाणि ॥७॥ च०
हा हा रतन पड्यो हाथां थी, किम लाभइं कहउ एह । च०
जे नर लोक तणइं कहइं लागइं, हाथ घसइ पछइ तेह ॥८॥ च०
ते रूप ते सील ते गति ते मति, ते विनय विवेक विचार। च०
सीता मांहि जिके गुण दीठा, ते नहीं किहा निरधार ॥९॥ च०
कदि जीवती सीता नइ देखिसि, धन वेला घडी साइ । च०
किम एकली रहती हुस्यइ रन मइ, कोइ जीव नाखिस्यइ खाइ ॥१०॥च०
स्वापद जीव थकी जो जीवति, छूटिस्यइ सीता नारि। च०
तो पणि माहरो विरह मारिस्यइ, जीविस्यइ केण प्रकारि ॥११॥च०
इम विलाप करता तिहा आयो, लखमण राम नइं पासि ।
दुखु म करि धरि धीरप वाधव, सुणि मोरी अरदास ॥१२॥ च०
जिण जीवनै सरिज्यो हुयइ जे दुख, ते दुख तेहनइ होइ । च०
छट्ठी राति लिख्या जे अक्षर, कुण मिटावइ सोइ ॥१३॥ च०
इण परि अति समझाव्यो लखमण, अलप सोग थयो राम ।
नगरी दुखु करइ सीता नइं, समरि समरि गुण ग्राम ॥१४॥ च०
फिट-फिट देव विधाता तुझ नइं, कुण कीधो ए काम । च०
कां तइं कष्ट सती सीता नइं, इवडो दीधो आम ॥१५॥ च०
नगर माहि अस्त्री नो मंडण, रूप सील अभिराम । च०
सीता एक हुंती ते काढी, कुण कीधो तइं काम ॥१६॥ च०
नगरी लोक निषेध्या सगला, गीत विनोद प्रभूत । च०
राम कहइ लखमण करो सगलो, सीता प्रेत क्रतून ॥१७॥ च०

देव पूजो मुनिवर नइं वादो, सोग मूँको परहो आज। च०
सीता गुण समरंतउ वरतइ, रामचंद करइ राज ॥१८॥ च०
कितरेके दिवसे पड्यो ओछो, सीता ऊपरि राग।
पाच दिवस हुवइ प्रेम नो रणको, पछइ दरसण लगि लाग ॥१६॥ च०
त्रीजी ढाल पूरी थई इतरइं, आठमा खंड नी एह। च०
समयसुंदर कहइं ते दुख पामइं, जे करइं अधिक सनेह ॥२०॥ च०

सर्वगाथा ॥१६६॥

दूहा २३

वज्रजंघ राजा घरे, रहती सीता नारि।
गर्भलिंग परगट थया, पांडुर गाल[1] प्रकार ॥१॥

थण मुखि श्याम पणो थयो, गुरु नितंब गति मंद।
नयन सनेहाला थया, मुखि अमृत रस विंद ॥२॥

सुपन भला देखइ सदा, पेखइ पंजर सींह।
गर्भ प्रभावइ ऊपजइ, सुभ डोहला सुदीह ॥३॥

पूरे मासे जनमिया, पुत्र युगल अति सार।
देखी देवकुमार जिसा, हरखी सीता नारि ॥४॥

वज्रजंघ राजा किया, वद्धावणा प्रगट्ट।
उछव महोच्छव अति घणा, गीत गान गहगट्ट ॥५॥

सहु कुटंब संतोषीयो, भोजन भगति जुगत्ति।
सखर दसूठण तिहां, राजा यथा सकत्ति ॥६॥

१—सातमी। २—नाल।

अनंगलवण एहवो दीयो, प्रथम पुत्रना नाम
मदनांकुस बीजा तणो, नाम दीयो अभिराम ॥७॥
माता माथइं मुंकिया, सरसव रक्षा काजि।
सुखइ समाधि वधइ तिहा, वे भाई बहु साजि ॥८॥
इण अवसरि तिहां आवीयो, विद्या वल सपन्न।
नाम सिद्धारथ जोतिषी, खुल्लक अति सुप्रसन्न ॥९॥
तीरथ चैत्य जुहार नइं, आवइ निज आवास।
खिण माहे साधक खरउ, ते ऊडइ आकास ॥१०॥
ते आयो भिक्षा भणी, सीता मंदिर मांहि।
करि प्रणाम पडिलाभियो, आणी अधिक उछाह ॥११॥
भली परइठ भोजन कियो, खुसी थयो सुविशेष।
सीतानइं पूछइ इसुँ, वेटा वेउं देखि ॥१२॥
कहि वालक ए केहना, कहइ सीता विरतांत।
आंखे सांसु नाखती, जिम छोडी निज कात ॥१३॥
म करि दुखु खुल्लक[1] कहइ, बखतवंत ए पुत्र।
तुं पणि सुख पामिसि सही, सगलो हुस्यइ ससुत्र ॥१४॥
जाण प्रवीण कुमर थया, वहुत्तरि कला निधान।
सुरवीर अति साहसी, सुंदर रूप जुवान ॥१५॥
वज्रजंघ राजेन्द्र पणि, निज कन्या सुजगीस।
दीधी लवणाकुस भणी, ससिचूलादि बत्रीसि ॥१६॥

१—लिगार तु ।

मदनांकुस पाणिग्रहण, एकठो करण निमित्त ।
मुंक्यो दूत उतावलो, पृथिवीपुर संपत्त ॥१७॥
पृथु राजा तिहां राजीयो, कनकमाला तसु धूय ।
वज्रजंघ मागइ नृपति, अंकुस नइं कहइ दूय[1] ॥१८॥
वचन सुणी राज्या कुप्यो, कहइ साभलि रे दूत ।
कुल अगन्यात नइं कुण दियइ, निज कन्या रजपूत ॥१९॥
तुझ नइं इम कहतइ थकइं, जीभ छेदण नो दंड ।
पणि अवध्य कह्या दूत नर, एहवी नीत अखंड ॥२०॥
दोठइ मारगि जा परो, कहि सामी नइं जाइ ।
पृथु पुत्री आपइ नहीं, करि तुझ थी जे थाय ॥२१॥
वज्रजंघ राजा भणी, कह्यो दूत विरतांत ।
लागउ तेहना देस नइ, लूटण भणी अश्रांत ॥२२॥
सुणी देस निज भाजतो, मुंक्यो वज्रथ राय ।
वज्रजघ ते वांधीयो, विढतो साम्हो थाय[2] ॥२३॥

सर्वगाथा ॥१८६॥

ढाल ४

चउपई नी

पृथु राजा सामग्री मेलि, रण निमित्त उठ्यो तिण वेलि ।
वज्रजंघ सुत तेडावीया, ते पणि तुरत उठी धावीया ॥१॥
रण निमित्त वजडावी भेरि, सुभट मिल्या सव चिहुं दिसि घेरि ।
लवण अंकुस पणि चाल्या साथि, सूरवीर नहीं किण ही रइ हाथि ॥२॥

१—देय ।   २—वाय

कहइ मात बालक छो तुम्हे, तुम्ह आधार वइठां छां अम्हे ।
चउकडिया गाडा नो भार, बछड़ा किम निरवहइ निरधार ।।३।।
तिण कारण तुम्हे वइठा रहउ, मातो नो जीवित निरवहउ ।
कहइ पुत्र तूं बोलइ किसुं, एहवुं वचन दयामणि जिसुं[1] ।।४।।
बडा लहुडा नो किसो विचार, लहुडा पणि करइं काज अपार ।
अंकुस लघु पणि गज वसि करइ, लहुडउ वज्र पणि गिरि अपहरइ ।।५।।
दीवउ लहुडो पणि तम हरइ, साप फुंवइ तो माणस मरइ ।
गज भाजइ हरि नो छावडो, तेज प्रताप वडो तेवडो ।।६।।
पुत्र तणी सुणि एहवी वात, आसीस दीधी पुत्र नइं मात ।
करि संग्राम नइं जस पामिज्यो, कुसले खेमे घेरि आविज्यो ।।७।।
कुमरे स्नान मज्जन सहु कीया, भोजन करि आभ्रण पहिरीया ।
जरह जोत नइं सिरि ऊपरि टोप, रण चढता रो बाध्यो कोप ।।८।।
माता नइं कीधो परणाम, लीधो सिद्धि तणो वलि नाम ।
रथ ऊपरि वइठा ते सूर, वजडाया चढता रण तूर ।।९।।
दिवस अढी ना चाल्या गया, वज्रजंघ नइं भेला थया ।
अणीए अणी कटक बे मिल्या, माहोमाहि सुभट ऊछल्या ।।१०।।
सवल थयो भारथ संग्राम, तेह मइ वर्ण्यो घणी हि ठाम ।
त्रुटि पड्या लव अंकुस वेइ, सत्रु सुं सवलो वेढि करेइ ।।११।।
सिहनाद नासइ गज घटा, तिम नाठा वयरी उतकटा ।
अज्ञात वंस बल देखो रही, कुमर कहइ का जावउ वही ।।१२।।

१—इसु ।

सकल कटक भागो देखियो, कुमर पराक्रम थी चमकीयो ।
पृथु राजा आवी नइं मिल्यो, सहु संताप हिव अलगो टलो ॥१३॥
निज अपराध खमावइ राय, प्रौढ़ पराक्रम वंस जणाय ।
उत्तम कुलि उपन्ना तुम्हे, ए वात जाणी निश्चय अम्हे ॥१४॥
वज्रजंघ नइ पृथु राजान, माहोमाहि मिल्या बहु मान ।
एहवइ नारद रिषि आवियो, सगलाही नइं मनि भावियो ॥१५॥
वज्रजंघ पूछी उतपत्ति, कुमर तणी नारद कहइ भत्ति ।
सूरिज वंसी एह कुमार, सीता राम थकी अवतार ॥१६॥
नि.कलंक सीता नइं आल, लोके दीधो थयो जंजाल ।
अपजस राखण भणी अपार, रामइं मुंकी डंडाकार ॥१७॥
एहवा कुमर तणा अवदात, सहु हरखित थई नइं कहइ वात ।
सींहणि ना सींह एहवा होइ, जुगत पराक्रम एहनो जोइ ॥१८॥
रिषि नइ पूछ्यो कुमर हजूरि, नगरी अयोध्या केती दूरि ।
सो जोयण ते इहा थी होइ, कहइ नारद जाणइ सहु कोइ ॥१६॥
जिहा तुम्ह पिता रहइं श्रीराम, काको लखमण पणि तिण ठाम ।
कुमर वात सुणी कोपीया, दाखिण वाप तणा लोपीया ॥२०॥
मात अम्हारी छोड़ी राम, कुण अखत्र कीधो इण काम ।
वज्रजंघ सुणो वीनती, लव कहइ सज्ज थावो अम्ह वती ॥२१॥
नगर अयोध्या जास्या अम्हे, मदत अम्हारी करिज्यो तुम्हे ।
जुद्ध करी नइं लेस्या वयर, आजथो को छोडइ नहीं वयर ॥ २२ ॥
वज्रजंघ कहइ प्रस्तावि, सर्व हुस्यइ सुसता[1] समभावि ।
एहवइं पृथु पुत्री आपणी, कनकमाला दीधी कुस भणी ॥ २३ ॥

१—सम सासतइ सभावि ।

परणावी आडम्बर घणइं, केइक दिवस रह्या सुखपणइं ।
इहांथी चाल्या कुमर अवीह, साहसीक सादूला सीह ॥ २४ ॥
देस प्रदेस तणा राजान, हटकि मनावी अपणी आण ।
गंगा सिंधु नदी ऊतरी, साध्या देस दिसोदिस फिरी ॥ २५ ॥
कासमीर काबलि खंधार, गिरि कैलास तणा वसणार ।
जवन सबर बव्बर सकराय, सहु साध्या वज्रजंघ सहाय ॥ २६ ॥
सगले ठामे जय पामीया, कुसले खेमे घरि आवीया ।
पइसारो कीधो परगट्ट, नगर माहि थया गहगट्ट ॥ २७ ॥
माता नइं कीधो परणाम, हीयडइ माता भीड्या ताम ।
पाछली सगली पूछी वात, वज्रजंघ कह्या अवदात ॥ २८ ॥
हय गय रथ पायक परवार, तेह तणो लाभइ नहिं पार ।
राजा चाकरी करइ हजूर, कुस लव केरो प्रवल प्रडूर ॥ २९ ॥
रूपवंत नइं रलियामणा, कुस लव वेऊं सोहामणा ।
राज रिद्धि गई अतिहि वाधि, वे भाई रहइ सुखइ समाधि ॥ ३० ॥
आठमा खंड नी चउथी ढाल, कह्यो कुस लव संबन्ध विचाल ।
समयसुंदर कहइ हुयइ जो पुण्य, राजरिद्धि पामीयइ अगण्य ॥ ३१ ॥

सर्वगाथा ॥२२०॥

दूहा १८

वलि आव्यो नारद तिहां, अन्य दिवस रिपिराय ।
आदर मान घणो दीयो, कुस लव ऊभे थाय ॥ १ ॥
इम नारद आसीस द्यइ, सीझो वंछित काज ।
लखमण राम तणा तुम्हें, लहिज्यो अविचल राज ॥ २ ॥

कुमर कहइ नारद कहउ, कुण ते लखमण राम ।
वली वात कहि पाछिली, नगरी नाम नइं ठाम ॥ ३ ॥
कुमर वेउ कोपइ चड्या, करिस्या रांम सुं वेढि ।
लेस्यां वयर माता तणो, रण मइं नाखिस्या रेढि ॥४॥
वज्रजंघ नइं जई कह्यो, अम्हे जावां छां तेथि ।
कहइ वज्रजंघ जय पामि नइं, वहिला आविज्यो एथि ॥ ५ ॥
तुरत भेरि वजवाइ नइं, कुमर चड्या कोपाल ।
हय गय रथ सेना सजी, मिलया सीमाल भूपाल ॥ ६ ॥
आडम्बर सुं चालता, सुणि सीता निज वात ।
रामचन्द प्रियु गुण समरि, मन मइं दुख न मात ॥ ७ ॥
सीता रोती इम कहइ, अनरथ होस्यइ एह ।
सिद्धारथ कहइ भय नहीं, गुण ऊपजिस्यइ छेह ॥ ८ ॥
कुमर कहइ माता प्रतइं, कां रोवइ हे माय ।
दीसइ दीन दयामणी, विलखइ वदन विछाय ॥ ९ ॥
तुझनइं कहि किण दूहवी, अथवा वेदन व्याधि ।
अम्हथी अविनय को हुवो, अथवा काई उपाधि ॥ १० ॥
कहइ सीता जे थे कह्या, कारण नहिं ते कोइ ।
पणि झूझो छो वाप सूं, ए मुझ नइं दुख होइ ॥ ११ ॥
वाप वेटा त्रिहु मांहि जे, भाजइ मरइ संग्राम ।
जिम तिम दुखु मुज्झ नइ, कुढग पड्यो ए काम ॥ १२ ॥
पुत्र कहइ सुणि मातजी, म करिसि दुख लिगार ।
राम अनइ लखमण प्रतइ, नहिं मारुं निरधार ॥ १३ ॥

पणि सेना भांजिस सही, करिसि मान नो भंग।
तुं वइठी आणंद करि, सुणिजे जे करूं जंग ॥ १४ ॥
इम माता समझाविनइ, गज ऊपरि चड्या गेलि।
नगर अयोध्या सामुहा, कुमरे दीधी ठेलि[1] ॥ १५ ॥
दस हजार नर विषम सम, धरती करतां जाइ।
करि कुठार तरु छेदता, पूठइ सेना थाइ ॥ १६ ॥
कटक घणो किहां पार नहि, वहुला पडइ वाजार।
जोयण जोयण अन्तरतरइं[2], घइ मेल्हाण कुमार ॥ १७ ॥
नगर अयोध्या ढूकडा, जितरइ गया कुमार।
तितरइं खबरि किणइ कही, आया कटक अपार ॥ १८ ॥

सर्वगाथा ॥ २३८॥

ढाल ५

॥ राग तिलंग धन्यासिरी ॥

'कोइ पूछो वांमण जोसी रे, हरि को मिलण कदि होसी रे ॥ १ ॥
॥ एगीतनी ढाल ॥

केइ आया कटक परदेसी रे, राम की अयोध्या लेसी रे ॥ १ ॥ के०
कोप्यो राम कहइ कोई रे, अकाल मरणहार होई रे ॥ २ ॥ के०
राम हुकम सेवक नइं दीधो, सिह गरुड वाहन सज कीधो रे ॥३॥के०
सामंत भूपाल वोलाया रे, रामचंद पासइं मिलि आया रे ॥४॥ १०
अति सबल कटक राम पासइ रे, नारद देखी नइं विमासइ रे ॥५॥ के०
भामंडल पासइ रिषि जाई रे, सगली युद्ध वात सुणाई रे ॥६॥ के०

१—हेलि २—आतरइ।

जिम रामइं सीता काढी रे, वज्रजंघ सन्तोषी गाढी रे ॥ ७ ॥ के०
लव कुश बे बेटा जाया रे, तप तेज प्रताप सवाया रे ॥ ८ ॥ के०
तिण साध्या देस प्रदेसा रे, पणि माता ना मनि अंदेसा रे ॥ ६ ॥ के०
आपणइ बाप ऊपरि आया रे, कटकी करि साम्हा धाया रे ॥१०॥के०
मोटो मत अनरथ थाई रे, समभावइ तिहा कोइ जाई रे ॥११॥ के०
तुम्हनइं मइ वात जणावी रे, हिवइ जुगत कीजइ तिहां जाइ रे ॥१२॥
भामण्डल सुणनइ धायो रे, चित मांहे अचरज पायो रे ॥ १३ ॥ के०
उड्यउ ते तुरत आकासइ रे, आयो सीता नइ पासइ रे ॥ १४ ॥ के०
बाप बांधव नइ निरखी रे, सीता पणि अति घणुं हरखी रे ॥१५॥
ऊठी नइं साम्ही आवी रे, रोती ते वात जणावी रे ॥ १६ ॥ के०
माता पिता नइं भाई रे, कहइ दुख म करि तुं बाई रे ॥ १७ ॥ के०
तुझ अंगज जीपिवा लोचइ रे, पणि किम रांम सुं पहुचइ रे ॥ १७॥ के०
किम भुज सुं जलनिधि तरियै रे, आकास अंगुल किम भरियै रे ॥१६॥
मेरुगिरि त्राकडि कुण तोलइ रे, जलनिधि कुण राखइ कचोलइ रे ॥२०॥
चालो आपे तिहा जावां रे, सहु साथ नइं जई समभावां रे ॥२१॥के०
सीता नइं विमान बइसारी रे, चाल्यो ते अम्बरचारी रे ॥ २२ ॥ के०
जातां लागी नहि वारी रे, लेई पुत्र नइ पासि बइसारी रे ॥ २३ ॥ के०
जनक राजा वैदेही रे, भामंडल सुं ससनेही रे ॥२४॥ के०
सीतादिक सहु को हरख्यां रे, कुमर प्रतापी निरख्या रे ॥२५॥ के०
कुमर आदर मान दीधा रे, सहु को आपणइ पक्ष कीधा रे ॥२६॥ के०
पांचमी ए ढाल सइ भाखी रे, कहइ सुन्दर ग्रथ नी साखी रे ॥२७॥के०

सर्वगाथा ॥२६५॥

दूहा ७

एहवइ केसरि रथचड्या, रांमचंद रण सूर ।
गरुड रथइं लखमण चड्या, वाजंते रणतूर ॥१॥
विद्याधर वलि दन्हिसिख१, वालिखिल्ल२ वरदत्त३ ।
सीहोदर४ सीह विक्रमी, कुलिस६ श्रवण७ हरदत्त८ ॥२॥
सूरभद्र९ विद्रुम१० प्रमुख, पाच सहस भूझार ।
सुभट मुगटमणि अति सवल, निज-निज रथ परिवार ॥३॥
पांच सहस ते सुभट सुं लखमण नइं श्रीराम ।
नगरी वाहिर नीसस्या, मेघ घटा जिम स्याम ॥४॥
ते दल देखी आवतो, लवणाकुस पणि वेउ ।
सूरवीर साम्हा थया, सुभट नइं साथइं लेउ ॥५॥
अंग१ कलंग२ जलंधरी३, सिंहल नइं४ नेपाल५ ।
पारस६ मागध७ पाणिपथ८, वब्बरदेस९ भूपाल ॥६॥
इत्यादिक अति सुभट नर, साथइं सहस इग्यार ।
अणिए अणि आवी मिला, जुद्ध करइं भूझार ॥७॥

सर्वगाथा ॥२७२॥

ढाल ६

॥ राग खंभाइती ॥

"सूवरा तुं सुलताण, वीजा हो । वीजा हो थारा सूवरा ओलगू हो०"
ए गीत नी ढाल, जोधपुर, नागोर, मेडता, नगरे प्रसिद्ध छइ ।

लागो सवल संग्राम, वेदल हो, वेदल भूझइ नगरी वाहिरइं हो ॥
वहइ गोला नालि२ तीरे हो तीरे हो, वरसइ मेह तणी परइ हो० ॥ १ ॥

भाला मारइ भीम भा० भेदइ हो।
भे० बगतर टोप विहुं गमा हो॥
करि लवंकइ[1] करिवालक क० कालइ हो।
कालइ आभइ वीजलि ऊपमा हो॥२॥
ऊडइं लोहडे अगि। ऊ० हाथी हो।
हा० पाडइ चीस चिहुं दिसाहो॥
हाक बूंब हुंकार। हा० सुभटा हो।
सु० ऊपर सुभट पडइ धस्या हो॥ ३॥
अंधारउ आकास। अ० छाया हो।
छा० रवि ससी वहुली रज करी हो॥
वूहा रुधिर प्रवाह। वू० मास्या हो।
मास्या माणास तिरजंच बहुपरी हो॥ ४॥
पडइ दमामां रोल। प० एकल हो।
एकल घाई वाजइ ऊतावली हो॥
सिंधुडइ वलि राग। सिं० सरवि हो।
स० सरणाई चहचहइ भली हो॥ ५॥
धरती नर संग्राम। ध० गयणे हो।
ग० खेचर संग्राम तिम थयो हो॥
भामंडल भूपाल। भा० कुंयरां हो।
कु० केरी भीर करण गयो हो॥ ६॥
विद्युत्प्रभ सग्रीव। वि० महावल हो।
म० राजा पवनवेग खेचरा हो॥

१—फत्रकइ।

सुणि कुस लव उतपत्ति । सु० हूवाहो ।
हू० उदासीन वृत्ति अनादरा हो ॥ ७ ॥
सुरसेलादिक भूप । सु० सीता हो ।
सी० देखी सन्तोष पामिया हो ॥
अचिरजि देखई आइ । अ० निज सिर हो ।
नि० सीताचरणे नामिया हो ॥ ८ ॥

एहवइ कुस लव वेउं । र० ऊठ्या हो ।
ऊ० संग्राम करिवा साहसी हो ॥
लखमण राम नइं देखि । ल० ऊपरि हो ।
ऊ० वेउं त्रूटि पड्या धसी हो ॥ ९ ॥

आया देखी राम । आ० मूंकइ हो ।
मूं० तीर सडासडि सामठा हो ॥
कीधो लेव पणि कोप । की० तीरे हो ।
ती० त्रोड्या राम ना कामठा हो ॥ १० ॥

रथ कीधो चकचर । र० वीजा हो ।
वी० लीधा धनुष नइं रथ वली हो ॥
ते पणि भागा तेम । ते० विसमय हो ।
वि० पाड्यो राम महाबली हो ॥ ११ ॥

तिम लखमण सुं जुद्ध । ति० लागो हो ।
ला० कुस नइं कांकल पाधरइ हो ॥
वज्रजंघ करइ भीर । व० लव नी हो ।
ल० कुस नो भामंडल करइ हो ॥ १२ ॥

रे सारथि कहइ राम । रे० साम्हा हो ।
सा० घोडा रथ नाखेडि तूं हो ॥
अरि नाखुं उखेडि । अ० सारथि हो ।
सा० कहइ राजेन्द्र म छेडि तूं हो ॥ १३ ॥
तीरे मार्‌या अश्व । ती० न वहइ हो ।
न० माहरी वे पणि वाहडी हो ॥
कहि इमहिज श्रीराम । क० माहरा हो ।
मा० हल मुसल थया लाकड़ी हो ॥ १४ ॥
हुवा सहु हथियार । हु० देवता हो ।
देवताधिष्ठित पणि निफल सहू हो ॥
लखमण राम ना सर्व । ल० लखमण हो ।
ल० सासइं मांहि पड्यो बहू हो ॥ १५ ॥
ऊपाडी सिलकोडि । ऊ० रावण हो ।
रा० मार्‌यो लंका गढ लीयो हो ॥
हिवणां हारुं केम । हि० कुस नइं हो ।
कु० मारण निज चक्र मूकियो हो ॥ १६ ॥
ते गयो कुमरनइ पासि । ते० दीधी हो ।
दी० चक्र त्रिण्हि प्रदक्षिणा हो ॥
पाछो आयो वेगि । पा० प्रभव्यउ हो ।
प्र० नहि ते सगपण अति घणा हो ॥१७॥
सुभट कहइ सहु एम । सु० वाणी हो ।
वा० खोटी साधुतणी हुई हो ॥

ए होस्यइ वासुदेव । ए० लखमण हो ।
ल० हुवो दिलगीरी अई अई हो ॥१८॥
बलदेवनइ वासुदेव । ब० बीजा हो ।
बी० केई भरतमइ अवतर्‍या हो ॥
सिद्धारथ कहइ आई । सि० लखमण हो ।
ल० दीसउ कां चिंता भर्‍या हो ॥१९॥
तु साचो वासुदेव । तुं० बलदेव हो ।
ब० साचो राम जाणो सही हो ॥
साची साधनी वाणि । सा० गोत्रमई हो ।
गो० कईयइ चक्र प्रभवइ नहीं हो ॥२०॥
कहइ लखमण ते केम । क० नारद हो ।
ना० सिद्धारथ ते सहु कहइ हो ॥
ए श्री रामना पुत्र । ए० कुश लव हो ।
कु० सीताना पुत्र गहगहइ हो ॥२१॥
राम तज्या हथियार । रा० पाछिली हो ।
पा० वात संभारी सीतातणी हो ॥
आणंद अंगि न माय । आ० साम्हो हो ।
सा० चाल्या पुत्र मिलण भणी हो ॥२२॥
कुश लव पणि सुणि वात । कुस० रथथी हो ।
र० उतरि साम्हा आवीया हो ॥
प्रणम्या रामना पाय । प्र० हियडइ हो ।
हि० भीडी सतोप पामिया हो ॥२३॥

राम करइ पछताप । रा० धिग धिग हो ।
धि० सीता छोडी निराश्रया हो ॥
गर्भवती गुणवंत । ग० जेहनी हो ।
जे० कूखि पुत्ररतन थया हो ॥२४॥
धन धन वज्रजंघ राय। ध० सीता हो ।
सी० आणी जिण अपणे घरे हो ॥
वहिन करी बोलावि । व० राखी हो ।
रा० रूडइ जीव तणी परे हो ॥२५॥
माहरइ पोतइ पुण्य । मा० तुम्हां हो ।
तु० सरीखा पुत्र सकज इसा हो ॥
कहउ सीता नी वात । क० किणपरि हो ।
कि० रहइ छइ हिव जागी दिशा हो ॥२६॥
लव कहइ जेहवइ वात । ल० तेहवइ हो ।
ते० लखमण तिहां आव्या वही हो ॥
कुस लव कीयो प्रणाम । कु० जईनइ हो ।
ज० लखमण मिलियो गहगही हो ॥२७॥
वरत्या जय जय कार । व० वागा हो ।
वा० वाजित्र तूर सोहामणा हो ॥
प्रगट्यो आणंद पूर । प्र० विहुंदलि हो ।
वि० माहे रंग वद्धावणा हो ॥२८॥
सीता सुण्यो मेलाप । सी० वेटा हो ।
वे० मिलीया बापनइं रंगइ रली हो ॥

वइसी दिव्य विमान। व० पहुती हो।
प० सीता तिण नगरी वली हो ॥२६॥
आठमा खंडनी एह। आ० छट्ठी हो।
छ० ढाल रसाल पूरी थई हो॥
समयसुंदर कहइ एम। स० चिंता हो।
चि० आरति सहु दूरइं गई हो ॥३०॥

सर्वगाथा ॥३०२॥

दूहा ६

हिव श्री राम सुपुत्रनो, मेलापक सुख खाणि।
लखमण सुं हरखित थया, बजडाया नीसांण॥१॥
रलीरंग वद्धावणा, वागा नंदी तूर।
दल वेउं भेलाथया, प्रगट्या आणंद पूर॥ २॥
राम भामंडल वे कहइ, वज्रजंघनइ एम।
तुं बांधव तुं मित्र तुं, तूं वाल्हेसर प्रेम॥ ३॥
ए तंइ कुमर उछेरिया, मोटा कीधा आम।
अम्हनइ आंणी मेलीया, सीधा वंछित काम॥ ४॥
सहजइ पणि होवइ सुहद, चंद सूर जिम केइ।
अंधकार दूरइ हरइ, जग उद्योत करेइ॥ ५॥
महोच्छव मोटो माडियो, नगर अयोध्या मांहि।
कुश लव कुमर पधारिया, गीतगान गहगांहि॥ ६॥

सर्वगाथा ॥ ३०८ ॥

॥ खण्ड ९ ॥

दूहा १०

हिव नवमो खंड वोलिस्युं, नवरस मिल्यां निदान ।
मन वंछित सुख पामियइ, निरमल नवे निधांन ॥१॥
अन्य दिवस श्री रामनइं, जंपइं वे कर जोडि ।
सुग्रीव विभीषण प्रमुख, हित कहतां नहि खोडि ॥२॥
पुंडरीक नगरी रहइ, सीता दुखिणी सामि ।
पतिनइ पुत्र वियोगिनी, किम राखइ मन ठामि ॥३॥
राम कहइ सुणि मुज्झनइं, सीता विरहो थाय ।
दुखु घणो दाझइं हीयो, पणि कुणि करूं उपाय ॥४॥
मइ छोडी वल्लभ थकी, लोक कुजस भडवाय ।
तुम्हे मिलीनइ तिम करउ, जिमवेतड़ सचवाय ॥५॥
दाय उपाय करो तिको, मिलइ सीता जिम मुज्झ ।
कलंक सीतानो ऊतरइं, सहु जिम पडइ समज्झि ॥६॥
राम वचन इम सांभली, भामंडल सु तेह ।
सुग्रीव विभीषण प्रमुख, विद्याधर सुसनेह ॥७॥
सीता पासि गया तुरत, कीधउ चरण प्रणाम ।
आगइं वइठा आविनइं, तिन वोलाया ताम ॥८॥
कर जोडी नइ ते कहइं, सभलि सीता वात ।
आवउ नगरी आपणी, राम दुखी दिन राति ॥९॥
तुम्ह दरस देखण भणी, अति ऊमाह्यो लोक ।
तरसइं मेहतणी परइं, वलि दिनकर जिम कोक ॥१०॥

ढाल १

।। तिल्लो रा गीतनी ।।

।। मेडतादिक नगरे प्रसिद्ध छइ ।।

हो सुग्रीव राजा सुणो मोरी वात,
गदगद स्वरि सीता कहइ रे लाल। हो सु०।
दुखु सवलउ मुझनइ दहइ रे लाल ।।१।। हो सु०।
विण अपराध मुझनइं तजी रे लाल। हो सु०।
ते दुखु मुझ सालि अजी रे लाल ।।२।। हो सु०।
हुं दुख नी दाधी घणुं रे लाल। हो सु०
काम कहुं आवण तणउ रे लाल ।। ३ ।। हो सु०।
नगरी अयोध्या मालिए रे लाल। हो सु०।
प्रिय सुं न वइसु पटसालिए रे लाल ।।४।। हो सु०।
अथवा तिहा एकइ कामइं आवणो रे लाल। हो सु०।
करि धीज साच दिखाड़णो रे लाल ।।५।। हो सु०।
कलंक उतारूँ तिहा आपणो रे लाल। हो सु०।
पछइ करूँ धर्म जिन तणो रे लाल ।।६।। हो सु०।
चालो तुम्हारा बोल मांनिया रे लाल। हो सु०।
सीता साथि ले चालिया रे लाल ।।७।। हो सु०।
आणी अयोध्या उद्यानमइं रे लाल। हो सु०।
मुंकी सीता सुभ ध्यानमइं रे लाल ।।८।। हो सु०।
रातिगई प्रह फूटियो रे लाल। हो सु०।
अंतराई क्रम त्रुटियो रे लाल ।।९।। हो सु०।
आवी वनमइं अतेउरी रे लाल। हो सु०।
आगति स्वागति तिण करी रे लाल ।।१०।। हो सु०।

ढाल ७

।। राग खंभायती सोहलानी जाति ।।

देशी—"अम्मा मोरी मोहि परणाविहे।
अम्मा मोरी जेसलमेरा जादवा हे ।।
जादव मोटाराय, जादव मोटाराय हे।
अम्मा मोरी कडिमोडी नइ घोडइ चडइ हे ।।"

ढाल ए गीतनी

सुण सखी मोरी वात हे, सुण सखी। कुस लव बेउं कुमार पधारिया हे।
चालो जोवा काजि, चा० सु०। सहर सकल सिणगारिया हो ।।१।।
बांध्या तोरण वारि हे, वां० सु० खलक लोकाई देखण नइ गई हे।
वइठा कुमर विमान, व० सु० दरसण देखी अति हरपित थई हे ।।२।।
लखमण नइ श्रीराम, ल० सु० कुमर संघातइ विद्याधर घणा हे।
अपछर देखइं आवि। अ० सु० रूप मनोहर कुमर सोहमणा हे ।।३।।
नारी निरखण रूप। ना० सु० कांम अधूरा मुंकी ऊलली हे।
काचित मुंकी थाल। का० सु० आधइ भोजन कीधइ झलफली हे ।।४।।
काचित एकइं आखि। का० सु० काजल घाली नारि नीसरी हे।
काचित रोतो बाल। का० सु० दूध धावंतो थण थी परिहरी हे ।।५।।
काचित छूटे केस। का० सु० नणदल पासइं सिर गुंथावती हे।
काचित एकइं बाहि। का० सु० पहिरी कंचुकी नीसरि धावती हे ।।६।।
काचित उलटउ चीर। का० सु० पहरी ओढणा लीधो हाथमइ हे।
काचित कुंडल एक। का० सु० काने घाल्यो बीजइ हाथमइ हे ।।७।।

काचित खाडती सालि। का० सु० मूसल मुंकी ऊखल ऊपरइ हे।
काचित ऊफणतो दूध। का० सु० ऊभो मुकी द्रोडी वहु परइ हो ॥८॥
काचित घरनो वार। का० सु० मुंकी ऊघाडउ गई देखण भणी हे।
काचित त्रुटोहार। का० सु० जाणइ नही हलफली अति घणी हे ॥९॥
इम धसमसती नारि। इ० सु० गउखि चडी के के गलिए रही हे।
देखई कुमर सरूप। दे० सु० अचिरजि आणी हीयडइ गहगही हे ॥१०॥
कहइ वलि केई एम। क० सु० धन्य सीता जिण एहवा जणमीया हे।
धन्याकन्या पणि एह। ध० सु० जि०। चउरी चडिकर मेलाविया हे ॥११॥
इम सलहीता तेह। इ० सु० वाप काका सु चिहुंदिस परिवर्या हे।
पहुता निज आवासि। प० सु० सकल कुटुंव केरा मन ठर्या[1] हे ॥१२॥
गया अंतेउर माहि। ग० सु० हेजइ अंतेऊरी सहू आवी मिली हे।
दे आलिंगन गाढ। दे० सु० रंग वधामण पुगी मनरली हे ॥१३॥
आठमा खंडनी एह। आ० सु० ढाल थई ए पूरी सातमी हे।
कही कुमरनी वात। क० सु० समयसुंदर कही मुझ मनरमी हे ॥१४॥
एतउ आठमउ खंड। ए० सु० पूरे कीधो इणपरि अति भलउ हे।
साचउ सीता सील। सा० सु० समयसुंदर कहिस्यइ मामलउ हे ॥१५॥

सर्वगाथा ॥३२३॥

इति श्री सीताराम प्रवधे सीता परित्याग १ वज्रजंघगृहानयन कुश लव युद्ध कुशलव कुमारायोध्याप्रवेशादि वर्णनोनाम अष्टमः खडः सम्पूर्ण.।

१—उछर्या।

तिण अवसरि राम आवीया रे लाल । हो सु० ।
निज अपराध खमाविया रे लाल ॥११॥ हो सु० ।
प्रियुडा सुणि मोरी अरदास, सीता कहइ पाए पडी रे लाल । हो प्रि० ।
कर जोडी आगइ खडी रे लाल ॥१२॥ हो प्रि० ।
तुझनइं वचन हुं किसा कहूं रे लाल । हो प्रि० ।
विरह वियोग घणा सहूं रे लाल ॥१३॥ हो प्रि० ।
तु सुदाखिण कलानिलो रे लाल । हो प्रि० ।
तुं वछल सहजइं भलो रे लाल ॥१४॥ हो प्रि० ।
परदुख कातर तुं सही रे लाल । हो प्रि० ।
तुझ गुण पार पामुं नही रे लाल ॥१५॥ हो प्रि० ।
को नहि प्रियु तुझ सारिखो रे लाल । हो प्रि० ।
पणि न कीयो मुझ पारिखो रे लाल ॥१६॥ हो प्रि० ।
तइ मुनइ छोडी रानमइ रे लाल । हो प्रि० ।
विण गुनहइ न गिणी गानमइ रे लाल ॥१७॥ हो प्रि० ।
अपराधइ दंड दीजियइ रे लाल । हो प्रि० ।
ते विण इम किम कीजीयइ रे लाल ॥१८॥ हो प्रि० ।
अपराध जेहनउ जाणीयउ रे लाल । हो प्रि० ।
पांच[1] धीजे परमाणियउ रे लाल ॥१९॥ हो प्रि० ।

१—"जगाद जानकी दिव्य पचक स्वीकृतं पया
प्रविसामि वन्हो ज्वलते भक्षयाम्यथ तदुलान"
तुला समाधि रोहामित तदा कोस पिवाम्य च
गह्लासि जिह्वयाफाल क तुत्परो चतेवद
युग्म पद्मचरित्रे नवम सर्गे

आगि पाणी धीज जागता रे लाल । हो प्रि० ।
संदेह मनना भागता रे लाल ॥२०॥ हो प्रि० ।
ते धीज तइं न कराविया रे लाल । हो०
मुझ तजतां प्रेम नाविया रे लाल ॥ २१ ॥ हो०
तइं तो कठोर हियो कीयो रे लाल । हो०
तइं मुझनइ विछोहउ दीयो रे लाल ॥ २२ ॥ हो०
जो वन माहे सीह मारता रे लाल । हो०
तउ तेहनइ कुण वारता रे लाल ॥ २३ ॥ हो०
ध्यान भूंडइ हुं मुंई थकी रे लाल । हो०
दुरगति जाती हुं ठावकी रे लाल ॥ २४ ॥ हो०
तइं कीधो तेह्न को करइ रे लाल । हो०
पणि खूटी विण किम मरइ रे लाल ॥ २५ ॥ हो०
दोस किसो देउं तुज्झनइं रे लाल । हो०
दैव रूठो एक मुज्झनइं रे लाल ॥ २६ ॥ हो०
आपदा पड्यां न को आपणो रे लाल । हो०
कुण गिणइ सगपण घणो रे लाल ॥ २७ ॥ हो०
दुखु समुद्रमइं तइ धरी रे लाल । हो०
पणि पूरव पुण्यइं करी रे लाल ॥ २८ ॥ हो०
पुंडरीकपुरनो धणी रे लाल । हो०
मिलियो परिवाधव तणी रे लाल ॥ २९ ॥ हो०
तिण राखी रूडी परइ रे लाल । हो०
वलि सुग्रीव आणी घरइ रे लाल ॥ ३० ॥ हो०

धीजकरु कहइ आकरो रे लाल। हो०
निरमल करूं पीहर सासरो रे लाल ॥ ३१ ॥ हो०
एती वात सीता कहइ रे लाल। हो०
रामचन्दइ सहु सरदही रे लाल ॥ ३२ ॥ हो०
पहली ढाल पूरीथई रे लाल। हो०
समयसुंदर आरति गई रे लाल ॥ ३३ ॥ हो०

सर्वगाथा ॥ ४३ ॥

दूहा ८

आंखि आंसू नांखतो, राम कहइ सुमनेह।
तुं कहइ ते साचो सहू, तिणमइं नहि सन्देह ॥ १ ॥
हुं जाणुं छुं ताहरो, सील सुद्ध कुल सुद्ध।
प्रेमघणो मुझ उपरइं, ए सहु वात प्रसिद्ध ॥ २ ॥
पणि तुझ अपजस ऊछल्यो, किणही कर्म विशेप।
ते न सकुं श्रवणे सुणी, नयणे न सकुं देखि ॥ ३ ॥
तिणमइ तुझनइ परिहरी, करुणा नाणी चित्त।
दोस नही को ताहरउ, तुं छइ सील पवित्त ॥ ४ ॥
जिम अटवी संकट टल्यो, सीलइ तणइ परभावि[1]।
तिम जस थास्यइं ताहरउ, धीरज तणइ सभावि ॥ ५ ॥
वलती आगिमइ पइसिनइ, नीसरि तुं निस्संक।
हेमतणी पर हे प्रिए, करि आपउ निकलंक ॥ ६ ॥
तुझ कलंकपिण ऊतरइं, मुझनइ आणंद पूर।
लोक कहइ धनधन्य ए, वाजइं मंगलतूर ॥ ७ ॥

१—सभावि

एहवा वचन श्रीरामना, साभलि सीता नारि ।
हरख सुं आगि ना धीजनो, कीधउ अंगीकार ॥ ८ ॥

सर्वगाथा ॥५१॥

ढाल बीजी

॥ राग मारुणी ॥

गलियारइ साजण मिल्या । मारूराय । दो नयणां दे चोट रे । धणवारी लाल ।
हसियां पण बोल्या नहीं । मारूराय । काइक मनमोहे खोट रे।१। धणवारी लाल ।
आज रहउ रंगमहलमइ । मा०॥ ए गीतनी ढाल ॥

हिव श्रीराम हुकम करइ । सीतानारि । निज पुरुषां नइ एह रे ।
धन सीता नारि । जावो खणावो वावडी । सीता नारि ॥
सउ हाथ दीरघ तेहरे ॥ १ ॥
धन सीतानारि । धीज करइ जे आगिनी । सीता नारि ॥ आ० ॥
अगरचन्दनने इंधणे । सी० । पूरी काठी भरीज रे । पू० ।
आगि लगावो चिहुंगमा । सी० सीता करिस्यइ धीज रे ॥२॥ ध०
राम कह्यो ते तिम कियो । सी० सेवके सगली सवील रे । ध०
ते वात सगले साभली । सी० वात परंतां न ढील रे ॥ ३ ॥ ध० धी०
हा हा रव करतो थको । सी० लोक आयो मिलि तेथि रे । ध०
आणि जिहा झाले वलइं । सी० सीता ऊभी जेथि रे ॥ ४ ॥ ध० धी०
लोक कहइं राम सांभलो । सी० धीज अजुगतो आम रे । ध०
काइ करावा माडियो । सी० सीतासीलइं अभिराम रे ॥५॥ ध० धी०

---

* इत्युक्त्वा खानयद्रामो गर्त्तहस्त शतत्रयं ।
पुरुषत्रयं दघ्नं च पूरयच्चंदनेंधनैः । १९७ । (पद्मचरिते ९मे सर्गे)

सील गुणे रही जीवती। सी० अटवी संकट माहि रे। ध०
ए परतीति नाणी तुम्हें। सी० राखो सीतानइ साहि रे॥ ६॥ ध०
सिद्धारथ पणि आवीयो। सी० मुनिवर कहतो निमित्त रे। ध०
रांमप्रतइं एहवो कहइ। सी० सीतासील पवित्त रे॥ ७॥ ध० धी०
जउ पातालि पइसइ कदे। सी० मेर जिहा सुर कोडि रे। ध०
समुद्र कदे सोखीजियइ। सी० तो सीतानइ खोडि रे॥८॥ ध० धी०
जउ भूठो बोलुं कदे। सी० तो मुझनइ नीम सात रे। ध०
पांच मेरे देव वादिनइ। सी० पारणो करूं परभात रे॥ ६॥ ध० धी०
ते पुण्य मुझनइ म थाइच्यो। सी० भूठ कहुं जउ कोइ रे। ध०
मनवचने कायाकरी। सी० सीता महासती होइ रे॥ १०॥ ध० धी०
ए वातनो ए पारिखो। सी० ए भाखु छुं निमित्त रे। ध०
अगनि माहे वलिस्यइ नही। सी० जलण हुस्यइ जलभत्ति रे॥११॥ ध०
सिद्धारथ वाणी सुणी। सी० विद्याधर ना वृंद रे। ध०
कहइ सहुको तइ भलो कियो। सी० साच कह्यो सुखकंद रे॥१२॥ ध०
सकलभूषण श्रीसाधनइं। सी० उपसर्गथया असमान रे। ध०
तिण अवसरि तिहा ऊपनो। सी० निरमल केवलग्यान रे॥१३॥ ध०
ते मुनिवरनइं वादिवा। सी० आविनइ इंद्रमहाराज रे। ध०
वात सीतातणी सांभली। सी० धीजना मांड्या साज रे॥१४॥ ध०
हरणेगमेषी नइ कह्यो। सी० इन्द्र तेडीनइ एम रे। ध०।
धीज करावण मांडियो। सी० कहउ सीतानइ केमरे॥१५ ध०
त्रिकरण शुद्ध सीता सती। सी० तेहनइ करे तुं सहाज रे। ध०।
हुं जावु छुं उतावलो। सी० मुनि वादण महा काज रे॥१६॥ ध०

इन्द्र आदेश लेई करी। सी० हरिणेगमेपी देवरे ।ध०।
तुरत सीता पासे गयो। सी० सीतानी करिवा सेवरे ।।१७।। ध०
तेहवइं राम ने सेवके। सी० आवीनइ कह्यो एमरे ।ध०।
वावि लगाया ईंधणा। सी० ढीलि करो तुम्हे केमरे ।।१८।। ध०
वलती आगि देखी करी। सी० राम थयो दिलगीर रे ।ध०।
हाहा कष्ट मोटो पड्यो। सी० किम सहिसइ ए सरीर रे ।।१९।। ध
आगि नही कदे आपणी। सी० दुसमन जिम दुखदाय रे ।ध०।
कलंक उतारयो जोइयइ। सी० बीजो न सूझइ उपाय रे ।।२०।। ध०
लोक तो बोक समा कह्या। सी० कुण राखइ मुख साहि रे ।ध०।
अपजस अणसहती थकी। सी० सीता वली आगी मांहि रे ।।२१।।
हाहा कदाचि सीता वली। सी० तो वलि कद्रि देखीस रे ।ध०।
जो सूधी धीजइं करी। सी० तउ लहिस्यइ सुजगीस रे ।।२२।। ध०
रामनइं एम विमासतां। सी० आगि वधी सुप्रकास रे।ध०।
झालो झाल मिली गई। सी० धूम छायो आकास रे ।।२३।। ध०
धग धग सबद बीहामणो। सी० अगनिनो ऊछल्यो ताम रे ।ध०।
एक गाऊनो चांद्रणो। सी० चिहुँदिसि थयो ठाम ठाम रे ।।२४।। ध०
वाय डंडुल[1] वायोवली। सी० जे वाली करइं खंभरे ।ध०।
कायरना काप्या हिया। सी० सुननर पाम्या अचंभ रे ।।२५।। ध०
तिण वेला आवी तिहा। सी० सीता वावडी पासि रे ।ध०।
स्नान करी परिघल जलइ। सी० अरिहंत पूजी उल्हासि रे।।२६।। ध०
सिद्ध सकल प्रणमी करी। सी० आचारिज उवझाय रे।
साध नमो तीरथ धणी। सी० मुनिसुव्रतना पाय रे ।।२७।। ध०

१—ददोल।

वलती आगि पासइ रही । सी० सुर नर नारी समक्षि रे ।ध०।
सीता कहइ सुणिज्यो तुम्हे । सी० भो लोकपाल प्रतक्षि रे ॥२८॥ ध०
मइं श्रीराम विना कदे । सी० पुरुप अनेरउ कोइ रे ।ध०।
मन मांहि पिण वांछ्यउ हुवइ । सी० रागइ साम्हो जोयो होइ रे ॥२६॥
तउ आगि मुझ नइ वालिज्यो । सी० नहितर सीतल थाउ रे । ध०।
आगि नही केहनीं सगी । सी० नहि सगो डंडुला वाय रे ॥३०॥ ध०
इम सीता कहती थकी । सी० समरंती नोकार रे ।ध०।
जितरइ सीता उतावली । सी० पइसइ आगि मझारि रे ॥३१॥ ध०
तितरइ वाय थंभी रह्यो । सी० छूटा पाणी प्रवाह रे ।ध०।
लोक सहूनइ देखतां । सी० ऊंचो वाध्यो अथाह रे ॥३२॥ ध०
लोक लागा जल बूडिवा । सी० हूयो हाहाकार रे ।ध०।
विद्याधर ऊडो गया । सी० भूचर करइ ते पोकार रे ॥३३॥ ध०
राखि राखि सीता सती । सी० तुं सरणो तुं त्राण रे ।ध०।
इम विलाप लोकातणी । सी० सीता सुणत प्रमाण रे ॥३४॥ ध०
करि करुणा निज पांणि सुं । सी० थंभ्यो पाणि प्रवाह रे ।ध०।
वावि रही पाणी भरी । सी० उलट्यो अंगि उछाह रे ॥३५॥
लोक लागा सहु देखिवा । सी० खुशी थका ते वाविरे ।ध०।
निरमल नीर भरी तरी । सी० हंस सेवा करि आवि रे ॥३६॥
मणिमय वरडी मोकली । सी० पावडी कनक प्रकार रे ।ध०।
वावि विचि कीयो देवता । सी० सहस कमल दल सार रे ॥३७॥
सिंहासन मांड्यो तिहां । सी० सीता वइसारी आणि रे ।ध०।
आभ्रण वस्त्र पहिराविया सी० लखमी बइठी जाणि रे ॥३८॥ ध०

देवता वाई दुंदु भी । सी० कीधी कुसुमनी वृष्टि रे ।ध० ।
सूधी सूधी सीता सती। सी० कहइ सहु को अभीष्ट रे ॥३९॥ ध०
नाटक माड्यो देवता। सी० करइं सीता गुण ग्राम रे ।ध०।
सील सीताना सारिखो। सी० नहि जगमइ किणठाम रे ॥४०॥ध०
सतीयां मो सीता लही। सी० रेखा जगत प्रसिद्ध रे। ध०
आगिमइं पइसि दीखाडीयो। सी० साच जीणइ सुविसुद्ध रे ॥४१
चमतकार उपजावियो। सी० सुरनर नइ पणि जेण रे । ध०
कीधा कुल बे ऊजला। सी० निरमल सील गुणेण रे ॥४२॥ ध०
सोभ चडावी रांमनइं। सी० पुत्रनइं कीधो प्रमोद रे। ध०
लखमण लाधो पारिखो। सी० थयो आणंद विनोद रे ॥४३॥ध०
तेहवइ कुश लव आवीया। सी० आणिद अंगि न माय रे ।ध०
सीताना चरणो नम्या। सी० हीयडइ भीड्या माय रे ॥४४॥ ध०
सीतानी महिमा करइं। सी० देवता राम ते देखि रे। ध
अति हरखित हुंतो कहइ। सी० पामी प्रीति विशेषि रे ॥४५॥ ध०
हे प्रिये तुझ थायो भलो। सी० तुं जीवे चिरकाल रे ध०
सुख भोगवइ निज कंत सु। सी० राजरिद्धि सुविसाल रे ॥४६॥ ध०
एक गुनह ए माहरो। सी० खमि तुं सदाखिण धारि रे। ध०
आज पछी हुं नहि करूं। सी० अपराध इण अवतारि रे ॥४७॥ध०
थासुप्रसन हसि बोलि तुं। सी० तू मुझ जीव समान रे। ध०
सोलह सहस अंतेउरी। सी० ते माहि तुं परधान रे ॥ ४८ ॥ ध०
तुझ आगन्या लोपुं नही। सी० इम विनवइ श्रीराम रे। ध०
पणि सीता मानइ नही। सी० कहइं मुझ ध्रम सुं काम रे ॥४९॥ ध०

नवमा खंडतणी भणी । सी० बीजी ढाल विसाल रे । ध०
समयसुदर करइं वंदना । सी० सीतासतीनइ त्रिकाल रे ॥५०॥ ध०
सर्वगाथा ॥१०१॥

दूहा १३

कहइं सीता प्रीतम सुणो, तुम्हे कह्यो ते तेम ।
पणि हुं भोगथी ऊभगी, चित्त अम्हारो एम ॥ १ ॥
प्रेमइं लपटाणी हुंती, पहिली तुम्ह सुं कंत ।
पणतइं मुझनइ परिहरी, ते साभरइं वृतांत ॥ २ ॥
थोड़ सुखु संसारना, दुखु घणो दीसंत ।
सरषव मेरु पटंतरइं, कहो मन किम हीसंत ॥ ३ ॥
तिणतापुरिसे परिहर्यो, कुटम्यतणो प्रतिवंध[1] ।
अंतकलि दुख ऊपजइं, प्रीतम प्रेम सम्बन्ध ॥ ४ ॥
हा हा ऋतावो करइं[2], जउ पहिलो प्रति प्रेम ।
छाड्यो हुत तो मुज्झनड, ए दुख पड़ता केम ॥ ५ ॥
भोग घणेही भोगवे, जीवनइ त्रिपति न होइ ।
सुपन सारीप सुखु ए, दुरगति दुख द्यइ सोइ ॥ ६ ॥
ते सुखनहिं चक्रर्तिनइ, जे सुख साधनइ जाणि ।
मइं मनि वाल्यो माहरो, म कहिसि मुझनइ ताणि ॥ ७ ॥
इम कहती सीता सती, कीधो मस्तक लोच[3] ।
केस क्लेस दूरइं क्रिया, सहु टली मननी सोच ॥ ८ ॥

१—परिवन्ध । २—रह्यो ।
३—इत्युक्त्वा मैथिली केशानुच्चरवान स्वमुष्टिना ।
रामस्यचार्प्पयामास शक्रस्येव जिनेश्वर. ॥ (पद्मचरित्रे नवम् सर्ग)

राम देखि सीता तणा, स्याम भमरते केस ।
मूरछागत धरती पड्या, आंणी मन अंदेस ॥ ६ ॥
चंदनपांणी छांटिनइ, घाल्या सीतल वाय ।
बांह झालि बइठा कीया, राम कहइ हाय हाय ॥ १० ॥
तेहवइ तिहा आयोवही, सर्वगुप्ति मुनिराय ।
तिण दीक्षा दीधी तुरत, सीतानइ सुखदाय ॥ ११ ॥
चरणसिरी तिहा पहुतणी, तेहनइ सुंपी एह ।
सीता पालइ साधवी, संयम सूधो जेह ॥ १२ ॥
पांचसुमति त्रिण्ह गुपति सुं, निरमल न्यान चरित्र ।
साधइं सीता साधवी, ईरत अनइं परत ॥ १३ ॥

सर्वगाथा ॥११४॥

ढाल ३

॥ राग कनडो ॥

'ठमकि-ठमकि पायनेउरी वजावइ, गजगति वाह ग० लुडावइ ॥१॥
रंगीली ग्वालणि आवइ ॥' ए गीतनी ढाल ॥

रांमचंद्रन देखइ सीता, नयणे नीर । न० वरसीता ॥ १ ॥
मोहि सीता नारि मेलावो, विरही राम करइ पछतावो ।
सीतानइ । सी० समझावो । मो० आं० ॥
कुण पापी सीता गयो लेई, कुण गयो, कु० दुख देई ॥२॥मो०
दीखइं नहीं सीता किम नयणे, बोलइ नहीं, बो० किमवयणे ॥३॥ मो०
लोच कीयो केणि पाछी आणो, कुणलेणहारा, कु० पिछाणो ॥४॥ मो०
देवतणो देवदत्तण फेडु, राजा मारि उथेडु ॥५॥ मो०

धूतारो कुण गयो धूतरी, ते कहो, ते० नाम खरी ॥६॥ मो०
कोइ अपहरि गयो कपट विशेषइ, पणि हुई साधवी वेपइ ॥७॥ मो०
पाछी आणि राखिसि घरमाहे, देपिसि, दे० दृष्टि उछाहे ॥८॥ मो०
इम विलाप सुणि तिहा आवइ, लखमणि पणि ल० समझावि ॥६॥ मो०
म कहि वचन एहवा तुं भाई, तइतजी मुज्झतउ भउजाई ॥१०॥मो०
हिव वेखास किया क्या होई, थूकि गिलइ, थू० नहि कोई ॥११॥ मो०
धन सीता जिण संयम लीधो, दुखु जलंजलि दीधो ॥१२॥ मो०
आप तरइं अवरानइं तारइं, कठिन क्रिया, क० व्रत धारइं ॥१३॥मो०
एहनइ हिव परणाम करीजइं, भव समुद्र, भ० तरीजइ ॥१४॥मो०
इम रामचंद भणी समझायो, राम संवेग, रा० मइ आयो ॥१५॥ मो०
कुश लव खेचर साथइ लेई, लखमण राम, ल० एवेई ॥१६॥ मो०
गजि चढि गया मननइ उल्लासइ, सकलभूपण, स० मुनि पासइ ॥१७॥
नवमा खंडतणी ढाल त्रीजी, सुणत सभा सहु रीझी ॥१८॥ मो०
समयसुंदर कहइ सीता साची, वेद पुराणे रे वाची ॥१६॥ मो०

सर्वगाथा ॥१२३॥

दूहा १०

सकलभूषण श्री केवली, साध गुणे अभिराम।
पंचाभिगमन साचवी, तेहनइ कियो प्रणाम ॥१॥
आगइ वइठा आविनइ, लखमण राम सकोइ।
तिहा वइठी थकी ओलखी, सीता साधवी होइ ॥२॥
तेहवइ केवली देसना, देवा मांडी तेथि।
लखमण राम सुग्रीव सहु, परपदा वइठी जेथि ॥३॥

राग द्वेष वाह्या थका, विषय सुख आसक्त।
अस्त्री काजइं अधमनर, घा मारइ आरक्त ॥४॥
माहो माहे मारिनइ, मूढ भमइं संसारि।
दुख देखइं दुरगति गया, पाडंता पोकार ॥५॥
राग द्वेष मुंकी करी, सूधो आदरइ धम्मे।
पाप अढारइ परिहरइं, भाजइ मिथ्या भर्म ॥६॥
संयम पालइं तप तपइं, साधनइ श्रावक जेह।
पुण्य तणइं परभाव थी, सुभगति पामइ तेह ॥७॥
इत्यादिक ध्रम देसणा, सुणि परिहरि परमाद।
प्रसन विभीषण नृप करइ, भगवन करउ प्रसाद ॥८॥
राम अनइ लखमण तणइ, रावण सुं रण एम।
सीता सम्बन्धइ थयो, कहउ ते कारण केम् ॥६॥
सकलभूषण श्री केवली, भाषइ न्यान अनन्त।
रांम अनइं रावण तणो, पूरव भव विरतंत ॥१०॥

सर्वगाथा ॥१४३॥

ढाल ४

॥ राग हुसेनी धन्यासिरी मिश्र ॥

दिल्ली के दरबार मइ, लख आवइं लख जाइं।
एक न आवइं नवरगखान, जाकी पघरी ढलि-ढलि जावइवे ॥१॥
नवरंग वइरागीलाल। ए गीतनी ढाल।

क्षेमपुरी नगरी हुंतो, व्यापारी नयदत्त ॥
तास सुनंदा भारिजा, सुविवेक कला सुपवित्त वे ॥१॥

पूरव भव सुणिज्यो एम, राग द्वेष छइ पाडुया ।
विढवानो लेजो नेम वे ॥ पू० आ० ॥
पुत्र थया वे तेहनइ, धनदत्त अनइ वसुदत्त ।
तेथि वसइ विवहारियो, वलि वीजोसागरदत्त वे ॥२॥ पू०
रतनाभा तसु भारिजा, कन्यारूपइ करि रंभ ।
गुणवती नामइ गुणभरी, देखंता थायइ अचंभ वे ॥३॥ पू०
वाप दीधी वसुदत्त नइ, गुणवती कन्या एह ।
द्रव्यतणइ लोभइ करी, माता वलि दीधी तेहवे ॥४॥ पू०
तिण नगरी विवहारियउ, वल अन्य हुंतो श्रीकंत ।
ब्राह्मण मित्र जइ कह्यो, वसुदत्त नइ विरतंत वे ॥५॥ पू०
वात सुणी नइ कोपियउ, निजकर लीधउ करवाल ।
प्रहार दियउ श्रीकंत नइ, वसुदत्तइ जइ ततकाल वे ॥६॥ पू०
श्रीकंतइ पणि ले छुरी, मरतइ मारि तसु पेटि ।
इम वेऊ विढता थकां, मारी ता मुया नेटि, वे ॥७॥ पू०
वे वनमइ गज ऊपना, देखी नइ जाग्यो कोप ।
एकएकनइं मारियो, तिहांपणि थयो विहुंनोलोप वे ॥८॥ पू०
महिप वृषभ वानर थया, द्वीपी मृग अनुक्रमि जेह ।
माहोमाहि विढीमुंया, सहु क्रोधतणा फल तेह वे ॥९॥ पू०
इम जलचर थलचर भवे, भमते दीठा वहु दुख ।
वयर विरोध महाबुरा, किहाथी पामीजइ सुख वे ॥१०॥ पू०
हिव धनदत्त भाई हुंतो, ते बांधव तणइं वियोग ।
अति दुखियो भमतो थको, सहतो संतापनइं सोग वे ॥११॥ पू०

साध समीपइ ते गयो, तिहा साभल्यो धर्म विचार।
व्रत पाली श्रावक तणा, ते पहुतो सरग मझार वे ॥१२॥ पू०
देवतणा सुख भोगवी, महापुर नगरी अवतार।
नाम पद्मरुचि ते थयो, तिंहां सेठ तणो सुत सार वे ॥१३॥ पू०
गोयलमइ गयो एकदा, तिहा मरतो एक वलद्द।
देखीनइं संभलावियो, तेहनइ नोकार सवद्द वे ॥१४॥ पू०
नउकारना परभाव थी, ते वलद जीव तिण ठाम।
राजा छत्रपती भलो, तसु छत्रछिन्न ए नाम वे ॥१५॥ पू०
श्रीकाता तसु भारिजा, ते वृषभ थयो तसु पुत्र।
नामइं वृषभ सभाव्रते, आचार त्रिचार विचित्र वे ॥१६॥ पू०
कुंयरपणइ गोयलि गयो, तिहा दीठी तेहिज ठाम।
जातीसमरण ऊपनो, ते साभस्यो ठामनइ गाम वे ॥१७॥ पू०
भूप त्रिषा जे तिहां सही, मुझनइ दीधो नउकार।
बोधि बीज तिहा पामीयो, पणि किण कीधउ उपकार वे ॥१८॥पू०
(पिण) तेहनइ ऊलखिवा भणी, मडाव्यउ देहरउ तेण।
पूरव भव चीतरावियो, अपणो सगलो कुमरेण वे ॥१९॥ पू०
निज सेवकनइ इम कह्यो, जे देखइ ए चित्राम।
परमारथ कहइ पाछिलो, ते मुझनइ कहिज्यो ताम वे ॥ २० ॥
ते सेवक ततपर थका, रहइ देहरा मांहे नित्त।
कुमर पद्मरुचि आवियो, तिहा वंदन करण निमित्त वे ॥ २१ ॥
घणीवार चित्रामनइ, ते पद्मरुचि रह्यो जोइ।
नउकारजदीधो तेहनइ, ए राजा वृपभ तिकोइ वे ॥ २२ ॥

जातीस्मरण पामीयो, तिण बलदतणो अवतार ।
नृप कुंमरनइ चीतराविओ, इम चिंतवइ चित्तमझार वे ॥ २३ ॥
तेहवइ तिण पुरुषां तिहां, ते दीठइ सेठ अमूढ ।
राजा कुमरनइ जई कह्यो, ते आयो गजआरूढ वे ॥ २४ ॥
जिन प्रतिमा प्रणमीकरी, निरखइ ते पद्मकुमार ।
उपगारी गुरु जाणिनइं, प्रणम्यो चरणे त्रिणवार वे ॥ २५ ॥
प्रणमंतो तिणवारियो, तुं राजकुमर नरराय ।
कुंमर कहइं तूं माहरइं, गुरु धरमाचारिज थाय वे ॥ २६ ॥
तुझ प्रसाद तिरजच हुं, थयउ छत्रपतिनो पुत्र ।
तुं कहइं ते हिव हुं करुं, तुं परउपगार पवित्र वे ॥ २७ ॥
कहइ श्रावकनउ धर्म्मकरि, जिम पामइ भवनिस्तार ।
श्रावकनो ध्रम आदर्‍यो, ते पालइ निरतीचार वे ॥ २८ ॥
श्रावकनो ध्रम पालिनइं, ते बिहुं कीधउ काल ।
बीजइ देवलोकि ऊपना, ते बेउं सुर सुविसाल वे ॥२९॥
पद्मरुची तिहां थी चवी, नंद्यावत गामनरिंद ।
नंदीसर खेचर तणो, थयोनंदन नयणाणंद वे ॥ ३० ॥
राजलीला सुख भोगवइ, संयम लीधो अतिसार ।
चउथइ देवलोकि ऊपनो, लह्यो देवतणो अवतार वे ॥ ३१ ॥
महाविदेह मइ अवतर्‍यो, तिहां थी चविनइ ते तत्र ।
क्षेमपुरी नगरी भली, तिहां विपुलवाहननो पुत्र वे ॥ ३२ ॥
श्रीचन्दकुमर सोहामणो, बहु भोगवइ सुख संपत्ति ।
तिण अवसरि तिहां आवीया, श्रीसुरि समाधिगुपत्ति वे ॥ ३३ ॥

तसु पांसइ श्रमसाभली, तसु आयोमनि वयराग ।
संयममारग आदर्‍यो, तपकरि कीधो तनु त्याग वे ॥ ३४ ॥
पांचमइ देवलोक ऊपनो, ते इन्द्रपणइं आणंद ।
दससागरनइं आयुषइं, आगइ अपछरना वृन्द वे ॥ ३५ ॥
तिण अवसरि ते गुणवती, कन्याना वयर विशेषि ।
वसुदत्त श्रीकंत वे जणा, हरिणादिभवे देखु देखि वे ॥ ३६ ॥
भवमाहे भमता थका, किणही ते पुण्य प्रभावि ।
नगर मृणालतणो धणी, वज्रजंवू सरल सभाव वे ॥ ३७ ॥
हेमवती तसु भारिजा, हिवतेहनी कुखि तेह ।
श्रीकंतनो जीव अवतर्‍यो, अभिधान सयंभू जेह वे ॥ ३८ ॥
प्रोहित एक तिहां वसइं, शिवसमे दयाल सदीव ।
श्रीभूत नामइ[1] सुत थयो, ते वसुदत्त तणो ते जीव वे ॥ ३९ ॥
जिनधरमी श्रीभूत ते, तिणरइ घरि सरसति नारि ।
गुणवती कन्या जे हुती, ते लहि मृगली अवतार वे ॥ ४० ॥
भूरि संसार माहे भमी, वलि आवी नरभव तेह ।
तिहांथी मरिथई हाथिणी, खूती तसु कादम देह वे ॥ ४१ ॥
चारण श्रवण मुनीसरइं, मरती दीधो नउकार ।
श्रीभूतिनी पुत्री थई, नउकारनी महिमा सार वे ॥ ४२ ॥
मां वाप दीधो तदा, वेगवती अभिधान ।
एक दिवस तिहां आवियो, अतिमलिन वस्त्र परिधान वे ॥ ४३ ॥
हीला करती साधनी, बापइ वारी ततकाल ।
पूजनीक एक साधछइं, ए जीवदया प्रतिपाल वे ॥ ४४ ॥

१—सुत थयो तेहनो ।

वापवचन सुणि उपसमी, करिवा माड्यो श्रमसार।
रूपवन्त देखी करइं, प्रारथना राजकुमार वे ॥४५॥
मिथ्यामति ते मोहियो, तिण तेहनइ वापन देइ।
सयंभु कुमर कामी थको, ते कुमरीनइ निरखेइ वे ॥ ४६॥
एक दिवस तिहां[1] जाइनइं, रातइं मार्यो श्रीभूति।
ते कन्या वाछइ नहीं, तो पणि लागोथई भूत वे ॥ ४७॥
वेगवती रोती थकी, तिण भोगवी अधमकुमार।
तिण सराप दीधो तिहां, तुं सुणि वात विचार वे ॥ ४८॥
मार्यो वापतइं माहरो, मुझनइं तइ कीधो एम।
ताहरी मारणहुं हुज्यो, जनमंतरि वयर ल्यु जेम वे ॥ ४६॥
इम कहती मुंकी तिणइं, मनमइ आयो संवेग।
संयम मारग आदर्यो, श्रमकरंता टाल्यो उदेग वे ॥ ५०॥
तपजप करिनइ ऊपनी, ते वंभ विमाणा देवि।
भव अनेक भमतो थको, ते सयंभुकुमर तिण टेव वे ॥ ५१॥
करमतणइ उपसम करी, तिण लाधो नरभव सार।
विजयसेन मुनिवर तणइं, पासइं सुण्यो धरम विचार वे ॥ ५२॥
दीक्षा ले नइ चालियो, समेतसिखरनी जात्र।
कनकप्रभ मारग मिल्यो, विद्याधर ऋद्धिनो पात्र वे ॥ ५३॥
रिद्धि देखि अति रुयडी, नीयाणो कीधो एह।
श्रमनो फल छइ तो हुज्यो, मुझ एहवी रिद्धिनइ देह वे ॥ ५४॥
मुगति सुं काम कोइ नहीं, इम कागणि हारी कोडि।
त्रीजइ देवलोकि ऊपनो, पणि नेटि नियाणा खोडि वे ॥ ५५॥

१—तिण

तिहां थी चविनइ ते थयो, राणो रावण परिसिद्ध ।
धनदत्तनोजी पाचमइं, सुरलोकि हुंतो समृद्ध वे ॥ ५६ ॥
ते तिहा चविनइ थयो, दसरथ नंदन श्रीराम ।
श्रीभूतिजीव देवी हुंतो, ते वभविमाणा नाम वे ॥ ५७ ॥
ते चविनइ सीता थई, श्रीरामचन्दनी नारि ।
सीलगुणे सलहीजीयइ, जे सगलइ ही संसारि वे ॥ ५८ ॥
गुणवती भवि भाई हुंतो, गुणधर एहवइ अभिधान ।
सीतानो भाई थयो, भामण्डल विद्यावान वे ॥ ५९ ॥
वसुदत्तनइ वांभण हुंतो, जे यज्ञवल्क वलि तत्र ।
राय विभीषण तुं थयो, ते जाण प्रवीण विचित्र वे ॥६०॥
प्रतिवूधो नउकार थी, तिहा बलद 'तणो' जे जीव ।
उपगारी सहुनइं थयो, ते राजा तुं सुग्रीव वे ॥६१॥
इम पूरव भव वयर थी, ए सीता नारि निमित्त ।
मरण थयो रावण तणो, ए करमनी वात विचित्रवे ॥६३॥
सीतावेगवती भवइं, जे साधनइ दीधो आल ।
सती थकी सिरि आवियो, ते कलंक सवल चिरकाल वे ॥६३॥
वलि तिण कलंक उतारिया, ते साधतणो सुध भावि ।
सुजस वली सीता लह्यो, ते धीजतणइ प्रस्तावि ॥६४॥
सकलभूपण इम केवली, कह्या करमना कठिन विपाक ।
कलंक न दीजइं केहनइ, वरजय मारि नइ हाक वे ॥६५॥
नवमा खंड तणी भणी, ए चउथी मोटी ढाल ।
समयसुदर कहइ साभलो, हिव आगलि वात रसाल वे ॥६६॥

सर्वगाथा ॥ २०९॥

दूहा ६

केवली वचन सुणी करी, सहु पांम्या संवेग।
लव कुश कुमर कृतांतमुख, ल्यइ दीक्षा अतिवेग ॥१॥

लखमण राम विभीषणादिक विद्याधर वृन्द।
सीता पासि जई करी, प्रणमइ पय अरविंद ॥२॥

निज अपराध खमाविनइ, वादी आणंद पूर।
आप आपणे घरि सहु गया, भोगवइ राज पडूर ॥३॥

हिव ते सीता साधवी, पालइं संयम सार।
सूत्र सिद्धांत भणइ गुणइ, पालइं पंचाचार ॥४॥

करइ वेयावच नइ विनय, किरिया करइ कठोर।
तपइ वली तप आकरा, ब्रह्मचर्य पणि घोर ॥५॥

सूधउ संयम पालिनइं, अणसण कीधो अंति।
पाप आलोई पडिकमी, सरणा च्यार करंति ॥६॥

काल करीनइ ऊपनी, सीता धरि सुभध्यान।
देवलोकि ते बारमइ, बावीस सागर मान ॥७॥

एहवइ लखमण राम ते, नगर अयोध्या माहि।
प्रेमइं लपटाणा रहइं, भोगवइ राज उछाहि ॥८॥

मनह मनोरथ पूरता, प्रजा तणा प्रतिपाल।
सुख भोगवता तेहनइ, गयो घणो तिहां काल ॥९॥

सर्वगाथा ॥ २१८ ॥

ढाल ५

।। राग गउडी जाति जकडीनी ।।

"श्री नउकार मनि ध्याईयइ ।। एगीतनी ढाल ।।

एक दिन इन्द्र कहइ इसउ, देवता आगइ किवारो ।
मोहिनी जीपतां दोहिली, सहु करमा सिरदारो जी ।।
सिरदार सगला करम माहे, मोहिनी वसि जे पड्या ।
ते जाणता पिण धर्म न करइ, नेह बंधण मइ अड्या ।।
संसार एह असार जीवित, चपल जल विंदु जिसो ।
संपदा संध्याराग सरिखी, एक दिन इन्द्र कहइ इसउ ।।१।।

मरणो तो पगमइं वहइं, कारिमी काया एहो जी ।
विपयारस लुवधा थका, पोपइ कारिमी देहो जी ।।२।।
कारंमी देह समारि सखरी, नरनारी राता रहइ ।
पणि धन्य ते जे छोडि माया, सुद्ध संयम नइ ग्रहइ ।।
वलि विषय सुख थी जेह विरम्या, धन्य-धन्य सको कहइं ।
चक्रवर्ति सनतकुमारनी परि, मरणो तो पगमइं वहइं ।।२।।

इन्द्र वचन इम साभली, इंद्राणी कहइ एमोजी ।
वारवार कहउ तुम्हे, दोहिलो छोडतां प्रेमोजी ।।
छोडता दोहिलो प्रेम प्रीतम इन्द्र कहइं साभलि प्रिया ।
नगरी अयोध्या माहि लखमण राम बाधव निरखीया ।।
ए प्रेम लपटाणा रहइ जीवइ नही (जिम) जल माछली ।
ते विरह छोडइं प्राण अपणा इन्द्र वचन इम सांभली ।।३।।

इंद्रना वचन सुणी करी, कौतुक आणी चित्तोजी ।
तुरत अयोध्या नगरमइं, दो देवता संपत्तो जी ॥
संपत्त दो देवता तिहा कणि रामनइं घरि आवीया ।
देवनी माया केलवी नइ अंतेउर रोवराविया ॥
ते करइ हाहाकार सगली रामनी अंतेउरी ।
हा राम प्रीतम किण हस्यो तुं इन्द्र ना वचन सुणी करी ॥४॥
हाहाकार लखमण सुणी, धाई आयो पासो जी ।
कहइ मुझ बांधवकिणहस्यो, रांणी रोयइ उदासो जी ॥
उदास राणी केम रोयइ इम कहतो लखमण तदा ।
वाधव तणो अति दुखु करतो पड्यो जाणि हण्यो गदा ॥
अण वोलतो रह्यो आंखि मीचीं मुयो[1] जाण्यो भणी ।
पछताव करिवा देवलागा हा हा कार वचन सुणी ॥५॥
अविचार्‍यो अम्हे कीयो, ए कौतुकनो कामोजी ।
अम्हे लखमणना मरणना, हेतु थया इण ठामो जी ॥
इण ठामि लखमण मरण पाम्यो पाप लागो अम्ह भणी ।
हासा थकी ए थई वेषासी वात वाधी अति घणी ॥

१—भवेस्मिन्मेव सुदत्त जीवो भूल्लक्ष्मणोऽनुजः ।
तत्राप्य मुख्य कौमारेमुघागाच्छरदा शत ॥१॥
शतत्रय मडलित्वे चत्वारिंशतु दिग्जये ।
वर्षैकादश सहस्रासार्द्धाराज्येऽब्दषष्टि च ॥२॥
द्वादशाब्द सहस्राणि सर्वमायुरितिक्रमा ।
ययात्रिर तस्यैव केवल नरकावहम् ॥३॥
इति पद्मचरित्रे दशमसर्गे लक्ष्मणायु. ॥३॥

हुणहार वात टलइ नहि जिण जीवे जेह निबंधीयो ।
ते सुखु नइ दुखु लहइ तिमहिज अविचार्यो अम्हे कीयो ॥६॥

इम चिंतवतां वहुपरी जीवाडण असमत्थो जी ।
देव गया देवलोकमइं जिहाथी आया तेथो जी ॥
आया जिहाथी तेणि अवसरि मिली सहु अंतेउरी ।
अम्ह कंत स्नेहकरी रीसाणो मनावइ पाए परी ॥
जे किणइ भोली कह्यो काइ ते खमिज्यो किरपा करी ।
करि जोडि करिनइ पगे लागी इम चिंतवता वहु परी ॥७॥

इण परि विविध वचन कह्या, सहु अंतेउरी तासो जी ।
मृतक कलेवर आगलइ, निफल थयो ते निरासो जी ॥
नीरास सहु अंतेउरी थई, तिण समइ तिहां आविया ।
श्रीराम हाहा रव सुणी नइ, पासेवाण पूछाविया ॥
आज काइ वदन विछाय दीसइ, सहोदर अवचन रह्या ।
किण रूसव्यो मुझ प्राणवल्लभ इण परि विविध वचन कह्या ॥८॥

किम साम्हउ जोवइ नही, किम ऊठइ नही आजो जी ।
किम कोप्यो मुझ ऊपरइं, किम लोपी मुझ लाजो जी ॥
किम लाज लोपी माहरी इम कही सिर सु चुंवियो ।
वोलि तु वाधव वाह झाली, हीयासेती भीडियो ॥
को कियो मुझ अपराध खमि तुं, तुझ विना न सकुं रही ।
मुझ प्राण छूटइं तुज्झ पाखइं किम साम्हउ जोवइ नहीं ॥ ६ ॥

रामइं मुयो जाणी करी, लागो वज्र प्रहारो जी ।
ध्रसडि पड्यो धरणीतलइं, मूर्छित थयो निरधारो जी ॥

निरधार सीतल पवन योगइं चेतना पामी वली ।
मोहिनी करम सनेह जाग्यो ऊठियो वलि झलफली ॥
आपणा हाथ सुं देह फरसी चिकिच्छा करि बहु परी ।
वलि मुंयो जांणिनइं थयो मुरछित रामइं मुयो जाणी करी ॥१०॥

वलि रामइ चेतन लही, करिवा माड्या विलापो जी ।
हा वछ हा बांधव मुझ, मुझनइ देहि अलापो जी ॥
अलाप मुझनइ देहि तुझ बिण, प्रांण छूटइं माहरा ।
बोलावि मुझनइं कही बाधव विरह न खमुं ताहरा ॥
लखमण अजी तुं किम न बोलइ, किम रह्यो तुं हठ ग्रही ।
इम रामचन्द विलाप कीधा वलि रामइ चेतन लही ॥ ११ ॥

इम हाहारव सांभली, लखमण केरी नारो जी ।
एकठी मिली आवी तिहा, करइं आक्रंद पोकारो जी ॥
पोकार करता हीयो फूटइ, हार त्रोडइ आपणा ।
आभरण देहथकी उतारइ, झरइं आंसु अतिघणा ॥
वलि पडइ धरती दुखु करती, थई आकुल व्याकुली ।
हा नाथ हा प्रीतम गयो किहां इम हाहारव सांभली ॥ १२ ॥

हे प्रियु कां दीसइ नही, निरसत नयणाणंदो जी ।
द्यइ दरसण दसरथसुत, राघव वंस दिणंदो जी ॥
दिणंद सुदर रूप ताहरो सूरवीरपणो किहां ।
गुण ताहरा केथेन दीसइं, प्राणजीवण जग इहां ॥
किम अपहस्यो तुझनइ ते कुण छइं देवता पापी सही ।
इणपरि विलाप अनेक कीधा हे प्रियु कां दीसइ नहीं ॥ १३ ॥

रामइ राजन छोडीयो, व्याप्यो मोहिनी कर्म्मों जी ।
जीवरहित लखमणतणो, देह आलिंगइ पड्यो भर्म्मों जी ॥
पड्यो भर्म देह उपाडि ऊंचउ, वइसारइं खोलइ वली ।
करजोडी वीनति करइ एहवी, वात करि मुझ सुं मिली ॥
पणि ते कलेवर केम बोलइ रामनो सूनो हियो ।
मोहिनी करम विटंब सगलो रामइ राजन छोडीयो ॥ १४ ॥

एहवी वात सुणी सहु, ते विद्याधर राजो जी ।
सुग्रीवराय विभीषण, प्रमुख मिली हितकाजो जी ॥
हित काज ते आया अयोध्या, राम नइ प्रणमी करी ।
करइ वीनती तुं मुंकि मृतकनइ सोग चिंता परिहरी ॥
तुं जाणि बांधव मुयो माहरो अथिर आऊपो बहु ।
तिण धरम उद्यम करि विशेषइ एहवी वात सुणी सहु ॥ १५ ॥

राय विभीषण इम कहइ, सुणि श्रीराम निसंको जी ।
सहुनइ मरणो साधरण, कुण राजा कुण रंको जी ॥
कुण रंक तीर्थंकर किहा गणधर किहां चक्रवति किहा ।
वासुदेवनइ बलदेव छत्रपति कुण मुयो नहि कहि इहा ॥
जउ तुम्ह सरिखा महापुरुष पणि एम सोगातुर रहइ ।
तउ अवर माणस किसी गणणा राय विभीषण इम कहइ ॥१६॥

तिणकारणि सोग मुकिनइ, करउ लखमण संसकारो जी ।
एह वचन सुणी कोपीयो, राम कहइ अविचारो जी ॥
अविचार राम कहइं सुणो रे दुष्ट पापिष्टो तुम्हे ।
वलो आपणो कुटम्ब बालो कहुं छुं तुम्हनइ अम्हे ॥

ऊठिनइ आपे जाइसां कोइ न कह कुवचन चकिनइ ।
तिण देसिनइ परदेस भमस्या तिण कारण सोग मूकिनइ ॥ १७ ॥

इम खेचर निभरंछिया, ले लखमणनी देहो जी ।
कांधइ घाली नीसस्यो, वलि वइसास्यो तेहो जी ॥
वइसारि मज्जण पीढ ऊपरि अनेरी ठामइं जई ।
न्हवरावीयो जल कनक कलस कलेवर सुसतइ थई ॥
वलिवस्त्र उत्तम सखर आभ्रण लखमणनइ पहिराविया ।
भोजन भला मुखमाहि घाल्या इम खेचर निभ्रंछिया ॥ १८ ॥

इणपरि राम सेवा करइ, लखमण मृतकनी नित्तो जी ।
मोहनी करम वाह्यो थको परिहर्‌या राज कलत्तो जी ॥
परिहर्‌या राजकलत्र सगला मास छ गया जेहवइं ।
संवुक खरदूपण तणो लह्यो वयर अवसर तेहवइ ॥
तेहनापुत्रादिक विद्याधर कटक करिनइ नीसरइ ।
ततखिण अयोध्या नगरि आवइं इण परि राम सेवा करइ ॥ १९ ॥

राम वृतान्त ते जाणिनइं लखमणनइ ठवि तेथ्यो जी ।
धनुप चडावि साम्हो थयो, विद्याधर रिपु जेथ्यो जी ॥
रिपु जेथि कोपारुण थईनइ क्रूरदृष्टि करी यदा ।
सुरवर जटायुध कृतातमुखनो कांपियो आसन तदा ॥
तिण आवि रामनइ दियो साहिज कटक सबलो आविनइ ।
आकास मारगि ले विकुरव्या राम वृतांत ते जाणिनइ ॥ २० ॥

सुर वलि चोट सबल करी, विद्याधरना वृन्दो जी ।
ततखिण ते नासी गया, जीतो श्रीरामचंदो जी ।

रामचंद जीतो देव आगइ विद्याधर नर किम रहइ ।
ते हारि मानी गया नासी आप आपणपइ कहइं ।।
वलि राम प्रतिबोधण भणी उपाय मांड्यो वहुपरी ।
ते देव वेउं करइ उपक्रम सुर वलि चोट सबल करी ।। २१ ।।

सूको सर सींचीजतो, देखाडइ ते देवो जो ।।
वलद मुयो हल जोतर्यो, कमल सिलातलि टेवो जी ।।
तटिटेव वाणी माहि वेलू पीलती गिरि ऊपरइं ।
गाडलो चाडइ ते देखाडइ देवता तिण ऊपरइं ।।
कहइ राम मूरिख तुम्हे दीसो काम ऊंधो कीजतो ।
किम सिद्धि थास्यइ तुम्हे जोयो सूको सर सींचीजतो ।।२२।।

ते कहइं सुणि महापुरुष तुं, पगमइ वलती ते कोयोजी ।
देखइं दूरि बलती सहू, हृदय विचारी जोयोजी ।।
हृदय विचारी जोइनइ तुं मुयो किम जीवइ वली ।
का भमइं मृतक उपाडि काधइ अकलि दीसइ छइ चली ।।
तुं जाणि लखमण मुंयो निश्चय मृतकनइं स्युं करिस तुं ।
को लोक माहे लहइ हासी ते कहइ सुणि महापुरुप तुं ।।२३।।

राम कहइ अमंगल तुम्हे, कां कहो मूरिख थायो जी ।
मुझ बांधव जीवइ अछइ, रह्यो मुझथी रीसायोजी ।।
मुझथी रीसाय रह्यो बांधव इम कदाग्रह ले रह्यो ।
वलि सुर जटायुध मनि विमासइं रांम मानइ नहि कह्यो ।।
वलि करू कोइ उपाय बीजो राम समझइ जो किम्हे ।
एकनर दिखाड्यो मडइ लीधइ, राम कहइ अमंगल तुम्हे ।।२४।।

मृतकनइ देतो कउलीयो, राम पूछ्यो तेहोजी ।
फिट मुंडा तुं जाणइ नही, किम जीमइ मडउ एहोजी ॥
किम मडो जीम कहइ ते नर मुज्झ नारी वालही ।
मुझथी रीसाणी ए न बोलइ दुसमण लोक मुंई कही ॥
तेहना अणसहतउ वचन हुं तुम्ह पासइ आवियो ।
जेहवो हु तेहवो तुं पणि मृतक नइ देतो कउलीयो ॥२५॥
सरिसा नर सरिसेण तुं, राचइ कुण द्यइ सीखोजी ।
आपे बे डाहा घणुं, मइ तुझ कीधी परीखो जी ॥
कीधी परीक्षा ताहरी मइं हुं तुझ पासि रहिसि कहइ ।
रामचंद आदर घणो दीधो एकठा बेउं रहइ ॥
एक दिवस ते बेउं मडानइ मुंकिनइ हरिसेण सु ।
गया केथि केणि ठामइ अनेरइ सरिसा नर सरिसेण तुं ॥२६॥
पाछे वलते साभल्यउ, देवनी माया मेल्योजी ।
लखमण नारि सुं बोलतो, करतो कामिनी केल्योजी ॥
कामिनी करतो केलि दीठो रामनइ सुरवर कहइं ।
तुझ बंधु महापापिष्ट माहरी नारिसुं हसतो रहइं ॥
मुझ नारि पणि अतिचपल चंचल मइं हिवइं इम अटकल्यो ।
कुण काम इणसुं आपणइं हिव पाछे वलते सांभल्यउ ॥२७॥
राज छोड्यों का तइं आपणो, ए बांधव नइ काजो जी ।
बोलाया बोलइ नही, न गिणइ कायदो लाजोजी ॥
न गिणइ ए कायदो लाज आपणो इक पखो नेहो किसो ।
संभारि श्री वीतराग देवनो वचन अमृत रस जिसो ॥

संसार एह असार कारिमो राग सकल कुटंब तणो ।
स्वारथ तणो सहु को मिल्या तिण राज छोड्यो कातइं आपणो ॥२८

मात पिता बांधव सहू, भारिजा भगिनी पुत्रोजी ।
मरणथी को राखइ नही, नहि ईरत नइं परत्रो जी ॥
ईरत परत्त राखइ नहि को, करि आतमहित तुं हिवइं ।
तुं छोडि राजनइं रिद्धि सगली जिम लहइ सुख परभवइ ॥
जिम तुज्झ बांधव मुंयो तिम कुण तुज्भनइ राखइ पहू ।
तु चेति चेति हो चतुर नरवर मात पिता बांधव सहू ॥२६॥

इम सांभलता रामनइं, नाठउ मोह पिसाचो जी ।
अध्यवसाय आयो भलो, सउ ए कहइ छइ साचो जी ॥
सहु साच कहइ छइ एह मुझनइं बंधु प्रेम उतारियउ ।
संसार दुखु मझार ए सहि मुयो लखमण जाणियउ ॥
मुझ कही वात तुम्हे तिकातो माहरा हित कामनइं ।
दुरगति पडंतो तुम्हे राख्यो इम साभलता राम नइ ॥३०॥

कुण उपगारी छउ तुम्हे, किहा थी आया एथोजी ।
उपगार किम मुझनइ कीयो, किम भाइ मुयो तेथोजी ॥
किम भाई मुयो माहरो इम पूछता प्रगट कीयो ।
देवता केरो रूप कुंडल चलत आभरण अलंकियो ॥
श्रीराम साभलि तुज्झनइ प्रतिबोधिवा आया अम्हे ।
कहइं आपणी ते वात सगली कुण उपगारी छउ तुम्हे ॥३१॥

तेह जटायुध पंखीयो, तुझ नउकार प्रभावोजी ।
चउथंइ देवलोकि ऊपनो, सीताहरण प्रस्तावो जी ॥

प्रस्तावि सीताहरण केरइ ए पणि सेवक तुम्ह तणो ।
कृतांतमुख जे हुतो तिण चारित्र पाल्यो अति वणो ॥
ऊपनो ए पणि तेण ठामइ अवधिज्ञान प्रयुंजीयो ।
दीठी अवस्था एहवी तुझ तेह जटायुध पंखीयो ॥३२॥

तुं लखमणनइं मुयो थको, काध लीधइ भमइ तेहो जी ।
तिण तुझनइ प्रतिबोधिवा, माया केलवी एहो जी ॥
केलवी माया अम्हे सगली, तुज्झनइ प्रति बूझव्यो ।
वलि कहइ तुं ते करुं अम्हे, एह अवसर साचव्यो ॥
कहइ राम मुझनइ सहू कीधो दीयो प्रतिबोध ठावको ।
आपणी ठामइ तुम्हे पहुचो तु लखमण नइं मुयो थको ॥३३॥

लखमणनइ संसकारिनइं, राम चड्यो वयरागो जी ।
कामनइ भोगथी ऊभग्यो, राजतणउ करइ त्यागो जी ॥
करइ राजरिद्धिनो त्याग चारित्र लेणनइ उछक हुयो ।
कहइ सत्रुघननइं राजल्यइ तुं मइ दियो तुझनइ दुयो ॥
हु ग्रहिसि चारित्र तप तपीनइ पाप करम निवारनइं ।
सासता पामिसि सुखु मुगतिना लखमण नइ संसकारि नइ ॥३४॥

सत्रूघन वलतो भणइं, राज रूडो नहि एहोजी ।
तिण कारणि छोडयो तुम्हे, द्यइ दुखु नरकनो तेहो जी ॥
द्यइ दुख नरक नो वलिय लखमण तणो दुखु थयो घणो ।
तिण राजरिद्ध थकी सहोदर ऊभगो मन अम्हतणो ॥
(हुं) पणि तुम्हां सुं लेइसि चारित्र सुद्ध संवेगइ घणइं ।
श्रीराम जाण्यो जुगत कहइ छइ सत्रुघन वलतो भणइ ॥३५॥

राम अनंगलवण तणइं, वेटानइ दीयो राजोजी।
सुग्रीवराय विभीषण, प्रमुख खेचर शुभ काजो जी ॥
सुभ काज खेचर राजदेई, आंपणां वेटां भणी।
चारित्रलेवा भणी आया उतावलि करि अतिवणी ॥
एहवइं श्रावक तिहा आवी अरहदास इसुं भणइ।
सुनि वीनती श्रीराम मोरी राम अनंगलवण तणइं ॥३६॥
श्रीमुनिसुव्रत स्वामिनो, तीरथ वरतइं एहोजी।
चारण श्रमण मुनीसर, सुव्रतनाम छइ जेहो जी ॥
नाम छइ सुव्रत जेहनइ ते साधु संप्रति छइ इहां।
तासु पासि दीक्षा ल्यउ तुम्हे तो वात जुगती छइ तिहा ॥
सावासि श्रावक तुज्झनइं तइं, कह्यो वचन प्रस्तावनो।
दीक्षातणो महोच्छव मांडियो श्री मुनिसुव्रत स्वामिनो ॥ ३७ ॥
सकलनगर सिणगारिया, देहरे पूजा स्नात्रो जी।
अट्ठाई महुच्छव भला, नाचइ नटुया पात्रो जी ॥
नाचइ ते नटुया पात्र सगलइं, संघ पूजा कीजीयइं।
जीमाडियइ भोजन भली परि, वस्त्र आभरण दीजीयइं ॥
अतिघणा दीननइ दान देई सुजस जग विस्तारिया।
श्रीराम चारित्र लेण चाल्या सकल नगर सिणगारिया ॥ ३८ ॥
आडंबर सुं आवीया, सुव्रत मुनिवर पासो जी।
विधि सुं कीधी वंदना, आंपणइं मनमइ उलासो जी ॥
उल्लास मननइं रामचंदइ आदरी संयम सिरी।
सुग्रीव[1] प्रमुख विद्याधरे पणि रामनी परि आदरी।

१—शत्रुघ्न सुग्रीव विभीषण विराधित प्रमुख षोडश सहस्र नृपै।
समं रामोव्रतं जगृहे सप्तत्रिंशत्सहस्राणि नारीणा नाभिश्च राम ॥१॥

चारित्र पालइ दोष टालइ मुगति सुं मन लाविया ॥
श्रीरामचंद महामुनीसर आडंबर सुं आवीया ॥ ३६ ॥
जीवतणी यतना करइं, बोलइं सत्य वचन्नो जी ।
अदत न ल्यइं मैथुन तजइं, नहि परिग्रह धनधन्नो जी ॥
परिग्रह न राखइं नहिय, माया उत्कृष्टी रहणी रहइ ।
आतपना करइ उष्णकालइ, सीतकालइं सी सहइ ॥
कूरमतणी परिगुप्त काया, वरसालइं तप आदरइ ।
अप्रमत्त संयम राम पालइं जीवतणी यतना करइं ॥ ४० ॥
सुग्रीव प्रमुख विद्याधरा, सोलसहस राजानो जी ।
राम सघातइ संयम लीयो, मनिधर निरमल ध्यानो जी ॥
मनिधरी निरमल ध्यान संयम पालतां ते तप तपइं ।
सइत्रीस सहस अंतेउरी पणि लेइ संयम जप जपइ ॥
सहु साधुनइ साधवी अपणो अरथ साधइ ततपरा ।
तरइं आपनइं तारइं बीजानइं सुग्रीव प्रमुख विद्याधरा ॥ ४१ ॥
सुव्रतसूरिना पयनमी, करइ एकल्ल विहारो जी[1] ।
नाना विधि अभिग्रह करइ, रहइ गिरि अटवी मझारोजी ॥
अटवी मझारइं तपतपतां अवधिज्ञान ते ऊपनो ।
जिणकरी जाण्यो बंधुनइ ए नरकनो दुख संपनो ॥
मनचिंतवइं लखमण सरीखो अरधचक्री दुरदमी ।
भोगवी सुखनइ पड्यो नरकइ सुव्रतसूरि ना पय नमी ॥ ४२ ॥

१—पष्ट्यब्दा गुरुपादान्ते तपस्तप्त्वा रामः ।
एकाकी वने पूर्वाङ्ग श्रुतभावितः सन्नपि जहार ॥

वसुदत्तादि पूरव भवइं, मुझ हुंतो अति नेहो जी।
सत्रुनइ मित्र सरिखा हिवइं, तिणमइं छोड्यो नेहो जी ॥
मइ छोडियो हिव नेह सगलो इम विमासी उपसमइ।
आहारपाणी सूझतो ल्यइ गोचरी नगरी भमइं ॥
वलि रहइं अटवी मांहि अहिनिसि अपछरा गुण संस्तवइं।
· · · · · · · · वसुदत्तादि पूरव भवइं ॥ ४३ ॥
एक दिन विहरतो आवियो, कोडि सिलातल रामो जी।
करम छेदन काउसगि रह्यो, एक मुगति सुं कामो जी ॥
एक मुगतिसेती काम तेहनइ ध्यांन निरंजण ध्यावए।
भावना सूधी चित्त भावइ, करम कोडि खपावए ॥
पांचमी ढाल ए जाति जकडी, राग गोडी वाधियो।
रामनइ प्रणमइ समयसुन्दर एक दिन विहरतो आवियो ॥ ४४ ॥

सर्वगाथा ॥ २६२ ॥

दूहा ३७

कोडिसिला काउसगि रह्यो, राम निरुंधी योग।
सीतेन्द्रइ दीठो तिहां, अवधिज्ञान उपयोगि ॥ १ ॥
प्रेमरागमनि ऊपनो, मूढ़ विमास्यो एम।
योग ध्यानथी चूकवुं, रामनइं हुं जिमतेम ॥ २ ॥
क्षपक श्रेणिथी पाडिनइ, नीचे नाखु राम।
जातो राखुं मुगति थी, जिम मुझ सीझइ काम ॥ ३ ॥
मुझ देवलोकइ ऊपनइ, माहरो थायइ मित्र।
प्रेमइं लपटांणा थका, अम्हे रहुं एकत्र ॥ ४ ॥

इम चिंतविनइ ऊतर्यो, सरग थकी सीतेन्द्र।
कामरहित श्रीराम जिहा, तिहा आवियो अतिंद्र ॥ ५ ॥
राम ऊपरि फूलातणा, गंधोदकनी वृष्टि।
कीधी सीतेन्द्रइ तिहा, धारी रागनी दृष्टि ॥ ६ ॥
सीता रूप प्रगट करी, दिव्य विकुर्वी रिद्धि।
रांमचद आगइं कीया, नाटक बत्रीसवद्ध ॥ ७ ॥
नृत्य करइं अपछर तिहा, गायइं गीत रसाल।
हाव भाव विभ्रम करइं, वारू नयन[1] विसाल ॥ ८ ॥
सीता कहइं थावो तुम्हें, मुझ ऊपरि सुप्रसन्न।
साम्हो जोवो हे प्रियू, मुखि बोलो सुवचन्न ॥ ९ ॥
आलिंगन द्यइ आविनइ, मुझनइ अपणी जाणि।
विरहानल मुझ वारि तुं, हे जीवन हे प्रांण ॥ १० ॥
ए विद्याधर कन्यका, रूपइं रम्भ समान।
तुझ ऊपरि मोही रही, द्यउ तेहनइं सनमांन ॥ ११ ॥
प्रीतम करि पाणिग्रहण, भरजोवन ए नारि।
भोगवि भोग सभागिया, ल्यइ जोवन फलसार ॥ १२ ॥
धरम करीजइ सुखभणी, ते सुख भोगवि एह।
कर आया सुख कां तजी, प्रीतम पडइं सन्देह ॥ १३ ॥
वचन सराग सीता कह्या, इम नाना परकार।
बीजा नर चूकइ तुरत, वचन सुणी सविकार ॥ १४ ॥

1—विनय।

पणि श्रीराम मुनीसरू, रह्या निश्चल काउसग्ग ।
रामराय चूका नहीं, जिमि गिरि मेरु अडिग्ग ॥ १५ ॥
राम क्षपक श्रेणइ चडी, धस्यो निरंजन ध्यान ।
च्यारि करम चूरी करी, पाम्यो केवल न्यान ॥ १६ ॥
केवलि महिमा सुर करइं, कंचण कमल ठवेइ ।
पद वंदइ सीतेन्द्र पणि, त्रिण्ह प्रदक्षिणा देइ ॥ १७ ॥
करजोडीनइ गुणस्तवइ, तुं मोटो अणगार ।
अपराध खामइ आंपणो, पगे लागि वहुवार ॥ १८ ॥
कमल ऊपरि वइसी करी, केवली धर्म कहेइ ।
सीतेन्द्रादिक तिहां सहु, सूधइ चित्त सुणेइ ॥ १९ ॥
ए संसार असार छइं, दुखु तणो भण्डार ।
मधुविन्दू दृष्टान्त जिम, नहि को सुखु लिगार ॥ २० ॥
मोक्ष तणो मारग कह्यो, सूधो साधनो धर्म ।
वीजो श्रावकनो धरम, त्रीजो सगलो भ्रम ॥ २१ ॥
साभलिजे सीतेन्द्र तुं, राग-द्वेष ए वेय ।
पापमूल अति पाडुया, दुखु नरगना देय ॥ २२ ॥
राग-द्वेष छोडी करी, करि श्री जिनवर धर्म ।
सुखु पामइ जिम सासता, बात तणो ए मर्म ॥ २३ ॥
प्रतिवूधो सीतेन्द्र पणि, पहुतो सरग मझारि ।
केवलन्यानी पणि करइं, वसुधा माहि विहार ॥ २४ ॥
अन्य दिवस सीतेन्द्र वली, दीठा उपयोग देइ ।
त्रीजी नरक मइ ते पड्या, लखमण रावण वेइ ॥ २५ ॥

वहुली नरकनी वेदना, छेदन भेदन दुख ।
कुंभीपाक पचावणो, ताडन तर्जण तिक्ख ॥ २६ ॥
दयादुखु मनि ऊपना, हा हा करम विचित्र ।
कुण ठकुराई भोगवी, संकट पड्या पत्र ॥ २७ ॥
लखमण रावण पणि तिहां, सोचा करइं अत्यंत ।
हा हा धरम कियो नहीं, जे भाख्यो भगवंत ॥ २८ ॥
अम्हनइ नरकना दुख पड्या, एतो न्यायज होइ ।
ए लक्षण समकित तणो, सरदहिज्यो सहु कोइ ॥ २९ ॥
लखमण रावण साभलो, कहइं सीतेन्द्र सुभास ।
तुम्ह नइ काढी[1] नरग थी, सरगमाहि ले जासि ॥ ३० ॥
चिंतामत करिज्यो तुम्हें, सगली देव सगत्ति ।
देखी न सकुं दुखिया, भली करूं भगत्ति ॥ ३१ ॥
इम कहिनइ ऊपाडिया, लखमण रावण वेइ ।
हाथामइं जायइ गली, माखण वन्हि विलेइ ॥ ३२ ॥
ते कहइ सुणि सीतेन्द्र तुं, मुंकि मुकि अम्ह देह ।
अम्हे दुख पामुं अधिक, तेह तणउ नहि छेह ॥ ३३ ॥
देव अनइ दानव तणो, इहा चालइ नही जोर ।
नरकथकी छूटइ नही, कीधा करम कठोर ॥ ३४ ॥
एह बात इमहिज अछइ, कहइ सीतापणि तोइ ।
समकित सूधो सरदहो, जिम निस्तारो होइ ॥ ३५ ॥
सीता वचन सुणी करी, दृढ़ समकित थया तेह ।
वयर विरोध तज्या तुरत, पूरव भवना जेह ॥ ३६ ॥

१—नरक थी उद्धरी ।

लखमण रावण वे जणा, आणी उपसम सार ।
काल गमाडइ आपणो, रहता नरक मझार ॥३७॥

सर्वगाथा ॥२६६॥

ढाल ६

॥ राग केदारा गउडीमिश्र ॥

"वीरा हो थारइ सेहरइ मोह्या पुरुषवियार । लाडण वी०
॥ ए वीवाह रा गीतनी ढाल ॥

एक दिवस आवी करी, रामनइ प्रदक्षिणा देइ । केवली ।
विधिसेती वादी करी, सीतेन्द्र प्रसन करेई ॥१॥ के०
आगिल्या भव इम कहइ, श्रीरामचंद मुणिद ॥के०॥ आं०
कहो सामी ए नरक थी, नीसरि उपजिस्यइ केथि ॥के०॥
मुगति लहिस्यइ किण भवइ, मिलिस्यइ वली मुझ केथि ॥२॥ के०
मुझनइ मुगति कदे हुस्यइ, ते पूज्य करो परसाद । के०
श्रीराम बोल्या केवली, सीतेन्द्र सुणि तुं अतंद्र ॥३॥ के०
लखमण रावण वे जणा, नरगथी नीसरि तेह । के०
विजयनगर[1] श्रावक कुलइ, अवतार लेस्यइ एह ॥४॥ के०
नंद[2] नारिनंदन हुस्यइ, अरहदास[3] १ श्रीदास[4] ॥२॥ के०
श्रावकनो धरम समाचरी, लहि सरग लील विलास ॥५॥के०
वलि देवलोक[5] थी चवी, नगरी[6] तिणइ नर होइ । के०
दानना परभाव थी, हुस्यइ युगलिया[7] वलि सोइ ॥६॥ के०

१—पूर्व विदेह २—रोहिणी ३—जिनदास ४—सुदर्शन ५—प्रथम
६—विजय ७—हरिवर्ष

जुगलिया हरिवर्षना, हुस्यइं देव वलि तेह । के०
तिहांथी वलि चविनइ हुस्यइं, तिणनगरी नृप पुत्र एह ॥७॥ के०
जयकंत १ जयप्रभ २ एहवा, विहुं बांधवनो हुस्यइ नाम । के०
चारित्र लेई तपतवी हुस्यइं, लांतक सुर अभिराम ॥८॥ के०
इण अवसरि सीतेन्द्र तुं, सुख भोगवि सुरलोकि । के०
तिहांथी चवि चक्रव्रति[1] थई, पामिसि सगला थोक ॥९॥ के०
ते सुर लांतक थी चवी, ताहरा[2] थास्यइ पुत्र ।
ते रावण थास्यइं तिहां, इन्द्ररथ[3] आचार पवित्र ॥१०॥ के०
दृढ़ समकितधरि सुर हुस्यइ, अपछरा करिस्यइ सेव ।
किणही भवि नरभव लही, थास्यइं तीर्थङ्कर देव ॥११॥ के०
चउसठ इन्द्र मिली करी, पूजिस्यइ पय अरविंद । के०
अनुक्रमि तीरथ आपणो, प्रवर्त्तविस्यइ ते जिणिंद ॥१२॥ के०
तुं चक्रव्रति नइ भव तिहां, चारित्र पाली सार । के०
वैजयंत विमानना, सुख लहिसि तुं श्रीकार ॥१३॥ के०
तेत्रीस सागर आउखो, भोगवि पूरू तेथि । के०
तिहांथी चविनइ तुं वली, आविसि नर भव एथि ॥१४॥
रावण जीव जिणिदंनइ, तुं गणधर थाइसि मुख्य । के०
करम चूरि केवल लहि, तुं पामिसि मोक्षना सौख्य ॥१५॥ के०
लखमण नो जीव जे हुस्यइ, चक्रवर्ति सुत सुकुमाल[4] । के०
भोगरथ[5] नामइ भलो. ते पणि आगामी कालि ॥१६॥ के०

१—भरतक्षेत्रम सर्वरत्नमति नीमा २—इन्द्रायुध, मेघरथौ ३—इन्द्रायुध।
४—सीताजीवस्य पुत्र। ५—मेघरथ।

केतलाएक भव करी, पुष्करद्ध त्रीजइ दीप। के०
महाविदेह माहे तिहा, पुर पदम[1] सुरपुर जीपि ॥१७॥ के०
तिण नगरी चक्रवर्ति हुस्यइ, सुख पामिस्यइ तिहा सोय। के०
तीर्थङ्कर पणि तिण भवइं, पामिस्यइ'पदवी दोय ॥१८॥ के०
इम केवलि वाणी सुणो, करि जोड़ि करि परणाम। के०
हियइ अति हरषित थई, सीतेंद्र गयो निज ठाम ॥१६॥ के०
श्रीरामचंद मुगतइं गया, पामियो अविचल राज। के०
सुख लाधा अति सासता, सारीया आतम काज ॥२०॥ के०
लखमण नइं रावण भणी, ए कही छट्ठी ढाल। के०
समयसुंदर वंदना करइं, तीर्थङ्कर नइं त्रिकाल ॥२१॥ के०

सर्वगाथा ॥३२०॥

दूहा ८

हिव सीतेंद्र तिहां रहइं, सुख भोगवतो सार।
बावीस सागर आउखुं, पूरुं करइं अपार ॥१॥
तीर्थङ्कर कल्याणके, आवी करइ अनेक।
उच्छव महुच्छव अतिघणा, वारू चित्त विवेक ॥२॥
तिहांथी चवि नइ पामिस्यइं, उत्तम कुलि अवतार।
तोर्थङ्कर वसुदत्त तसु, देस्यइ दीक्षा सार ॥३॥
गणधर थास्यइ तेहनो, सुर नर नइं वंदनीक।
सिव सुख लहिस्यइ सासता, प्रथम इहा पूजनीक ॥४॥

१—रतनचित्रा।

ए नवखंडनी वात सहु, कही गौतम गणधार।
श्रेणिक राजा आगलि, आणी मनि उपगार॥ ५॥
परमारथ ए प्रीछज्यो, किणहीनो कूडो आल।
दीजइ नहि, वलि पालियइ,—सील वरत सुरसाल॥ ६॥
सीलइं संकट सवि टलइ, सीलइ संपत्ति थाय।
प्रह उठिनइ प्रणमीयइं, सीलवंत ना पाय॥ ७॥
सतीया माहे सलहीयइं, सीता नामइं नारि।
सीता सरिपा को नही, सहु जोता संसारि॥ ८॥

सर्वगाथा ॥३२५॥

ढाल ७

॥ राग धन्यासिरी ॥

ढाल—सील कहइ जगि हु वड़ो ए संवादशतक नी वीजी ढाल अथवा—
पास जिणद जुहारियइ॥ ए तजननी ढाल॥

सीतारामनी चउपई, जे चतुर हुयइ ते वाचो रे।
राग रतन जवहर तणो, कुण भेद लहइ जे काचो रे॥१॥ सी०
नवरस पोष्या मइं इहां, ते सुघडो समझी लेज्यो रे।
जे जे रस पोष्या इहा, ते ठाम दीखाडी देज्यो रे॥ २॥ सी०
के के ढाल विषम कही, ते दूपण मति द्यो कोई।
स्वाद सावूनी जे हुयइ, ते लिहंगट कदे न होइ रे॥ ३॥ सी०
जे दरवारि गयो हुस्यइं, ढुंढाडि सेवाडिनइ दिल्ली रे।
गुजराति मारुयाडि मइ, ते कहिस्यइ ढाल ए भल्ली रे॥४॥ सी०

मत कहो मोटी का जोडी, वाचन्ता स्वाद लहेस्यो रे ।
नवनवा रस नवनवी कथा, साभलता साबासि देस्यो रे ॥५॥सी०
गुण लेज्यो गुणियण तणो, मुझ मसकति साम्हो जोज्यो रे ।
अणसहता अवगुणग्रही, मत चालणि सरिखा होज्यो रे ॥६॥ सी०
आलस अभिमान छोडिनइ, सूधी प्रति हाथे लेई रे ।
ढाल लेज्यो तुम्हे गुरु मुखइ, वलि रागनो उपयोग देई रे ॥७॥सी०
सखर सभा माहे वाचिज्यो, विजणा मिली मिलतइं सादइं रे ।
नरनारी सहु रीझिस्यइं, जस लहिस्यो सुगुरु प्रसादइं रे ॥८॥ सी०
आदर मान घणो हूस्यइं, वलि न्यान दरसणनो लाभो रे ।
वाचणहारा तणो जस, विस्तरिस्यइ जिम जल आभो रे ॥९॥ सी०
नवखण्ड पृथिवी ना कह्या, तिण चउपई ना नवखण्डो रे ।
वाचणहारानो तिहां, पसरो परताप अखण्डो रे ॥ १० ॥ सी०
सीतारामनी चउपई, वाचीनइ ए लाभ लेज्यो रे ।
साभलणहारानइ तुम्हें, कांइ सीलवरत सुंस देज्यो रे ॥ ११ ॥ सी०
जिन सासन शिवसासनइं, सीताराम चरित सुणीजइ रे ।
भिन्न २ सासन भणी, का का वात भिन्न कहीजइं रे ॥१२॥ सी०
जिन सासन पणि जू जुया, आचारिजना अभिप्रायो रे ।
सीता कही रावण सुता, ते पद्मचरित कहवायो रे ॥ १३॥ सी०
पणि वीतराग देवइ कह्यो, ते साचो करि सरदहिज्यो रे ।
सीताचरित थी मइं कह्यो, माहरो छेहडो मत ग्रहिज्यो रे ॥१४॥
हु मतिमूढ किसुं जाणुं, मुझ वाणी पणि निसवादो रे।
पणि जे जोडमइ रस पड्यो, ते देवगुरुनो परसादो रे ॥१५॥ सी०

हुं सीलवंत नहीं तिसो, मुझ पोतइं बहु ससारो रे।
पणि सीलवंतना सलहता, मुझ थाम्मी सही निस्तारो रे ॥१६॥ सी०
चपल कवीसरना कह्या, एक मननइ ए वचन एवेई रे।
कविकल्लोल भणी कहइ, रसना वाह्या पणि केई रे ॥ १७ ॥ सी०
ऊछो अधिको मइ कह्यो, कोई विरुध वचन पणि होई रे।
तो मुझ मिच्छामि दुक्कडं, संघ साभलिज्यो सहु कोई रे ॥१८॥सी०
त्रिण्हि हजारनइ सातसइ, माजनइ ग्रन्थनो मानो रे।
लिखतां नइ लिखावतां, पामीजइ न्यान प्रमाणो[1] रे ॥१६॥ सी०
श्री खरतरगच्छ माहिदीपता, मेड़तानगर मझारो रे।
गोत्र गोलछा गहगहइ सामग्रीमइ सिरदारो रे ॥ २० ॥ सी०
नगर थटइ घणो नामगउ, अतवार घणउ दरबारउ रे।
गुरुगच्छ ना रागी घणु, उत्तम घरनो आचारो रे ॥ २१॥ सी०
पुत्ररतन रायमलतणा, ते ल्यइ लखमी नउ लाहो रे।
अमीपालनइ नेतसी, भलउ भत्रीज राजसी साहो रे ॥२२॥ सी०
सीतारामनी चउपई, एहनइ आग्रह करि कीधी रे।
देसप्रदेस विस्तरी, ज्ञान वुद्धि लिखवंता लीधी रे॥ २३ ॥ सी०
श्री खरतरगच्छ राजीया, श्रीयुगप्रधान जिनचन्दो रे।
प्रथम शिष्य श्रीपूज्यना, गणिसकलकंद सुखकंदो रे ॥ २४ ॥ सी०
समयसुंदर शिष्य तेहना, श्री उपाध्याय कहीजइ रे।
तिण ए कीधी चउपई, साजण माणस सलहीजइ रे ॥२५॥ सी०
वर्तमान गच्छना धणी, भट्टारक श्री जिनराजो रे।
जिनसागरसूरीसरू, आचारिज अधिक दिवाजो रे ॥२६॥ सी०

१—प्रधानो रे।

ए गुरूनइ सुपसाउलइं, ए चउपई चडी प्रमाणो रे।
भणतां सुणतां वाचतां, हुयइ आणंद कोडि कल्याणो रे ॥२७॥ सी०
सर्वगाथा ॥३५५॥

इति श्री सीताराम प्रबधे सीतादिव्यकरण १ सीतादीक्षा २ लक्ष्मणमरण ३
रामनिर्वाण ४ लखमण रावण सीतागामिभवपृच्छा
वर्णनोनाम नवमः खण्डः समाप्त.

प्रथम खंडे ढाल ७ गा० १४६ द्वितीय खंडे ढाल ७ गा० १६२
तृतीय खंडे ढाल ७ गा० १६८ चतुर्थ खंडे ढाल ७ गा० २२८
पंचम खंडे ढाल ७ गा० २४८ षष्ठ खंडे ढाल ७ गा० ४४४
सप्तम खंडे ढाल ७ गा० ३१२ अष्टम खडे डाल ७ गा० ३२३
नवम खंडे ढाल ७ गा० ३५५

सर्वढाल ६३ सर्वगाथा ॥२४१७॥ ग्रन्थ संख्या ३७०४

[कवि के स्वयलिखित पत्र १११ की प्रति (अनूप सं० लाइब्रेरी) से मिलान किया।]

॥ इति सीताराम चउपई सपूर्णाजज्ञे ॥

प्रति लेखनप्रशस्ति :—सवत् १७३८ वर्षे कार्तिक मासे शुक्ले पक्षे २ तिथौ बुधवासरे श्री कान्हासर मध्ये भट्टारक श्री जिनचदसूरि विजयमानराज्ये। श्री सागरचदसूरि सतानीय वा० श्री सुखनिधान गणि तच्छिष्य प० श्री श्री श्री १०८ गुणसेनगणिगजेन्द्राणामन्तेवासी प० यशोलाभ गणिनालेखि।

वाच्यमान चिरनद्यात् भद्र भूयात्।
तैलाद्रक्षे जलाद्रक्षेत्रक्षे शिथिल बधनात्।
परहस्तगता रक्षेदेव वदति पुस्तिका ॥१॥

श्री पार्श्वनाथ प्रसादात् श्री जिनकुशलसूरि प्रसादाच्छ्रेयोस्तु

सीताराम चौपई में प्रयुक्त देसी सूची

खण्ड १

खण्ड २

खण्ड ३

खण्ड ४

खण्ड ५

खण्ड ६

खण्ड—७

खण्ड ८

खण्ड ६

शुद्धि-पत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	वारू	वारू	४२	१७	तुम्हें	तुम्हे
७	१६	मधुपिंगल	मधुपिंगल	५३	२०	विटवा	विढवा
१६	७	सेता	सेती	५४	१०	कायउ चकचर	कीयउ चकचूर
१७	२२	पुण	पणुं	६२	२१	घजण	धूजण
१९	४	ज्याणउ	आण्यउ	६४	१५	वित्त	वित्त
२०	१	वदी	वदी	६४	२१	पूपिणि रव	पिणि पूरव
२१	२	धर	घर	६४	२१	जिण मदिर	जिण मदिर
२३	११	जूजुय	जूजुया	७७	१६	अंगिनी	अगिनी
२६	५	नदी मउ	नदी नउ	७९	१३	वांधव	वाधव
२६	१६	घरि	घरि	८०	४	भमी	भमी
२७	३	वलियउ	वलियउ	८०	१३	वोपे	वापे
२७	४	वाप	वाप	८६	१२	त्रिहि	त्रिण्हि
२७	६	नाणा	नाणी	८६	७	त्रिणहि	त्रिण्हि
२८	११	हीयमउ	हीयडउ	८६	१५	वरजइ	वरजइ
२८	१३	वैसाखउ	वैसाख्यउ	९०	६	वलि	वलि
३०	१	वेटा	वेटा	९५	४	पालउ	पाल्यउ
२८	१२	अय ध्या	अयोध्या	९५	२०	उदा लीधा	उदालीया
३१	११	।कवा	किंवा	९६	१२	भमइ	भमइ
३६	१५	नीसरया	नीसर्या	९६	१२	मइरे	मइजी
३६	१६	आये	आपे	१००	८	विद	विंद

ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
०२	४	विपलाप	विलाप	१७१	१	वार्लि	वर्लि
०२	१५	दीठा	दीठो	१७६	१६	झूमइ	झूमइ
०२	१८	मुझनइ	मुझनइ	१७७	१	महेशस्त्र	महेशास्त्र
०३	४	मझारि	मझारि	१८५	११	फाटी	फीटी
०५	२१	सोम्हो	साम्हो	२२३	७	धरि	घरि
१६	१०	झठो	झूठो	२२८	१२	माणास	माणस
१७	२१	वास्यो	वास्यो	२२८	२१	सग्रीव	सुग्रीव
१७	२२	गर्व	गर्व	२२९	१५	चकचर	चकचूर
२२	१२	कोद्र दंलावइ	कोद्रव दलावइ	२३१	६	गोत्रमई	गोत्रमइ
१२४	१५	अगति	अगनि	२४२	६	थाइच्यो	थाइज्यो
१४१	२१	विरोघ	विरोध	२४५	५	मो	मा
१४१	२२	गव	गर्व	२६२	१	चकिनइ	चूकिनइ
१४३	५	विलंव	व्लिंव	२६८	६	आतपना	आतापना